हरिदास संस्कृत ग्रन्थमाला

३१६

ताजक विज्ञान

(वर्ष-फलित विज्ञान)

लेखक

श्रीदुर्गानाचार्य शास्त्री

ज्यौतिषरत्न, कर्मकाण्ड विशारद, कविराज, एच. एम. बी.

चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी

3-2

हरिदास संस्कृत सीरिज
३१६

ताजक विज्ञान

(वर्ष-फलित-विज्ञान)

लेखक
श्री सुदर्शनाचार्य शास्त्री
ज्योतिषरत्न, कर्मकाण्ड विशारद, कविराज, एम.ए.(संस्कृत)

चौखम्बा संस्कृत सीरिज आफिस, वाराणसी
१९९९

प्रकाशक : चौखम्बा संस्कृत सीरिज आफिस, वाराणसी
मुद्रक : चौखम्बा प्रेस, वाराणसी
संस्करण : प्रथम, वि० सं० २०५६

ISBN : 81-7080-030-7

चौखम्बा संस्कृत सीरिज आफिस
के० ३७/९९, गोपाल मन्दिर लेन
गोलघर (मैदागिन) के पास
पो० बा० नं० १००८, वाराणसी - २२१००१ (भारत)
फोन : आफिस : ३३३४५८
आवास : ३३४०३२, ३३५०२०

अपरं च प्राप्तिस्थानम्
कृष्णदास अकादमी
के० ३७/११८, गोपाल मन्दिर लेन
गोलघर (मैदागिन) के पास
पो० बा० नं० १११८,
वाराणसी- २२१००१ (भारत)
फोन :३३५०२०

HARIDAS SANSKRIT SERIES
316

TĀJAK VIJÑĀNA

(VARṢA-PHALIT-VIJÑĀNA)

BY

SRI SUDARSANACHARYA SHASTRI

Jyotishratna, KarmakandaVisharad, Kaviraj, H.M.B.

CHOWKHAMBA SANSKRIT SERIES OFFICE,

VARANASI

1999

बादशाह के राज ज्यौतिषी थे। अन्यान्य विद्वान् भी यवन-साम्राज्य में राज-ज्यौतिषी पदों पर प्रतिष्ठित थे।

ताजक में ग्रह का बल आँकने के लिए षड्बल की पद्धति है। ताजक में ग्रह का बल आँकने के लिए बृहत् पंचवर्गी तथा द्वादशवर्गी है। इनकी रचना की आधारशिलाएँ षड्वर्ग तथा द्वादशवर्ग हैं। उक्त वर्ग जातक की तो विशेष निधि हैं। जातक में लगभग ४२ प्रकार की दशाएँ हैं, ताजक में भी विभिन्न प्रकार की दशाएँ हैं। ताजक में सहम हैं। सहम का अर्थ भाग या हिस्सा है। भाव के विचार में तो सहम अत्युपयोगी है। सहम का सहयोग लिये बिना भाव के विचार में पूर्णता नहीं आ सकती। वर्ष के अतिरिक्त सहम का विचार प्रश्न में भी अत्युपयोगी है। उदाहरणार्थ जैसे- किसी विद्यार्थी ने वर्षपत्रिका बनवाकर परीक्षा के संबंध में जिज्ञासा की। इस संबंध में वर्षपत्रिका के पंचम भाव का विचार करना होगा; क्योंकि विद्या का स्थान पंचम-भाव है। इसके अतिरिक्त विद्यासहम का भी विचार करना होगा। बुद्धिसहम का भी विचार करना होगा; क्योंकि बुद्धि ठीक न होने से मस्तिष्क में विषय अंकित नहीं हो पाता है। इनके साथ परीक्षार्थी के लिए स्फूर्तिसहम का भी विचार करना अत्यावश्यक है। कारण कि परीक्षार्थी में बुद्धि भी है, विद्या भी है किन्तु परीक्षा के समय प्रश्नपत्र के हल करने में स्फूर्ति नहीं है तो विद्या और बुद्धि व्यर्थ जैसी हो जाती है। अतएव वर्षपत्रिका का पंचम भाव, विद्यासहम, बुद्धिसहम, स्फूर्तिसहम, इन सभी का विचार करके परीक्षा संबंधी परिणाम निकालना होगा, तभी वह तथ्य भी उतरेगा। यही विचार की रीति प्रश्न में भी लागू है।

ताजक सर्वथा जातक पर आधारित है, अतः उसकी प्रामाणिकता में कोई संदेह करने का लेशमात्र भी अवसर नहीं है। हाँ, यह अवश्य है कि ताजक की प्रक्रिया और विचार पद्धति में नवीनता और विलक्षणता है। वर्षतंत्र ग्रन्थ में वर्षफल के प्रयोजन में वर्णन है -

जातकोदितदशाफलं हि यत् स्थूलकालफलदं स्फुटं नृणाम्।
तत्र न स्फुरति दैवविन्मतिस्तद् ब्रुवेऽब्दफलमादि ताजकात्॥

जातक (जन्मकाल) संबंधी दशा, लम्बे समय की होती है, अतः उसका फल भी लम्बे समय का होता है। लम्बे समय के विचार में दैवज्ञ (ज्यौतिषी) की बुद्धि का स्फुरण नहीं हो पाता। ताजक की दशा सूक्ष्म काल (केवल एक वर्ष) की होने से उसमें दैवज्ञ की मति स्फुरित होती है। अतः ताजक के अनुसार वर्षफल का कथन करता हूँ।

ताजक कौस्तुभ ग्रंथ में जन्मांगलेखन का प्रयोजन वर्णित है -

जनुषि ये सदसत्फलदा ग्रहाः शरघनेहसि तद्बलमर्कतः।
फलमुशन्ति दशाविषये बुधा इति जनुस्तनुलेखनमत्र हि॥

जन्मकाल में जो ग्रह शुभ या अशुभ फल के देनेवाले हैं, उनके साथ ही वर्षकाल के शुभ और अशुभ फल देने वाले ग्रहों के फलित का निर्णय विद्वान् लोग करते हैं। जन्म के सूर्य के आधार पर वर्ष की दशा का योग (जोड़) होकर ही दशा का फल कहा जाता हैं। अतएव जन्मकालिक लग्नकुण्डली का लिखना निश्चित ही है।

उक्त ग्रंथ में गति के सहित ग्रहों के स्पष्ट लिखने का निर्देश है तथा संधि सहित द्वादश भावों के स्पष्ट लिखने का भी विधान है । इनके प्रयोजन का भी वर्णन है- ग्रहों के स्पष्ट के बिना शुभ-अशुभ फल को पूर्णरूप से नहीं कहा जा सकता । जिस प्रकार सभी कार्य मन के अधीन होते हैं, उसी प्रकार ग्रहों के फल भी भावस्पष्ट और संधिस्पष्ट के अधीन हैं ।

हायनरत्न ग्रंथ में भावकुण्डली लिखने का निर्देश है । आचार्य माधव ने चलित चक्र तथा विंशोपका-बल लिखने का सप्रयोजन निर्देश किया है । जिस प्रकार यौवनसंपन्न नारी पति से विहीन होने पर शोभित नहीं होती, उसी प्रकार चलित कुण्डली के बिना भावजन्य फलित भी व्यर्थ होता है । जिस प्रकार मदिरा के पात्र का जल व्यर्थ होता है, उसी प्रकार विंशोपका बल के बिना भावजन्य फल का कथन भी व्यर्थ होता है ।

ताजक में मुंथा-मुथहा या इन्थिहा की कल्पना गताब्द और जन्मलग्न के योग से है । यह एक नवीन मोड़ है । वर्षतंत्र में मुथहा का फलित है और ताजिक-सुधानिधि में मुथहेश का भावगत फलित है ।

ताजक में राहु और केतु को भी ग्रह माना गया है । ताजिकभूषण में सूर्य से राहु तक आठ ग्रहों के भावजन्य फलों का निर्देश है । ताजिकसमुच्चय ग्रंथ में केतु का भावजन्य फलित वर्णित है ।

ताजक में सहम की कल्पना तो अद्‌भुत है । ताजिकसुधानिधि ग्रंथ में वर्णन है कि जिस प्रकार मनुष्य के उद्योग में भाग्य सहायक है, उसी प्रकार भाव के फलित में सहम भी सदैव सहायक होता है । अनेक प्रकार के सहम हैं, उनमें से पुण्यसहम का विचार तो प्रत्येक मानव के जन्मकाल तथा वर्षकाल में माना गया है । पुण्यसहम के होने पर ही मानव को सुख प्राप्त होता है, अन्यथा नहीं ।

आचार्य यादव ने वर्ष में मैत्रीचक्र बनाने का निर्देश किया है और उसका प्रयोजन यह बतलाया है कि मैत्रीचक्र के बिना बल का ज्ञान नहीं होता है ।

योगसुधानिधि ग्रंथ में वर्णन है कि वर्ष में द्वादशवर्गी चक्र से ग्रहों के बल-अबल का ज्ञान होता है ।

आचार्य यादव का कथन है - बृहत् पंचवर्गीबल के बिना विंशोपका बल का ज्ञान नहीं हो सकता, अतः बृहत् पंचवर्गी बल का ज्ञान भी अनिवार्य है ।

ताजिकरत्न ग्रंथ में ग्रहों के हर्षज फल का विवरण है । यदि कोई समृद्धिशाली व्यक्ति हर्ष में नहीं होता है तो उसे उसकी समृद्धि सुखावह प्रतीत नहीं होती । इसी प्रकार ग्रह के संबंध में भी है ।

ताजकालंकार ग्रंथ में ग्रह की ग्रह पर तथा भाव पर दृष्टि के संबंध में वर्णन है कि ग्रह की दृष्टि के विचार के बिना वर्ष में शुभाशुभ फल नहीं कहा जा सकता । ग्रह दृष्टि के अनुसार फल देते हैं, वह फल बल के अनुसार होता है । इस रीति से ग्रह का शुभाशुभ फल ज्ञातव्य है ।

जन्म के समान वर्ष में भी ग्रहों के षड्‌बल-विचार का निर्देश है ।

नोट- षड्बल-विचार के संबंध में लेखक की "सुदर्शन-पद्धति' द्रष्टव्य है।

ताजक में वर्षेश के फलित का विशेष विवरण है। ताजिकरत्नावली में इष्ट-कष्ट का विचार है। इसके लिए भी लेखक की 'सुदर्शन-पद्धति' अवलोकनीय है।

आचार्य हिल्लाज ने वर्ष में दलील ग्रह का विचार समुपस्थापित किया है। दलील को ही दलीलक या दलीलद भी कहते हैं। प्रत्येक भाव का दलील ग्रह होता है और उसके फल भी भिन्न-भिन्न हैं। यह एक अनूठा और चमत्कारी विचार है।

ताजक में भावसंबंधी विचार भी विलक्षण हैं, जो प्रस्तुत ग्रंथ के फलित-प्रकरण में द्रष्टव्य है।

दशा के संबंध में सूर्यसूरि का कथन है कि भावों में स्थित ग्रह अपनी-अपनी दशाओं में फल देते हैं। आचार्य तेजसिंह का मत है कि वर्ष, जन्म और दशा, इन तीनों कालों में ग्रह के बल का विचार करते हुए ही दशा का फल विचारणीय है।

ताजक में हीनांश-पात्यांश दशा महत्त्व की वस्तु है। मुद्दा-दशा तो जातक की विंशोत्तरी दशा पर आधारित है। ताजक में दशा-अन्तर्दशाओं (ग्रह की दशा के काल में आनेवाली ग्रहों की अल्पकालीन दशा को अर्न्तदशा कहते हैं।) के विस्तृत फलित हैं।

ताजक में अरिष्ट योग (कष्टदेने वाले योग) तथा अरिष्टभंग (कष्टनाशक) योगों का तथा राजयोग (राजयोग होने से व्यक्ति की सुख-संपत्ति आदि के द्वारा समृद्धि होती है) और राजभंग योगों का भी अच्छा विचार है। भंगयोग होने से वह संबंधित योग व्यर्थ हो जाता है।

ताजक की गति सूक्ष्मता की ओर भी अग्रसर हुई है। वर्षकुण्डली का विचार एक वर्ष से संबंधित है। वर्ष में १२ मास होते हैं। मासकुण्डलियों को बनाने का विधान है, उनसे मास संबंधी विचार होते हैं। यह विचार वर्ष की अपेक्षा सूक्ष्मतर है। मास में तीस दिन होते हैं। प्रत्येक मास की ३० दिन कुण्डलियाँ बनाने का विधान है। उनसे प्रत्येक दिन का विचार होता है। यह विचार और भी सूक्ष्मतम है। मास के फलित के लिए मासेश का विचार तथा मासदशा का विचार है। दिन के फलित के लिए दिनेश का विचार तथा दिन-दशा का विचार है। इस प्रकार ताजक में स्थूल से लेकर सूक्ष्मतम तक विचार हैं।

बालबुद्धिप्रकाशिनी पुस्तक में मासकुण्डली के निमार्ण का निर्देश है। मासेश के निर्णय में ताजिकसुधानिधि, वर्षतंत्र तथा ताजिकभूषण में विभिन्न मत हैं। आचार्य नारायण भट्ट ने मासेश के फलित का वर्णन किया है। ताजिकसार, त्रैलोक्यप्रकाश तथा जीर्णताजिक ग्रंथ में मासकुण्डली के भावगत नवांशों का फलित वर्णित है। नवांश के फलित के संबंध में महाराज चण्डेश्वर तथा आचार्य नारायण के विशेष मत हैं। उनका प्रदर्शन भी प्रस्तुत ग्रंथ में है। आचार्य मणित्थ ने मासों के भावों के फलित का विर्णन किया है।

आचार्य वामन ने दिनप्रवेश की लग्नकुण्डली बनाने की रीति का निर्देश किया है। सम्यक्प्रकाश, वर्षतंत्र आदि ग्रंथों में दिनप्रवेश लग्नकुण्डली संबंधी फलित का अच्छा

वर्णन है । आचार्य वामन, यादव आदि ने भी इस संबंध में अच्छा फलित कहा है । आचार्य नील कंठ ने दिनप्रवेश लग्नकुण्डली में कर्तरी योग का विवरण दिया है, किन्तु आचार्य गर्ग ने उक्तयोग का संशोधित परिहार किया है ।

वामन तथा नीलकंठ आचार्यों ने व्यक्ति के दिनप्रवेश काल में तत्कालीन चंद्र की अवस्था के अनुरूप फलित का वर्णन किया है । आचार्य यवनेश्वर ने कालहोरेश के आधार दिनप्रवेशकालीन फलित का विस्तृत विवरण दिया है ।

इस प्रकार ताजक की विपुल संपत्ति है । इस संपत्ति को लेकर तथा प्रसंगोचित अन्यान्य आवश्यक विषयों को लेकर प्रस्तुत ग्रंथ का सृजन किया गया है ।

यवन-साम्राज्य में भोगवाद की प्रधानता थी । उस समय के प्रमुख विषय तीन थे । भोजन, शयन और मनोरंजन यानी आखेट या मृगया (शिकार खेलना) इन्हीं विषयों के संबंध में प्राय: प्रश्न होते रहते थे, अत: ताजक ग्रंथों के उक्त प्रश्नों के उत्तर में विचार भी दिये गये हैं ।

ताजक के संबंध में यह संक्षिप्त इतिवृत्त (एतद्धि रामायणम्) प्रस्तुत किया गया है। जातक की विपुल ग्रंथ-संपत्ति के समान ताजक की भी विपुल ग्रंथ-संपत्ति है । ताजक के ग्रन्थों का मुद्रण अल्प मात्रा में है । लेखक ने अपने भ्रमण काल में अनेक विद्वानों के यहाँ तथा देशीय राज्यों के पुस्तकालयों में ताजक संबंधी विविध ग्रंथों के दर्शन का सौभाग्य प्राप्त किया । उन ग्रंथों से विशिष्ट-विशिष्ट विषयों को नोट किया गया । उन सबका प्रस्तुत ग्रंथ में सन्निवेश किया गया है ।

महर्षि लोमश ने जातक में सप्तवर्गजैक्य (सात वर्गों से लिये गये बल का एकत्रीकरण) बल को माना है । ताजक में भी बृहत् पंचवर्गी बल तथा द्वादशवर्गी बल को माना है । ग्रह के फलित के विचार में बल वस्तुत: प्रधान वस्तु है ।

लेखक का चिरकाल से विचार था कि वर्षपत्र के संबंध में एक सांगोपांग पुस्तक की रचना अत्यावश्यक है । इस दिशा में प्रयत्न भी होते रहे, बीच-बीच में विघ्न-बाधा भी पड़ती रही, फिर भी भगवत्कृपा से कार्य पूर्ण हो ही गया ।

प्रस्तुत ग्रंथ तीन प्रकाशों में विभक्त है । प्रकाश की सत्ता तीनों ही लोकों में है। ग्रंथ को इस दृष्टिकोण से लिखा गया है कि विषय का अनभिज्ञ व्यक्ति भी ग्रंथ को पढ़कर सरलता से ज्यौतिष का मर्मज्ञ विद्वान् बन जाय, अत: विषय को प्रारंभ से ही लिखा गया है । प्रथम-प्रकाश में संज्ञा-प्रकरण है । संज्ञा-प्रकरण तो प्रत्येक शास्त्र की आधारशिला है । संज्ञा-प्रकरण से ही शास्त्र में गति होती है । जहाँ जातक और ताजक में विभिन्नता है, उसका भी यथास्थान प्रदर्शन किया गया है ।

द्वितीय-प्रकाश में गणित-प्रकरण है । गणित को भी आरंभ से ही समझाया गया है । पहिले गणित का सिद्धांत यानी फार्मूला दिया गया है, तदनंतर उसको उदाहरण द्वारा स्पष्ट किया गया है । उदाहरण के द्वारा गणित का विषय सरलता से बुद्धिस्थ हो जाता है । वर्षोपयोगी प्राय: समस्त गणित को उपन्यस्त किया गया है । ज्यौतिषशास्त्र के गणित और

फलित दो विभाग हैं। गणित के बिना फलित नहीं है। गणित भी फलित के लिए ही है। अत: दोनों ही एक-दूसरे पर आश्रित हैं। जिनकी जन्मपत्रिका नहीं है तथा जिन्हें अपने जन्मकाल के संबंध में तिथि आदि किसी बात का बिलकुल पता ही नहीं है और वे अपनी जन्मपत्रिका बनवाना चाहते हैं तो उनके लिए ज्यौतिषशास्त्र में उपाय है प्रश्न द्वारा जन्मपत्रिका बनानी। प्रस्तुत ग्रंथ में प्रश्न द्वारा जन्मपत्रिका बनाने की सोदाहरण प्रक्रिया का उल्लेख किया गया है। यह प्रक्रिया, आचार्य वराहमिहिर की प्रसादित है। जो व्यक्ति जन्मपत्रिका न बनवाकर केवल वर्षपत्र ही बनवाना चाहते हैं किन्तु उन्हें भी अपने जन्मकाल के संबंध में कोई बात ज्ञात नहीं है तो ऐसी स्थिति में उनका वर्षपत्र भी प्रश्न के द्वारा ही बनेगा। प्रश्न से वर्षपत्र बनाने की प्रक्रिया को भी प्रस्तुत किया गया है। गणित-प्रकरण में अन्यान्य उपयोगी विषयों का भी सन्निवेश है। गणित का विषय कुछ कठिन अवश्य है, परन्तु उसे अति सरल करके लिखा गया है। प्रथम सिद्धान्त को समझा जाय, फिर उदाहरण का अभ्यास किया जाय। इससे विषय के बुद्धिस्थ होने में कठिनता न पड़ेगी। प्राय: चक्रों में नमूना देकर शेष स्थान खाली छोड़ दिये गये हैं, उन्हें पाठक अपने अभ्यास से पूर्ण करें।

आयु के संबंध में जैमिनि मुनि की प्रक्रिया कुछ स्थूल-सी है, किन्तु सत्याचार्य की प्रक्रिया सूक्ष्म है, अत: उस प्रक्रिया को उपन्यस्त करके उदाहरण द्वारा स्पष्टीकरण भी दिया गया है।

प्रस्तुत पुस्तक में जो भावस्थित ग्रहों के तथा भावेशों के फल दिये गये हैं तथा सहम के फल इत्यादि दिये गये हैं, वे जन्मकुण्डली में भी लागू हो सकते हैं। वर्षकुण्डली के भावसंबंधी विचार जन्मकुण्डली के संबंध में भी किये जा सकते हैं। भावसंबंधी विचार तथा सहम के विचार प्रश्नकुण्डली में भी लागू हैं।

चंद्र की अवस्था के शुभाशुभ के अनुसार प्रश्न का भी शुभाशुभ फल जाना जा सकता है। चंद्र की शुभ-अवस्था में यात्रा करने से शुभ होता है।

आचार्य यवनेश्वर का कालहोरा संबंधी विचार भी महत्त्वपूर्ण है। कालहोरा ज्यौतिषशास्त्र की उत्तम देन है। जिस वार में जिस कार्य के करने के मुहूर्त का निर्देश है, यदि वह वार नहीं मिल रहा है तो उस वार की कालहोरा में ही वह कार्य किया जा सकता है। मुहूर्त का निर्दिष्ट वार तथा उसकी निर्दिष्ट कालहोरा का समय उसी दिन में महत्त्व से युक्त होता है।

नोट- लेखक ने मुहूर्त के संबंध में 'मुहूर्त-विज्ञान' नामक सुविशद ग्रंथ लिखा है।

प्रस्तुत ग्रंथ बड़े परिश्रम से तथा विचार के साथ लिखा गया है। हमारी वृद्धावस्था तथा दृष्टिमंदता के कारण यदि कहीं त्रुटि लक्षित हो तो पाठकगण उसे उदारभाव से क्षमा करते हुए सूचित करने का कष्ट करेंगें।

व्यक्ति की वर्षपत्रिका प्रतिवर्ष बनायी जाती है। वर्षपत्र का स्वरूप भी प्रस्तुत ग्रंथ में दिया गया है, उसी के अनुसार वर्षपत्र का निर्माण कर फलित विचार की पद्धति के द्वारा यथोचित फल का निर्देश करना संगत रहेगा।

सर्वजनहिताय सर्वजनसुखाय ग्रंथ की रचना का उद्देश्य है। अन्त में सर्वान्तर्यामी

जगदीश्वर भगवान् श्रीमन्नारायण से जगत् के कल्याण की कामना है ।

प्रस्तुत ग्रंथ में निम्नांकित ताजक-ग्रंथों से सहयोग प्राप्त हुआ है, अतः हम उन ग्रंथ-कारों के प्रति अत्यन्त कृतज्ञ हैं ।

पुस्तकों की नामावलि -

१. वर्षतन्त्र । २. ताजककौस्तुभ । ३. त्रैलोक्यप्रकाश । ४. हायनरत्न । ५. ताजकमाधव । ६. ताजकभूषण । ७. ताजकसमुच्चय । ८. ताजकसुधानिधि । ९. ताजकयादव । १०. योगसुधानिधि । ११. ताजकरत्न । १२. ताजकालंकार । १३. वर्षदीपक। १४. ताजक रत्नावली । १५. मणित्थताजक । १६. गर्गताजक । १७. वामनताजक। १८. देवलताजक । १९. नारायणताजक । २०. ताजकहिल्लाज । २१. ताजक चण्डेश्वर। २२. ताजक तेजसिंह । २३. ताजकसमरसिंह । २४. यवनताजक । २५. रामताजक । २६. ताजकनीलकंठ । २७. रोमकताजक । २८. वराहताजक । २९. ताजकबलभद्र । ३०. ताजकसार । ३१. हिल्लाजदीपिका । ३२. हायनसुंदर । ३३. ताजक मुक्तावली । ३४. ताजकसर्वस्वसार । ३५. हायनसिंधु । ३६. ताजक चूडामणि । ३७. ताजकतिलक । ३८. जीर्णताजक । ३९. हायनोत्तम । ४०. बालबुद्धि प्रकाशिनी । ४१. सम्यक्प्रकाश इत्यादि ।

प्रस्तुत ग्रंथ में यत्र-तत्र उक्त ग्रंथों के उद्धरण अथवा भाव दिये गये हैं । मतभेदों का स्पष्टीकरण तथा समन्वय भी किया गया है । आशा है विज्ञजन इस ग्रंथ से लाभन्वित होंगे । शेष कृपा ।

श्रीकृष्णजन्माष्टमी
संवत् २०२३

विदुषां विधेयः
सुदर्शनाचार्य शास्त्री
अमरोहा (यू०पी०)

विषयनुक्रमणिका

क्र०सं०	विषय	पृष्ठसंख्या
	प्रथम प्रकाश	
१.	मंगलाचरण	१
२.	पञ्चाङ्ग का अर्थ	१
३.	संवत् का विवरण	१
४.	युगों का विवरण	२
५.	संवत् के मासों का विवरण	२
६.	अधिकमास का विवरण	३
७.	अधिकमास जानने का मोटा क्रम	३
८.	नित्य सिद्धान्त	३
९.	क्षयमास का विवरण	३
१०.	पक्ष का विवरण	४
११.	ईस्वी सन् का विवरण	४
१२.	हिजरी सन् का विवरण	५
१३.	पारसी सन् का विवरण	५
१४.	यहूदी सन् का विवरण	५
१५.	वार का विवरण	५
१६.	तिथि का विवरण	५
१७.	पूर्णिमा और अमावास्या के भेद	६
१८.	तिथि की संज्ञा	६
१९.	तिथि के क्षय और वृद्धि का विवरण	६
२०.	तिथि के घटने-बढ़ने की सीमा	६
२१.	नक्षत्रों का विवरण	७
२२.	क्रान्तिवृत्त की परिभाषा	७
२३.	राशिचक्र की परिभाषा	७
२४.	बारह राशियों के नाम	७
२५.	सत्ताईस नक्षत्रों के नाम	७
२६.	ग्रहों के नाम	७
२७.	चन्द्रसंचार का विवरण	८
२८.	राशियों की व्यवस्था	८

क्र०सं०	विषय	पृष्ठसंख्या
२९.	नक्षत्रों की संज्ञायें	८
३०.	उग्र संज्ञा के नक्षत्र	८
३१.	क्षिप्र संज्ञा के नक्षत्र	८
३२.	चर संज्ञा के नक्षत्र	८
३३.	मृदु संज्ञा के नक्षत्र	९
३४.	तीक्ष्ण संज्ञा के नक्षत्र	९
३५.	मिश्र संज्ञा के नक्षत्र	९
३६.	शुभ नक्षत्र	९
३७.	मध्यम नक्षत्र	९
३८.	अशुभ नक्षत्र	९
३९.	पुष्प नक्षत्र की विशेषता	९
४०.	तारा का विचार	९
४१.	सूर्य के नक्षत्र	१०
४२.	चन्द्र के नक्षत्र	१०
४३.	नक्षत्रों के चार चरणों के अक्षर	१०
४४.	राशियों के अक्षरों की सारिणी	११
४५.	महानक्षत्र का विवरण	११
४६.	योग का विवरण	११
४७.	योंगों के क्रमशः नाम	११
४८.	करण का विवरण	११
४९.	चर करणों के नाम	१२
५०.	स्थिर करणों के नाम	१२
५१.	घडी-पलों से घण्टा-मिनट बनाने का क्रम	१२
५२.	घण्टे-मिनटों से घड़ी-पल बनाने का क्रम	१४
५३.	दिनमान का विवरण	१४
५४.	ऋतुओं का विवरण	१६
५५.	ऋतुओं के नाम	१६
५६.	अयन का विवरण	१६
५७.	गोल का विवरण	१६
५८.	सूर्योदय काल का विवरण	१६
५९.	दिनमान से सूर्योदय काल का जानने का क्रम	१६
६०.	सूर्यास्त काल का विवरण	१७

क्र०सं०	विषय	पृष्ठसंख्या
६१.	चन्द्रमा का उदय और अस्त जानने का क्रम	१७
६२.	चन्द्र-दर्शन-सारिणी	१९
६३.	प्रथम बार उदय होने वाले चन्द्रमा के शृंग का विचार	२०
६४.	अयनांश का विवरण	२१
६५.	अयनांश-सारिणी	२२
६६.	अयनांश निकालने का क्रम	२३
६७.	पलभा का विवरण	२४
६८.	अक्षांश-देशान्तर सारिणी	२५
६९.	पलभा ज्ञान सारिणी	२७
७०.	पलभा से चरखण्ड बनाने का क्रम	२८
७१.	स्वोदय बनाने का क्रम	२८
७२.	लंकोदय-स्वोदय लग्नमान	२८
७३.	लंकोदय तथा स्वोदय पलों के पलादिक ध्रुव बनाने का क्रम	२९
७४.	भावसारिणी बनाने का क्रम	२९
७५.	भावसारिणी/लंका की पलभा	३१
७६.	इन्द्रप्रस्थीय (दिल्ली का) लग्नसारिणी	३५
७७.	मद्रास की लग्नसारिणी	३९
७८.	इण्ट का अर्थ	४३
७९.	स्थानीय समय (लोकल टाइम) जानने का क्रम	४३
८०.	पञ्चाङ्ग के द्वारा लोकल टाइम बनाने का क्रम	४४
८०अ.	इष्ट से लग्नसारिणी द्वारा लग्न निकालने का क्रम	४६
८१.	लग्नकुण्डली बनाने का क्रम	४७
८२.	ग्रहों के राशि में रहने के स्थूल मान	४८
८३.	वार प्रवृत्ति निकालने का क्रम	४८
८४.	नक्षत्र के चरण निकालने का क्रम	४९
८५.	गतर्क्ष और सर्वर्स निकालने का क्रम	४९
८६.	नक्षत्र के क्षय में गतर्क्ष-सर्वर्क्ष बनाने की भिन्न क्रम	५०
८७.	नक्षत्र का चरण निकालने का क्रम	५०
८८.	राशियों की क्रूर और सौम्य संज्ञा	५१
८९.	राशियों की पुरुष और स्त्री संज्ञा	५१
९०.	राशियों की चर, स्थिर और द्वि:स्वभाव संज्ञा	५१
९१.	राशियों की शीर्षोदय आदि संज्ञा	५२

क्र०सं०	विषय	पृष्ठसंख्या
९२.	राशियों के तत्त्व	५२
९३.	राशियों की चतुष्पद आदि संज्ञा	५२
९४.	राशियो के अंग	५२
९५.	राशियों की प्रकृति	५२
९६.	राशियों के स्पर्श की संज्ञा	५२
९७.	राशियों की रूक्ष आदि संज्ञा	५२
९८.	राशियों के आकार की संज्ञा	५३
९९.	राशियों की अन्धादि संज्ञा	५३
१००.	राशियों के शब्द की संज्ञा	५३
१०१.	राशियों की सजल और निर्जल संज्ञा	५३
१०२.	द्वार, शय्या, आसन आदि में राशियों की दिशा	५३
१०३.	पूर्वादि दिशाओं की स्वामिनी राशियाँ	५३
१०४.	राशियों की दिन-रात्रिबली संज्ञा	५४
१०५.	राशियों के स्वामी ग्रह	५४
१०६.	राशियों के अंग-विभाग	५४
१०७.	भावों का विवरण	५५
१०८.	षड्वर्ग का विवरण	५५
१०९.	गृह का अर्थ	५५
११०.	होरा का विवरण	५५
१११.	द्रेष्काण का विवरण	५६
११२.	सप्तमांश का विवरण	५६
११३.	नवमांश का विवरण	५६
११४.	दशमांश का विवरण	५७
११५.	द्वादशांश का विवरण	५७
११६.	षोडशांश का विवरण	५७
११७.	त्रिंशांश का विवरण	५८
११८.	षष्ट्यंश का विवरण	५८
११९.	षष्ट्यंश निकालने का अन्य क्रम	५८
१२०.	षष्ट्यंश का महत्व	५९
१२१.	षष्ट्यंशों का नाम	५९
१२२.	सप्तवर्ग और दशवर्ग का विवरण	५९
१२३.	ग्रहों की पारिजात आदि वर्गों की संज्ञाओं का विवरण	५९

क्र०सं०	विषय	पृष्ठसंख्या
१२४.	ग्रह के वर्ग निकालने का क्रम	६०
१२५.	केन्द्रसंज्ञा, त्रिकोणसंज्ञा, पणफर संज्ञा, आपोक्लिम संज्ञा का विवरण	६०
१२६.	उपचय स्थान, चतुरस्र स्थान, मारक स्थान नेत्रसंज्ञक स्थान त्रिक स्थान का विवरण	६०
१२७.	ऋक्षसन्धि का विवरण	६०
१२८.	ग्रहों का विवरण	६१
१२९.	ग्रहों की पुरुष आदि संज्ञा	६१
१३०.	ग्रहों की गुणात्मिका प्रकृति	६१
१३१.	ग्रहों की धातु आदि संज्ञा	६१
१३२.	ग्रहों की जातियों	६१
१३३.	ग्रहों के रस	६१
१३४.	ग्रहों के आकार	६१
१३५.	ग्रहों की कालवली संज्ञा	६२
१३६.	ग्रहों की नीरस आदि संज्ञा	६२
१३७.	ग्रहों की वस्तुयें	६२
१३८.	ग्रहों के अन्न	६२
१३९.	ग्रहों की पक्व आदि वस्तुयें	६२
१४०.	ग्रहों की अवस्थायें	६२
१४१.	ग्रहों के रंग	६२
१४२.	ग्रहों के वृक्ष	६२
१४३.	ग्रहों की धातुयें	६२
१४४.	ग्रहों के मास	६२
१४५.	ग्रहों की दिशायें	६३
१४५अ.	ग्रहों के स्वरूप का विवरण	६३
१४६.	ग्रहों की स्वराशि	६३
१४७.	ग्रहों की स्वराशि	६३
१४८.	ग्रहों की मूल त्रिकोण राशि	६४
१४९.	ग्रहों की उच्च तथा परमोच्च राशियाँ	६४
१५०.	ग्रहों की नीच तथा परमनीच राशियाँ	६४
१५१.	मित्र, शत्रु, सम राशियों का विवरण	६५
१५२.	ग्रहों के मित्र, सम, शत्रु, ग्रहों की सारिणी	६५

क्र०सं०	विषय	पृष्ठसंख्या
१५३.	तात्कालिक ग्रह-मैत्री का विवरण	६६
१५४.	पञ्चधा मैत्री का विवरण	६६
१५५.	वर्गोत्तम संज्ञा का विवरण	६६
१५६.	ताजक की नैसर्गिक ग्रह मैत्री	६६
१५७.	ग्रहों की स्थिर मैत्री की सारिणी	६७
१५८.	ताजक की तात्कालिक ग्रह मैत्री का विवरण	६७
१५९.	ग्रहों की दृष्टि का विवरण	६७
१६०.	ताजक की दृष्टि का विवरण	६८
१६१.	ग्रह के साथ ग्रह के सम्बन्ध का विवरण	६८
१६२.	ग्रहों की सजल आदि संज्ञा	६८
१६३.	ग्रहों की दीप्त आदि आठ संज्ञाओं का विवरण	६८
१६४.	ग्रहों की बाल आदि अवस्थाओं का विवरण	६८
१६५.	अवस्थाओं के फलित	६९
१६६.	जाग्रत् आदि अवस्थाओं का विवरण	६९
१६७.	अवस्थाओं के फलित	६९
१६८.	अंशों के अनुसार ग्रह-फल का विवरण	६९
१६९.	ग्रह तथा राशि के अनुसार ग्रह का बल	६९
१७०.	अनिष्ट फल न देनेवाले ग्रहों का विवरण	६९
१७१.	स्थिति के अनुसार ग्रहों की निष्फलता	७०
१७२.	ग्रहों के दोष को शान्त करनेवाले ग्रहों का विवरण	७०
१७३.	बल के संकेत का विवरण	७०
१७४.	चन्द्र की अवस्थाओं का विवरण	७१
१७५.	सोलह योगों का विवरण	७२
१७६.	दीप्तांशों का विवरण	७३
१७७.	कम्बूल योग के भेद	७६

द्वितीय प्रकाश

१.	मंगलाचरण	९०
२.	विषय-प्रवेश	९०
३.	जन्मकाल और निषेक के बीच के समय का विचार	९१
४.	निषेक कुण्डली के निर्माण का क्रम	९१
५.	राशि-गुणक-सारिणी	९२

क्र०सं०	विषय	पृष्ठसंख्या
६.	ग्रह-गुणक सारिणी	९२
७.	कलापिण्ड बनाने का क्रम	९३
८.	कर्मयोग पिण्ड बनाने का क्रम	९३
९.	संस्कार-विशेष का विवरण	९३
१०.	संवत् निकालने का क्रम	९४
११.	ऋतु निकालने का क्रम	९४
१२.	मास निकालने का क्रम	९४
१३.	सूर्य निकालने का क्रम	९४
१४.	पक्ष निकालने का क्रम	९४
१५.	तिथि निकालने का क्रम	९४
१६.	वार निकालने का क्रम	९४
१७.	जन्म का समय निकालने का क्रम	९४
१८.	जन्म नक्षत्र निकालने का क्रम	९४
१९.	जन्म-नक्षत्र के चरण निकालने का क्रम	९५
२०.	जन्म इष्टकाल निकालने का क्रम	९६
२१.	जन्म का संवत् निकालने का उदाहरण	९६
२२.	जन्म की ऋतु निकालने का उदाहरण	९६
२३.	जन्ममास के निकालने का उदाहरण	९६
२४.	जन्म का पक्ष निकालने का उदाहरण	९७
२५.	जन्म की तिथि निकालने का क्रम	९७
२६.	जन्म का वार निकालने का उदाहरण	९७
२७.	जन्मकाल निकालने का क्रम	९७
२८.	जन्म का नक्षत्र निकालने का उदाहरण	९७
२९.	नक्षत्र के चरण निकालने का उदाहरण	९७
३०.	ग्रहलाघवीय अहर्गण का विवरण	९८
३१.	अहर्गण-सारिणी	९८
३२.	अहर्गण-शेषाब्द-सारिणी	९९
३३.	अहर्गण-चालन-सारिणी	१००
३४.	अहर्गण निकालने का क्रम	१००
३५.	अहर्गण बनाने का उदाहरण	१००
३६.	अहर्गण के सर्वदिन बनाने का क्रम	१०१
३७.	अहर्गण के सर्वदिन बनाने का उदाहरण	१०१

क्र०सं०	विषय	पृष्ठसंख्या
३८.	सर्वदिन के चक्र बनाने का क्रम	१०१
३९.	वर्षपत्र का स्वरूप	१०१
४०.	जन्मकुण्डली का स्वरूप	१०२
४१.	जन्मकालिक स्पष्टसूर्यादिचक्रम्	१०३
४२.	जन्मलग्नचक्रम्	१०३
४३.	आगामी वर्ष के साधन का क्रम	१०३
४४.	ग्रहलाघव के अहर्गण से ब्रह्मतुल्य का अहर्गण बनाने का क्रम	१०४
४५.	अहर्गण के द्वारा वर्षप्रवेश की तिथि, मास तथा शक लाने का क्रम	१०४
४६.	सौरवर्ष का अर्थ	१०६
४७.	संवत् की प्रवृत्ति का समय	१०६
४८.	शक की प्रवृत्ति का समय	१०६
४९.	गताब्द का अर्थ	१०६
५०.	वर्ष प्रवेश का समय	१०६
५१.	वर्षप्रवेश के वार, इष्ट के घड़ी और पल आदि निकालने का क्रम	१०६
५२.	वर्ष-प्रवेश की तिथि निकालने का क्रम	१०७
५३.	वर्ष-प्रवेश का लग्न लाने का क्रम	१०८
५४.	वर्ष-प्रवेश का वार तथा इष्टकाल निकालने का अन्य क्रम	१०८
५५.	वर्षप्रवेश सारिणी	१०९
५६.	वर्षलग्नकुण्डलिका	१११
५७.	ग्रहस्पष्ट का क्रम	११२
५८.	गोमूत्रिका रीति का रहस्य	११२
५९.	चालन बनाने का क्रम	११२
६०.	घटाने का क्रम	११३
६१.	ग्रह के स्पष्ट करने का क्रम	११३
६२.	ग्रह स्पष्ट करने का उदाहरण	११४
६३.	सवर्णित करने का क्रम	११७
६४	मुंथा स्पष्ट करने का क्रम	११८
६५.	सगतिकस्पष्टग्रहचक्रम्	११८
६६.	भावस्पष्ट का विवरण	११८

क्र०सं०	विषय	पृष्ठसंख्या
६७.	लग्नसाधन का क्रम	११९
६८.	लग्न स्पष्ट करने का क्रम	११९
६९.	सवर्णित करने का क्रम	११९
७०.	सप्तम भाव के स्पष्ट का क्रम	१२१
७१.	दशम भाव और चतुर्थ भाव के साधन का क्रम	१२१
७२.	दशम भाव स्पष्ट करने का क्रम	१२२
७३.	चतुर्थ भाव स्पष्ट करने का सरल क्रम	१२४
७४.	चतुर्थ भाव स्पष्ट का उदाहरण	१२५
७५.	अन्यान्य भाव स्पष्ट का उदाहरण	१२५
७६.	भावों तथा उनकी सन्धियों के स्पष्ट का क्रम	१२७
७७.	षष्ठांश निकालने का क्रम	१२७
७८.	सन्धि तथा भावों के स्पष्ट का क्रम	१२७
७९.	शुद्ध षष्ठांश बनाने का क्रम	१२७
८०.	भाव तथा संधि स्पष्ट के उदाहरण	१२८
८१.	सन्धिसहितद्वादशभावस्पष्टचक्रम्	१३०
८२.	चलित चक्र बनाने का क्रम	१३०
८३.	ग्रह के फल की व्यवस्था	१३०
८४.	चलित का उदाहरण	१३०
८५.	चलितचक्रम	१३१
८६.	ग्रहस्पष्ट,भावस्पष्ट तथा चलित का महत्त्व	१३१
८७.	सायनग्रह स्पष्ट करने का क्रम	१३१
८८.	सायन सूर्य स्पष्ट द्वारा लग्न स्पष्ट करने क्रम	१३२
८९.	सायन स्पष्ट सूर्य से लग्नभाव के स्पष्ट का उदाहरण	१३२
९०.	सायन स्पष्ट सूर्य से दशम भाव के स्पष्ट का क्रम	१३३
९१.	सायन स्पष्ट सूर्य से दशम भाव के स्पष्ट का उदाहरण	१३४
९२.	ग्रह के फल का विवरण	१३५
९३.	चयफल के स्पष्ट करने का क्रम	१३६
९४.	चय फल के स्पष्ट का उदाहरण	१३६
९५.	क्षय फल के स्पष्ट करने का क्रम	१३६
९६.	क्षय फल के स्पष्ट करने का उदाहरण	१३७
९७.	विंशोपका का विवरण	१३७
९८.	विंशोपका लाने का क्रम	१३७

क्र०सं०	विषय	पृष्ठसंख्या
९९.	अंशादिक के सवर्णित पिण्ड बनाने का क्रम	१३७
१००.	सवर्णित पिण्ड बनाने का उदाहरण	१३७
१०१.	ग्रह सन्ध्यन्तर बनाने का क्रम	१३७
१०२.	ग्रह सन्ध्यन्तर बनाने का उदाहरण	१३७
१०३.	भाव-संध्यन्तर बनाने का क्रम, उदाहरण	१३८
१०४.	ग्रह सन्ध्यन्तर का सवर्णित पिण्ड बनाने का उदाहरण	१३८
१०५.	भव सन्ध्यन्तर का सवर्णित पिण्ड बनाने का उदाहरण	१३८
१०६.	सूर्य के क्षयफल निकालने का उदाहरण	१३८
१०७.	विंशोपका (विश्वे) बनाने का क्रम	१३८
१०८.	तृतीय अंश निकालने का क्रम	१३९
१०९.	तृतीय अंश निकालने का उदाहरण	१३९
११०.	विश्वा निकालने का अन्य उदाहरण	१३९
१११.	ग्रहाणां चय-क्षय-फल-विंशोपकाचक्रम्	१३९
११२.	दृष्टि के साधन का क्रम	१४०
११३.	ताजक की दृष्टि का विवरण	१४०
११४.	ग्रह की कलात्मक दृष्टि के साधन का क्रम	१४०
११५.	द्रष्टा की परिभाषा	१४०
११६.	दृश्य की परिभाषा	१४१
११७.	ग्रह की कलात्मक दृष्टि के साधन का उदाहरण	१४१
११८.	ग्रहाणामुपरि ग्रहदृष्टिसाधनचक्रम्	१४२
११९.	भाव पर ग्रह की कलात्मक दृष्टि के साधन का उदाहरण	१४२
१२०.	भावानामुपरि ग्रहदृष्टिसाधनचक्रम्	१४२
१२१.	ग्रहमैत्री का विवरण	१४३
१२२.	स्थिर मैत्री	१४३
१२३.	स्थिरमैत्री-सारिणी	१४३
१२४.	तात्कालिक ग्रह-मैत्री का उदाहरण	१४३
१२५.	ग्रहाणां तात्कालिक मैत्र्यादिचक्रम्	१४४
१२६.	द्वादश वर्ग का विवरण	१४४
१२७.	द्वादश वर्गों के नाम	१४४
१२८.	गृह का विवरण, उदाहरण	१४४
१२९.	होरा का विवरण	१४४
१३०.	होरासारिणी	१४५

क्र०सं०	विषय	पृष्ठसंख्या
१३१.	द्रेष्काण का विवरण	१४५
१३२.	द्रेष्काण-सारिणी	१४५
१३३.	द्रेष्काण-कुण्डली	१४६
१३४.	द्रेष्काण के सम्बन्ध में अन्य मत का विवरण	१४६
१३५.	द्रेष्काण के स्वामी जानने का उदाहरण	१४६
१३६.	चतुर्थांश-सारिणी	१४७
१३७.	चतुर्थांश कुण्डली बनाने का उदाहरण	१४७
१३८.	पञ्चमांश विवरण	१४७
१३९.	पञ्चमांश-सारिणी	१४८
१४०.	षष्ठांश का विवरण	१४८
१४१.	षष्ठांश सारिणी	१४९
१४२.	षष्ठांशकुण्डली	१४९
१४३.	सप्तमांश का विवरण	१५०
१४४.	सप्तमांश सारिणी	१५०
१४५.	सप्तमांश कुण्डली	१५०
१४६.	अष्टामांश का विवरण	१५१
१४७.	अष्टमांश सारिणी	१५१
१४८.	अष्टमांश कुण्डली	१५१
१४९.	नवमांश का विवरण	१५२
१५०.	नवमांश-सारिणी	१५२
१५१.	नवमांश कुण्डली	१५२
१५२.	दशमांश का विवरण	१५३
१५३.	दशमांश कुण्डली	१५३
१५४.	एकादशांश का विवरण	१५४
१५५.	एकादशांश कुण्डली	१५४
१५६.	एकादशांश कुण्डली	१५४
१५७.	द्वादश वर्ग के आधार पर ग्रह के शुभाशुभ का विचार	१५४
१५८.	द्वादशांश सारिणी	१५५
१५९.	द्वादशांश कुण्डली	१५५
१६०.	हद्दा का विवरण	१५५
१६१.	हद्दा-सारिणी	१५६
१६२.	ग्रहाणां हद्देशचक्रम	१५६

क्र०सं०	विषय	पृष्ठसंख्या
१६३.	पञ्चवर्गीय का विवरण	१५६
१६४.	उच्च बल का विवरण	१५७
१६५.	उच्च बल निकालने का क्रम, उदाहरण	१५७
१६६.	बृहत् पञ्चवर्गी बल का विवरण	१५७
१६७.	चतुर्वर्ग-बल-सारिणी	१५८
१६८.	बल की संज्ञायें	१५९
१६९.	तात्कालिकग्रहमैत्रेयद्रेष्काणराशिपतिवशात् बृहत्पञ्चवर्गीचक्रम्	१५९
१७०.	तात्कालिकग्रहमैत्रेयद्रेष्काणराशिपतिवशात् बृहत्पञ्चवर्गीबलचक्रम	१६०
१७१.	स्थिर मैत्री में द्रेष्काण राशिपति के अनुसार बृहत्पञ्चवर्गीचक्र बनाने का क्रम	१६१
१७२.	स्थिरमैत्रेयबृहत्पञ्चवर्गबलसारिणी	१६१
१७३.	स्थिरमैत्रेयद्रेष्काणराशिशवशात् बृहत्पञ्चवर्गीचक्रम्	१६१
१७४.	स्थिरमैत्रेयद्रेष्काणराशिवशात् बृहत्पञ्चवर्गीबलचक्रम्	१६२
१७५.	द्वादश वर्ग-चक्र का विवरण	१६२
१७६.	तात्कालिकमैत्रेयद्वादशवर्गीयबलसारिणी	१६३
१७७.	तात्कालिकग्रहमैत्रेयद्वादशवर्गीचक्रम्	१६४
१७८.	ग्रहमैत्रेयद्वादशवर्गीबलचक्रम्	१६५
१७९.	स्थिरमैत्रेयद्वादशवर्गीबल-सारिणी	१६५
१८०.	स्थिरमैत्रेयद्वादशवर्गीचक्रम्	१६६
१८०.	स्थिरमैत्रेयद्वादशवर्गी बलचक्रम्	१६६
१८१.	हर्षपद का विवरण	१६७
१८२.	ग्रहाणां हर्षपदचक्रम्	१६८
१८३.	लघुपञ्चेस का विवरण	१६९
१८४.	त्रिराशिपति का विवरण	१६९
१८५.	त्रिराशिपति-सारिणी	१६९
१८६.	लघुपञ्चेश(पञ्चाधिकारि) चक्रम्	१६९
१८७.	वर्षेश का निर्णय	१७०
१८८.	षड्बल का विवरण	१७०
१८९.	दलील का विवरण, उदाहरण	१७१
१९०.	दलीलोपयोगिलग्नभावपञ्चाधिकारिचक्रम्	१७२
१९१.	लग्नभाव के दलील का उदाहरण	१७२

क्र०सं०	विषय	पृष्ठसंख्या
१९२.	सहम का विवरण	१७२
१९३.	सहमों की नामावली	१७२
१९४.	लग्नभाव के उपयोगी सहम	१७३
१९५.	द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, पच्चम, षष्ठ, सप्तम, अष्टम, नवम, दशम, एकादश, द्वादश भाव सम्बन्धी सहम	१७३
१९६.	सहम साधन करने का क्रम	१७४
१९७.	पूण्य सहम के साधन करने का क्रम	१७४
१९८.	पुण्यसहमकुण्डली	१७५
१९९.	सहम के फल के समय का विचार	१७९
२००.	सहम के सम्बन्ध में आचार्य यादव का सिद्धान्त	१७९
२०१.	सहम के सम्बन्ध में आचार्य रोमक का सिद्धान्त	१८०
२०२.	दशा का विवरण	१८०
२०३.	हीनांश-पात्यांश दशा के साधन का क्रम	१८१
२०४.	हीनांशचक्रम्	१८२
२०५.	हीनांशों के पात्यांश साधन करने का क्रम	१८२
२०६.	ग्रहपात्यांशचक्रम	१८२
२०७.	दिनादि ध्रुव बनाने का क्रम	१८३
२०८.	दिनादिक ध्रुव से दशा के दिनादि बनाने का क्रम	१८३
२०९.	पात्यांशानुसारेण ग्रहदिनादिदशाचक्रम्	१८५
२१०.	पात्यांश दशा में अन्तर्दशा निकालने का क्रम	१८५
२११.	शनिपात्यांशदशान्तरचक्रम्	१८७
२१२.	मुग्धा दशा का विवरण	१८७
२१३.	ग्रह दशा-मान सारिणी	१८७
२१४.	मुग्धा दशा में आरम्भ की दशा का भोग्यमान निकालने का क्रम	१८८
२१५.	भोग्य दशा के दिनादि निकालने का क्रम	१८८
२१६.	मुग्धा(मुद्दा) दशाचक्रम्	१८९
२१७.	मुग्धा दशा में अन्तर्दशा निकालने का क्रम	१८९
२१८.	मासप्रवेश का विवरण	१९०
२१९.	मास-प्रवेश के सूर्य का साधन	१९०
२२०.	मास-प्रवेश के वार आदि निकालने का क्रम	१९०
२२१.	द्वितीयमासलग्नकुण्डली	१९२

क्र०सं०	विषय	पृष्ठसंख्या
२२२.	मास-प्रवेश सारणी	१९३
२२३.	मास-प्रवेश-सारणी के द्वारा मास-प्रवेश के साधन का क्रम	१९७
२२४.	मास मुग्धा दशा निकालने का क्रम	१९९
२२५.	मासमुग्धा दशा में ग्रहों की दिनादि दशा निकालने का क्रम	१९९
२२६.	मासमुग्धादशादिनादिसारिणी	१९९
२२७.	द्वितीयमासमुग्धादशाचक्रम्	१९९
२२८.	दिन-प्रवेश के साधन का क्रम	२००
२२९.	दिन-प्रवेश का वार तथा इष्टकाल निकालने का क्रम	२००
२३०.	मुंथा का विचार	२००
२३१.	द्वितीयमासे एकादशदिनलग्नकुण्डली	२०२
२३२.	दिन प्रवेश में मुग्धा दशा निकालने का क्रम	२०२
२३३.	दशा का मान निकालने का क्रम	२०२
२३४.	दिन-मुग्धादशा-मान-सारिणी	२०२
२३५.	द्वितीयमासे एकादशदिवसीयमुग्धादशाचक्रम्	२०३
२३६.	दिनदशा निकालने का उदाहरण	२०३
२३७.	प्रश्न के द्वारा वर्ष-पत्र बनाने का क्रम	२०४
२३८.	मुंथा की राशि निकालने का क्रम	२०४
२३९.	आयुः का स्पष्टीकरण	२०५
२४०.	अकालमृत्यु का अर्थ	२०६
२४१.	आयुर्दाय लाने की रीति	२०६
२४२.	कला बनाने का क्रम	२०७
२४३.	तृतीयांश निकालने का क्रम	२०७
२४४.	बलवान् लग्न की परिभाषा	२०९
२४५.	लग्न की मध्यायुः तथा स्पष्टायुः साधन का क्रम	२०९
२४६.	आयुः स्पष्ट का निष्कर्ष	२०९
२४७.	आयु के मिलने के सम्बन्ध में विचार	२०९
२४८.	स्पष्टग्रहचक्रम्	२१०
२४९.	जन्मलग्नचक्रम्	२१०
२५०.	सूर्य की स्पष्टायुः साधन का क्रम	२११
२५१.	ग्रहाणां स्पष्टायुश्चक्रम्	२११

तृतीय प्रकाश

क्र०सं०	विषय	पृष्ठसंख्या
१.	मंगलाचरण	२१३
२.	सन्दर्भ	२१३
३.	वर्ष का सामान्यतः शुभाशुभ फलित विचार	२१४
४.	वर्ष प्रवेशकालिक तिथि का फलित	२१४
५.	वर्ष प्रवेशकालिक वार का फलित	२१४
६.	वर्ष प्रवेशकालिक नक्षत्र का फलित	२१४
७.	वर्ष के शुभाशुभ का अन्य विचार	२१५
८.	समुद्रचक्र के द्वारा वर्ष का शुभाशुभ विचार	२१५
९.	समुद्रचक्र का विवरण	२१५
१०.	जन्मलग्न के द्वारा वर्ष का शुभाशुभ विचार	२१६
११.	त्रिपताका चक्र के द्वारा शुभाशुभ फल का विचार	२१७
१२.	त्रिपताका चक्र का विवरण	२१७
१३.	द्वादश भावों में मुन्था के फलित	२१८
१४.	राशियों के अनुसार मुन्था के फलित	२२०
१५.	सूर्यादिग्रहों से युक्त मुंथा के फलित	२२१
१६.	मुंथा पर ग्रहों के दृष्टियों के फलित	२२२
१७.	मुंथा के फल का विशेष विचार	२२३
१८.	भावों की स्थिति के अनुसार मुंथेश के फलित	२२४
१९.	मुंथेश तथा मुंथा का विशेष फलित	२२६
२०.	राहु के मुख और पुच्छ का निर्णय	२२८
२१.	पुण्य सहम का विवरण	२२८
२२.	भावनुसार पुण्य सहम का फल	२२९
२३.	पुण्य सहम का अन्य फलित	२३०
२४.	भावों में स्थित सूर्यादि ग्रहों के फलित	२३१
२५.	चन्द्र के फलित	२३३
२६.	मंगल के फलित	२३५
२७.	बुध के फलित	२३६
२८.	गुरू के फलित	२३८
२९.	शुक्र के फलित	२४०

क्र०सं०	विषय	पृष्ठसंख्या
३०.	शनि के फलित	२४२
३१.	राहु के फलित	२४४
३२.	केतु के फलित	२४६
३३.	भावेश का विवरण	२४८
३४.	लग्नभावेश के लग्न में स्थिति का फल	२४८
३५.	द्वितीय भावेश के स्थानगत फल	२४९
३६.	तृतीयेश के भावगत फल	२५०
३७.	चतुर्थेश के भावगत फलित	२५२
३८.	पञ्चमेश की भावों में स्थिति के फलित	२५३
३९.	षष्ठेश के भावों में स्थिति के अनुसार फलित	२५४
४०.	भावों में स्थिति के अनुसार सप्तमेश के फलित	२५५
४१.	भावों में स्थिति के अनुसार अष्टमेश के फलित	२५७
४२.	भावों में स्थिति के अनुसार नवमेश के फलित	२५८
४३.	भावों में स्थिति के अनुसार दशमेश के फलित	२५९
४४.	भावों में स्थिति के अनुसार एकादशेश के फलित	२६०
४५.	भावों में स्थिति के अनुसार द्वादशेश के फलित	२६१
४६.	द्वादशवर्गी का फलित	२६२
४७.	फल के सम्बन्ध में सिद्धान्त	२६३
४८.	बृहत्पञ्चवर्गीय फल का विवरण	२६४
४९.	बृहत्पञ्चवर्गी का फलित	२६५
५०.	हर्षस्थान का विवरण	२६५
५१.	हर्षपद में स्थित ग्रहों के फलित	२६५
५२.	दृष्टि का विवरण	२६६
५३.	दृष्टि का भेद	२६६
५४.	दृष्टि का फलित	२६६
५५.	दृष्टि के चार विभाग	२६६
५६.	दृष्टि का विशेष विचार	२६७
५७.	वर्षेश का विवरण	२६७
५८.	पञ्चाधिकारी	२६७
५९.	वर्षेश का प्रयोजन	२६८
६०.	वर्षेश के बल का विचार	२६८
६१.	वर्षेश के बल का फलित	२६८

क्र०सं०	विषय	पृष्ठसंख्या
६२.	वर्षेश के सम्बन्ध में अन्य विचार	२६९
६३.	भावों में स्थिति के अनुसार वर्षेश के फलित	२६९
६४.	वर्षेश सूर्य का फल	२७१
६५.	ग्रहों से युक्त या दृष्ट वर्षेश सूर्य का फल	२७२
६६.	वर्षेश चन्द्र के फलित	२७३
६७.	ग्रहों से युक्त या दृष्ट वर्षेश चन्द्र का फल	२७३
६८.	वर्षेश मंगल के फलित	२७४
६९.	ग्रहों से युक्त या दृष्ट वर्षेश मंगल का फल	२७४
७०.	वर्षेश बुध के फलित	२७५
७१.	ग्रहों से युक्त या दृष्ट वर्षेश बुध का फल	२७५
७२.	वर्षेश गुरू के फलित	२७६
७३.	ग्रहों से युक्त या दृष्ट वर्षेश गुरू का फल	२७६
७४.	वर्षेश शुक्र के फलित	२७७
७५.	ग्रहों से युक्त या दृष्ट वर्षेश शुक्र का फल	२७७
७६.	वर्षेश शनि के फलित	२७८
७७.	ग्रहों से युक्त या दृष्ट वर्षेश शनि का फल	२७८
७८.	वर्षेश के फल के सम्बन्ध में निष्कर्ष	२७९
७९.	अरिष्ट योग विचार	२७९
८०.	अरिष्ट भंग योग विचार	२८६
८१.	अरिष्ट तथा अरिष्ट-भंग के निर्णय का सरल मार्ग	२८०
८२.	राजयोगों का विचार	२८७
८३.	राजयोग-भंग का विचार	२९२
८४.	सहम विचार	२९४
८५.	ग्रह के बलाबल के सम्बन्ध में निर्णय	२९५
८६.	जटिल समस्या का स्पष्टीकरण	२९५
८७.	सहमों के शुभाशुभ फल की व्यवस्था	२९५
८८.	भावफलित विचार	२९६
८९.	भाव में स्थिति के अनुसार ग्रह का विचार	२९८
९०.	दलीलक ग्रह का निर्णय	२९८
९१.	दलीलद के बलानुसार फलित	२९८
९२.	भावों में स्थिति के अनुसार दलीलदों के फलित	२९९
९३.	तनुभाव में विचार-योग्य बातें	३०५

क्र०सं०	विषय	पृष्ठसंख्या
९४.	विचार के सम्बन्ध में सर्वमान्य सिद्धान्त	३०५
९५.	तनुभाव सम्बन्धी फलित के विचार का एक उदाहरण	३०५
९६.	लग्न में स्थित ग्रहों के फल	३०६
९७.	तनुभाव सम्बन्धी विशेष योग-उपयोग	३०६
९८.	तनुभाव से सम्बन्धित सहमों के फलित	३०७
९९.	द्वितीय भाव का विचार	३११
१००.	धनभाव में स्थित ग्रहों का फल	३११
१०१.	धनभाव सम्बन्धी विशेष योगों के विचार	३११
१०२.	धनभाव सम्बन्धी सहमों के फलित	३१३
१०३.	तृतीय भाव का विचार	३१५
१०४.	तृतीय भाव में स्थित ग्रहों के फल	३१५
१०५.	तृतीय भाव सम्बन्धी योगों का विचार	३१५
१०६.	तृतीय भाव सम्बन्धी सहमों के फलित	३१६
१०७.	चतुर्थ भाव का विचार	३१७
१०८.	चतुर्थ भाव में स्थित ग्रहों के फल	३१८
१०९.	चतुर्थ भाव सम्बन्धी योगों का विचार	३१८
११०.	चतुर्थ भाव सम्बन्धी सहमों के फलित	३१९
१११.	पञ्चम भाव का विचार	३२०
११२.	पञ्चम भाव में स्थित ग्रहों के फल	३२३
११३.	पञ्चम भाव सम्बन्धी सहमों के फलित	३२३
११४.	षष्ठभाव का विचार	३२५
११५.	षष्ठभाव में स्थित ग्रहों के फल	३२५
११६.	षष्ठभाव सम्बन्धी योगों का विचार	३२६
११७.	षष्ठभाव सम्बन्धी सहमों के फलित	३२८
११८.	सप्तम भाव का विचार	३३०
११९.	सप्तम भाव में स्थित ग्रहों के फलित	३३०
१२०.	सप्तम भाव सम्बन्धी योगों का विचार	३३०
१२१.	सप्तम भाव सम्बन्धी सहमों के फलित	३३२
१२२.	अष्ठम भाव का विचार	३३३
१२३.	अष्टम भाव में स्थित ग्रहों के फलित	३३४
१२४.	अष्ठम भाव सम्बन्धी योगों का विचार	३३४
१२५.	अष्टम भाव सम्बन्धी सहमों के फलित	३३७

क्र०सं०	विषय	पृष्ठसंख्या
१२६.	नवम भाव सम्बन्धी विचार	३३७
१२७.	नवम भाव में स्थित ग्रहों के फलित	३३७
१२८.	नवम भाव सम्बन्धी योगों का विचार	३३८
१२९.	यात्रा की दिशा के सम्बन्ध में आचार्य रोमक का सिद्धान्त	३३९
१३०.	भाग्यकारक ग्रह का विचार	३४०
१३१.	नवम भाव सम्बन्धी सहमों के फलित	३४०
१३२.	दशम भाव सम्बन्धी विचार	३४१
१३३.	दशम भाव में स्थित ग्रहों के फलित	३४१
१३४.	दशम भाव सम्बन्धी योगों का विचार	३४२
१३५.	दशम भाव सम्बन्धी सहमों के फलित	३४४
१३६.	एकादश (लाभ) भाव सम्बन्धी विचार	३४७
१३७.	एकादश स्थान में स्थित ग्रहों के फलित	३४७
१३८.	एकादश भाव सम्बन्धी योगों का विचार	३४८
१३९.	एकादश (लाभ) भाव सम्बन्धी सहमों के फलित	३४९
१४०.	द्वादश (व्यय) भाव का विचार	३५०
१४१.	व्यय (द्वादश) भाव में स्थित ग्रहों का फल	३५०
१४२.	व्ययभाव सम्बन्धी योगों का विचार	३५०
१४३.	जन्मकाल के अनुसार ग्रह के शुभाशुभ फल का विचार	३५१
१४४.	व्ययभाव सम्बन्धी सहमों के फलित	३५२
१४५.	सहम के सम्बन्ध में विचारणीय विषय	३५२
१४६.	दशा सम्बन्धी विचार	३५३
१४७.	फल का स्पष्टीकरण	३५३
१४८.	सूर्य की दशा का फलित	३५४
१४९.	चन्द्र की दशा का फलित	३५४
१५०.	मंगल की दशा का फलित	३५५
१५१.	बुध की दशा का फलित	३५५
१५२.	गुरू की दशा का फलित	३५६
१५३.	शुक्र की दशा का फलित	३५६
१५४.	शनि की दशा का फलित	३५७
१५५.	अन्तर्दशाओं के फलित	३५७
१५६.	सूर्य की अन्तर्दशाओं के फलित	३५७
१५७.	चन्द्र की अन्तर्दशा का फलित	३५८

क्र०सं०	विषय	पृष्ठसंख्या
१५८.	मंगल की अन्तर्दशा का फलित	३५८
१५९.	बुध की अन्तर्दशा का फलित	३५८
१६०.	गुरू की अन्तर्दशा का फलित	३५९
१६१.	शुक्र की अन्तर्दशा का फलित	३५९
१६२.	शनि की अन्तर्दशा का फलित	३५९
१६३.	लग्न की दशा का फलित	३६०
१६४.	लग्न की अन्तर्दशा के फल	३६१
१६५.	ग्रहों की अन्तर्दशाओं के फलित	३६१
१६६.	सूर्य की दशा में ग्रहों की अन्तर्दशा का फल	३६१
१६७.	चन्द्र की दशा में अन्तर्दशा का फल	३६२
१६८.	मंगल की दशा में अन्तर्दशा का फल	३६२
१६९.	बुध की दशा में अन्तर्दशा का फल	३६२
१७०.	गुरू की दशा में अन्तर्दशा का फल	३६३
१७१.	शुक्र की दशा में अन्तर्दशा का फलित	३६३
१७२.	शनि की दशा में अन्तर्दशा का फलित	३६४
१७३.	राहु की दशा में अन्तर्दशा का फलित	३६४
१७४.	केतु की दशा में अन्तर्दशा का फलित	३६५
१७५.	वर्षेश की दशा के सम्बन्ध में विचार	३६५
१७६.	दशा-फल के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण समीक्षा	३६६

परिशिष्ट

१.	मास-सम्बन्धी फलित	३६७
२.	मासेश के फलित	३६८
३.	मासेश सूर्य के फलित	३६८
४.	मासेश चन्द्र के फलित	३६८
५.	मासेश मंगल का फलित	३६९
६.	मासेश बुध का फलित	३६९
७.	मासेश गुरू का फलित	३६९
८.	मासेश शुक्र का फलित	३६९

क्र०सं०	विषय	पृष्ठसंख्या
९.	मासेश शनि का फलित	३६९
१०.	भावगत मासेश के फलित	३७०
११.	मासकुण्डली में भावगत मुन्था के फलित	३७१
१२.	मासकुण्डली में भावगत ग्रहों के फलित	३७२
१३.	मासकुण्डली में स्थित सूर्य के भावगत फलित	३७२
१४.	मासकुण्डली में भावगत चन्द्र के फल	३७३
१५.	मासकुण्डली में भावगत मंगल के फलित	३७३
१६.	मासकुण्डली में भावगत बुध के फलित	३७४
१७.	मासकुण्डली में भावगत गुरू के फलित	३७५
१८.	मासकुण्डली में भावगत शुक्र के फलित	३७६
१९.	मासकुण्डली में भावगत शनि के फलित	३७७
२०.	मासकुण्डली में भावगत राहु के फलित	३७७
२१.	फल के सम्बन्ध में विशेष विचार	३७८
२२.	भावों में ग्रहों के नवांशकों के फलित	३७८
२३.	नवांश के फल के सम्बन्ध में विशेष विचार	३८१
२४.	वर्षकुण्डली से सम्बन्धित मासकुण्डली का विचार	३८१
२५.	मासकुण्डली सम्बन्धी योगों का विचार	३८१
२६.	मासदशा सम्बन्धी विचार	३८४
२७.	ग्रहों की अन्तर्दशा के फलित	३८५
२८.	दशा तथा अन्तर्दशा के सम्बन्ध में विशेष विचार	३८५
२९.	दिन लग्न कुण्डली का विचार	३८६
३०.	दिनेश का विचार	३८६
३१.	दिन-कुण्डली में मुंथा का फल	३८६
३२.	मुंथेश का फल	३८६
३३.	भागवत ग्रहों के फलित	३८६
३४.	चन्द्र का विशेष फलित	३८८
३५.	चन्द्र के सम्बन्ध में अन्य विचार	३८८
३६.	दिन लग्न कुण्डली में लग्न के नवांश का फल	३८९
३७.	प्रत्येक भाव के नवांशक के फलित	३८९
३८.	भाव के नवांश सम्बन्धी फलित का निष्कर्ष	३९०
३९.	दिनकुण्डली सम्बन्धी योगों का विचार	३९०
४०.	दिन के फलित के सम्बन्ध में अन्यान्य विचार	३९२

क्र०सं०	विषय	पृष्ठसंख्या
४१.	चन्द्र की अवस्थाओं के फलित	३९३
४२.	दिनेश का फलित	३९३
४३.	कालहोरेश के फलित का विचार	३९३
४४.	कालहोरेश का विवरण	३९४
४५.	कालहोरेश सूर्य के फलित	३९४
४६.	कालहोरेश चन्द्र के फलित	३९५
४७.	कालहोरेश मंगल के फलित	३९५
४८.	कालहोरेश बुध के फलित	३९६
४९.	कालहोरेश गुरू के फलित	३९७
५०.	कालहोरेश शुक्र के फलित	३९७
५१.	कालहोरेश शनि के फलित	३९८
५२.	अन्य फलित का विचार	३९९
५३.	भोजन सम्बन्धी विचार	४००
५४.	ग्रहों के शाक	४०३
५५.	चन्द्र की अवस्था के अनुसार भोजन का विचार	४०३
५६.	तात्कालिक चन्द्र के द्वारा भोजन का विचार	४०३
५७.	चन्द्र के वास जानने का क्रम	४०४
५८.	आखेट (शिकार) सम्बन्धी विचार	४०५
५९.	तारा जानने का क्रम	४०५
६०.	स्वप्न का विचार	४०७
६१.	दिन-दशा का फलित	४०८
६२.	अन्य प्रकार से दशा का फलित	४०८
६३.	भविष्य-पत्र के निर्माण में विचार की दिशा	४०९
६४.	मध्यम ग्रहों की तालिका	४०९



॥ श्री ॥

ताजक-विज्ञान

(वर्ष-फलित-विज्ञान)

प्रथम प्रकाश

मंगलाचरण

यस्य प्रसादकलया वधिरः शृणोति पङ्गुः प्रधावति जवेन च वक्ति मूकः।
अन्धः प्रपश्यति सुतं लभते च बन्ध्या तं देवमेव वरदं शरणं गतोऽस्मि ॥

श्रीरङ्गेशो वृषाद्रीशो वरदो यदुशैलराट्।
पोष्यः शिष्यो गुरुः पुत्रो यस्य तं गुरुमाश्रये ॥

सन्दर्भः—ज्योतिष के जिज्ञासु के लिए संज्ञा-प्रकरण प्रस्तुत किया जाता है। सबसे प्रथम पञ्चाङ्ग सम्बन्धी ज्ञान अपेक्षित है।

पञ्चांग का अर्थः—१–तिथि। २–वार। ३–नक्षत्र। ४–योग। ५–करण। इन पाँच बातों को जिससे जाना जाय उसे पञ्चांग कहते हैं। पञ्चांग के ही तिथिपत्र, पत्रा और जन्त्री नाम है।

संवत् का विवरणः—महाराजा वीर विक्रमादित्य का प्रचालित वत्सर संवत्सर कहलाता है। संवत्सर के ही वत्सर, अब्द, हायन, शरत्, समा आदि नाम हैं। विक्रमादित्य के द्वारा चालू संवत् के १३५ वर्षों बाद राजा शालिवाहन ने अपना शक चलाया। जिसका विशेष प्रसार दक्षिण भारत में है। विक्रम संवत् में १३५ व्यवकलन (घटाना) करने पर शालिवाहन शक निकल आता है। इसी प्रकार शालिवाहन शक में १३५ संकलन (जोड़ना) करने पर विक्रम संवत् निकल आता है।

उदाहरणः—आजकल विक्रमी संवत् २०२३ चालू है। इसमें शक क्या है? यह जानने के लिए २०२३ में १३५ को व्यवकलन किया। २०२३–१३५ = तो १८८८ शेष बचे। अतः फलित यह हुआ कि, संवत् २०२३ में १८८८ शक है। इसी प्रकार शक में १३५ को संकलन किया। १८८८+१३५ = २०२३। तो २०२३ हुए। इससे यह अर्थ हुआ कि शक १८८८ में संवत् २०२३ है।

संवत् चैत्र शुक्ला प्रतिपत् (परिवा या एकम) तिथि से आरम्भ होता है। शास्त्र में वर्णन है कि—

चैत्रे मासि जगद् ब्रह्मा ससर्ज प्रथमेऽहनि ॥

श्री ब्रह्माजी ने चैत्र शुक्ला प्रतिपदा को जगत् की सृष्टि की थी। अतः इसी पुण्य पर्व से नवीन वैक्रम संवत् आरम्भ होता है। शक का आरम्भ मेष संक्रान्ति (प्रायः १३ या १४ अप्रैल) से आरम्भ होता है।

युगों का विवरणः—काल के चक्र को युग कहते हैं। युग चार हैं। १-सत्य (कृत) युग। २-त्रेता युग। ३-द्वापर युग। ४-कलियुग। चार लाख और बत्तीस हजार वर्षों का कलियुग है। कलियुग के वर्षों से दुगुने वर्षों (८६४०००) का द्वापर युग होता है। कलियुग से तिगुने वर्षों (१२९६०००) का त्रेतायुग होता है। कलियुग से चौगुने वर्षों (१७२८०००) का कृतयुग होता है। चारों युगों का महायुग, ४३२०००० वर्षों का होता है। कल्प के आरम्भ से १७०६४००० वर्षों के बाद सृष्टि आरम्भ हुई।

वैक्रम संवत् से पहिले धर्मराज युधिष्ठिर का संवत् चालू था। यह संवत् इन्द्रप्रस्थ (दिल्ली) में चालू हुआ था। जो कलियुग के ३०४४ वर्षों तक चालू रहा। तदनन्तर विक्रमादित्य ने उज्जैन में और शालिवाहन ने नर्मदा नदी के दक्षिण भाग में अपने संवत् और शक को चालू किया।

शक में ३१७९ जोड़ने से कलियुग का गताब्द (बीते हुये वर्ष) निकल आता है।

उदाहरणः—शक १८८८ में कलियुग को आये कितना समय व्यतीत हो गया है? यह जानने के लिए शक १८८८ में ३१७९ को जोड़ा तो १८८८ + ३१७९ = ५०६७ हुए। अर्थात् संवत् २०२३ या १८८८ शक में कलियुग को आये ५०६७ वर्ष बीत गये।

नोटः—धर्म-विशेष या सम्प्रदाय विशेष का भी संवत् होता है। उदाहरणार्थ, जैसे—श्रीरामानुज संवत्। विक्रम संवत् १०७४ तथा शक ९३९ में मेष संक्रान्ति के आर्द्रा नक्षत्र में श्रीरामानुज स्वामी का आविर्भाव हुआ। इस समय यानी संवत् २०२३ में श्रीरामानुज संवत् २०५० है। इसका सूक्ष्म प्रचार श्रीसम्प्रदाय में है। इसी प्रकार अन्यान्य मतों में भी संवत् हैं।

संवत् के मासों का विवरणः—एक संवत् में १२ मास (महीने) होते हैं। मासों के क्रमशः नामः—१-चैत्र। २-वैशाख। ३-ज्येष्ठ। ४-आषाढ़। ५-श्रावण (सावन)। ६-भाद्रपद (भादो)। ७-आश्विन (असोज या क्वार)। ८-कार्तिक। ९-मार्गशीर्ष (मगसिर या अगहन)। १०-पौष। ११-माघ। १२-फाल्गुन।

प्रधानतः दो प्रकार के मास हैं। १-सौर मास। २-चांद्र मास। सौर मास संक्रान्ति से आरम्भ होता है। इसका प्रचार बंगाल तथा पञ्जाब आदि में है। अन्य

प्रान्तों में चांद्र मास का प्रचार है। चांद्र मास भी दो प्रकार का है। १–अमान्त मास। पौर्णिमान्त मास। एक अमावास्या (अमावस) से दूसरी अमावास्या तक अमान्त मास है। इसका प्रचार दक्षिण भारत में है। एक पूर्णिमा (पूनो) से दूसरी पूर्णिमा तक पौर्णिमान्त मास है। उत्तर-प्रदेश आदि प्रान्त में इसी का प्रचार है।

अधिक मास का विवरण:—अंग्रेजी में अधिक मास वाले साल को 'लीप इयर' और हिन्दुस्तानी में 'लौंद का साल' कहते हैं। वैसे तो वर्ष में बारह महीने होते हैं किन्तु जब अधिक मास होता है तब उस साल तेरह महीने होते हैं। प्रायः एक अधिक मास के बाद बत्तीस महीने, सोलह दिन और चार घड़ी के अन्तर से दूसरा अधिक मास होता है। चैत्र मास से लेकर आश्विन मास तक ही कोई-सा मास अधिक मास होता है। इन सात महीनों के अतिरिक्त और कोई-सा मास अधिक मास नहीं हो सकता। अधिक मास में पहिले शुक्लपक्ष और बाद में कृष्णपक्ष होता है। अधिक मास में संक्रान्ति नहीं होती। अधिक मास में विवाह आदि कोई शुभ कार्य भी नहीं होता है।

अधिक मास जानने का मोटा क्रम :—जिस वर्ष अधिक मास जानना हो, उस वर्ष के शक में ९२५ घटाकर जो शेष बचे, उसमें १९ से भाग देना। शेष संख्या के अनुसार अधिक मास जानना।

३ शेष बचने पर चैत्रमास अधिक मास होता है। ११ शेष से वैशाख मास, शून्य० तथा ८ शेष बचने से ज्येष्ठ मास, १३ शेष रहने से आषाढ़ मास, ५ शेष से श्रावण, १४ शेष से भाद्रपद तथा २ शेष रहने से आश्विन अधिक मास होता है। यदि उक्त अङ्कों के अतिरिक्त अन्य कोई अङ्क शेष बचता है तो अधिक मास नहीं होता है।

उदाहरण :—संवत् २०२३ यानी शक १८८८ में अधिक मास कौन-सा मास है? यह जानने के लिए शक १८८८ में ९२५ घटाये तो १८८८–९२५ = ९६३ शेष बचे। इनमें १९ से भाग दिया तो ५० लब्धि आये और १३ शेष बचे। अतः इस वर्ष अधिक मास होगा। १३ से आषाढ़ मास आता है किन्तु उसमें संक्रान्ति है अतः आषाढ़ न होकर श्रावण अधिक मास होगा।

नित्य सिद्धान्त :—चैत्रशुक्ला प्रतिपदा से एक एक मास से अमावस्या पर्यन्त जब मेष आदि संक्रान्ति नहीं आती तभी वह मास अधिक मास होता है।

क्षयमास का विवरण :—जिस प्रकार हर तीसरे वर्ष बाद वर्ष में अधिक मास का होना सम्भव है, उसी प्रकार प्रायः १४१ वर्षों के बाद क्षयमास का होना सम्भव है। कदाचित् १९ वर्षों के बाद भी क्षयमास का होना सम्भव है। कार्तिक, मार्गशीर्ष और पौष, इन तीन मासों में से ही कोई-सा मास क्षय होता है। क्षयमास में

क्रमशः शुक्ल पक्ष और कृष्ण पक्ष का क्षय होता है। क्षयमास में दो संक्रान्तियाँ होती हैं। जिस वर्ष में क्षयमास होता है उस वर्ष में दो अधिक मास होते हैं। एक अधिक मास, क्षयमास से तीन महीने पहिले और दूसरा अधिक मास, क्षयमास के तीन महीने बाद होता है। क्षयमास में कोई कार्य नहीं होता है।

पक्ष का विवरण—मासों के शास्त्रीय नाम निराधार न होकर साधार हैं। जैसे, पूर्णिमा तिथि को चित्रा नक्षत्र होने के कारण उस मास का नाम 'चैत्र' रखा गया है। पूर्णिमा को विशाखा नक्षत्र होने के कारण उस मास का नाम 'वैशाख' रखा गया है। इत्यादि। इस प्रकार मासों के नामकरण का रहस्य है। प्रत्येक मास में दो पक्ष होते हैं। १-कृष्ण पक्ष। २-शुक्ल पक्ष। प्रतिपदा से अमावस्या तक कृष्ण पक्ष और प्रतिपदा से पूर्णिमा तक शुक्ल पक्ष होता है। कृष्ण पक्ष में अंधेरी रात्रि में शुक्ल पक्ष में चांदनी रात्रि में होती है। कृष्ण पक्ष को 'वदि' और शुक्ल पक्ष को 'सुदि' कहते हैं।

एक पक्ष प्रायः पन्द्रह दिन का होता है। जब पक्ष में कोई तिथि बढ़ती है तो वह पक्ष सोलह दिन का होता है। जब पक्ष में कोई तिथि घटती है तो वह पक्ष चौदह दिन का होता है। कभी-कभी दो तिथियाँ एक पक्ष में घट जाती हैं तो वह पक्ष तेरह दिन का हो जाता है। तेरह दिन के पक्ष का फल बड़ा अशुभ माना गया है। कृष्ण पक्ष में तिथि का घटना शुभ और बढ़ना अशुभ है। शुक्ल पक्ष में तिथि का बढ़ना शुभ और घटना अशुभ माना जाता है। जब पक्ष में कोई तिथि, घटती-बढ़ती नहीं है तो पक्ष पन्द्रह दिन का होता है।

ईस्वी सन् का विवरण :—शक में ७९ जोड़ने से ईस्वी सन् बनता है। इसका आरम्भ प्रायः धन संक्रान्ति के १८ अंश के लगभग पौष मास में होता है। यह जनवरी मास की पहली तारीख से आरम्भ होकर दिसम्बर मास की ३१ तारीख को समाप्त होता है। रात्रि के १२ बजे से प्रत्येक तारीख आरम्भ होती है।

अंग्रेजी मासों के नाम तथा दिन :—१-जनवरी ३१। २-फरवरी २८ (२९)। ३-मार्च ३१। ४-एप्रिल ३०। ५-मई ३१। ६-जून ३०। ७-जुलाई ३१। ८-अगस्त ३१। ९-सेप्टेम्बर ३०। १०-अक्टूबर ३१। ११-नवम्बर ३०। १२-दिसम्बर ३१।

नोट :—जिस वर्ष ईस्वी सन् को ४ से भाग देने पर शून्य शेष बचता है, उस वर्ष फरवरी २९ दिन की होती है। शेष सन् में २८ दिन की होती है।

(१) उदाहरण :—संवत् २०२३ यानी १८८८ शक में कौन-सा ईस्वी सन् आरम्भ होगा? यह जानने के लिए शक १८८८ में ७९ जोड़े तो १८८८ + ७९ = १९६७ हुए। अतः फलित निकला कि, शक १८८८ के पौष मास में ईस्वी सन् १९६७ आरम्भ होगा।

(२) उदाहरण :—ईस्वी सन् १९६७ को ४ से भाग दिया तो १९६७ ÷ ४ = ३ शेष बचे। अतः फलित निकला कि, ईस्वी सन् १९६७ की फरवरी २९ दिन न होकर २८ दिन की होगी।

हिजरी सन् का विवरण :—यह मुसलमानी सन् है। शक में ५०२ घटाने पर हिजरी सन् बनता है। इसका आरम्भ मोहर्रम महीने की पहिली तारीख से होता है। सुदि या शुक्ल पक्ष में पहिली बार चन्द्रमा के उदय के अगले दिन महीने का आरम्भ होता है। हिजरी सन् के महीनों के नाम :—१-मोहर्रम। २-सफर। ३-रबी-उल अव्वल। ४-रबी-उल-आखिर। ५-जमादी-उल-अव्वल। ६-जमादी-उल-आखर। ७-रजब। ८-साबान। ९-रमज़ान। १०-सव्वाल। ११-जिल्काद। १२-जिलहज।

पारसी सन् का विवरण :—यह 'इयज्दे जर्दी' कहलाता है। शक में ५५३ घटाने से पारसी सन् होता है। इसका प्रारंभ भाद्रपद मास से होता है।

यहूदी सन् का विवरण :—शक में ३८३८ जोड़ने से यहूदी सन् होता है। यह प्रायः आश्विन कृष्णा प्रतिपदा के लगभग आरंभ होता है।

वार का विवरण :—वार सात हैं। १—रविवार। २—चंद्रवार या सोमवार। ३—मंगलवार या भौमवार। ४—बुधवार। ५—बृहस्पतिवार या गुरुवार। ६—शुक्रवार या भृगुवार। ७—शनिवार।

पंचांग में वार के आदि का एक अक्षर लिखा होता है। जैसे, रविवार का (र), चंद्रवार का (चं) इत्यादि। वार किस समय लगेगा, यह वार प्रवृत्ति है। वार प्रवृत्ति का विचार इसी पुस्तक में अन्यत्र लिखा जायगा। वैसे तो सामान्यतया एक सूर्योदय से दूसरे सूर्योदय तक के समय को एक वार माना जाता है।

वारों में सोमवार, बुधवार, गुरुवार और शुक्रवार को शुभ वार माना जाता है तथा रविवार, मंगलवार और शनिवार को क्रूरवार माना जाता है।

तिथि का विवरण :—सूर्य और चंद्र की गति (चाल) के अन्तर (फर्क) को तिथि कहते हैं। तिथि १५ हैं। पंचांग में तिथियों के क्रमशः अंक लिखे रहते हैं। तिथियों के अंक तथा नाम :—१—प्रतिपदा (परेवा), २—द्वितीया (दोयज), ३—तृतीया (तीज), ४—चतुर्थी (चौथ), ५—पंचमी (पाचें), ६—षष्ठी (छठ), ७—सप्तमी (सातें), ८—अष्टमी (आठें), ९—नवमी (नौमी), १०—दशमी, ११—एकादशी (ग्यारह), १२—द्वादशी (बारह), १३—त्रयोदशी (तेरस), १४—चतुर्दशी (चौदस), १५—पूर्णिमा (पूनो), ३०—अमावास्या (अमावस)।

कृष्ण पक्ष में अमावास्या के ३० अंक और शुक्ल पक्ष में पूर्णिमा के १५ अंक लिखे जाते हैं। शेष तिथियों के अंक क्रमानुसार लिखे जाते हैं। अमावास्या तिथि में सूर्य

और चंद्र एक साथ रहते हैं। जिस समय अमावास्या का अंत होता है, उस समय सूर्य और चंद्र के भोग्य-अंश समान रहते हैं। चंद्रमा तीव्र गतिवाला होने के कारण अमावास्या के उपरान्त सूर्य से आगे बढ़ जाता है। जब चंद्रमा १२ अंश आगे बढ़ जाता है तब प्रतिपदा तिथि समाप्त होती है और जब २४ अंश आगे बढ़ जाता है तब द्वितीया तिथि समाप्त होती है तथा ठीक उसी समय तृतीया तिथि लगती है। प्रति १२ अंश पर तिथि बदलते-बदलते जब चंद्रमा १८० अंश आगे बढ़ जाता है तब पूर्णिमा तिथि समाप्त होती है। इसी प्रकार जब ३० तिथियाँ निकल जाती हैं तब अमावास्या समाप्त होती है। यही कारण है कि, पंचांग में अमावास्या का बोधक ३० अंक लिखा जाता है।

पूर्णिमा और अमावास्या के भेद :—पूर्णिमा के दो भेद हैं। १—अनुमति। २—राका। चतुर्दशी में आ जाने वाली पूर्णिमा को अनुमति कहते हैं। सूर्योदय में होनेवाली पूर्णिमा को राका कहते हैं। इसी प्रकार अमावास्या के भी दो भेद हैं। १—सिनीवाली, २—कुहू। चतुर्दशी से मिश्रित अमावास्या सिनीवाली है और सूर्योदय काल में रहनेवाली अमावास्या कुहू कहलाती है।

तिथि की संज्ञा :—तिथियों की अनेक प्रकार की संज्ञाएँ हैं,जिनका विवरण लेखक के 'मुहूर्त-विज्ञान' में देखिए। यहाँ तिथियों की अत्यंत प्रसिद्ध संज्ञाएँ दी जाती हैं। तिथियों की पाँच संज्ञाएँ है। १—नंदा, २—भद्रा, ३—जया, ४—रिक्ता, ५—पूर्णा। प्रतिपदा, षष्ठी और एकादशी, ये तीन तिथियाँ नंदा कहलाती हैं। द्वितीया, सप्तमी और द्वादशी भद्रा कहलाती हैं। तृतीया, अष्टमी और त्रयोदशी जया कहलाती हैं। चतुर्थी, नवमी और चतुर्दशी रिक्ता तिथि कहलाती हैं। पंचमी, दशमी और पूर्णिमा, पूर्णा तिथि कहलाती हैं। रिक्ता (४-९-१४) तिथि में, अमावास्या में और उसके आगे की प्रतिपदा तिथि में प्रायः शुभ कार्य करने का निषेध है। इसी प्रकार षष्ठी, अष्टमी और द्वादशी तिथि में भी अनेक कार्यों के करने का निषेध है।

तिथि के क्षय (घटना) और वृद्धि (बढ़ना) का विवरण :—सूर्य और चंद्र की गति कभी तेज और कभी मंद रहती है। अतः दोनों की गति सदा एक-सी न रहने के कारण कभी-कभी तिथि का मान घट-बढ़ जाता है। यों तो एक दिन यानी एक सूर्योदय से दूसरे सूर्योदय तक का मान (समय का परिमाण) प्रायः ६० घड़ी या २४ घण्टों का होता है। परन्तु कभी-कभी तिथि का मान घट-बढ़ जाता है।

घटने-बढ़ने की सीमा :—'वाणवृद्धिः रसक्षयः' = अर्थात् तिथि का मान ६५ घड़ी तक बढ़ सकता है और ५६ घड़ी तक घट सकता है। बढ़ी हुई तिथि को वृद्धितिथि और घटी हुई तिथि को क्षयतिथि कहते हैं। क्षयतिथि, सूर्य के उदयकाल में नहीं होती है। वृद्धितिथि, दो दिन सूर्य के उदयकाल में होती है।

जिस दिन दो तिथियाँ, एक ही बार में पूर्ण हो जाती हैं और दूसरे दिन में तीसरी तिथि लगती है तो उसे पंचांगकार पहिली तिथि के नीचे छोटे अक्षरों में लिख देते हैं, इसे तिथिक्षय या अवम कहते हैं। जो तिथि सूर्योदय काल में होती है, उसे ऊपर लिख देते हैं तथा वह दिन, उसी तिथि के नाम से पुकारा जाता है।

नक्षत्रों का विवरण :—आकाश-मण्डल में क्रान्तिवृत्त और राशिचक्र है।

क्रान्तिवृत्त की परिभाषा:—सूर्य जिस मार्ग से एक वर्ष में अपनी यात्रा करता हुआ दृष्टिगोचर होता है, उसे क्रान्तिवृत्त कहते हैं।

राशिचक्र की परिभाषा :—क्रान्तिवृत्त के दोनों ओर आठ अंश तक रहनेवाला जो कटिबंध है, उसे राशिचक्र कहते हैं। राशिचक्र के तीस अंशों के समानता से बारह भाग करने पर बारह संज्ञाओं वाली राशियाँ होती हैं।

बारह राशियों के नाम:—१—मेष, २—वृष, ३—मिथुन, ४—कर्क, ५—सिंह, ६—कन्या, ७—तुला, ८ वृश्चिक, ९—धनु, १०—मकर, ११—कुंभ, १२—मीन।

उक्त राशिचक्र के २७ भाग करने पर अश्विनी आदि २७ नक्षत्र होते हैं।

सत्ताईस नक्षत्रों के नाम :—१—अश्विनी, २—भरणी, ३—कृत्तिका, ४—रोहिणी, ५—मृगशिर, ६—आर्द्रा, ७—पुनर्वसु, ८—पुष्य, ९—अश्लेषा, १०—मघा, ११—पूर्वा फाल्गुनी, १२—उत्तरा फाल्गुनी, १३—हस्त, १४—चित्रा, १५—स्वाति, १६—विशाखा, १७—अनुराधा, १८—ज्येष्ठा, १९—मूल, २०—पूर्वाषाढा, २१—उत्तराषाढा, २२—श्रवण, २३—धनिष्ठा, २४—शतभिषा, २५—पूर्वा भाद्रपदा, २६—उत्तरा भाद्रपदा, २७—रेवती, २८—अभिजित्।

नोट :—प्रत्येक नक्षत्र के चार पाद या चरण होते हैं। उत्तराषाढ़ा नक्षत्र का अन्तिम चौथा भाग तथा श्रवण नक्षत्र का प्रारंभिक पन्द्रहवाँ भाग अभिजित् कहलाता है। इसकी गणना २८वें नक्षत्र में की जाती है। इसका उपयोग विवाह आदि के शोधक शलाका-चक्र में तथा अन्य कुछ थोड़े-से नियत कार्यों में हो पड़ता है।

पंचांग में नक्षत्र के नाम का पहिला अक्षर लिखा रहता है। जैसे—अश्विनी का (अ०), भरणी का (भ०) इत्यादि। नक्षत्र भी घटता-बढ़ता है। नक्षत्र तथा राशियों में ग्रह भ्रमण करते हैं। ग्रह के इस भ्रमण को गोचर कहते हैं। ग्रह नौ हैं।

ग्रहों के नाम :—१—सूर्य या रवि, २—चंद्र या सोम, ३—मंगल या भौम, ४—बुध, ५—बृहस्पति या गुरु, ६—शुक्र या भृगु, ७—शनि या शनैश्चर, ८—राहु, ९—केतु।

कुण्डली में द्वादश भाव या बारह स्थान होते हैं। उनमें क्रम से राशियों के अंक लिखे रहते हैं तथा जो ग्रह जिस राशि में होते हैं उसे उसी राशि में लिखा जाता है।

ग्रह के नाम का भी पहिला अक्षर लिख जाता है। जैसे—सूर्य का (सू०) चंद्र का (चं०) इत्यादि।

चंद्र संचार का विवरण :—अश्विनी नक्षत्र की समाप्ति के समय मेष का चंद्रमा १३ अंश और २० कला पर होता है। भरणी नक्षत्र की समाप्ति के समय मेष का चंद्रमा, २६ अंश और ४० कला पर होता है। कृत्तिका नक्षत्र की समाप्ति के समय वृष का चंद्रमा पूरे १० अंश पर होता है। इसी प्रकार प्रत्येक नक्षत्र में १३ अंश २० कला के हिसाब से २७ नक्षत्रों में तथा बारह राशियों में चंद्रमा भ्रमण करता है।

राशियों की व्यवस्था :—नक्षत्रों के क्रमशः नौ-नौ चरणों की क्रमशः एक-एक राशि बनती है।

नक्षत्रों के चरण	राशियाँ
अश्विनी के ४ चरण, भरणी के ४ चरण और कृत्तिका का १ चरण	मेषराशि
कृत्तिका ३, रोहिणी ४, मृगशिर २	वृषराशि
मृगशिर २, आर्द्रा ४, पुनर्वसु ३	मिथुनराशि
पुनर्वसु १, पुष्य ४, आश्लेषा ४	कर्कराशि
मघा ४, पूर्वा फाल्गुनी ४, उत्तरा फाल्गुनी १	सिंहराशि
उत्तरा फाल्गुनी ३, हस्त ४, चित्रा २	कन्याराशि
चित्रा २, स्वाति ४, विशाखा ३	तुलाराशि
विशाखा १, अनुराधा ४, ज्येष्ठा ४	वृश्चिकराशि
मूल ४, पूर्वाषाढ़ ४, उत्तराषाढ़ १	धनुराशि
उत्तराषाढ़ ३, श्रवण ४, धनिष्ठा २	मकरराशि
धनिष्ठा २, शतभिषा ४, पूर्वा भाद्रपदा ३	कुम्भराशि
पूर्वा भाद्रपदा १, उत्तरा भाद्रपदा ४, रेवती ४	मीनराशि

नक्षत्रों की संज्ञाएँ :—नक्षत्रों की प्रधानतः ६ संज्ञाएँ हैं १—उग्र, २—क्षिप्र, ३—चर, ४—मृदु, ५—तीक्ष्ण, ६—मिश्र।

(१) उग्र संज्ञा के नक्षत्रः—भरणी, रोहिणी, मघा, पूर्वा फाल्गुनी, उत्तरा फाल्गुनी, पूर्वाषाढ़, उत्तराषाढ़, श्रवण, पूर्वा भाद्रपदा, उत्तरा भाद्रपदा इन दस नक्षत्रों की उग्र संज्ञा है।

(२) क्षिप्र संज्ञा के नक्षत्र :—अश्विनी, पुष्य, हस्त—इन तीन नक्षत्रों की क्षिप्र संज्ञा है।

(३) चर संज्ञा के नक्षत्र :—पुनर्वसु, स्वाति, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा—इन पाँच नक्षत्रों की चर संज्ञा है।

(४) मृदु संज्ञा के नक्षत्र:—मृगशिर, चित्रा, अनुराधा, रेवती—ये चार नक्षत्र मृदु कहलाते हैं।

(५) तीक्ष्ण संज्ञा के नक्षत्र :—आर्द्रा, आश्लेषा, ज्येष्ठा, मूल—इन चार नक्षत्रों की तीक्ष्ण संज्ञा है।

(६) मिश्र संज्ञा के नक्षत्र :—भरणी, कृत्तिका, विशाखा—इन तीन नक्षत्रों की मिश्र संज्ञा है।

शुभ नक्षत्र :—रोहिणी, मृगशिर, मघा, हस्त, स्वाति, अनुराधा, मूल, उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढ़, उत्तरा भाद्रपदा, रेवती—ये ग्यारह नक्षत्र प्रत्येक कार्य में शुभ माने गये हैं। इनमें ग्रामप्रवेश, गृहप्रवेश, खेती, बीजवपन, वस्तुओं का संग्रह, कन्या का वरण तथा विवाह आदि कार्य होते हैं।

अश्विनी, पुनर्वसु, पुष्य, चित्रा, श्रवण, धनिष्ठा—इन छः नक्षत्रों में भी विवाह को छोड़कर अन्य शुभ कार्य होते हैं।

मध्यम नक्षत्र :—आर्द्रा, ज्येष्ठा, शतभिषा, पूर्वा फाल्गुनी, पूर्वाषाढ़, पूर्वा भाद्रपदा ये छः नक्षत्र मध्यम हैं।

अशुभ नक्षत्र :—भरणी, कृत्तिका, आश्लेषा—इन तीन नक्षत्रों में प्रायः सभी शुभ कार्यों का करना वर्जित है।

सिंहो यथा सर्वचतुष्पदानां तथैव पुष्यो बलवानृक्षाणाम्।
चन्द्रे विरुद्धेऽप्यथ गोचरेऽपि सिध्यन्ति कार्याणि कृतानि पुष्ये॥

पुष्य नक्षत्र की विशेषता :—जिस प्रकार चौपाये पशुओं में सिंह बलवान् है, उसी प्रकार नक्षत्रों में प्रधान पुष्य है। किसी भी कार्य के करने में कार्य के करने वाले की राशि से चन्द्रमा, चौथे, आठवें या बारहवें स्थान पर नहीं होना चाहिए परन्तु यदि पुष्य नक्षत्र है और चन्द्रमा यदि उक्त स्थान में भी है तो पुष्य नक्षत्र के कारण चन्द्र का अशुभ फल नहीं होता है।

तारा का विचार:—नौ तारा हैं। १—जन्म, २—संपत्, ३—विपत्, ४—क्षेम, ५—प्रत्यरि, ६—साधक, ७—वध, ८—मैत्र, ९—अतिमैत्र। इनमें पहिला तारा मध्यम है। तीसरा, पाँचवाँ और सातवाँ तारा अशुभ होता है, शेष ताराएँ शुभ हैं।

जन्मनक्षत्र से वर्तमान नक्षत्र तक गिनने पर जो संख्या आये, उसमें ९ से भाग देना। जो शेष बचेगा, क्रम से वही तारा होगा।

शुक्लपक्षे बली चन्द्रः कृष्णे तारा बलीयसी ।

कृष्णपक्ष में तारा का बल प्रधान होता है और शुक्ल पक्ष में चन्द्रमा का बल प्रधान माना जाता है ।

सूर्य के नक्षत्र :—रोहिणी, मृगशिर, पूर्वा फाल्गुनी, उत्तरा फाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, उत्तराषाढ़, शतभिषा, पूर्वा भाद्रपदा, उत्तरा भाद्रपदा—ये पन्द्रह सूर्यनक्षत्र कहलाते हैं ।

चन्द्र के नक्षत्र :—अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा, पूर्वाषाढ़, श्रवण, धनिष्ठा, रेवती-ये बारह नक्षत्र चन्द्रनक्षत्र कहलाते हैं ।

नक्षत्रों के चार चरणों के अक्षर :—प्रत्येक नक्षत्र के चारों चरणों में प्रत्येक चरण के अनुसार अक्षर निर्दिष्ट है । इन अक्षरों का काम बालक के जन्म का नाम रखने में पड़ता है । बालक के जन्म के समय जिस नक्षत्र का जो चरण होता है, उसका जो निर्दिष्ट अक्षर है, उसी पर बालक का नाम रखा जाता है । अर्थात् नक्षत्र के चरण का निर्दिष्ट अक्षर ही नाम का पहिला अक्षर होता है । उदाहरणार्थ, जैसे—किसी बालक का जन्म अश्विनी नक्षत्र के तीसरे चरण में हुआ है । तीसरे चरण का निर्दिष्ट अक्षर 'चो' है । अतः ऐसा नाम रखा जायगा, जिसके आरंभ में 'चो' अक्षर हो, ऐसा नाम 'चोलराज' है ।

नोट :—किस समय किस नक्षत्र का कौन-सा चरण है ? यह जानने का क्रम आगे लिखा जायगा ।

जिसके नाम का पहिला अक्षर जिस नक्षत्र का होगा, उसका वही नक्षत्र होगा, जिस चरण का होगा वही चरण होगा । इसी प्रकार जिस राशि में होगा वही राशि होगी । उदाहरणार्थ जैसे—'नारायणदास' नाम का पहिला अक्षर 'ना' है । अनुराधा के पहिले चरण का 'ना' अक्षर है । अतः नारायणदास का नक्षत्र 'अनुराधा' है और उसका प्रथम चरण है । 'ना' अक्षर वृश्चिक राशि में है, अतः राशि वृश्चिक है । इसी प्रकार सर्वत्र जानना । यहाँ नक्षत्रों के चरणों के अक्षरों की सारिणी दी जाती है ।

नक्षत्र	१	२	३	४	नक्षत्र	१	२	३	४	नक्षत्र	१	२	३	४
अश्विनी	चू	चे	चो	ला	मघा	मा	मी	मू	मे	मूल	ये	यो	भ	भी
भरणी	ली	लू	ले	लो	पूर्वाफाल्गुनी	मो	टा	टी	टू	पूर्वाषाढ	यू	ध	फ	ढ
कृतिका	अ	इ	उ	ए	उत्तराफाल्गुनी	टे	टो	प	पी	उत्तराषाढ	भे	भो	ज	जी
रोहिणी	ओ	वा	वी	वू	हस्त	पू	ष	ण	ठ	श्रवण	खी	खू	खे	खो
मृगशिर	वे	वो	क	ङ	चित्रा	पे	पो	र	रि	धनिष्ठा	गा	गी	गू	गे
आर्द्रा	कु	घ	ङ	छ	स्वाति	रू	रे	रो	ता	शतभिषा	गो	सा	सी	सू
पुनर्वसु	के	को	ह	हो	विशाखा	तो	तू	ने	तो	पूर्वा भाद्रपद	से	सो	दा	दी
पुष्य	कू	हे	हो	डा	अनुराधा	ना	नी	नु	थी	उत्तरा भाद्रपद	दू	थ	झ	ञ
आश्लेषा	डी	डू	डे	डो	ज्येष्ठा	नो	या	यी	यू	रेवती	दे	दो	च	चि

राशियों के अक्षरों की सारिणी

मेष	चू, चे, चो, ला, ली, लू, ले, लो, अ	तुला	रा,री,रू,रे,रो,ता,ती, तू,ते
वृष	इ, उ, ए, ओ, वा, वी, वू, वे, वो	वृश्चिक	तो,न,नी,नू,ने,नो,या,यी,यू
मिथुन	का, की, कु, घ, ङ, छ, के, को, ह	धन	ये,यो,भ,भी, भू,ध, फ,ढ़,भे
कर्क	ही, हू, हे, हो, डा, डी, डू, डे, डो	मकर	भो,ज,जी,खी,खू,खे,खो,ग,गी
सिंह	मा, मी, मू, मे, मो, टा, टी, टू, टे	कुंभ	गू,गे,गो,सा,सी,सु,से,सो,द
कन्या	टो, पा, पी, पू, ष, ण, ठ, पे, पो	मीन	दी,दू,थ,झ,ञ,दे, दो,च,ची

नोट :—यदि किसी अक्षर की मात्रा न भी मिले तो उस अक्षर से ही राशि लेनी। जहाँ दो अक्षर मिले हों, वहाँ पहिले अक्षर से राशि लेनी। जैसे—'प्रेम' नाम का पहिला अक्षर 'प' है किन्तु 'म' नहीं है, अतः प्रेम की राशि कन्या है। इस प्रकार कृष्ण नाम का पहिला अक्षर 'क' है। अतः मिथुन राशि है। इत्यादि।

महानक्षत्र का विवरण :—पंचांग में जो प्रतिदिन के नक्षत्र लिखे रहते हैं, वे चन्द्रनक्षत्र हैं। १३ या १४ दिन में सूर्य प्रत्येक नक्षत्र को बदलता है। यह महानक्षत्र या सूर्यनक्षत्र कहलाता है। पंचांग में यह भी लिखा रहता है। जैसे—आर्द्रायां रविः, पुनर्वसौ अर्कः, पुष्ये सूर्यः इत्यादि। उसके आगे घड़ी-पल लिखे होते हैं। जिसका अर्थ यह है कि, सूर्य के उदय के बाद इतने घड़ी-पलों पर सूर्य इस नक्षत्र पर आया। सूर्य नक्षत्र से वर्षा तथा मुहूर्त आदि का विचार होता है।

योग का विवरण :—गणना के समय अश्विनी नामक आदि बिंदु से सूर्य और चन्द्रमा की दूरी को अंशों में जोड़ने से वर्तमान योग होता है। योग २७ हैं।

योगों के क्रमशः नाम:—१—विष्कुम्भ, २—प्रीति, ३—आयुष्मान्, ४—सौभाग्य, ५—शोभन, ६—अतिगंड, ७—सुकर्मा, ८—धृति, ९—शूल, १०—गण्ड, ११—वृद्धि, १२—ध्रुव, १३—व्याघात, १४—हर्षण, १५—वज्र, १६—सिद्धि, १७—व्यतिपात, १८—वरीयान्, १९—परिघ, २०—शिव, २१—सिद्धि, २२—साध्य, २३—शुभ, २४—शुक्ल, २५—ब्रह्म, २६—ऐन्द्र, २७—वैधृति।

पंचांग में योग के नाम का पहिला अक्षर लिखा रहता है। उसके आगे घड़ी-पल लिखे होते हैं। विष्कुम्भ और वज्र योग के आरंभ की ३ घड़ी शुभ कार्य में वर्जित हैं, फिर बाद की घड़ियाँ शुभ होती हैं। परिघ योग का पूर्वार्ध (पहिला आधा भाग) वर्जित है। शूल की आरंभ की ५ घड़ी, व्याघात की आरंभ की ९ घड़ी और गंड तथा प्रतिगंड की आरंभ की ६ घड़ी निषिद्ध है। बाद की घड़ियाँ शुभ होती हैं। व्यतिपात और वैधृति, ये दोनों योग पूरे ही निषिद्ध हैं।

करण का विवरण :—तिथि के आधे भाग को करण कहते हैं। करण ११ हैं। जिनमें ७ चर करण हैं और ४ स्थिर करण हैं।

चर करणों के नाम :—१—बव, २—बालव, ३—कौलव, ५—तैतिल, ५—गर, ६—वणिज, ७—विष्टि (भद्रा)।

स्थिर करणों के नाम :—१ शकुनि, २ चतुष्पद, ३ नाग, ४ किंस्तुघ्न।

प्रत्येक तिथि में दो-दो करण बीतते हैं। शुक्लपक्ष की प्रतिपदा तिथि में बव नाम का पहिला करण होता है। कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी तिथि के उत्तरार्ध (दूसरा आधा भाग) में शकुनि करण होता है। अमावास्या तिथि के पूर्वार्ध में चतुष्पाद करण और उत्तरार्ध में नागकरण होता है। शुक्लपक्ष की प्रतिपदा तिथि के पूर्वार्ध में किंस्तुघ्न करण होता है।

विष्टिकरण को भद्रा भी कहते हैं। प्रत्येक शुभ कार्य में भद्रा निषिद्ध है। पंचांग में भद्रा का 'भ' लिखकर उसके आगे घड़ी-पल लिखे रहते हैं। फिर उसके आगे उपरान्त (बाद) का 'उ०' अथवा यावत् (तक) का 'या' लिखा होता है। जिसका अर्थ है कि, सूर्योदय से इतने घड़ी-पलों के उपरान्त (बाद) भद्रा आरंभ होगी अथवा सूर्योदय से इतने घड़ी-पलों यावत् (तक) भद्रा रहेगी। भद्रा के अंत की ३ घड़ी पुच्छ कहलाती है। बड़ी भारी आवश्यकता होने पर ही इनको काम में लाया जा सकता है। आवश्यकता में पूर्वार्धजा भद्रा रात्रि में तथा परार्धजा भद्रा दिन में काम में लायी जा सकती है परन्तु जहाँ तक भी हो संपूर्ण भद्रा को ही त्यागना उचित है।

नोट :—तिथि, नक्षत्र, योग और करण आदि के आगे जो घड़ी-पल लिखे होते हैं, उनका यही अर्थ है कि, सूर्योदय काल से इतने घड़ी-पल तक यह तिथि आदि है। ज्योतिष की गणित घड़ी-पल आदि में चलती है। यहाँ समय-मान दिया जाता है।

षड्भिः प्राणैर्विनाडी स्यात् तत्षष्ठ्या नाडिका स्मृता।
नाडीषष्ठ्या च नाक्षत्रमहोरात्रं प्रकीर्तितम्॥

स्वाभाविक रूप से जितनी देर में छः बार श्वास आता है, उतना समय एक विनाडी या विपल होता है। ६० विनाडी की एक नाड़ी (घड़ी) होती है। छः श्वासों का १ विपल, ६० विपल का १ पल, ६० पलों को एक घड़ी, ६० घड़ियों का नाक्षत्र १ अहोरात्र (दिन-रात) होता है।

२½ विपलों का १ सेकेण्ड, २½ पलों का १ मिनट, २४ सेकेण्डों का १ पल, २४ मिनिटों की १ घड़ी, २½ घड़ियों का १ घण्टा, ३ घण्टों का १ प्रहर (पहर), ८ प्रहर या २४ घण्टों की १ दिन-रात होती है।

घड़ी-पलों से घण्टा-मिनट बनाने का क्रम :—

घड़ी-पलों को अलग-अलग २ से गुणा करना। फिर २ से गुणा की गयी घड़ियों की संख्या में ५ से भाग देना। लब्धि को पृथक् रखना। शेष को ६० से गुणा करके

उसमें २ से गुणा किये गये पलों को जोड़ना। फिर ५ से भाग देना। लब्धि को पृथक् रखना। शेष को ६० से गुणा कर ५ से भाग देना। लब्धि को पृथक् रखना। पूरा कट जाने पर फिर आगे क्रिया न करनी। लब्धियों को अनुपात (पहिली आयी लब्धि को पहिले रखना, दूसरी बार आयी लब्धि को उसके बाद, तीसरी बार आयी लब्धि को उसके बाद रखना। इत्यादि। यह क्रम अनुपात है) से रखना तब घण्टा-मिनट और सेकेण्ड होंगे।

नोट :—घड़ी-पलों के घण्टा-मिनट बनाने में यह ध्यान रखना आवश्यक है कि, जो लब्धि आयें, वे यदि रात्रिमान के आधे भाग से पहिले हों तो उन्हें सूर्योदय के घण्टे-मिनटों में जोड़ने से घड़ी-पलों के घण्टे-मिनट बनेंगे।

जो लब्धि आये हैं, यदि वे रात्रिमान के आधे भाग से अधिक हों तो उन्हें सूर्योदय के घण्टे-मिनिटों में जोड़कर २४ घण्टों में यानी २३ घण्टे ५९मिनट और ६० सेकेण्डों में घटाने से घड़ी-पलों के घण्टे-मिनट-सेकेण्ड बनेंगे।

ज्योतिष-शास्त्र का सिद्धान्त है कि, 'अङ्कानां वामतो गतिः' अर्थात् अंकों की क्रिया बायीं ओर से आरंभ होती है। अतएव जोड़ना-घटाना आदि बायीं ओर से प्रारंभ होता है।

घड़ी-पलों से घण्टे-मिनिट बनाने का कल्पित उदाहरण :—माघ शुक्ला पञ्चमी ११ घड़ी १६ पल है। इसके घण्टे-मिनट क्या होंगे ? यह जानना है। इस दिन सूर्योदय का समय प्रातः ६ बज कर २६ मिनट और ३६ सेकेण्ड है। रात्रिमान (सूर्य के अस्तकाल से सूर्य के उदय काल तक के समय को रात्रिमान कहते हैं।) ३२ घड़ी १३ पल है। इस रात्रिमान का अर्धभाग १६ घड़ी, ७ पल और ३० विपल है।

नोट :—ज्योतिष की गणित में एक पाद $\frac{1}{4}$ यानी चौथाई को १५ संख्या में लिखा जाता है। इसी प्रकार द्विपाद $\frac{2}{4}$ यानी आधे को ३० संख्या में तथा पादोन $\frac{3}{4}$ यानी पौन को ४५ संख्या में लिखने की प्रथा है।

पूर्वोक्त क्रम के अनुसार पञ्चमी तिथि की ११ घड़ी को २ से गुणा किया तो २२ हुए। १६ पल को २ से गुणा किया तो ३२ हुए। ११ × २ = २२। १६ × २ = ३२। घड़ी के स्थान में २२ को ५ से भाग दिया तो ४ लब्धि आयी और २ शेष बचे। लब्धि ४ को पृथक् रखा और २ शेष को ६० से गुणा किया तो १२० हुए। इनमें ३२ पल जोड़े १२० + ३२ = १५२ हुए। १५२ को ५ से भाग दिया तो ३० लब्धि आयी और २ शेष बचे। लब्धि को पृथक् रखा और २ शेष को ६०से गुणा किया तो १२० हुए। इनको ५ से भाग दिया तो २४ लब्धि आयी और शून्य ० शेष बचा। यहाँ पूरा कट गया अतः आगे की क्रिया होनी बन्द हो गयी। लब्धियों को

अनुपात से रखा तो ४।३०।२४ हुए। यहाँ यह फलित निकला कि, ११ घड़ी १६ पल के ४ घण्टे ३० मिनट २४ सेकेण्ड हुए।

अब यह जानना है कि यह पञ्चमी तिथि किस समय तक है? अतएव पञ्चमी तिथि के घण्टे-मिनट और सेकेण्डों को सूर्योदय के समय में जोड़ा—

	घण्टे	मिनट	सेकेण्ड
सूर्योदय का समय :—	६	२६	३६
पञ्चमी तिथि का मान :—	४	३०	२४
योग :—	१०	५७	००

यहाँ यह फलित हुआ कि इस दिन पञ्चमी तिथि प्रातः १० बज कर ५७ मिनट तक रहेगी। यहाँ घण्टे-मिनटों की संख्या रात्रिमान के आधे भाग से कम है, अतः सूर्योदय काल में जोड़ कर २४ घण्टों में नहीं घटाया गया है। इस प्रकार नक्षत्र आदि का समय भी निकाला जा सकता है।

घण्टे-मिनटों से घड़ी-पल बनाने का क्रमः—

घण्टे-मिनटों का आधा करके प्रत्येक को ५ से गुणा करना। जहाँ ६० या ६० से अधिक हो वहाँ ६० से भाग देकर शेष रखना और लब्धि को अगली संख्या में जोड़ना। इस प्रकार घण्टे-मिनटों के घड़ी-पल बनते हैं।

घण्टे-मिनटों से घड़ी-पल बनाने का कल्पित उदाहरणः—

४ घण्टे ३० मिनट २४ सेकेण्ड से क्या घड़ी-पल होंगे? यह जानना है अतः पूर्वोक्त क्रम के अनुसार इनका आधा किया तो २ घण्टे १५ मिनट १२ सेकेण्ड हुए। इन्हें ५ से गुणा किया २ × ५ = १०। १५ × ५ = ७५। १२ × ५ = ६०। तो १०।७५।६० हुए। ६० में ६० से भाग दिया तो १ लब्धि आयी और शून्य शेष बचा। ६० के स्थान में शून्य शेष को रखा। अगली संख्या ७५ में १ शेष को जोड़ा तो ७६ हुए। इनमें ६० से भाग दिया तो १ लब्धि आयी और १६ शेष बचे। इन्हें ७६ के स्थान में रखा। १ लब्धि को ऊपर की संख्या १० में जोड़ा तो ११ हुए। यहाँ पर फलित निकला कि, ४ घण्टे ३० मिनिट २४ सेकेण्ड की ११ घड़ी और १६ पल हुए।

दिनमान का विवरण—सूर्य के उदय काल से सूर्य के अस्त काल तक का जो समय है उसे दिनमान कहते हैं। यद्यपि दिनमान बनाने के कई क्रम हैं परन्तु यहाँ एक सरल क्रम प्रस्तुत किया जाता है।

क्रम—जिस स्थान का दिनमान जानना है, पहिले उस स्थान की लग्नसारिणी बनानी। लग्नसारिणी बनाने का क्रम आगे लिखा जायगा। जिस दिन का दिनमान बनाना हो, उस दिन यह देखना कि, आज किस संक्रान्ति के यानी किस राशि के सूर्य के कितने अंश हैं। यह जानकर लग्नसारिणी में उस राशि के अंश के कोष्ठक से सूर्यफल (लग्नसारिणी में बायीं ओर राशि में लिखी रहती हैं तथा सबसे ऊपर के कोष्ठों में शून्य अंश से लेकर २९ अंश तक लिखे होते हैं। राशि के सामने और अंश की संख्या के नीचे के सीधे कोष्ठों में जो घड़ी, पल और विपल के रूप में अंक लिखे होते हैं, उन्हें सूर्यफल कहते हैं।) लेना, फिर उस राशि से सातवीं राशि के उसी अंश के कोष्ठ (कोठे) से सूर्यफल लेना। फिर सातवीं राशि के सूर्यफल में हीन (घटाना) करना। यही अन्तर घड़ी-पल-विपल के रूप में दिनमान होता है।

दिनमान बनाने का कल्पित उदाहरण—काशी या वाराणसी में दिनांक १४-१-६६ को क्या दिनमान होगा ? यह जानना है। इस दिन मकर संक्रान्ति का अथवा मकर राशि के सूर्य का अंश है। मकरराशि से सातवीं राशि कर्क है। पूर्वोक्त क्रम के अनुसार काशी की लग्नसारिणी से मकरराशि के सामने शून्य अंश के नीचे सूर्यफल ५०।५५।२२ हैं। कर्क राशि के सामने शून्य अंश के नीचे सूर्यकाल १७।२१।१३ है। अतः सातवीं राशि के सूर्य फलों में हीन किया

१७	२१	१३
५०	५५	२२ त
२६	२५	५१

२६।२५।५१ अन्तर हुआ। यहाँ यह फलित निकला कि मकर संक्रान्ति के शून्य अंश के दिन २६ घड़ी २५ पल ५१ विपल दिनमान होगा। इस प्रकार प्रत्येक स्थान के प्रत्येक दिन का दिनमान निकाला जा सकता है।

नोट – पूर्वोक्त संख्या में घटाने का रहस्य—तीन संख्याएँ हैं। बायीं ओर की १३ संख्या विपल हैं, उसके नीचे २२ संख्या है। १३ में से २२ घट नहीं सकते अतः ऊपर की संख्या २१ पल में से १ पल की संख्या ली गयी। १ पल के ६० विपल होते हैं। ६० विपल आकर १३ विपल में मिले तो ७३ हुए। अब ७३ में से २२ घटाये तो ५१ शेष बचे। ऊपर पल के स्थान में अब २० संख्या रही, उसके नीचे ५५ हैं, वे भी नहीं घट सकते अतः ऊपर की घड़ी की १७ संख्या में से १ घड़ी ली गयी। एक घड़ी के ६० पल होते हैं। ६० पल २० पल में आकर मिले तो ८० हुए। अतः ८० में से ५५ घटे तो २५ शेष बचे। घड़ी के स्थान में १ घड़ी के चले जाने से १७ की जगह १६ रह गये। इसके नीचे ५८ संख्या है, यह भी नहीं घट सकती। अतः घटाने के लिए ऊपर से ६० घड़ी मिलायी गयी तो १६ में ६० मिलकर ७६ हुए। इनमें से ५० घटाये गये तो २६ शेष बचे। इस प्रकार कम संख्याओं में से अधिक संख्याएँ घट गयीं।

नोट—दिनमान बढ़ता-घटता रहता है। सूर्य की गति के कारण तथा उत्तर-दक्षिण-विभाग के कारण दिनमान में घटा-बढ़ी होती रहती है। सायन मेष संक्रान्ति (२१ मार्च) को तथा सायन तुला संक्रान्ति (२२ सेप्टेम्बर) को दिन और रात्रि का समय बराबर-बराबर रहता है। सायन कर्कसंक्रान्ति (२१ जून) को दिन सबसे बड़ा और रात्रि सबसे छोटी होती है। सायन मकर संक्रान्ति (२१ या २२ दिसम्बर) की रात्रि सबसे बड़ी और दिन सबसे छोटा होता है। यह व्यवस्था उत्तर गोल की है। दक्षिण गोल में इसके विपरीत होता है अर्थात् उत्तर गोल में जब दिन बड़ा होता है तब दक्षिण गोल में रात्रि बड़ी होती है। इत्यादि।

ऋतुओं का विवरण—दो मासों के समय को ऋतु कहते हैं। एक वर्ष में छः ऋतुएँ होती हैं।

ऋतुओं के नामः—१–वसन्त, २–ग्रीष्म, ३–वर्षा, ४–शरद, ५–हेमन्त, ६–शिशिर। मीन-मेष के सूर्य (प्रायः १३ या १४ मार्च से १३ या १४ मई तक) में वसन्त ऋतु होती है। इसी क्रम से आगे-आगे ऋतु होती है। यह नियम ज्योतिष शास्त्र का है परन्तु आयुर्वेद के हिसाब से एक-एक महीने पहिले ऋतु बदलती जाती है। जैसे कुंभ और मीन के सूर्य (१३ या १४ फरवरी से १३ या १४ अप्रैल तक) में वसन्त ऋतु इत्यादि।

अयन का विवरणः—सूर्य जिस मार्ग से गमन करता है, उसे अयन कहते हैं। अयन के दो भेद हैं। १–उत्तर या सौम्य, २–दक्षिण या याम्य। मकर की संक्रान्ति से कर्क की संक्रान्ति तक छः महीने का उत्तरायण होता है और कर्क की संक्रान्ति से मकर की संक्रान्ति तक छः महीने का समय दक्षिणायन है।

गोल का विवरणः—गोल दो हैं। १–उत्तर या सौम्य, २–दक्षिण या याम्य। मेष की संक्रान्ति से तुला की संक्रान्ति तक सौम्यगोल होता है तथा तुला की संक्रान्ति से मेष की संक्रान्ति तक याम्यगोल होता है।

सूर्योदय काल का विवरणः—जहाँ पर जिस समय सूर्य का आधा बिम्ब दृष्टि-गोचर होता है,वह सूर्योदय काल है। यह भी प्रत्येक स्थान का पृथक्-पृथक् होता है।

दिनमान से सूर्योदय काल जानने का क्रमः—जिस दिन का सूर्योदय काल जानना हो, उस दिन के दिनमान से रात्रिमान बनाना। दिनमान को ६० में घटाने से रात्रिमान बनता है।

कल्पित उदाहरणः—दिनमान २७ घड़ी २७ पल है। इसे ६० में घटाया ५९ – २७=३२, ६० – २७ = ३३ तो ३२-३३ शेष बचे। फलित हुआ कि,इस दिन रात्रिमान ३२ घड़ी ३३ पल है।

क्रम :—रात्रिमान को घड़ी में ५ से भाग देना। लब्धि को पृथक् रखना और शेष को ६० से गुणा करके रात्रिमान के पल जोड़ना फिर ५ से भाग देना। लब्धि को पृथक् रखना। शेष को ६० से गुणा करके यदि विपल हों तो उन्हें जोड़ना फिर ५ से भाग देना। यदि संख्या पूरी कट जाती है तो आगे की क्रिया बंद हो जाती है। लब्धियों को अनुपात से रखना। ये क्रमशः सूर्योदय काल के घण्टे-मिनट आदि होंगे।

कल्पित उदाहरण :—रात्रिमान की ३२ घड़ी में ५ से भाग दिया तो ६ लब्धि आयी और २ शेष बचे। लब्धि को पृथक् रखा। शेष २ को ६० से गुणा किया तो १२० हुए। इनमें रात्रिमान के ३३ पल जोड़े तो १५३ हुए। इनमें ५ से भाग दिया तो २६ लब्धि आयी और ३ शेष बचे। लब्धि को पृथक् रखा और ३ शेष को ६० से गुणा किया तो १८० हुए। इनमें ५ से भाग दिया तो ३६ लब्धि आयी और शून्य शेष बचा। लब्धियों को अनुपात से रखा तो ६।२६।३६ हुए। यहाँ फलित हुआ कि, इस दिन प्रातः ६ बजकर २६ मिनट ३६ सेकेण्ड पर सूर्य उदय होगा।

सूर्यास्त काल का विवरण :—दिनमान को ५ से भाग देने पर सूर्य के अस्तकाल के घण्टे-मिनट आदि निकल आते हैं।

कल्पित उदाहरण :—दिनमान २७।२७ है। इसकी २७ घड़ी में ५ से भाग दिया तो ५ लब्धि आयी और २ शेष बचे। लब्धि को पृथक् रखा। शेष २ को ६० से गुणा किया तो १२० हुए, इनमें दिनमान के २७ पल जोड़े तो १४७ हुए। इनमें ५ से भाग दिया तो २९ लब्धि आयी और २ शेष बचे। लब्धि पृथक् रखी। शेष २ को ६० से गुणा किया तो १२० हुए। इनमें ५ से भाग दिया तो २४ लब्धि आयी और शेष शून्य बचा। लब्धियों को अनुपात से रखा ५।२९।२४ हुए। यहाँ यह फलित हुआ कि, इस दिन संध्या के ५ बजकर २९ मिनट २४ सेकेण्ड पर सूर्य का अस्त होगा।

नोट :—सूर्योदयकाल को १२ घण्टे में घटाने से सूर्यास्त काल होता है, इसी प्रकार सूर्यास्तकाल को १२ घण्टे (११।५९।६०) में घटाने से सूर्योदय काल होता है।

कल्पित उदाहरण :—सूर्योदयकाल ६ घंटे २६ मिनट ३६ सेकेण्ड को १२ घण्टे में घटाया ११ − ६ = ५। ५९ − २६ = ३३। ६० − ३६ = २४ तो संध्या के ५ बजकर ३३ मिनट २४ सेकेण्ड सूर्यास्तकाल है। इसी प्रकार सूर्यास्तकाल ५।३३।२४ को १२ घण्टे में घटाया तो ११ − ५ = ६। ५९ − ३३ = २६। ६० − २४ = ३६ प्रातः ६ बजकर २६ मिनट ३६ सेकेण्ड सूर्योदय काल है।

चन्द्रमा के उदय का और अस्त का समय जानने का क्रमः—

कृष्ण पक्ष में चन्द्रमा का उदयकाल तथा शुक्लपक्ष में चन्द्रमा का अस्तकाल जानना अपेक्षित होता है।

तिथिगुणितं रजनीपरिमाणं यमरहितं सितपक्षविमिश्रम्।
वाणशशाङ्कविभाजितलब्धं प्रतिवासरचन्द्रोदयास्तम्॥

१—वर्तमान तिथि को रात्रिमान से गुणा करना। यदि कृष्णपक्ष हो तो गुणित अंक से २ घटाये फिर उनमें १५ से भाग देना। जो अंक लब्ध हो उतनी घड़ी रात्रि के जाने पर चन्द्रमा का उदय होता है।

२—वर्तमान तिथि को रात्रिमान से गुणा करना। यदि शुक्लपक्ष हो तो गुणित (गुणा किये गये) अंक में २ मिलाकर १५ से भाग देना। जो अंक लब्ध हो उतने घड़ी-पल रात्रि बीतने पर चन्द्रमा का अस्त होता है।

कल्पित-उदाहरण :—कृष्णपक्ष की षष्ठी तिथि को कितनी रात्रि गये चन्द्र का उदय होगा? यह जानना है। इस दिन रात्रिमान ३१/०० है। पूर्वोक्त क्रम के अनुसार षष्ठी तिथि के ६ अंक को रात्रिमान की ३१ घड़ी से गुणा किया ६ × ३१ = १८६ हुए। इनमें कृष्ण पक्ष होने के कारण २ घटाये १८६ − २ = १८४ हुए। इनमें १५ से भाग दिया तो १२ लब्धि आयी और ४ शेष बचे। लब्धि घड़ी है और शेष पल है। यहाँ फलित हुआ कि, १२ घड़ी ४ पल रात्रि जाने पर चन्द्रमा का उदय होगा।

नोट :—यदि घण्टे-मिनट जानने हैं तो पूर्वोक्त क्रम से घड़ी-पल के घण्टे-मिनट बना कर सूर्यास्त काल में जोड़ने से घड़ी का टाइम बनेगा।

शुक्लपक्ष की षष्ठी तिथि को चन्द्रमा अस्त किस समय होगा? यह जानना है। इस दिन रात्रिमान ३१/०० है। पूर्वोक्त क्रम से षष्ठी की ६ संख्या को रात्रिमान की ३१ घड़ी से गुणा किया तो १८६ हुए। शुक्ल पक्ष होने के कारण २ जोड़े तो १८८ हुए। इनमें १५ से भाग दिया तो १२ लब्धि आयी और ८ शेष बचे। लब्धि घड़ी है और शेष पल है। यहाँ फलित हुआ कि, इस दिन १२ घड़ी ८ पल रात्रि व्यतीत होने पर चन्द्रमा का अस्त होगा। घड़ी का टाइम जानने के लिए पूर्वोक्त क्रम से घड़ी-पल के घण्टे-मिनट बनाकर सूर्यास्त काल में जोड़ना।

शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा (परिवा) में चन्द्र दर्शन जानने का क्रमः—

चंद्र-दर्शन-सारिणी

	राहु १	राहु २	रा० ३	रा० ४	रा० ५	रा० ६	रा० ७	रा० ८	रा० ९	रा० १०	रा० ११	रा० १२
सूर्य १	४३	५४	५५	५२	५६	५५	५४	५३	५२	५५	५३	५२
सू० २	४८	५१	५४	५८	५७	५७	५५	५३	५०	४६	४७	४७
सू० ३	४४	४७	५६	५७	५९	६३	६३	६१	५६	५१	४९	४४
सू० ४	४८	४९	५३	६०	६४	७३	७७	७७	७२	६६	६२	५२
सू० ५	६४	५८	५९	६४	७१	८२	८९	९४	९३	८२	८२	७२
सू० ६	७९	६९	६५	६५	६८	७८	८८	९७	१०२	१००	९७	८९
सू० ७	८४	७४	६६	६२	६४	६६	७५	८४	८२	९७	९७	९२
सू० ८	७८	७१	६३	५७	५४	५४	५७	६४	७३	७८	८२	६६
सू० ९	६६	६३	५७	५२	४८	४५	४२	४८	५३	५९	६३	६६
सू० १०	५८	५८	५६	५३	५०	४७	४३	४६	४८	५१	५४	५६
सू० ११	५३	५६	५५	५४	५३	५२	५१	४९	५०	५१	५२	५३
सू० १२	५५	५३	५५	५६	५५	५५	५४	५६	५३	५३	५४	५४

चन्द्र दर्शनः—सारिणी में ऊपर के कोष्ठों में राहु की राशियाँ हैं तथा बायीं ओर सूर्य की राशियाँ हैं। जिस मास की शुक्लपक्ष की प्रतिपदा तिथि में चन्द्र का दर्शन होगा या नहीं ? यह जानना हो तो यह देखना कि, इस दिन सूर्य किस राशि में है और राहु किस राशि में है। फिर सूर्य की राशि के सामने के और राहु की राशि के नीचे के कोष्ठ से अंक ले लेना। फिर शुक्ला प्रतिपदा से पहिली अमावास्या के घड़ी-पलों को ६० में घटाना। जो शेष बचे उसमें दिनमान के घड़ी-पल जोड़ना। पलों को छोड़कर यदि घड़ी, सारिणी से लिये गये अंक से अधिक हों तो शुक्लपक्ष की

प्रतिपदा में चन्द्रदर्शन होता है और यदि सारिणी के अंक से कम हों तो चन्द्र दर्शन नहीं होता है।

कल्पित-उदाहरण :—सूर्य तुला राशि में। राहु मेष राशि में। अमावास्या ३४।३४। दिनमान २७।१०। यहाँ शुक्ल प्रतिपदा को चन्द्रदर्शन होगा या नहीं? यह जानना है। अतः पूर्वोक्त क्रम के अनुसार चन्द्रदर्शन सारिणी में तुला राशि के सूर्य के सामने के मेष राशि के राहु के नीचे के कोष्ठ में ८४ अंक है। इन्हें नोट कर

५९।६०
लिया। अमावास्या के घड़ी-पलों को ६० में घटाया ३४।३४ तो २५।२६ शेष बचे।
२५।२६

२५।२६
इनमें दिनमान के २७।१० घड़ी-पल जोड़े २७।१० तो ५२।३६ हुए। यहाँ घड़ी ५२
५२।३६

हैं जो कि सारिणी से लिये गये ८४ अंक से कम हैं। अतः यह फलित निकला कि, इस प्रतिपदा में चन्द दर्शन नहीं होगा किन्तु अगले दिन द्वितीया में चन्द्र दर्शन होगा।

प्रथम बार उदय होने वाले चन्द्रमा के शृङ्ग का विचार :—

शुक्ल पक्ष में प्रथम बार जब चन्द्रमा उदित होता है तब कभी उसका दाहिना शृङ्ग (कोण) ऊँचा होता है और कभी बायाँ शृङ्ग ऊँचा होता है तथा कभी दोनों समान यानी बराबर होते हैं। यह जानने का सरल क्रम प्रस्तुत किया जाता है।

शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा में या द्वितीया में मेष राशि के चन्द्र का उदय होता है तो उस अर्ध-आकृति के चन्द्र का दक्षिण शृङ्ग (दाहिनी ओर का कोण) कुछ उठा हुआ होता है। मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर—इन राशियों के चन्द्र के उदय में उसका बायाँ शृङ्ग (बायीं ओर का कोण) कुछ उठा हुआ होता है। वृष और कुम्भ राशि के चन्द्र के उदय में उसके दोनों शृङ्ग समान रहते हैं।

अयनांश का विवरण :—

दो प्रकार की संक्रान्तियाँ होती हैं। १–सायन। २–निरयन। सायन मेष संक्रान्ति प्रायः २१ मार्च को होती है और निरयन मेष संक्रान्ति प्रायः १४ अप्रैल को होती है। प्रत्येक संक्रान्ति तीस अंशों की होती है। प्रत्येक वर्ष में बारह संक्रान्तियाँ होती हैं। सूर्य के राशि बदलने को संक्रान्ति कहते हैं। राशि के नाम से संक्रान्ति के नाम होते हैं। जैसे मेष संक्रान्ति, वृष संक्रान्ति इत्यादि।

सायन संक्रान्ति और निरयन संक्रान्ति की गति का जो अन्तर है, उसे अयनांश कहते हैं। नवीन-अयनांश, दृश्य-गणित-वेध (जो ग्रह आदि, गणित के द्वारा जिस समय राशि आदि बदलता है, आकाश-मण्डल में टेलिस्कोप यंत्र द्वारा उस समय उसी स्थिति में दिखाई दे। इस प्रकार की गणित को दृश्य-गणित कहते हैं।) द्वारा शुद्ध है अतः इसी अयनांश का यहाँ पर ग्रहण है। अयनांश का उपयोग सायन लग्नस्पष्ट तथा सायन ग्रहस्पष्ट आदि में होता है। परम-अयनांश (सबसे अधिक अयनांश को परम-अयनांश कहते हैं।) ३० अंश का होता है। दृश्यगणित-वेध-सिद्ध-अयनांश, प्रतिमास (हर महीने) ४ विकला और ११ अनुकला बढ़ता है। इस हिसाब से वर्ष भर में ५० विकला और १४ अनुकला बढ़ता है। अयनांश बहुत वर्षों तक बढ़ते-बढ़ते ३० अंश तक पहुँचता है तब फिर घटता है। प्रायः दो हजार, एक सौ पचास वर्षों में अयनांश ३० अंश पर पहुँचता है तब वह परम-अयनांश होता है। शालिवाहनीय शक १८४२ में अयनांश, २२ अंश ४३ कला ४२ विकला ३६ अनुकला था। अतः यही इसका क्षेपक (अलग से मिलायी जाने वाली संख्या को क्षेपक कहते हैं।) २२।४३।४२।३६ है।

अयनांश सारिणी

प्रतिमास गतिः—४ विकला ११ अनुकला। शक १८४२ में मेष संक्रान्तिकालीन क्षेपकः—२२।४३।४२।३६।

वर्ष	१	२	३	४	५	६	७	१०	१४	२१	२८	३५	७०	१०५
अंश	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	१
कला	०	१	२	३	४	५	५	८	११	१७	२१	२९	५८	२७
विकला	५०	४०	३०	२०	११	१	५१	२२	४३	३४	२६	१८	३६	५४
अनुकला	१४	२८	४२	२५	९	२३	३६	१८	१२	४८	२४	०	०	०
वर्ष	१४०	१७५	२१०	२४५	२८०	३१५	३५०	७००	१०५०	१४००	१७५०	२१००	२१५०	
अंश	१	२	२	३	३	४	४	९	१४	१९	२४	२९	२९	
कला	५७	२६	५५	२५	५४	२३	५३	४६	३९	३२	२५	१८	५९	
विकला	१२	३०	४८	६	२४	४२	०	०	०	०	०	०	५१	
अनुकला	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	२६	

अयनांश निकालने का क्रम :—

१—जिस शक का अयनांश निकालना हो यदि वह शक १८४२ शक से आगे का है तो जितने वर्ष आगे का है तो उतने वर्षों के अयनांश सारिणी से अंश आदि अंक लेने फिर उन्हें २२।४३।४२।३६ क्षेपक में जोड़ना, इससे अभीष्ट (चाहे हुए) शक का अयनांश बन जाता है।

२—यदि शक १८४२ से पहिले के शक का अयनांश निकालना है तो जितने वर्ष पहिले है, उतने वर्ष के अयनांश सारिणी से अंश आदि लेकर क्षेपक २२।४३।४२।३६ में घटना। इस क्रिया से अभीष्ट शक का अयनांश बन जायगा।

१—कल्पित उदाहरण :—शक १८५० का अयनांश निकालना है। शक १८५०, शक १८४२ से अधिक है। इस कारण शक १८५० में से शक १८४२को हीन (घटाना) करा तो ८ शेष बचे। अयनांश सारिणी में वर्षों में ८ अंक नहीं है। अतः अयनांश सारिणी से ७ वर्ष के कोष्ठ से चार अंक लिये ०।५।५१।३६। इसी प्रकार १ वर्ष के कोष्ठ से अंक लिये ०।०।५०।१४। इन दोनों का योग किया

०।५।५१।३६
०।०।५०।१४ तो ८ वर्ष के अंक ०।६।४१।५० हुए। अब इन्हें क्षेपक
०।०६।४१।५०

२२।४३।४२।३६ में युक्त किया (जोड़ा) ०।०६।४१।५० तो शक १८५० में
२२।५०।२४।२६

२२।५०।२४।२६ अयनांश है। यह फलित निकला।

१—कल्पित उदाहरण :—शक १८३३ में अयनांश जानना है। वह शक १८४२ से ९ वर्ष पूर्व का है। अयनांश सारिणी में वर्षों में ९ का अंक नहीं है। अतः ७ वर्ष के कोष्ठ के अंक ०।५।५१।३६ लिए और २ वर्ष के कोष्ठ के अंक ०।१।४०।२८ हुए।

इन दोनों का योग किया ०।०५।५१।३६
०।१।४०।२८ तो ९ वर्ष का चालन ०।७।३२।०४
०।७।३२।०४

हुआ। अभीष्ट शक १८३३ स्थिर शक १८४२ के क्षेपक से पूर्व है। अतः ९ वर्ष के

चालन को अभीष्ट शक के क्षेपक में हीन किया $\frac{२२।४३।४२।३६}{०।०७।३२।०४}$ तो २२।३६।१०।३२

शेष बचे। यही शक १८३३ का अयनांश है।

पलभा का विवरण :—

सायन मेष संक्रान्ति (२१ या २२ मार्च) को दिन ठीक मध्याह्न काल (दोपहर के बारह बजे) में समतल भूमि में १२ अंगुल का एक सीधा शंकु (शलाख) खड़ा करना। उसकी छाया को अंगुल-व्यंगुल के रूप में नापना। यही छाया पलभा कहलाती है। पलभा को अक्षप्रभा भी कहते हैं। प्रत्येक स्थान की पलभा पृथक् होती है।

जिस स्थान में शंकु की छाया उत्तर की ओर होती है, वह स्थान लंका से उत्तर में होता है। यदि छाया दक्षिण की ओर होती है तो वह स्थान लंका से दक्षिण में होता है।

यद्यपि पलभा जानने के अन्य कई क्रम हैं परन्तु यहाँ प्रत्येक स्थान की पलभा जानने का सरल क्रम प्रस्तुत किया जाता है। अक्षांश के द्वारा पलभा जानी जाती है। जिस स्थान की पलभा जाननी हो, वहाँ पहिले यह जानना कि, इस स्थान का अक्षांश क्या है ? पलभा ज्ञान सारिणी से उस अक्षांश का कोष्ठफल लेना फिर उससे अग्रिम (अगले) अक्षांश का कोष्ठफल लेना। फिर दोनों का अंतर करना। इष्ट स्थान के अक्षांश की कला के अंतर को गुणा करना, गुणित-अंतर में ६० से भाग देना। भाग देने पर व्यंगुल लब्ध होंगे। उन्हें स्थानीय अक्षांश से पलभा ज्ञान सारिणी से लिए गये अंकों में युक्त करना, वह अंगुल-व्यंगुल आदि के रूप में पलभा होगी।

अक्षांश-देशान्तर-सारिणी

स्थान	अक्षांश	देशान्तर	स्थान	अक्षांश	देशान्तर	स्थान	अक्षांश	देशान्तर
(उत्तर प्रदेश)						गया	२४/४५	८५/०
अयोध्या	२६/४८	८२/१५	नैनीताल	२९/२२	७९/२९	जगन्नाथपुरी	१९/४५	८६/०
अल्मोड़ा	२९/३५	७९/४१	(पंजाब सूबा सरहद)			ढाका	२४/०	९०/१६
अमरोहा	२८/५०	७८/५०	अमृतसर	३१/३७	७४/४८	दरभंगा	२६/२५	८६१६
आगरा	२७/०	७८/१५	अम्बाला	३०/२१	७६/५२	पटना	२५/३०	८५/१५
इलाहाबाद	२५/२२	८१/५०	कुरुक्षेत्र	२९/२३	७७/१	(राजस्थान आदि)		
कानपुर	२६/३०	८०/१५	देहली	२८/२९	७७/१६	अजमेर	२६/१५	७५/४५
काशी	२५/१५	८३/०	रावलपिण्डी	३३/३६	७३/३	अलवर	२७/३४	७६/३८
झांसी	२५/२७	७८/३७	लाहौर	३१/३३	७४/१६	इंदौर	२२/४५	७६/०
देहरादून	३०/२०	७८/५०	(बम्बई और सिन्ध-प्रान्त)			ग्वालियर	२६/१५	७८/४
बरेली	२८/१५	७९/३०	अहमदाबाद	२३/०	७२/४०	जयपुर	२५/४३	७४/५०
बदायूँ	२७/९६	७९/२१	किराँची	२४/५०	६६/५५	जोधपुर	२६/२५	७३/४
बुलन्दशहर	२८/४८	७७/८७	पूना	१८/३०	७४/०	बीकानेर	२८/०	७३/२०
मथुरा	२७/३०	७७/४४	बड़ौदा	२२/०	७३/३०	भरतपुर	२७/०	७७/०
मुरादाबाद	२८/५१	७८/४९	बम्बई	१८/५५	७२/५४	श्रीनगर	३४/६	७४/५५
मेरठ	२८/४५	७८/०	सूरत	२१/०	७३/०	हैदराबाद	१७/१५	७८/३०
लखनऊँ	२६/४५	८०/४५	(बंगाल-विहार और उड़ीसा प्रान्त)			(सी.पी. और मदरास)		
सीतापुर	२७/५२	८०/६६						
हरिद्वार	२९/९६	७८/१६	कलकत्ता	२२/३०	८८/३०	जबलपुर	२३/१५	८०/०

नागपुर	२१/१५	७९/३०	नेपिल्स	४०/५०	१४/१५
मदरास	१३/४०	८०/१७	न्यूयार्क	४०/४५	७४/०
मैसूर	१२/४५	७७/३०	पेरिस	४८/५०	२/२०
रामेश्वरम्	१०/१५	८०/१६	वर्लिन	५२/४५	१३/२४
(विदेशीय			रंगून	१६/५५	९६/०
प्रान्त)			लंदन	५१/३०	०/५०
अदन	१३/०	४५/०			
कुस्तुन्तुनिया	४१/०	२९/०			
टोक्यो	३५/४३	१३९/४३			

नोट:- सारिणी में प्रधान-प्रधान नगरों के अक्षांश और देशान्तर दिये गये हैं। जिस स्थान का नाम सारिणी में नहीं है, उसके पास के नगर के अक्षांश और देशान्तर से काम चल सकता है।

पलभा-ज्ञान-सारिणी

१	०।१२।३४	१५	२।१२।५४	२९	६।३९। ४	४३	११।११।२४
२	०।२५।९	१६	३।२६।२४	३०	६।५५।४१	४४	११।३५।२४
३	०।३७।४४	१७	३।४०। ५	३१	७।१२।१८	४५	१२। ०। ०
४	०।५०।२१	१८	३।५३।५६	३२	७।२९।५३	४६	१२।२५।३७
५	१। ३। ०	१९	४। ७।५५	३३	७।४७।३१	४७	१२।५२। ४
६	१।१५।४०	२०	४।२२। १	३४	८। ५।३८	४८	१३।१९।३७
७	१।२८।२३	२१	४।३६।२२	३५	८।२४। ७	४९	१३।४८।१८
८	१।४१।१०	२२	४।५०।५३	३६	८।४३। ५	५०	१४।१८। ३
९	१।५४। ०	२३	५। ५।३८	३७	९। २।३५	५१	१४।४९। ८
१०	२। ६।५४	२४	५।२०।३१	३८	९।२२।३०	५२	१५।२१।३२
११	२।१९।५५	२५	५।३५।४२	३९	९।४३। १	५३	१५।५५।३०
१२	२।३३। ०	२६	५।५१। ७	४०	१०। ४। ९	५४	१६।३१। १
१३	२।४६।१२	२७	६। ६।५२	४१	१०।२५।५०		
१४	३।५९।२८	२८	६।२२।४८	४२	१०।४८।१८		

नोट :—लंका निरक्ष है यानी उसका अक्षांश शून्य है। पलभा-ज्ञान-सारिणी में १ अक्षांश से ५४ अक्षांश तक के कोष्ठ फल दिये गये हैं। जिनके द्वारा पूर्वोक्त क्रिया से किसी भी स्थान की पलभा या अक्षप्रभा निकाली जा सकती है।

अक्षांश के द्वारा पलभा निकालने का उदाहरण :—

भारत की राजधानी देहली की पलभा क्या है? यह जानना है। देहली का अक्षांश २८।२९ है। पलभा ज्ञान सारिणी में २८ अंश का कोष्ठ फल ६। २२। ४८ है। इससे अग्रिम २९ अंश का कोष्ठ फल ६। ३९। ४ है। गतांश २८ के और

अग्रिम अंश २९ के कोष्ठ फलों का अन्तर किया $\begin{array}{r} ६।३९।४ \\ ६।२२।४८ \\ \hline ०।१६।१६ \end{array}$ तो ०। १६। १६ अन्तर हुआ। इसे अक्षांश की २९ कला से गुणा किया तो ४७४। ४४ हुए। ४७४ में ६० से भाग दिया तो ७ लब्धि आयी और ५४ शेष बचे। लब्धि = शेष तथा ४४ पलों को अनुपात से रखा तो ७। ५४। ४४ हुए। इनको २८ अंश की पलभा-ज्ञान-सारिणी के कोष्ठ फल ६। २२। ४८ में युक्त किया $\begin{array}{r} ६।२२।४८। \\ ७।५४। ४४ \\ \hline ६।३०।४२।४४ \end{array}$ तो

फलित निकला कि देहली की पलभा ६ अंगुल ३० व्यंगुल आदि है। व्यंगुल के आगे अंकों का १ व्यंगुल मानकर ३० व्यंगुल में युक्त किया तो ३१ हुए। अतः देहली की पलभा ६। ३१ हुई।

नोट :—पलभा निकालने का अन्य क्रम लेखक के 'सुदर्शन-सिद्धान्त' नामक ग्रन्थ में देखिये।

पलभा से चरखण्ड बनाने का क्रम :—

पलभा को तीन जगह रखना। पहिली जगह १० से गुणा करना। दूसरी जगह ८ से गुणा करना। तीसरी जगह १० से गुणा करना। व्यंगुलों में ६० या ६० से अधिक होने पर ६० से भाग देकर लब्धि को अंगुल में जोड़ना। तीसरी जगह १० से गुणा करके ३ से भाग देकर लब्धि लेनी। इस प्रकार पलभा से तीन संख्याओं के तीन चरखण्ड बनते हैं।

उदाहरण :—देहली की ६। ३१ पलभा से चरखण्ड बनाने के लिए पलभा को तीन स्थान में रखकर पूर्वोक्त क्रिया की। क्रिया निम्नांकित है—

(१) ६। ३१ × १० = ६०। ३१० ÷ ६० = ५ लब्धि, शेष १० का त्याग। ५ + ६० = ६५।

(२) ६। ३१ × ८ = ४८। २४८ ÷ ६० = ४ + ४८ = ५२।

(३) ६। ३१ × १० = ६०। ३१० ÷ ६० = ५ + ६० = ६५ ÷ ३ = २२।

इस प्रकार देहली की पलभा से तीन चरखण्ड ६५। ५२। २२ बने।

स्वोदय बनाने का क्रम :—

लंका निरक्ष स्थान होने के कारण शून्य पलभा वाला है। लंका की या सुमात्रा की मेष आदि लग्नों के मान (समय) लंकोदय कहलाते हैं। अपने अभीष्ट स्थान की लग्नों के मान स्वोदय या स्वदेशोदय कहलाते हैं।

लंकोदयमान के पलों में अभीष्ट स्थान के चरखण्ड क्रम से मेष आदि लग्नों में तीन बार हीन करने। फिर उल्टे क्रम से तीन बार युक्त करने। फिर आगे की लग्नों के मान में तीन बार युक्त करने। फिर उल्टे क्रम से तीन बार हीन करने। इस क्रिया से अभीष्ट स्थान के स्वोदय पल बनते हैं।

स्वोदय पलों में ६० से भाग देने पर लब्धि घड़ी और शेष पल होते हैं। इसका अर्थ यह है कि यह लग्न इतने घड़ी-पल तक रहती है।

उदाहरण के लिए मान-चित्र (नक्शा) प्रस्तुत किया जाता है।

राशि	लंकोदय-स्वोदय-लग्नमान	राशि	लंकोदय-स्वोदय-लग्नमान
मेष	२७८ - ६५ = २१३ = ३।३३	तुला	२७८ + ६५ = ३४३ = ५।४३
वृष	२९९ - ५२ = २४७ = ४।७	वृश्चिक	२९९ + ५२ = ३५१ = ५।५१
मिथुन	३३३ - २२ = ३०१ = ५।१	धनु	३२३ + २२ = ३४५ = ५।४५
कर्क	३२३ + २२ = ३४५ = ५।४५	मकर	३२३ - २२ = ३०१ = ५।१
सिंह	२९९ + ५२ = ३५१ = ५।५१	कुंभ	२९९ - ५२ = २४७ = ४।७
कन्या	२७८ + ६५ = ३४३ = ५।४३	मीन	२७८ - ६५ = २१३ = ३।३३

नोट :—मानचित्र में लंकोदय तथा स्वोदय, पलों के रूप में हैं। तथा देहली के लग्नमान घड़ी-पलों के रूप में हैं।

लंकोदय पलों के तथा स्वोदय पलों के पलादिक ध्रुव बनाने का क्रम :—

लंकोदय पलों को या स्वोदय पलों को ३० से भाग देना। लब्धि को पृथक् रखना। शेष को ६० से गुणा करके ३० से भाग देना। लब्धि लेनी। दोनों लब्धियों को अनुपात से रखना। पल-विपल के रूप में ध्रुव होंगे। इस प्रकार बारहों लग्नों के ध्रुव बनाने।

१. उदाहरण :—मेषराशि के लंकोदय २७८ के ध्रुव बनाने हैं। अतः २७८ को ३० से भाग दिया तो ९ लब्धि आयी और ८ शेष बचे। लब्धि को पृथक् रखा। शेष ८ को ६० से गुणा किया तो ४८० हुए। इनमें ३० से भाग दिया तो १६ लब्धि आयी और शून्य शेष बचा। लब्धियों को अनुपात से रखा तो ९।१६ हुए। यहाँ यह फलित हुआ कि, मेषराशि के लंकोदय के २७८ पलों के ध्रुव ९ पल १६ विपल हैं।

नोट :—यही क्रम स्वदेशोदय पलों के पलादि ध्रुव बनाने का है।

२. उदाहरण :—देहली के मेषराशि के स्वोदय पल २१७ हैं। इनके पलादि ध्रुव बनाना है। अतः २१७ को ३० से भाग दिया। ७ लब्धि आयी और ३ शेष बचे। लब्धि को पृथक् रखा। शेष ३ को ६० से गुणा किया १८० हुए। इनमें ३० से भाग दिया ६ लब्धि आयी और शून्य शेष बचा। लब्धियों को अनुपात से रखा ७।६ हुए। यहाँ फलित यह हुआ कि, देहली की मेष लग्न का ७ पल ६ विपल ध्रुव है।

नोट :—पूर्वोक्त क्रम से सभी स्थानों की सभी लग्नों के पलादि ध्रुव बन जाते हैं।

भावसारिणी बनाने का क्रम :—

३६० कोष्ठों का एक चक्र बनाना। उसके ऊपर की प्रथम पंक्ति को ३० कोष्ठों में शून्य से लेकर १, २, ३ संख्या के क्रम से २९ संख्या तक लिखना। चक्र के दाहिनी ओर की प्रथम पंक्ति के बारह कोष्ठों में मेष से लेकर मीन तक, बारह राशियाँ लिखनी।

अयनांश को ३६० में हीन करना, जो शेष बचे उसको ३० से भाग देना। जो राशि आये उसके सामने के और उतने अंश के नीचे के कोष्ठे में तीन शून्य या दो शून्य लिखने। फिर अगले कोष्ठ में मेष लग्न की गति के पलादि ध्रुव लिखना। फिर आगे-आगे क्रम-क्रमसे पलादि ध्रुव जोड़-जोड़ कर लिखते जाना। जब तीस कोष्ठें भर जाँय तो फिर वृष लग्न की गति के पलादि ध्रुव जोड़-जोड़कर तीस कोष्ठें भरने। फिर मिथुन लग्न आदि के बारहों लग्नों की गतियों के पलादि ध्रुव जोड़-जोड़कर लिखने से ३६० कोष्ठों का चक्र भर जाता है। इस प्रकार की क्रिया करने से भाव-सारिणी तैयार हो जाती है।

नोट :—यही क्रम लग्नसारिणी बनाने का है। लग्नसारिणी स्वोदयों के पलादि ध्रुवों से बनती है। लग्नसारिणी प्रत्येक स्थान की भिन्न होती है किन्तु भावसारिणी सभी स्थानों की एक होती है; क्योंकि भावसारिणी लंकोदयों से बनती है।

कल्पित-उदाहरण :—अयनांश २२।५०।४४।२६ है। यह अयनांश २३ के लगभग है। अतः इसे ३९० में हीन किया तो ३३७ शेष बचे। इनमें ३० से भाग दिया तो ११ लब्धि आयी और ७ शेष बचे। इससे फलित निकला कि ११ से मीन राशि है और शेष ७ अंश हैं। अतः भावसारिणी या लग्नसारिणी बनाने के लिए मीन राशि के सामने के और ७ अंश के नीचे के कोष्ठ में तीन $\begin{matrix}\circ\circ\\\circ\circ\\\circ\circ\end{matrix}$ शून्य ऊपर-नीचे लिखे जायेंगे। अथवा दो शून्य भी $\begin{matrix}\circ\circ\\\circ\circ\end{matrix}$ लिखे जा सकते हैं। फिर उसके आगे के कोष्ठ में मेष राशि के लंकोदय पलादि ध्रुव $\begin{matrix}\circ\circ\\०९\\१६\end{matrix}$ लिखे जायेंगे। इन्हें क्रम-क्रम से जोड़-जोड़कर आगे-आगे के कोष्ठों में लिखा जायगा। जैसे

००	००	००	००	००	
०९	०९	१८	२७	३०	इत्यादि।
००	१६	३२	४८	०४	

फिर आगे-आगे वृष आदि लग्नों के पलादि ध्रुव लिखे जाते हैं। आगे भावसारिणी तथा लग्नसारिणी देखकर समझा जा सकता है।

भाव सारिणी । लंका की पलभा ०/०/

	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
	०३	४	४	४	४	४	४	४	४	४	५	५	५	५	५	५	५
मेष	३३	४२	५१	००.	१०	१९	२८	३७	४७	५७	७	१७	२७	३७	४७	५७	७
००	०८	२४	४०	५६	४२	२८	४४	०.	५८	५६	५४	५२	५०	४८	४६	४४	४२
	८	८	८	८	९	९	९	९	९	९	१०	१०	१०	१०	१०	११	११
वृष	२७	३७	४७	७	९	१७	२७	३७	४७	५७	८	२०	३०	४१	५२	३	१३
०१	१४	२२	४०	८	६	४	२	०.	४६	३२	२८	४	५०	३६	२२	८	५४
	१३	१३	१३	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१५	१५	१५	१५
मिथुन	४४	५५	६	१६	१७	१८	१९	०.	२१	२२	२३	४३	५३	४	५४	२६	८
०२	३८	२४	१०	५६	४२	२८	१४	०.	४६	३२	२८	४	५०	३६	२२	८	५४
	१९	१९	१९	१९	१९	२०	२०	२०	२०	२०	२०	२१	२१	२१	२१	२१	२१
कर्क	७	१८	२९	३९	५०	१	१२	२३	३२	४२	५२	२	१२	२२	३२	४२	५२
०३	३८	२४	१०	५४	४२	२८	१४	०.	५८	५६	५४	५२	५०	४८	४६	४४	४२
	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२४	२५	२५	२५	२५	२५
सिंह	२२	३२	४२	५२	१	१२	२२	३२	४२	५२	८	१८	२८	३८	४८	५८	८
०४	१४	२०	४०	८	६	२	२	०.	१६	३२	२८	४	२०	३६	५२	८	२४
	२९	२९	२९	२९	२९	२९	२९	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३१	३१	३१
कन्या	४	१३	२२	३२	४१	५०	०	९	१८	२७	३७	४	४६	५५	४	१४	२३
०५	८	२४	४०	५६	२२	२८	४४	१६	३२	४८	२६	५४	२०	३६	५२	८	२४
	३३	३३	३३	३४	३४	३४	३४	३४	३४	३४	३५	३५	३५	३५	३५	३५	३६
तुला	३३	४२	५१	०	१०	१९	२८	३७	४७	५७	७	१७	२७	३७	४७	५७	७
०६	८	२४	४०	५६	२२	२८	४४	०.	५८	५६	५४	५२	५०	४८	४६	४४	४२

वृश्चिक ०७	३८ २७ १४	३८ ३७ १२	३८ ४७ १०	३८ ५७ ८	३९ ७ ६	३९ १७ ४	३९ २७ २	३९ ३७ ०	३९ ४७ ४६	३९ ५८ ३२	४० ९ १८	४० २० ४	४० ३० ५०	४० ४१ ३६	४० ५२ २२	४१ ३ ८	४ १३ ५४
धन ०८	४३ ४४ ३८	४३ ५५ २४	४४ ६ १०	४४ १६ ५६	४४ २७ ४२	४४ ३८ २८	४४ १९ १४	४५ ० ०	४५ १० ४६	४५ २१ ३२	४५ ३२ १८	४५ ४३ ४	४५ ५३ ५०	४६ ४ ३६	४६ १५ २२	४६ २६ ८	४६ ३६ ५४
मकर ०९	४९ ७ ३८	४९ १८ २४	४९ २९ १०	४९ ३९ ५६	४९ ५० ४२	५० १ २८	५० १२ १४	५० २३ ००	५० ३२ ५८	५० ४२ ५६	५० ५२ ५४	५१ ०२ ५२	५१ १२ ५०	५१ २२ ४८	५१ ३२ ४६	५१ ४२ ४४	५१ ५२ ४२
कुंभ १०	५४ १२ १४	५४ २२ १२	५४ ३२ १०	५४ ४२ ८	५४ ५२ ६	५५ २ ४	५५ १२ २	५५ २२ ०	५५ ३१ १६	५५ ४० ३२	५५ ४९ ४८	५५ ५९ ४	५६ ८ २०	५६ १७ ३६	५६ २६ ५२	५६ ३६ ८	५६ ४५ २४
मीन ११	५८ ५५ ८	५९ ४ २४	५९ १३ ४०	५९ २२ ५६	५९ ३२ १२	५९ ४१ २८	५९ ५० ४४	० ० ०	० ९ १६	० १८ ३२	० २७ ४८	० ३७ ४	० ४६ २०	० ५५ ३६	१ ४ ५२	१ १४ ८	१ २३ २४

	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	ध्रुव
मेष ००	६ ११ ४०	६ २७ ३८	६ ३७ ३६	६ ४७ ३४	६ ५७ ५२	७ ७ ३०	७ १७ २८	७ २७ ३६	७ ३७ २४	७ ४७ २२	७ ५७ २०	७ ६७ १८	७ ७७ १०	० ९ १६
वृष ०१	११ २४ ४०	११ ३५ २६	११ ४६ २२	११ ५६ ५८	११ ७ ४४	११ १८ ३०	११ २९ १६	११ ४० २	११ ५० ४८	१२ १ ३४	१२ ११ २०	१२ २१ ६	१२ ३३ ५२	० ९ ५८
मिथुन ०२	१६ ४७ ४०	१६ ५८ २६	१७ ७ २२	१७ १८ ४४	१७ ३० ४४	१७ ४१ ३०	१७ ५२ १६	१८ ३ २	१८ १३ ४८	१८ २४ ३४	१८ ३४ २०	१८ ४४ ६	१८ ५६ ५२	० १० ४६
कर्क ०३	२२ २ ४०	२२ १२ ३८	२२ २३ ३६	२२ ३३ ३४	२२ ४२ ३२	२२ ५२ ३०	२३ २ २८	२३ १२ २६	२३ २२ २४	२३ ३२ २२	२३ ४२ २०	२३ ५२ १८	२४ २ १०	० १० ४६
सिंह ०४	२६ ५४ ४०	२७ ४ ५६	२७ १३ २२	२७ २३ २८	२७ ३३ २४	२७ ४१ ०	२७ ५० १६	२७ ५९ ३२	२८ ७ ४८	२८ १७ ४	२८ २७ ३६	२८ ३६ ३६	२८ ४५ ५२	० ९ ५८
कन्या ०५	३१ ३२ ४०	३१ ४१ ५६	३१ ५१ २२	३२ ९ २८	३२ १९ ०	३२ २८ १६	३२ ३७ ३२	३२ ४६ ४८	३२ ५६ ४	३३ ५ २०	३३ १४ ३६	३३ २४ ३३	३३ ३३ ५२	० ९ १६
तुला ०६	३६ २७ ४०	३६ ३७ ३६	३६ ४७ ३४	३६ ५७ ३२	३७ ७ ३०	३७ १७ २८	३७ २७ २६	३७ ३७ २४	३७ ४७ २२	३७ ५७ २०	३७ ६७ १८	३८ ७ १७	३८ १७ १६	० ९ १६

	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	शुक्र
वृश्चिक ०७	४१ २४ ४०	४१ ३५ २६	४१ ४६ १२	४१ ५७ ५८	४२ ७ ४४	४२ १८ ३०	४२ २९ १६	४२ ४० २	४२ ५० ४८	४३ १ २४	४३ २२ २०	४३ ३५ ५८	४३ ४६ ५२	० ९ ५८
धन ०८	४३ ४७ ४०	४७ ५८ २६	४७ ९ १२	४७ ३० ५८	४७ ४१ ३०	४७ ५२ १६	४७ ३ २	४७ १३ ४८	४७ २४ ३४	४७ ३४ २०	४७ ४३ ५८	४७ ५३ ४६	४७ ५८ ५२	० १० ४६
मकर ०९	४२ २ ४०	४२ १२ ३८	४२ २२ ३४	४२ ३२ ३४	४३ २ २८	४३ २२ ३०	४३ ४२ २६	४३ ५३ २४	४३ ५३ ३२	४३ ५३ ४२	४३ ५३ २०	४३ ५३ २८	४८ २ १६	० १० ४६
कुंभ १०	४७ ५४ ४०	४७ ३ ५८	४७ २३ २२	४७ ३३ २८	४७ ४१ ४४	४७ ५० ०	४७ ५९ ३२	४७ ७ ४८	४८ १८ ४	४८ २७ २०	४८ ३३ ३८	४८ ३५ ५२	४८ ४५ ५२	० ९ ५८
मीन ११	४ ४० ४०	४ ४१ ५८	४ ५१ १२	४ ० २८	४ ९ ४४	४ १९ ०	४ २८ १६	४ ३७ ३२	४ ४४ ४८	४ ५ २०	४ १४ ३८	४ २४ ५२	४ २३ ५२	० ९ १६

इन्द्रप्रस्थीय (दिल्ली का) लग्नसारिणी/पलभा ०६/३० चरखंड ६५/५२/२२

	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५
मेष ००	०२ ४३ १८	०२ ५० २४	०२ ५७ ३०	०३ ०४ ३६	०३ ११ ४२	०३ १८ ४८	०३ २५ ५४	०३ ३२ ००	०३ ३९ ६	०३ ४६ १२	०३ ५३ १८	०४ ०० २४	०४ ७ ३०	०४ १४ ३६	०४ २१ ४२	०४ २८ ४८
वृष ०१	०६ १४ १८	६ २१ २४	६ २८ ३०	६ ३५ ३६	६ ४२ ४२	०६ ४९ ४८	०६ ५६ ५४	७ ०५ ०८	७ १३ २२	७ २१ ३६	७ २९ ५०	७ ३८ ०४	७ ४६ १८	७ ५४ ३२	७ ०३ १४	७ ११ २८
मिथुन ०२	०९ १४ ५८	९ २३ १२	९ ३१ २६	९ ३९ ४०	९ ४७ ५४	९ ५६ ०८	१० ०४ २२	१० १४ २४	१० २४ २६	१० २६ २८	१० ३६ ३०	१० ४६ ३२	१० ५६ ३४	११ ०६ ३६	११ १६ ३८	११ १८ ४०
कर्क ०३	१३ ४९ ३८	१३ ५९ ४०	१४ ०९ ४२	१४ १९ ४४	१४ २९ ४६	१४ ३९ ४८	१४ ४९ ५०	१५ ०१ २०	१५ १२ ५०	१५ २४ २०	१५ ३५ ५०	१५ ४७ २०	१५ ५८ ५०	१६ १० २०	१६ २१ ५०	१६ ३३ २०
सिंह ०४	१९ २५ ५०	१९ ३७ २०	१९ ४८ ५०	२० ०० २०	२० ११ ५०	२० २३ २०	२० ३४ ५०	२० ४६ ३२	२० ५८ ५४	२१ ०९ ५६	२१ २१ ३८	२१ ३३ २०	२१ ४५ ०२	२१ ५६ ४४	२२ ०८ २६	२२ २० ०८
कन्या ०५	२५ १५ २८	२५ २७ १०	२५ ३८ ५२	२५ ५० ३४	२६ ०२ १६	२६ १३ ५८	२६ २५ ४०	२६ ३७ ०६	२६ ४८ ३२	२६ ५९ ५८	२७ ११ २४	२७ २२ ५०	२७ ३३ १६	२७ ४४ ४२	२७ ५६ ०८	२८ ०७ ३४

तुला ०६	३० ५८ ३४	३१ १० ००	३१ २१ २६	३१ ३२ १८	३१ ४४ ०८	३१ ५५ ३४	३२ ०७ ००	३२ १८ २६	३२ २९ ४८	३२ ४१ १४	३२ ५२ ४०	३३ ०४ ०६	३३ १५ ३२	३३ २७ १४	३३ ३८ ४०	३३ ५० ०६
वृश्चिक ०७	३६ ४२ ४०	३६ ५४ ०६	३७ ०५ ३२	३७ १६ ५८	३७ २८ १४	३७ ३९ ४०	३७ ५१ ०६	३८ ०२ ४८	३८ १४ ३०	३८ २६ १२	३८ ३७ ५४	३८ ४९ ३६	३९ ०१ १८	३९ १३ ००	३९ २४ ४२	३९ ३६ २४
धन ०८	४२ ३१ ५४	४२ ४३ ३६	४२ ५५ १८	३३ ०१ ००	४३ १२ ४२	४३ २३ २४	४३ ३५ ०६	४३ ४६ ३६	४३ ५८ ०६	४४ ०९ ३६	४४ २१ ०६	४४ ३२ ४८	४४ ४४ १८	४४ ५५ ४८	४५ ०६ १८	४५ १७ ४८
मकर ०९	४८ १० १८	४८ २१ ४८	४८ ३३ १८	४८ ४४ ४८	४८ ५६ १८	४९ ०७ ४८	४९ १९ १८	४९ २९ २०	४९ ३९ २२	४९ ४९ २४	४९ ५९ २६	५० १० २८	५० २० ३०	५० ३० ३२	५० ४० ३४	५० ५० ३६
कुंभ १०	५३ २१ ०६	५३ ११ ८	५३ ४१ १०	५३ ५१ १२	५४ ०१ १४	५४ ११ १६	५४ २१ १८	५४ ५९ ३२	५५ ०७ ४६	५५ १५ ५८	५५ २४ १२	५५ ३३ २६	५५ ४१ ४०	५५ ४९ ५४	५५ ५८ ०८	५६ ०६ २२
मीन ११	५८ ११ ५२	५८ २० ६	५८ २८ २०	५८ ३६ ३४	५८ ४४ ४८	५८ ५३ ०२	५९ ०१ १६	०० ०० ००	० ७ ६	० १४ १२	० २१ १८	० २८ २४	० ३५ ३०	० ४२ ३६	० ४९ ४२	० ५६ ४८

	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	ध्रुव
मेष	४	४	४	४	५	५	५	५	५	५	५	५	०६	०६	०
००	३५	४३	५०	५७	०४	११	१८	२५	३१	४६	४३	००	००	७	७
	५४	००	०६	१२	१८	२४	३०	३६	४२	५४	००.	६	६	१२	६
वृष	७	७	७	७	७	०८	०८	८	८	८	८	८	८	९	८
०१	१९	२७	३६	४४	५२	००	०९	१७	२५	३३	४२	५०	५८	०६	७
	४२	५६	१०	२४	३८	५२	०६	२०	३४	४८	०२	१६	३०	४४	१४
मिथुन	११	११	११	११	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	०
०२	२८	४८	५८	५९	०८	१८	२८	३८	४८	५९	०९	१९	२९	३९	१०
	४२	४४	४६	४८	५०	५२	५४	५६	५८	००.	०२	४	३४	३६	०२
कर्क	१६	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१८	१८	१८	१८	१९	१९	१९	०
०३	४४	५६	०७	१९	३०	४२	५३	०५	१६	२८	३९	५१	०२	१४	११
	५०	२०	५०	२०	५०	२०	५०	२०	५०	२०	५०	२०	५०	२०	३०
सिंह	२२	२२	२२	२३	२३	२३	२३	२३	२४	२४	२४	२४	२४	२५	०
०४	३१	४३	५५	०६	१८	३०	४२	५३	०५	१७	२८	४०	५२	०३	११
	५०	३२	१४	५६	२७	२०	०२	४४	२६	०८	५०	३२	१४	५६	४२
कन्या	२८	२८	२८	२९	२९	२९	२९	२९	३०	३०	३०	३०	३०	३०	०
०५	१९	२१	४३	०४	१५	२७	३८	४९	०१	१२	२४	२८	३५	४७	११
	००	०६	५२	१४	१४	४०	०६	३२	५८	२४	५०	१६	४२	०८	२६
तुला	३४	३४	३४	३४	३४	३४	३५	३५	३५	३५	३५	३६	३६	३६	०
०६	१	२२	२४	३५	४७	५८	१०	२१	३३	४५	५७	०८	१९	३१	११
	३२	५८	२४	५०	१६	४६	२२	४८	१४	४०	०६	३२	५८	२४	२६

वृश्चिक ०७	३९ ४८ ०६	३९ ५९ ४८	४० ११ ३०	४० २३ १२	४० ३४ ५४	४० ४६ ३६	४० ५८ १८	४१ १० ००	४१ २१ ४२	४१ ३३ २४	४१ ४५ ०६	४१ ५६ ४८	४२ ०८ ३०	४२ २० १२		० ११ ४२
धन ०८	४५ २९ १८	४५ ४० ४८	४५ ५२ १८	४६ ०३ ४८	४६ १५ १८	४६ २६ ४८	४६ ३८ १८	४६ ४९ ४८	४७ ०१ १८	४७ १२ ४८	४७ २४ १८	४७ ३५ ४८	४७ ४७ १८	४७ ५८ ४८		० ११ ३०
मकर ०९	५१ ०० ३८	५१ १० ४०	५१ २० ४२	५१ ३० ४४	५१ ४० ४६	५१ ५० ४८	५२ ०० ५०	५२ १० ५२	५२ २० ५४	५२ ३० ५६	५२ ४० ५८	५२ ५१ ००	५३ ०१ ०२	५३ ११ ४		० १० ०२
कुंभ १०	५६ १४ ३६	५६ २२ ५०	५६ ३१ ०४	५६ ४१ १८	५६ ४९ ३२	५६ ५७ ४६	५७ ०६ ००	५७ १४ १४	५७ २२ २८	५७ ३० ४२	५७ ३८ ५६	५७ ४७ १०	५७ ५५ २४	५८ ०३ ३८		० ८ १४
मीन ११	१ ३ ५४	१ ११ ००	१ १८ ६	१ २५ १२	१ ३२ १८	१ ३९ २४	१ ४६ ३०	१ ५३ ३६	०२ ०० ४२	०२ ०७ ४८	०२ १४ ५४	०२ २२ ००	०२ २९ ०६	०२ ३६ १२		० ७ ६

मद्रास की लग्नसारिणी /पलभा ०२/४७/चरखण्ड २७/२२/९

	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५
मेष ००	०३ १२ १८	०३ २० ४०	३ २९ ०२	०३ ३७ २४	३ ४५ ४६	०३ ५४ ०८	०४ ०२ ३०	०४ १० ५२	०४ १९ १४	०४ २७ ३६	०४ ३५ ५८	०४ ४३ २०	०४ ५१ ४२	०५ ०० ०४	०५ ०८ २६	०५ १६ ४८
वृष ०१	७ २१ १८	७ २९ ४०	०७ ३८ ०२	७ ४६ २४	७ ५४ ४६	८ ०३ ०८	०८ ११ ३०	८ २० ४४	०८ २९ ५८	८ ३९ १२	८ ४८ २६	८ ५७ ४८	९ ०७ ०२	९ १६ १६	०९ २५ ३०	९ ३४ ४४
मिथुन ०२	११ ५३ १४	१२ ०२ २८	१२ ११ ४२	१२ २० ५६	१२ ३० १०	१२ ३९ २४	१२ ४८ ५४	१२ ५९ २२	१३ ०९ ५०	१३ २० १८	१३ ३० ४६	१३ ४१ १४	१३ ५१ ४२	१४ ०२ १०	१४ १२ ३८	१४ २३ ०६
कर्क ०३	१७ ०० ०६	१७ १० ३४	१७ २१ ०२	१७ ३१ ३०	१७ ४१ ५८	१७ ५२ २६	१८ ०२ ५४	१८ १४ ३४	१८ २६ १४	१८ ३७ ५४	१८ ४९ ३४	१९ ०१ १४	१९ १२ ५४	१९ २४ ३४	१९ ३६ १४	१९ ४७ ५४
सिंह ०४	२२ ४२ ५४	२२ ५४ ३४	२३ ०६ १४	२३ १७ ५४	२३ २९ ३४	२३ ३१ १४	२३ ४२ ५४	२३ ५३ ३६	२४ ०४ १८	२४ १५ ००	२४ २५ ४२	२४ ३६ २४	२४ ४७ ०६	२४ ५७ ४८	२५ ०७ ३०	२५ १८ १२
कन्या ०५	२७ ४७ ४२	२७ ५८ २४	२८ ०९ ०६	२८ १९ ४८	२८ ३० ३०	२८ ४१ १२	२८ ५१ ५४	३९ ०१ २८	२९ ११ ०४	२९ २० ३८	२९ ३० १२	२९ ३९ ४६	२९ ४९ २०	२९ ५८ ५४	३० ०८ २८	३० १८ ०२

तुला ०६	३२ ४१ २२	३२ ५० ५६	३३ ०० २०	३३ ०९ ५४	३३ १९ २८	३३ २९ ०२	३३ ३८ ३६	३३ ४८ १०	३३ ५७ ४४	३४ ०७ १८	३४ १६ ५२	३४ २६ २६	३४ ३६ ००	३४ ४५ ३४	३४ ५५ ०८	३५ ०४ ४२
वृश्चिक ०७	३७ २८ ०२	३७ ३७ ३६	३७ ४७ १०	३७ ५६ ४४	३८ ०६ १८	३८ १५ ५२	३८ २५ २६	३८ ३६ ०८	३८ ४६ ५०	३८ ५७ ३२	३९ ०८ १४	३९ १८ ५६	३९ २९ ५८	३९ ३९ २०	३९ ५० ०२	४० ०० ४४
धन ०८	४२ ३२ १४	४२ ४२ ५६	४२ ५३ ३८	४३ ०४ २०	४३ १५ ०२	४३ २५ ४४	४३ ३६ २६	४३ ४८ ०६	४३ ५९ ४६	४४ ११ २६	४४ २३ ०६	४४ ३४ ४६	४४ ४५ २६	४४ ५७ ०६	४५ ०८ ४६	४५ २० २६
मकर ०९	४८ १५ २६	४८ २७ ०६	४८ ३८ ४६	४८ ५० २६	४९ ०२ ०६	४९ १३ ४६	४९ २५ २६	४९ ३५ ४४	४९ ५४ १२	४९ ५६ ४०	५० ०७ ०८	५० १७ ३६	५० २८ ०४	५० ३८ ३२	५० ४९ ००	५० ५९ २८
कुंभ १०	५३ ३६ १८	५३ ४६ ४६	५३ ५७ १४	५४ ०७ ४२	५४ १८ १०	५४ २८ ३८	५४ ३९ ०६	५४ ४८ ३०	५४ ५० ४५	५५ ०६ ५८	५५ १६ १२	५५ २५ २६	५५ ३४ ४०	५५ ४३ ५४	५५ ५३ ०८	५६ ०२ २२
मीन ११	५७ २० ५२	५७ ३० ०६	५७ ३९ २०	५७ ४८ ३४	५७ ५७ ४८	५८ ०७ ०२	५८ १६ १६	०० ०० ०० २२	०० ०८ १६ ४४	०० १६ २५ ०० २२	०० ३३ २२	०० ४१ ४४	०० ५० ०६	०० ५८ २८	०१ ०६ ५०	

	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	शुक्र
मेष ०० ००	५ २५ १०	५ ३३ ३२	५ ४२ ५४	५ ४९ १६	५ ५७ ३८	०६ ०६ ०० २०	०६ १४ २२ २०	०६ २२ ४४ २०	०६ ३१ ०६ २०	०६ ३९ २८ २०	०६ ४७ ५० २०	०६ ५६ १२ २०	०७ ०४ ३४ २०	०७ १२ ५६ २०	०० ०८ २२ २०
वृष ०१ ०१	९ ४३ ५८ २०	९ ५३ १२ २०	१० ०२ २६ २०	१० १० ४० २०	१० २० ५४ २०	१० ३० ०८ २०	१० ३९ २२ २०	१० ४८ ३६ २०	१० ४७ ५० २०	११ ०७ ०४ २०	११ १६ १८ २०	११ २५ ३२ २०	११ ३४ ४६ २०	११ ४४ ०० २०	०० ९ १४ २०
मिथुन ०२ ०२	१४ ३३ ३४ २०	१४ ४३ ५२ २०	१४ ५४ २० २०	१५ ०४ ४८ २०	१५ २५ ५४ २०	१५ ३५ ५४ २०	१५ ४६ ५० २०	१५ ५७ १८ २०	१५ ०७ ४६ २०	१५ १८ १४ २०	१५ २८ ४२ २०	१५ ३९ १० २०	१५ ४९ २० २०	१५ ५९ ३८ २०	०० १० २८ २०
कर्क ०३ ०३	१९ ५९ ३४ २०	२० २२ ४२ २०	२० ३४ ५४ २०	२० ४६ १४ २०	२० ५७ ५४ २०	२१ ०९ ३४ २०	२१ २१ १४ २०	२१ ३२ ५४ २०	२१ ४४ ३४ २०	२१ ५६ १४ २०	२१ ०७ ५४ २०	२२ ०७ ५४ २०	२२ १९ ३४ २०	२२ ३१ १४ २०	०० ११ ४० २०
सिंह ०४ ०४	२५ २९ ३६ २०	२५ ४० १८ २०	२५ ०० ४२ २०	२५ २० २४ २०	२६ २२ २४ २०	२६ २२ ०६ २०	२६ ३२ ४७ २०	२६ ४३ ३० २०	२६ ५४ १२ २०	२७ ०४ ५४ २०	२७ १५ ३६ २०	२७ २५ ३७ २०	२७ ३६ ०० २०	२७ ४६ २८ २०	०० १० ४२ २०
कन्या ०५ ०५	३० ३७ १० २०	३० ४६ ४४ २०	३० ०५ ५२ २०	३१ १५ २६ २०	३१ २५ ०० २०	३१ ३५ २४ २०	३१ ४४ ०८ २०	३१ ५४ ४२ २०	३१ ५३ ४२ २०	३२ ०३ १६ २०	३२ १२ ५० २०	३२ २२ ५० २०	३२ ३१ ५८ २०	३२ ४१ २४ २०	०० ९ १३ २०
तुला ०६ ०६	३५ १४ १६ २०	३५ २३ ५० २०	३५ ३३ २४ २०	३५ ४२ ५८ २०	३५ ५२ ३२ २०	३६ ०२ ०६ २०	३६ १२ ४० २०	३६ २२ १४ २०	३६ ३० ४८ २०	३६ ४९ २० २०	३६ ५९ ५० २०	३७ ०८ ५४ २०	३७ १८ २८ २०	३७ २८ २८ २०	०० ९ १३ २०

वृश्चिक ०७	४० २ २६	४० १३ ०८	४० २३ ५०	४० ३४ ३२	४० ४५ १४	४० ५५ ५६	४१ ०६ ३८	४१ १७ २०	४१ २८ ०२	४१ ३८ ४४	४१ ४९ २६	४२ ०० ०८	४२ १० ५०	४२ २१ ३२		०० १० ४२
धन ०८	४५ ३२ ०६	१५ ४३ ४६	४५ ५५ २६	४६ ०७ ०६	४६ १८ ४६	४६ ३० २६	४६ ४२ ०६	४६ ५३ ४६	४७ ०५ २६	४७ १७ ०६	४७ २८ ४६	४७ ४० २६	४७ ५२ ०६	४८ ०३ ४६		०० ११ ४०
मकर ०९	५१ ९ ५६	५१ २० २४	५१ ३० ५२	५१ ४१ १०	५१ ५१ ३८	५२ ०२ ०६	५२ १२ ३४	५२ २३ ०२	५२ ३३ ३०	५२ ४३ ५८	५२ ५४ २६	५३ ०४ ५४	५३ १५ २२	५३ २५ ५०		०० १० २८
कुंभ १०	५६ ११ ३६	५६ २० ५०	५६ ३० ०४	५६ ३९ १८	५६ ४८ ३२	५६ ५७ ४६	५७ ०७ ००	५७ १६ १४	५७ २५ २८	५७ ३४ ४२	५७ ४३ ५६	५७ ५३ १०	५७ ०२ २४	५७ ११ ३८		०० ९ १४
मीन ११	१ १५ १२	१ २३ २४	१ ३१ ५६	१ ४० १८	१ ४८ ४०	१ ५७ ०२	०२ ०५ २४	०२ १३ ४६	०२ २२ ०८	२ ३० ३०	०२ ३८ ५२	०२ ४७ १४	०२ ५५ ३६	०३ ०३ ५८		०० ८ २२

नोट:—दिनमान, रात्रिमान, अयनांश तथा लग्नसारिणी आदि बनाने के सोदाहरण क्रम प्रस्तुत करने के अनन्तर इष्ट बनाने का क्रम प्रस्तुत किया जाता है।

इष्ट का अर्थ :—ज्योतिष की प्रक्रिया से घड़ी-पलों में लाये गये अपेक्षित समय को इष्ट कहते हैं। प्राचीन काल में प्राय: छाया को नाप करके इष्ट बनाया जाता था। अब तो घड़ी-यंत्र के द्वारा समय सुलभता से जाना जाता है। आजकल तीन प्रकार का समय (टाइम) है। १—ग्रीनविच का समय,जिसका उपयोग जहाजी लोग करते हैं। २—मदरास की धूप-घड़ी का समय स्टैण्डर्ड टाइम है। ३—प्रत्येक स्थान की धूपघड़ी का समय लोकल टाइम है। पोस्ट आफिस की घड़ी में या रेलवे की घड़ी में स्टैण्डर्ड टाइम है। अत: स्टैण्डर्ड टाइम से बना हुआ इष्ट सर्वथा अशुद्ध होता है। लोकल टाइम या स्थानीय समय प्रत्येक स्थान का भिन्न होता है। पोस्ट आफिस या रेलवे से मिली घड़ी से जो जन्मपत्री बनायी जाती है अथवा उपनयन और विवाह आदि में लग्न का निर्णय किया जाता है, वह अन्याय होता है। ज्योतिष की गणना सूर्य के अर्धबिम्ब के उदय से आरंभ होती है। प्रत्येक स्थान के सूर्योदय का समय भिन्न-भिन्न होता है। पूर्वीय नगरों में सूर्योदय पहिले होता है और पश्चिमीय नगरों में सूर्योदय बाद में होता है। स्टैण्डर्ड टाइम से मिली घड़ियों में एक साथ चार तथा एक साथ बारह आदि बजते हैं। परन्तु धूपघड़ी से प्रत्येक स्थान में अलग-अलग समय होता है। उदाहरणार्थ जैसे जब कलकत्ता में दिन के बारह बजते हैं तब बम्बई में उस समय दिन के १० बजकर ५७ मिनट और ३० सेकेण्ड होते हैं। अतएव सदैव लोकल टाइम से ही इष्ट का बनाना उचित है। स्टैण्डर्ड टाइम से इष्ट बनाना तो अनर्थ करना है।

स्थानीय समय (लोकल टाइम) जानने का क्रम :—

पहिले यह जानना चाहिए कि, जिस स्थान का स्थानीय समय बनाना है, उसका और ८२॥ रेखांश पर स्थित स्टैण्डर्ड टाइम का कितना अन्तर है। १ अंश में ४ मिनट होते हैं। अन्तर में जितने अंश हों, उनके मिनट बनाने। यदि इष्ट स्थान का रेखांश, स्टैण्डर्ड टाइम के रेखांश से कम है तो ऋण (घटाना) करना और यदि अधिक हो तो धन (जोड़ना) करना। इस प्रकार इष्ट स्थान का स्थूल स्थानीय समय होता है। सूक्ष्म स्थानीय समय बनाने के लिए वेलान्तर संस्कार या कालसमीकरण संस्कार करना।

जिस स्थान का रेखांश, स्टैण्डर्ड टाइम के रेखांश से कम होता है वहाँ वेलान्तर संस्कार १६ मार्च से १ अक्टूबर तक ऋण होता है। २ अक्टूबर से ४ दिसम्बर तक धन होता है। फिर ५ दिसम्बर से १५ मार्च तक ऋण होता है।

जिस दिन का स्थानीय समय बनाना है, उस दिन देखना कि, आज किस राशि के सूर्य के कितने अंश हैं, उसके अनुसार मदरास की लग्नसारिणी से तथा स्थानीय लग्नसारिणी से सूर्यफल लेकर दोनों का अन्तर करना। जो अन्तर आये उसके मिनट-

सेकेण्ड बनाकर स्थानीय समय में पूर्वोक्त क्रम के अनुसार ऋण या धन करना। इस संस्कार से सूक्ष्म स्थानीय समय बन जाता है।

कल्पित उदाहरण :—मीनराशि के ८ अंश पर देहली में प्रातः ८ बजकर ३३ मिनट पर स्थानीय समय क्या होगा ? यह जानना है। देहली ७७½ रेखांश पर है और स्टैण्डर्ड टाइम ८२½ अंश पर है। इन दोनों रेखांशों का अन्तर किया तो ५ अंश बचे। एक अंश में ४ मिनट के हिसाब से २० मिनट होते हैं। देहली कम रेखांश पर, अतः २० मिनट स्टैण्डर्ड टाइम

८।३३
८।१३ में ऋण किया −।२० तो देहली का

उस समय का स्थानीय स्थूल काल प्रातः ८ बजकर १३ मिनट हुआ।

अब इसमें बेलान्तर संस्कार या काल समीकरण संस्कार करना है। मदरास को लग्नसारिणी में मीन के ८ अंश का सूर्यफल ०।८।२२ लिया और देहली को लग्नसारिणी से इसी दिन का सूर्यफल ०।७।६ लिया। दोनों का अन्तर किया। ०।१।१६ अन्तर के पल-विपल के मिनट-सेकेण्ड बना कर देहली के उस दिन के

८।१२।६०
८।१३ टाइम में पूर्वोक्त क्रम के अनुसार ऋण किया ०।३०।२४ तो देहली का

प्रातः ७ बज कर ४२ मि० ३६ से० सूक्ष्म लोकल टाइम बना।

पंचांग के द्वारा लोकल टाइम बनाने का क्रम :—

प्रायः प्रसिद्ध पंचांगों में देशान्तर सारिणी तथा बेलान्तर सारिणी दी होती हैं। बेलान्तर सारिणी से स्टैण्डर्ड टाइम को पंचांग के स्थान का लोकल टाइम बनाना फिर उसमें अपने अभीष्ट स्थान का अथवा उसके पास के शहर का देशान्तर करना। यदि पंचांग के स्थान से अपना इष्ट स्थान पूर्व हो तो देशान्तर के मिनट आदि को धन + करना और यदि पश्चिम हो तो ऋण − करना, इस प्रकार स्थानीय समय बन जाता है फिर उससे इष्टकाल बनाना।

कल्पित उदाहरण :—काशी के विश्वपंचांग द्वारा यह जानना है कि २० जनवरी को प्रातः ८ बज कर ४० मिनट स्टैण्डर्ड टाइम का देहली में लोकल टाइम क्या होगा ?

अतः पहिले उस दिन के स्टैण्डर्ड टाइम से काशी के लोकल टाइम बनाने के लिए विश्वपंचांग की बेलान्तर सारिणी यानी काशी में रेलवे और सूर्यघड़ी के प्रति-

दिन मिनटादि अन्तर के चक्र में २० जनवरी को ८ मिनट ५२ सेकिण्ड ऋण हैं।

अतः इन्हें स्टैण्डर्ड टाइम में हीन किया $\begin{array}{r} ८।४०। \\ -\ ।\ ८।५२ \\ \hline ८।३१।०८ \end{array}$ तो ८।३१।०८ शेष बचे।

यह इस दिन के उस समय में काशी का लोकल टाइम हुआ। अब काशी के टाइम में अक्षांश-देशान्तर सारिणी से देहली के २३ मिनट लेकर काशी से देहली पश्चिम होने के कारण हीन किये तो $\begin{array}{r} ८।३१।८ \\ -\ ।२३। \\ \hline ८।८।८ \end{array}$ तो ८।८।८ शेष बचे। यहाँ फलित हुआ कि, इस दिन देहली का लोकल टाइम प्रातः ८ बज कर ८ मिनट ८ सेकेण्ड हुआ।

उक्त उदाहरण को ध्यान में रख कर सरलता से प्रत्येक स्थान का स्थानीय समय निकाला जा सकता है।

(घ) यदि अर्धरात्र से बाद के स्थानीय समय का इष्ट बनाना हो तो स्थानीय समय के घण्टे-मिनट के घड़ी-पल बनाकर राज्यर्ध में युक्त करने। इस प्रकार आधी रात से बाद के समय का इष्ट बनता है।

नोटः—$\frac{१}{४}$ यानी चौथाई के १५, $\frac{२}{४}$ यानी आधे के ३० और $\frac{३}{४}$ यानी पौन के ४५ लिखे जाते हैं।

(१) कल्पित उदाहरणः—२० जनवरी को देहली के स्थानीय समय प्रातः ८ बजकर ८ मिनट ८ सेकेण्ड पर इष्ट काल बनाना है। इस दिन का दिनमान २६।४१ है।

इसका आधा किया $\begin{array}{r} २६।४१। \\ \hline १३।२०।३० \end{array}$ तो १३।२०।३० हुआ। ८ घण्टे ८ मिनट ८ सेकेण्ड को १२ घण्टे (११ घण्टे ५९ मिनट ६०) में घटाया तो $\begin{array}{r} ११।५९।६० \\ -\ ८।\ ८।\ ८ \\ \hline ३।५१।५२ \end{array}$ तीन घण्टे, इक्यावन पल, ५२ विपल शेष बचे। पूर्वोक्त क्रम से इनके घड़ी-पल-विपल बनाये तो ९ घड़ी ३९ पल ४० विपल हुए। इन्हें दिनार्ध में हीन किया $\begin{array}{r} ११।२०।३० \\ -\ ९।३९।४० \\ \hline ३।४०।५० \end{array}$ तो ३।४०।५० शेष बचे। यहाँ यह फलित निकाला कि, २० जनवरी को दिल्ली के स्थानीय समय के प्रातः ८ बजकर ८ मिनट ८ सेकेण्ड का इष्टकाल ३ घड़ी ४० पल ५० विपल है।

(२) कल्पित उदाहरण:—२० जनवरी को देहली के स्थानीय समय रात्रि के ३ बजकर ९ मिनट ११ सेकेण्ड पर क्या इष्टकाल होगा ? यह जानना है। रात्रि का इष्टकाल बनेगा। अत: राज्यर्ध बनाना है। पूर्वोक्त क्रम के अनुसार दिनमान २६।४१ का आधा किया १३।२०।३० हुआ। दिनार्ध की १२ घड़ी में ३० घड़ी युक्त की

१३ । २० । ३०
३० । । तो राज्यर्ध ४३ । २० । ३० हुआ। पूर्वोक्त रीति से ३ घण्टे
४३ । २० । ३०

९ मिनट ११ सेकेण्ड के घड़ी-पल बनाये तो ७ घड़ी ५० पल ५७ विपल ३० अनुपल बने। अर्धरात्र के बाद का समय होने के कारण राज्यर्ध में युक्त किया

४३ । २० । ३० ।
७ । ५० । ५७ । ३० तो फलित निकला कि, इस दिन रात्रि के ३ बजकर ९ मिनट
५१ । ११ । २७ । ३०

११ सेकेण्ड का इष्टकाल ५१ घड़ी ११ पल १७ विपल ३० अनुपल है।

इष्ट से लग्नसारिणी द्वारा लग्न निकालने का क्रम:—

जिस दिन का इष्ट हो उस दिन वर्तमान संक्रान्ति के जितने अंश हों, उसी के अनुरूप राशि के सामने उतने अंश के नीचे के कोष्ठ में स्थानीय लग्नसारिणी में घड़ी-पल-विपल के रूप में जो सूर्य फल हो उसे लेकर इष्टकाल के घड़ी-पल-विपल में जोड़ना। जो फल आये, उसे स्थानीय लग्नसारिणी मे देखना। जिस राशि के आगे के कोष्ठ में मिले वही राशि लग्न है और जिस अंश के नीचे हो वही अंश है। यदि पल-विपल में कुछ अन्तर हो तो कुछ आगे के पल-विपल के अनुसार अंश लेने। फिर क्रम से राशि-अंश-कला-विकला आदि लिखनी। इस प्रकार लग्नसारिणी के द्वारा लग्न का स्पष्ट हो जाता है।

कल्पित उदाहरण:—२० जनवरी को प्रात: ८ बजकर ८ मिनट ८ सेकेण्ड का इष्टकाल ३ घड़ी ४० पल ५० विपल है। इस इष्ट पर लग्नसारिणी द्वारा लग्न का स्पष्ट करना है। इस दिन मकर संक्रान्ति के अंश हैं। लग्नसारिणी में मकरराशि के सामने दस अंश नीचे के कोठे में ५२ । २९ । ८ सूर्य फल है। इसे लकर इष्ट काल में जोड़ा

३ । ४० । ५१
५२ । २९ । ८ तो ५६ । ९ । ५८ इष्ट फल हुआ। इसे लग्नसारिणी में देखा तो
५६ । ०९ । ५८

कुंभ राशि के सामने ६ अंश के नीचे ५६ । ७ । ५३ है और ७ अंश के नीचे ५६।१५।१४ है। यहाँ इष्ट फल कुंभ के ६ अंश से अधिक है अत: ६ अंश के सूर्यफल से

आगे निकल गया है। ७ अंश के सूर्यफल से कम है। इस कारण ६ अंश से निकल कर ७वें अंश में हैं। इष्टफल से पहिले ७ अंश रखे गये और अंश से पहिले कुंभ राशि की ११ संख्या के बजाय १० संख्या रखी गयी; क्योंकि स्पष्ट में १ राशि कम इस कारण लिखी जाती है कि एक राशि का ही विस्तार तो अंश-कला-विकला आदि हैं। यहाँ कुंभ लग्न के स्पष्ट का रूप यह है—१० राशि, ७ अंश, २६ कला, ९ विकला, ५८ अनुकला। सारिणी द्वारा लग्न स्पष्ट करने का यही क्रम है।

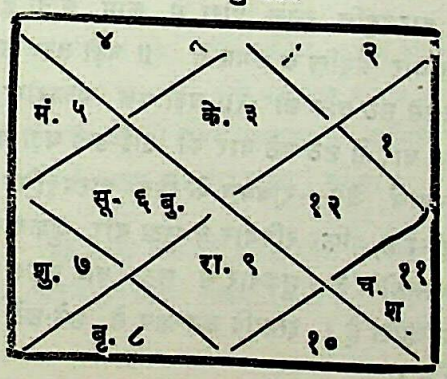
नोट:—पूर्वोक्त क्रम से जन्मकाल अथवा इष्ट बनाकर फिर लग्न स्पष्ट करके तदनन्तर लग्नकुण्डली बनानी चाहिए।

लग्नकुण्डली बनाने का क्रम:—

बारह कोठों का एक चक्र बनाना। बीच के कोठे में लग्न की राशि की संख्या लिखनी। फिर आगे क्रम से संख्या लिखनी। बारह संख्या के क्रम से १, २, ३ आदि संख्या लिखनी। बारहों कोठें राशियों की संख्याओं से भरने के बाद उनमें ग्रहों के नाम के पहिले-पहिले अक्षर लिखने चाहिए।

पंचांग में प्रायः ८।८ दिन के प्रस्तार या पंक्ति लिखी होती है। पंक्ति में तिथि-वार और मिश्रमान लिखा होता है। उसके नीचे ग्रहों का स्पष्ट, राशि-कला और विकला के रूप में लिखा होता है। राशि में एक कम लिखा होता है अतः उससे अगली राशि में उस ग्रह को लिखना। जैसे किसी ग्रह की स्पष्ट में ३ राशि है तो उसे ४ राशि में लिखना। कुण्डली भी पंक्ति या प्रस्तार के पास लिखी होती है, उसमें राशियों में ग्रह लिखे होते हैं, वे राशियाँ ज्यों की त्यों होती हैं। जिस दिन की कुण्डली बनानी है, उससे अगले-पिछले ग्रहों का मिलान करके लिखना। यह देख लेना अत्यावश्यक है कि किसी ग्रह ने राशि तो नहीं बदली है। उदाहरणार्थ लग्नकुण्डली दी जाती है।

अथ लग्नकुण्डली



३ ता० वि०

ग्रहों के राशि में रहने के स्थूल मान :—

सूर्य एक राशि में एक मास रहता है। चन्द्रमा एक राशि में २। दिन रहता है। मंगल एक राशि में डेढ़ मास रहता है। बुध एक राशि में एक मास रहता है। बृहस्पति एक राशि में तेरह मास रहता है। शुक्र एक राशि में एक मास रहता है। शनि एक राशि में तीस मास या ढाई वर्ष रहता है। राहु और केतु एक राशि में डेढ वर्ष रहते हैं।

ग्रह मार्गी होता है तो जिस राशि में होता है, उसका भोग करके अगली राशि में जाता है। वक्रग्रह जिस राशि में होता है उससे पिछली राशि में जाता है। सूर्य और चन्द्र सदैव मार्गी रहते हैं। राहु और केतु सदैव वक्र रहते हैं। शेष ग्रह वक्र भी हो जाते हैं।

वारप्रवृत्ति निकालने का क्रम:—

पादोनरेखापरपूर्वयोजनैः पलैर्युतोनास्तिथयो दिनार्धतः।
ऊनाधिकास्तद्विवरोद्भवैः पलैरूर्ध्वं तथाधोदिनपप्रवेशनम्॥

लङ्का से सुमेरु पर्वत तक जो रेखा गयी है उसे भूमध्यरेखा कहते हैं। जिस जगह की वारप्रवृत्ति जाननी हो उसके लिए पहले यह जानना चाहिए कि यह नगर भूमध्यरेखा अर्थात् उज्जैन से पूर्व या पश्चिम में कितने योजन (एक योजन प्रायः १० मील का होता है) पर है। जितने योजन दूरी पर हो, उन योजनों का चतुर्थांश (¼ भाग) उन योजनों में घटाना। जो शेष बचे, उन्हें पल समझना।

यदि वह स्थान मध्यरेखा से पूर्व में है तो उन पलों को १५ घड़ी में घटाना और यदि वह स्थान मध्यरेखा से पश्चिम में है तो उन पलों को १५ घड़ी में जोड़ना।

जितने पल प्राप्त हों उन पर वारप्रवृत्ति होती है। वह स्थान मध्यरेखा से पूर्व में है तो सूर्योदय के बाद उतने पल पर वारप्रवृत्ति (वार का लगना) होगी और यदि वह स्थान मध्यरेखा से पश्चिम में है तो सूर्योदय से पहले उतने पल पर वारप्रवृत्ति होगी।

नोट :—यह वारप्रवृत्ति काल होरा में काम आती है। जिस दिन जो वार होता है, उस दिन वार प्रवृत्ति के समय से २॥ घड़ी तक उसी वार की कालहोरा होती है। फिर उससे छठे वार की २॥ घड़ी तक कालहोरा होती है। इसी प्रकार क्रम-क्रम से उस-उस वार से छठे-छठे वार की ढाई-ढाई घड़ी को वारहोरा आती चली जाती है। उदाहरणार्थ जैसे—रविवार के दिन वारप्रवृत्ति से २॥ घड़ी तक रवि की पहिली कालहोरा है, फिर रविवार से छठा वार शुक्रवार है, अतः उसकी ढाई घड़ी की दूसरी कालहोरा है। शुक्रवार से छठा वार बुधवार है, अतः उसकी ढाई घड़ी की तीसरी कालहोरा है। इत्यादि क्रम-क्रम से छठे-छठे वार की ढाई-ढाई घड़ी की कालहोरा होती है।

ज्योतिषशास्त्र में जिस वार में जो कार्य करने को कहा गया है, आवश्यकता में यदि वह वार नहीं मिल रहा है तो उस वार की कालहोरा में वह कार्य किया जा सकता है। शुभवार की कालहोरा में शुभ कार्य करने से अच्छा फल होता है।

वारप्रवृत्ति का कल्पित उदाहरण:—

जैसे चैत्र शुक्ला प्रतिपदा शुक्रवार को देहली नगर में वारप्रवृत्ति किस समय होगी ? यह जानना है। दिल्ली से पश्चिम में ३७५ मील पर मध्यरेखा (उज्जैन) है। दिनमान २९।४४ है। ३७५ मील के ३७॥ योजन होते हैं। सुगमता के लिए ३८ योजनों के चौथाई ¼ योजन १० को ३८ में घटाया तो २८ शेष बचे। ये पल हैं। इस दिन दिनार्ध १४।५२ है। २८ पल को मध्यरेखा से दिल्ली पूर्व होने के कारण १५ घड़ी (१४।६०) में घटाया तो १४।३२ शेष बचे। इनको दिनार्ध १४।५२ घटाया तो ००।२० २० पल शेष बचे।

मध्यरेखा (उज्जैन) से दिल्ली पूर्व है। अतः इस दिन सूर्योदय के २० पल बाद वारप्रवृत्ति हुई।

नक्षत्र के चरण निकालने का क्रम :—

पहिले गतर्क्ष और सर्वर्क्ष का जानना उपयोगी है। सर्वर्क्ष का अर्थ—इष्ट काल में जो नक्षत्र वर्तमान (मौजूद) है, उसका जितना पूरा भोग है, उसे सर्वर्क्ष कहते हैं। गतर्क्ष का अर्थ—इष्टकाल में वर्तमान नक्षत्र, इष्टकाल तक जितना बीत गया है, उसे गतर्क्ष कहते हैं। गतर्क्ष को भयात और सर्वर्क्ष को भभोग भी कहते हैं।

गतर्क्ष और सर्वर्क्ष निकालने का क्रम :—

इष्ट काल में जो नक्षत्र वर्तमान हो, उससे पहिले नक्षत्र को ६० में घटाकर दो जगह रखना। एक जगह इष्ट काल के घड़ी-पलों को युक्त करना, वह गतर्क्ष या भयात (बीते नक्षत्र का मान) बनेगा। दूसरी जगह इष्टकाल में वर्तमान नक्षत्र के घड़ी-पल युक्त करने से सर्वर्क्ष वा भभोग (नक्षत्र का पूरा समय) बनेगा।

कल्पित उदाहरण :—इष्ट काल १७।५९। इष्ट काल में वर्तमान नक्षत्र उत्तराषाढ़ १३।१६। इससे पहला नक्षत्र पूर्वाषाढ़ नक्षत्र १५।३३। इस समय का गतर्क्ष और सर्वर्क्ष बनाना है।

इष्टकाल के नक्षत्र से पहिले नक्षत्र की घड़ी तथा पल को ६० में हीन किया ५९।६०
१५।३३ तो ४४।२७ शेष बचे। इनको दो स्थानों में रखा। एक जगह इष्ट को युक्त ४४।२७
४४।२७
किया तो गतर्क्ष बना। इष्ट १७।५९ यहाँ गतर्क्ष २ घड़ी २६ पल है। अर्थात् इष्टकाल
०२।२६
तक उत्तराषाढ़ नक्षत्र का भोग (बीतना) २ घड़ी २६ पल है। दूसरी जगह वर्तमान
४४।२७
नक्षत्र के घड़ी-पल युक्त किये। उत्तराषाढ़ १३।१६ तो ५७।४३ हुए। यह सर्वर्क्ष है।
५७।४३
अर्थात् इष्टकाल में वर्तमान नक्षत्र का कुल समय ५७ घड़ी ४३ पल है।

नोट :—गतर्क्ष-सर्वर्क्ष का काम चंद्रमा के स्पष्ट में तथा दशा के निकालने आदि में पड़ता है। जब नक्षत्र का क्षय होता है तब गतर्क्ष और सर्वर्क्ष बनाने में भिन्न क्रम करना पड़ता है।

नक्षत्र के क्षय में गतर्क्ष-सर्वर्क्ष बनाने का भिन्न क्रमः—

(क) इष्टकाल मे जो नक्षत्र वर्तमान है, यदि उसका क्षय हुआ हो तो उससे पहिले के नक्षत्र के घड़ी-पलों को इष्ट के घड़ी-पलों में घटाना। इससे भुक्त (गतर्क्ष) बन जायगा। गतनक्षत्र के घड़ी-पलों को वर्तमान नक्षत्र के घड़ी-पलों में घटाने से भोग्य (सर्वर्क्ष) बन जायगा।

(ख) यदि उसी दिन क्षय नक्षत्र के घड़ी-पल बीतने के बाद का इष्टकाल हो तो उस क्षय नक्षत्र के घड़ी-पलों को इष्टकाल के घड़ी-पलों में हीन करने से गतर्क्ष होता है। क्षय नक्षत्र के घड़ी-पलों को ६० में हीन करके वर्तमान नक्षत्र के घड़ी-पलों में युक्त करने से सर्वर्क्ष बनता है।

(ग) यदि क्षय नक्षत्र पहिले दिन बीत गया हो तो पूर्वक्रम के अनुसार अर्थात् क्षय नक्षत्र के घड़ी-पलों को ६० में हीन करके दो जगह रखना। एक जगह इष्ट के घड़ी-पल जोड़ने से गतर्क्ष बनेगा और दूसरी जगह वर्तमान नक्षत्र के घड़ी-पल जोड़ने से सर्वर्क्ष बनेगा।

नक्षत्र का चरण निकालने का क्रम :—

सर्वर्क्ष की घड़ी में ४ से भाग देकर लब्धि को पृथक् रखना और शेष को ६० से गुणा करके उसमें सर्वर्क्ष के पलयुक्त करने। फिर ४ से भाग देना। लब्धि को पृथक् रखना और शेष को ६० से गुणा करके ४ से भाग देना। संख्या पूरी कट जाने पर क्रम

न करना। लब्धियों को अनुपात से रखना। यह एक-एक चरण का काल होता है। गत नक्षत्र के घड़ी-पलों में एक-एक चरण के काल को मिलाना। जिस चरण के काल में इष्टकाल आये, वही इष्ट काल के नक्षत्र का चरण होता है।

कल्पित उदाहरण :—इष्ट काल १७।५९। गतनक्षत्र पूर्वाषाढ १५।३३। वर्तमान उत्तराषाढ़ नक्षत्र १३।१६। यहाँ इष्टकाल में उत्तराषाढ का कौन-सा चरण है? यह जानना है। पूर्वोक्त क्रम से सर्वक्ष बनाया तो ५७।४३ सर्वक्ष बना। सर्वक्ष की ५७ घड़ी में ४ से भाग दिया तो १४ लब्धि आयी और १ शेष बचा। लब्धि को पृथक् रखा और १ शेष को ६० से गुणा करके सर्वक्ष के ४३ पल युक्त किये तो १०३ हुए। इनमें ४ से भाग दिया तो २५ लब्धि आयी और ३ शेष बचे। लब्धि को पृथक् रखा और ३ शेष को ६० से गुणा किया १८० हुए। इनमें ४ से भाग दिया तो ४५ लब्धि आयी शून्य शेष बचा। आगे क्रिया बंद करके लब्धियों को अनुपात से रखा तो १४।२५।४५ हुई। यह उत्तराषाढ़ के एक-एक चरण का मान है। इसे गतनक्षत्र

१५ । ३३ ।

पूर्वाषाढ़ के घड़ी-पल में युक्त किया १४ । २५ । ४५ तो २९।५८।४५ हुए। यहाँ

२९ । ५८ । ४५

फलित निकला कि २९ घड़ी ५८ पल ४५ विपल तक उत्तराषाढ़ नक्षत्र का प्रथम चरण है। इष्ट काल १७ । ५९ प्रथम चरण के समय के अंदर है। अतः इस इष्ट काल में उत्तराषाढ़ नक्षत्र का प्रथम चरण है।

नोट :—लग्नकुण्डली में १२ राशियाँ तथा ९ ग्रह होते हैं। अतः इनके संबंध में सभी विवरण प्रस्तुत किये जाते हैं।

राशियों की क्रूर और सौम्य संज्ञा :—

(१) क्रूरराशि :—मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धन, कुंभ।

(२) सौम्यराशि :—वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर, मीन।

राशियों की पुरुष और स्त्री संज्ञा:—

(१) पुरुषराशि :—मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धन, कुंभ।

(२) स्त्रीराशि :—वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर, मीन।

राशियों की चर-स्थिर और द्विःस्वभाव संज्ञा—

(१) चरराशिः—मेष, कर्क, तुला, मकर।

(२) स्थिरराशिः—वृष, सिंह, वृश्चिक, कुंभ।

(३) द्विःस्वभावराशिः—मिथुन, कन्या, धन, मीन।

राशियों की शीर्षोदय आदि संज्ञा :—

(१) शीर्षोदय राशिः—मिथुन, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, कुंभ।

(२) पृष्ठोदय राशिः—मेष, वृष, कर्क, धन, मकर।

(३) उभयोदय (शीर्षोदय और पृष्ठोदय)—मीन।

राशियों के तत्त्वः—

(१) अग्नितत्त्व की राशिः—मेष, सिंह, धन।

(२) पृथ्वीतत्त्व की राशिः—वृष, कन्या, मकर।

(३) वायुतत्त्व की राशिः—मिथुन, तुला, कुंभ।

(४) जलतत्त्व की राशिः—कर्क, वृश्चिक, मीन।

राशियों की चतुष्पद आदि संज्ञा :—

(१) चतुष्पद (चार पैरों वाली):—मेष, वृष, सिंह।

(२) द्विपद (दो पैरों वाला) नरः—मिथुन, कन्या, तुला।

(३) बहुपद (बहुत पैरों वाली):—कर्क, वृश्चिक।

(४) अपद (बिना पैरों की):—कुंभ, मीन।

(५) पूर्वार्ध नर और परार्ध चतुष्पद—धन।

(६) पूर्वार्ध चतुष्पद और परार्ध नरः—मकर।

राशियों के रंग :—

मेष का लाल रंग है, वृष का सफेद, मिथुन का हरा, कर्क का सफेद-लाल, सिंह का सफेद-पीला, कन्या का सब प्रकार का, तुला का काला, वृश्चिक का पीला, धन का लाल-पीला, मकर का कबरा, कुंभ का न्योले का-सा रंग और मीन का रंग मटमैला है।

राशियों की प्रकृति :—

(१) वायुप्रकृति की राशिः—वृष, मिथुन, कन्या, तुला, मकर, कुंभ।

(२) पित्तप्रकृति की राशिः—मेष, सिंह, धन।

(३) कफप्रकृति की राशिः—कर्क, वृश्चिक, मीन।

राशियों के स्पर्श की संज्ञा :—

(१) उष्ण (गर्म) स्पर्शः—मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धन, कुंभ।

(२) शीतल (ठंडा) स्पर्शः—कर्क, वृश्चिक, मीन।

(३) उष्ण-शीतल (गर्म और ठंडा दोनों प्रकार का) स्पर्शः—वृष, कन्या, मकर।

राशियों की रूक्ष आदि संज्ञा :--

(१) चिकनी राशिः—मिथुन, कर्क, तुला, वृश्चिक, कुंभ, मीन ।
(२) रूखी राशिः--वृष, कन्या, मकर ।
(३) सम (न चिकनी और न रूखी) राशिः—मेष, सिंह, धन ।

राशियों के आकार की संज्ञा :—

(१) ह्रस्व (छोटा) आकारः--मेष, वृष, कुंभ, मीन ।
(२) दीर्घ (लम्बा) आकारः--सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धन ।
(३) मध्यम (औसत दर्जा) आकारः--मिथुन, कर्क, मकर ।

राशियों की अन्धादि संज्ञाः--

(१) अंध (अंधी) राशिः--मेष, सिंह, धन ।
(२) बधिर (बहरी) राशिः—वृष, कन्या, मकर ।
(३) मूक (गूंगी) राशिः—मिथुन, तुला, कुंभ ।
(४) पंगु (लंगड़ी) राशिः—कर्क, वृश्चिक, मीन ।

राशियों के शब्द की संज्ञाः--

(१) शब्द रहितः—कर्क, वृश्चिक, मकर, मीन ।
(२) अर्धशब्दः—कन्या, कुंभ ।
(३) पूर्णशब्दः—तुला, धन ।
(४) अधिक शब्दः—मेष, वृष, मिथुन, सिंह ।

राशियों की सजल और निर्जल संज्ञाः—

(१) सजल राशिः—वृष, कर्क, कन्या, तुला, धन, मकर, कंभ, मीन ।
(२) निर्जल राशिः—मेष, मिथुन, सिंह, वृश्चिक ।

नोटः—कर्क, धन, कुंभ, मीन ये राशियाँ विशेष सजल हैं ।

द्वार-शय्या-आसन आदि में राशियों की दिशाः—

(१) पूर्व दिशाः—मेष, कर्क, तुला, वृश्चिक, कुंभ ।
(२) दक्षिण दिशाः—मिथुन, कन्या, धन, मीन ।
(३) पश्चिम दिशाः—वृष ।
(४) उत्तर दिशाः—सिंह, मकर ।

पूर्व आदि दिशाओं की स्वामिनी राशियाँः—

(१) पूर्व दिशा की स्वामी राशिः—मेष, सिंह, धन ।
(२) दक्षिण दिशा की स्वामी राशिः—वृष, कन्या, मकर ।

(३) पश्चिम दिशा की स्वामी राशिः—मिथुन, तुला, कुंभ ।

(४) उत्तर दिशा की स्वामी राशिः—कर्क, वृश्चिक, मीन ।

नोटः—दिशाओं के संबंध में कुछ आचार्यों का मतभेद है । वह इस प्रकार है। कोणों के सहित दिशाएँ ली गयी हैं ।

(१) पूर्व दिशाः—मेष, वृष । (२) अग्नि कोण (पूर्व और दक्षिण के कोण)—मिथुन । (३) दक्षिण दिशाः—कर्क-सिंह । (४) नैऋत्य कोण (दक्षिण और पश्चिम के कोण):—कन्या । (५) पश्चिम दिशाः—तुला-वृश्चिक । (६) वायव्य कोण (पश्चिम और उत्तर के कोण)—धन । (७) उत्तर दिशाः—मकर-कुम्भ । (८) ईशान कोण (उत्तर और पूर्व के कोण)—मीन ।

राशियों की दिन-रात्रिबली संज्ञा :—

(१) दिन में बली राशिः—सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, कुम्भ ।

(२) रात्रि में बली राशिः—मेष, वृष, मिथुन, कर्क, धन, मकर, मीन ।

राशियों के स्वामी ग्रह

स्वामीग्रहः—	राशियाँः—
(१) सूर्य—	सिंह ।
(२) चन्द्र—	वृष ।
(३) मंगल—	मेष-वृश्चिक ।
(४) बुध—	मिथुन-कन्या ।
(५) गुरु—	धन-मीन ।
(६) शुक्र—	वृष-तुला ।
(७) शनि—	मकर-कुम्भ ।

राशियों के अंग-विभागः—

(१) मेषः—मस्तक (माथा) । (२) वृषः—मुख । (३) मिथुनः—उर (स्तनों का बीच) । (४) कर्कः—हृदय । (५) सिंहः—उदर (पेट) । (६) कन्याः—कटि (कमर) । (७) तुलाः—वस्ति (नाभि के नीचे का भाग यानी पेढू) । (८) वृश्चिकः—लिंग । (९) धनः—जंघा । (१०) मकरः—घुटना । (११) कुम्भः—पिण्डली । (१२) मीनः—पैर ।

नोटः—कालपुरुष के अंग-विभाग के अनुसार राशिचक्र में भी अंग-विभाग है । जिस राशि का जो अंग है, वह सब कुण्डली के बारहों स्थानों में विभक्त हैं । जैसे लग्नकुण्डली में पहिला स्थान मस्तक है और पाँचवाँ स्थान पेट है, इत्यादि है । जिस अंग-विभाग में जैसी भी ह्रस्व या दीर्घ राशि होगी, वह अंग भी वैसा ही ह्रस्व या दीर्घ होगा ।

जो राशि पापग्रह से युक्त तथा दृष्ट हो एवं उसका स्वामी भी पापग्रह से युक्त तथा दृष्ट हो तो उस राशि का अंग पीड़ित होता है। उदाहरणार्थ जैसे—अंग-विभाग में सिंह राशि का अंग पेट है। यदि जन्मकुण्डली में सिंह राशि और उसका स्वामी सूर्य पापग्रह से युक्त तथा दृष्ट है तो जातक (जन्म लेने वाला व्यक्ति) को पेट सम्बन्धी पीड़ा रहेगी। इत्यादि।

भावों का विवरण।—कुण्डली में १२ स्थान होते हैं। स्थान को भाव कहते हैं। भावों के नाम:—(१) लग्न या देह। (२) धन। (३) सोत्थ (भ्रातृ) भाव। (४) मातृभाव। (५) आत्मज (पुत्र)। (६) अरि (शत्रु)। (७) कलत्र (स्त्री)। (८) आयु: (मृति)। (९) धर्म (पुण्य)। (१०) कर्म। (११) आय (लाभ)। (१२) व्यय।

इस प्रकार प्रथम स्थान से बारहवें स्थान तक के प्रसिद्ध नाम हैं।

षड्वर्ग का विवरण:—कुण्डली से सूक्ष्मतर विचार करने के लिए राशियों के छ: प्रकार के विभाग किये गये हैं, उन्हें षड्वर्ग कहते हैं। षड्वर्ग के नाम:—गृह (लग्न-राशि)। (२) होरा। (३) द्रेष्काण। (४) नवांश। (५) द्वादशांश। (६) त्रिंशांश।

(१) गृह का अर्थ:—जन्म, वर्ष या प्रश्न आदि के समय की लग्नकुण्डली को गृह कहा जाता है।

(२) होरा का विवरण:-एक राशि ३० अंशों की होती है। उसके १५-१५अंशों के दो विभाग को होरा कहते हैं। होरा केवल सूर्य और चन्द्र की ही होती है। अत: सूर्य की, सिंह राशि की तथा चन्द्र की कर्क राशि की होती है। विषम राशि (जो संख्या २ से न कटे) में १ से १५ अंश तक सूर्य की होरा होती है। समराशि (जो संख्या २ से कटे) में १ से १५ अंश तक चन्द्र की होरा होती है। विषम राशि में १६ से ३० अंश तक चन्द्र की होरा होती है। समराशि में १६ से ३० अंश तक सूर्य की होरा होती है।

होरा के द्वारा सम्पत्ति आदि से प्राप्त होने वाले सुख का विचार किया जाता है।

कल्पित उदाहरण:—कन्या लग्न है और उसके ११ अंश हैं। इस पर क्या होरा होगी? यह जानना है। कन्या राशि सम है और उसके ११ अंश १५ अंश के भीतर हैं अत: चन्द्र की यानी कर्क राशि की होरा है। होरा लग्नकुण्डली में कर्क राशि लिखी जायेगी।

वृष राशि के सूर्य के २६ अंश हैं। वृष राशि सम है। २६ अंश दूसरे भाग में है। अत: सूर्य की यानी सिंह राशि की होरा में है। होरा कुण्डली में सूर्य सिंह राशि में लिखा जायेगा। इस प्रकार प्रत्येक ग्रह की होरा निकाली जा सकती है।

(३) द्रेष्काण का विवरण:—राशि के तीन भाग करने पर १०।१० अंशों का १।१ द्रेष्काण होता है। पहला द्रेष्काण (१ से १० अंश तक) अपनी राशि का होता है। दूसरा द्रेष्काण (११ अंश से २० अंश तक) अपनी राशि से पाँचवीं राशि का होता है। तीसरा द्रेष्काण (२१ अंश से ३० अंश तक) अपनी राशि से नवीं राशि का होता है। द्रेष्काण से भाई-बहिन सम्बन्धी सुख का विचार होता है।

द्रेष्काण लग्नकुण्डली में द्रेष्काण लग्न लिख कर फिर प्रत्येक ग्रह को उसकी द्रेष्काण राशि में लिखना।

कल्पित उदाहरण:—कन्या लग्न के ११ अंश हैं। अतः इस पर क्या द्रेष्काण होगा ? यह जानना है। कन्या लग्न दूसरे द्रेष्काण में है, अतः कन्या से पाँचवीं राशि मकर के द्रेष्काण में है।

वृष राशि के सूर्य के २६ अंश हैं। अतः तीसरे द्रेष्काण में होने के कारण वृष से नवीं राशि मकर के द्रेष्काण में हैं। इत्यादि।

सप्तमांश का विवरण:—राशि के सात विभाग करने पर सप्तमांश होता है। एक-एक सप्तमांश ४ अंश और १७ कलाओं का होता है। यह विषमराशि में अपनी ही राशि से अंश पर्यन्त गिना जाता है और समराशि में उस राशि से जो सातवीं राशि है उससे अंश पर्यन्त गिना जाता है। गिनने में जो राशि आती है वही सप्तमांश की राशि होती है। सप्तमांश से संतान संबंधी विचार होता है।

कल्पित उदाहरण:—कन्या लग्न के ११ अंश हैं। यह तीसरे सप्तांश में हैं। कन्या लग्न सम है, अतः इससे सातवीं राशि मीन है, उससे तीसरे सप्तांश तक गिना तो वृष राशि हुई। अतः वृष राशि का सप्तमांश लग्न है। इसी प्रकार प्रत्येक ग्रह की भी सप्तमांश राशि निकलती है।

नवमांश का विवरण:—राशि के ९ भाग करने पर नवमांश होता है। एक-एक नवमांश ३ अंश २० कला का होता है। चरराशि (१-४-७-१०) में अपनी यानी उसी राशि से गिनना। स्थिर राशि (२-५-८-११) में उस राशि से नवीं राशि से गिनना। द्विःस्वभाव राशि (३-६-९-१२) में उस राशि से पाँचवीं राशि से गिनना। नवमांश से पत्नी के सुख का विचार होता है।

नवांश कुण्डली में लग्न की नवांश राशि लग्नभाव में लिखनी। फिर प्रत्येक ग्रह की नवांश राशि निकाल कर जिस ग्रह की जो नवांश राशि है, उसमें उस ग्रह को लिखना। इस प्रकार नवांश कुण्डली तैयार हो जाती है। ज्योतिष में नवमांश को विशेष महत्त्व दिया गया है।

कल्पित उदाहरण:—कन्या लग्न के ११ अंश हैं। यह द्वि:स्वभाव लग्न है। इससे पाँचवीं राशि मकर है। ११ अंश तीसरे विभाग में है। मकर से तीन तक गिना तो मीन राशि आयी। फलित हुआ कि कन्या के ११ अंश में मीन का नवांश है। अत: नवांश कुण्डली में मीनलग्न लिखा जायगा।

वृष के सूर्य के २६ अंश हैं। २६ अंश नवमांश के आठवें विभाग में है। वृष राशि स्थिर राशि है। उससे नवीं राशि मकर से आठ तक गिना तो सिंह राशि आयी। अत: सूर्य सिंह राशि के नवमांश में है। नवमांश कुण्डली में सूर्य सिंह राशि में लिखा जायेगा। इस प्रकार प्रत्येक ग्रह का नवांश निकाला जा सकता है।

दशमांश का विवरण:—राशि के दस भाग करने पर दशमांश होता है। प्रत्येक दशमांश तीन अंश का होता है। विषम राशि में अपनी राशि से गिना जाता है और समराशि में उससे नवीं राशि से गिना जाता है। गिनने पर जो राशि आती है, वही दशमांश राशि होती है।

कल्पित उदाहरण:—कन्या के ११ अंश है। ११ अंश दशमांश के चौथे विभाग में है। कन्या द्वि:स्वभाव राशि है, अत: उससे नवीं राशि वृष से चार तक गिना तो सिंह राशि आयी। फलित हुआ कि दशमांश लग्न सिंह है। इसी प्रकार प्रत्येक ग्रह की दशमांश राशि निकाल कर दशमांश कुण्डली तैयार करनी।

(५) द्वादशांश का विवरण:—लग्न के १२ भाग करने पर द्वादशांश होता है। प्रत्येक भाग २॥ अंश का होता है। यह अपनी यानी उसी राशि से गिना जाता है।

कल्पित उदाहरण:—कन्या लग्न के ११ अंश हैं। ११ अंश पाँचवें विभाग में है। कन्या राशि से पाँच तक गिनने से मकर राशि आयी। यही द्वादशांश लग्न है। इसी प्रकार प्रत्येक ग्रह की द्वादशांश राशि निकाल कर द्वादशांश कुण्डली तैयार करनी।

षोडशांश का विवरण:—राशि के सोलह भाग करने पर षोडशांश होता है। षोडशांश का प्रत्येक भाग १ अंश ५२ कला १६ विकला का होता है। चरराशि में मेष राशि से गिना जाता है। स्थिरराशि में सिंह राशि से और द्वि:स्वभाव राशि में धन राशि से गिना जाता है।

कल्पित उदाहरण:—कन्या लग्न के ११ अंश है। ११ अंश षोडशांश के छठे भाग में हैं। कन्या राशि द्वि:स्वभाव राशि है। अत: धन राशि से छ: तक गिना तो वृष राशि आयी। यही षोडशांश राशि है। इसी प्रकार प्रत्येक ग्रह की षोडशांश राशि निकाल कर षोडशांश कुण्डली तैयार करनी।

(६) त्रिशांश का विवरणः—पाँच विभाग के भिन्न-भिन्न अंश पूरे होते हैं। इसको त्रिशांश कहते हैं। पाँच ग्रहों के त्रिशांश है। जो सम तथा विषम राशि में भिन्न-भिन्न हैं। सम राशि में ५।७।८।५।५ अंशों के क्रम से शुक्र, बुध, गुरु, शनि, मंगल ग्रह त्रिशांश के स्वामी हैं। विषम राशि में ५।५।८।७।५ अंशों के क्रम से मंगल, शनि, गुरु, बुध, शुक्र ग्रह त्रिशांश के स्वामी हैं। त्रिशांश के स्वामी ग्रह की राशि में लग्न तथा ग्रह लिखने।

कल्पित उदाहरणः—कन्या लग्न के ११ अंश हैं। कन्या सम राशि है। ११ अंश दूसरे भाग में हैं। दूसरे भाग के त्रिशांश का स्वामी बुध है, अतः बुध का त्रिशांश है। बुध की दो राशियाँ हैं—मिथुन और कन्या। अतः इच्छानुसार किसी भी एक राशि का त्रिशांश लग्न लिखा जायेगा। इसी प्रकार प्रत्येक ग्रह की त्रिशांश राशि निकाल कर त्रिशांश कुण्डली तैयार करनी।

षष्ट्यंश का विवरणः—राशि के ६० भाग करने पर षष्ट्यंश होता है। षष्ट्यंश का प्रत्येक भाग ० अंश ३० कला का होता है। यह अपनी यानी उसी राशि से गिना जाता है। भाग की संख्या तक गिनने से जो राशि आती है वह षष्ट्यंश राशि होती है और उस राशि का षष्ट्यंश पति होता है।

कल्पित उदाहरणः—कन्या लग्न के ११ अंश है। ११ अंश षष्ट्यंश के २२वें भाग में हैं। कन्या से २२ तक गिना तो मिथुन राशि आयी। फलित हुआ कि षष्ट्यंश राशि मिथुन है और षष्ट्यंशपति बुध है।

षष्ट्यंश निकालने का अन्य क्रमः—जिस राशि का षष्ट्यंश निकालना हो, उसके स्पष्ट के अंश को २ से गुणा करना। यदि स्पष्ट में कला ३० से कम हो तो १ युक्त करना और यदि ३० से अधिक हो तो २ युक्त करना। जो संख्या आये उतने ही विभाग में षष्ट्यंश जानना। यदि संख्या १२ से अधिक हो तो १२ से भाग देना, जो शेष बचे उतनी संख्या के विभाग में षष्ट्यंश जानना। राशि से उस विभाग तक गिनने पर षष्ट्यंश की लग्न या राशि होती है। उस राशि का स्वामी षष्ट्यंश पति होता है।

कल्पित उदाहरणः—कन्या लग्न का स्पष्ट ५।१०।४७।२७ है। यहाँ १० अंश हैं। इनको २ से गुणा किया २० हुए। कला ४७ हैं, जो कि ३० से अधिक हैं। अतः २० में २ युक्त किये २२ हुए। ये १२ से अधिक हैं अतः १२ से भाग दिया। १० शेष बचे। फलित हुआ कि दशवें भाग में षष्ट्यंश है। कन्या से १० तक गिना तो मिथुन राशि आयी। यही षष्ट्यंश राशि है। मिथुन राशि का स्वामी बुध षष्ट्यंश पति है। इस प्रकार लग्न तथा प्रत्येक ग्रह का षष्ट्यंश निकाल कर षष्ट्यंश कुण्डली बनायी जा सकती है।

षष्टयंश का महत्त्व:--६० षष्टयंश है। षष्टयंशों में २६ षष्टयंश क्रूर हैं, एक मध्यम है और तैंतीस शुभ हैं। षष्ट्यंशों के नामानुसार ही शुभ-अशुभ का विचार होता है। प्रत्येक विचार में षष्ट्यंश उपयोगी है। महर्षि पराशर का कथन है—

शुभषष्ट्यंशसंयुक्ता ग्रहाः शुभफलप्रदाः।
क्रूरषष्ट्यंशसंयुक्ता नाशयन्ति खचारिणः॥

जो ग्रह शुभषष्ट्यंश में होते हैं, वे शुभ फल देते हैं और जो ग्रह क्रूरषष्ट्यंश में होते हैं वे हानि करते हैं।

षष्ट्यंशों के नाम:-(१) घोर ६०, (२) राक्षस ५९,(३) देव ५८, (४) कुबेर ५७, (५) रक्षोगण ५६, (६) किन्नर ५५, (७) भ्रष्ट ५४, (८) कुलघ्न ५३, (९) विष ५२, (१०) अग्नि ५१,(११) माया ५०, (१२) प्रेतपुरीष ४९, (१३) वरुण ४८, (१४) इन्द्र ४७, (१५) कला ४६, (१६) अहि ४५, (१७) चन्द्र ४४, (१८) चन्द्र ४३, (१९) मृदु ४२, (२०) मृदु ४१, (२१) पद्म ४०, (२२) विष्णु ३९, (२३) वागीश ३८, (२४) दिगम्बर ३७, (२५) देव ३६, (२६) अर्ध ३५, (२७) कलिनाश ३४, (२८) क्षितीश ३३, (२९) कमलाकर ३२, (३०) मन्दात्मज ३१, (३१) मृत्यु ३०, (३२) काल २९, (३३) दावाग्नि २८, (३४) घोर २७, (३५) यमकंटक २६, (३६) सुधा २५, (३७) अमृत २४, (३८) पूर्णेन्दु २३, (३९) विषदिग्ध २२, (४०) कुलनाश २१, (४१) मुख्य २०, (४२) वंशक्षय १९, (४३) उत्पात १८, (४४) कालरूद्र १७, (४५) सौम्य १६, (४६) मृदु १५, (४७) शीतल १४, (४८) दंष्ट्राकराल ३३, (४९) इन्दुमुख १२, (५०) प्रवीण ११, (५१) कालाग्नि १०, (५२) दंडायुध ९, (५३) निर्मल ८, (५४) शुभ ७, (५५) अशुभ ६, (५६) अतिशीतल ५, (५७) सुधा ४, (५८) पयोधि ३, (५९) भ्रमण २, (६०) इन्दुरेखा १।

नोट:—विषम राशि के षष्ट्यंशों के नाम से पहिले संख्या हैं और समराशि के षष्ट्यंशों के नाम के आगे संख्या है।

उदाहरण :—कन्या राशि का लग्न ११ अंश है। यह षष्टयंश के ८वें विभाग में है। कन्या राशि सम है। समराशि के आठवें विभाग में निर्मल नाम का षष्टयंश है, जो कि शुभ है।

सप्तवर्ग और दशवर्ग का विवरण:—षड्वर्ग में सप्तमांश युक्त कर लेने पर सप्त वर्ग होता है। सप्तवर्ग में दशमांश, षोडशांश और षष्टयंश युक्त करने पर दश वर्ग होता है।

ग्रहों की पारिजात आदि वर्गों की संज्ञाओं का विवरण:—

वर्गों के नाम:—(२) पारिजात, (३) उत्तम, (४) गोपुर, (५) सिंहासन, (६)

पारावत, (७) देवलोक, (८) देवलोक, (९) ऐरावत, (१०) वैशेषिकांश।

ग्रह के वर्ग निकालने का क्रम :—

पूर्वोक्त दश वर्ग का साधन करना। जो ग्रह जितने वर्गों में स्वराशि का, उच्च राशि का और अपने अधिमित्र ग्रह की राशि का हो, उसकी संख्या का योग करना। जो संख्या आये, उसके अनुसार वर्ग जानना। संख्या वर्ग के नाम से पहले लिखी है।

कल्पित उदाहरण :—सूर्य दशवर्ग में एक वर्ग में स्वराशि का है, दो वर्गों में उच्च राशि का है, तीन वर्गों में अधिमित्र ग्रह की राशि का है। इनका योग किया १ + २ + ३ = तो ६ संख्या हुई। ६ संख्या पर पारावत है। फलित हुआ कि सूर्य पारावत वर्ग में हैं।

केन्द्र संज्ञा का विवरण :—लग्न, चतुर्थ, सप्तम और दशम (१-४-७-१०) ये चार स्थान केन्द्र कहलाते हैं।

त्रिकोण संज्ञा का विवरण :—कुण्डली में पंचम और नवम (५-९) ये दो स्थान त्रिकोण कहलाते हैं।

पणफर संज्ञा का विवरण :—द्वितीय, पंचम, अष्टम और एकादश (२-५-८-११) ये स्थान पणफर कहलाते हैं।

आपोक्लिम संज्ञा का विवरण :—तृतीय, षष्ठ नवम और द्वादश (३-६-९-१२) ये चार स्थान आपोक्लिम कहलाते हैं।

उपचय स्थान का विवरण :—तृतीय, षष्ठ, दशम और एकादश (३-६-१०-११) ये स्थान उपचय कहलाते हैं।

चतुरस्र स्थान का विवरण :—चतुर्थ और अष्टम (४-८) स्थान को चतुरस्र कहते हैं।

मारक स्थान का विवरण :—द्वितीय और सप्तम (२-७) स्थान को मारक स्थान कहते हैं।

नेत्रसंज्ञक स्थान का विवरण:—द्वितीय और द्वादश (२-१२) स्थान को नेत्रसंज्ञक स्थान कहते हैं।

त्रिक स्थान का विवरण:—कुण्डली में छठे, आठवें और बारहवें (६-८-१२) स्थान को त्रिक स्थान कहते हैं। त्रिक स्थान को दुष्ट स्थान भी कहते हैं।

ऋक्षसंधि का विवरण :—कर्क, वृश्चिक और मीन राशियों के अन्त्य भाग (२९ अंश) को ऋक्षसंधि कहते हैं।

ग्रहों का विवरण:--

शुभग्रह:-पूर्ण चन्द्रमा, बुध, बृहस्पति और शुक्र को शुभग्रह वा सौम्यग्रह कहते हैं।

पापग्रह:—सूर्य, क्षीण चन्द्रमा, मंगल, शनि, राहु और केतु को पापग्रह या क्रूरग्रह कहते हैं।

नोट:—पापग्रह के साथ में बुध भी पापग्रह हो जाता है। कृष्णपक्ष की अष्टमी से शुक्लपक्ष की अष्टमी तक चंद्रमा क्षीण होता है, फिर उसके बाद पूर्ण हो जाता है।

पाश्चात्य विद्वान् हर्शल और नेपच्यून को भी पापग्रह मानते हैं।

ग्रहों की पुरुष आदि संज्ञा:—

सूर्य, मंगल और गुरु, ये तीन ग्रह पुरुषसंज्ञक हैं। चंद्र और शुक्र स्त्रीग्रह हैं। बुध और शनि नपुंसक ग्रह हैं।

ग्रहों की गुणात्मिका प्रकृति:—

सूर्य, चंद्र और गुरु सात्विक यानी सत्त्वगुणी है। बुध और शुक्र राजस (रजोगुणी) हैं। मंगल, शनि, राहु और केतु तामस (तमोगुणी) हैं।

ग्रहों की धातु आदि संज्ञा:—

सूर्य की और मंगल की धातु संज्ञा है। चंद्र, बुध और शनि की मूल संज्ञा है। गुरु और शुक्र की जीव संज्ञा है।

नोट:—सुवर्ण से लेकर मिट्टी तक सभी वस्तुयें धातु हैं। भूमि को फोड़कर निकलने वाली या वृक्ष आदि से उत्पन्न वस्तु मूल है। सभी प्राणधारी जीव हैं।

ग्रहों की जातियाँ:—सूर्य और मंगल की जाति क्षत्रिय है। चंद्र की जाति वैश्य है। बुध की जाति शूद्र है। गुरु और शुक्र की जाति ब्राह्मण है। शनि, राहु और केतु की जाति म्लेच्छ है।

ग्रहों की अन्य जातियाँ:—सूर्य राजा है। चंद्रमा तपस्वी है। मंगल सुनार है। बुध, गुरु और शुक्र वैश्य हैं। शनि शूद्र है। राहु और केतु निषाद हैं।

ग्रहों के रस:—सूर्य और मंगल का रस कटु है। चंद्र का रस लवणाम्ल (नमकीन और खट्टा) है। बुध का रस कटु-मिष्ट (तीखा और मीठा) है। गुरु का रस मिष्ट है। शुक्र का लवणाम्ल है। शनि, राहु और केतु का रस तीक्ष्ण है।

ग्रहों के आकार:-सूर्य और मंगल चौकोर है। चंद्रमा स्थूल (मोटा) है। बुध और गुरु गोलाकार हैं। शुक्र खण्ड (टुकड़ा) है। शनि तथा राहु दीर्घ (लंबा) हैं।

ग्रहों की कालबली (समय में बलवान्) संज्ञा :—

सूर्य और मंगल मध्याह्न बली (दोपहर में बलवान्) हैं। चंद्रमा और शुक्र अपराह्न (मध्याह्न के बाद) बली हैं। शनि और राहु सायं बली हैं।

ग्रहों की नीरस आदि संज्ञाः—सूर्य, मंगल, शनि और राहु नीरस हैं। चंद्र, बुध, गुरु और शुक्र सरस हैं।

ग्रहों की वस्तुयेंः—सूर्य को वैदूर्य, मोती, पत्थर आदि वस्तुयें हैं। चंद्र की चांदी, दूध आदि। मंगल की तांबा, वैदूर्य, रत्न आदि। बुध की कांच, चित्र-बिचित्र वस्तुयें आदि। गुरु की सुवर्ण, गोमेद आदि वस्तुयें। शुक्र की चांदी, आभूषण आदि। शनि की नीलम, पत्थर आदि। राहु की हड्डी, कांटा आदि वस्तुएँ हैं।

ग्रहों के अन्नः—सूर्य और शुक्र का अन्न धान्य (धान) है। चंद्रमा का गेहूँ। मंगल का कुलत्थ। बुध का जौ। गुरु का घासज (घास से उत्पन्न) है। शनि का मूंग। राहु का अन्न उड़द है।

ग्रहों की पक्व आदि वस्तुयेंः—सूर्य, चंद्र, बुध और गुरु की वस्तु पक्व (पकी हुई) हैं। मंगल की वस्तु जलयुक्त (रसदार) है। शेष ग्रहों की वस्तु अपक्व (बिना पकी) है।

ग्रहों की अवस्थाएँः—सूर्य वृद्ध है। चंद्रमा मध्यम अवस्था का है। मंगल युवक है। बुध बालक है। गुरु, शनि और राहु वृद्ध हैं। शुक्र मध्यम आयु का है।

ग्रहों के रंगः—सूर्य और मंगल का लाल रंग, चंद्र और शुक्र का श्वेत रंग, बुध का हरा रंग, गुरु का पीला रंग और शनि का श्याम रंग है।

ग्रहों के वृक्ष—चंद्र, बुध, गुरु और शुक्र के फलदार वृक्ष हैं। सूर्य, मंगल शनि और राहु के फल रहित वृक्ष हैं।

सूर्य, मंगल और गुरु के वृक्ष है, शेष ग्रहों की लतायें हैं।

ग्रहों की धातुएँ :—सूर्य को धातु अस्थि (हड्डी), चंद्र की धातु रुधिर, मंगल की मज्जा (भीतर की पतली चमड़ी), बुध की चमड़ी, गुरु की चर्बी, शुक्र का वीर्य और शनि की नसें हैं।

नोटः—जो ग्रह अष्टम में होता है या मृत्युकारक होता है, उसकी धातु के प्रकोप से शरीर में रोग अथवा मृत्यु होती है।

ग्रहों के मासः—सूर्य का मास आषाढ़ है। चंद्र का श्रावण, मंगल का भाद्रपद, बुध का आश्विन, गुरु के कार्तिक, अगहन और पौष, शुक्र का ज्येष्ठ, शनि के माघ-फाल्गुन, राहु के मास चैत्र-वैशाख हैं।

ग्रहों की दिशाएँ :—

सूर्य की पूर्व दिशा है। शुक्र की अग्निकोण, मंगल की दक्षिण दिशा, राहु की नैऋत्य कोण, शनि की पश्चिम दिशा, चंद्र की वायव्य कोण, बुध की उत्तर दिशा और गुरु की ईशान कोण है।

ग्रहों के स्वरूप का विवरण :—

सूर्य का स्वरूप:—आँखों में पिलायी, लाल-श्याम वर्ण, पित्त की प्रकृति, मध्यम शरीर, थोड़े बाल, कम बोलना तथा प्रतापी है।

चंद्र का स्वरूप :—सफेद रंग, दुर्बल, गोलाकार शरीर, वायु और कफ की प्रकृति, मीठी बोली बोलने वाला, बुद्धिमान्, अच्छी दृष्टि रखने वाला तथा विचारवान् है।

मंगल का स्वरूप :—खराब दृष्टि, युवक, पतली कमर, लाल और गोरे रंग का शरीर, पित्त की प्रकृति, चंचल बुद्धि, स्वभाव में उदारता तथा प्रतापी है।

बुध का स्वरूप:—कुछ हकला कर बोलने वाला, हंसमुख, अच्छी बुद्धि वाला, साँवला-सलौना, वायु-पित्त और कफ की प्रकृति वाला तथा व्यभिचारी है।

गुरु का स्वरूप:—गोरा रंग, पुष्ट शरीर, कफ की प्रकृति, आँखों में पिलायी, शिर पर बाल तथा विद्वान् है।

शुक्र का स्वरूप :—साँवला-सलौना, सुन्दर आकृति का शरीर, पुष्ट शरीर, सुख भोगने वाला, काले नेत्र, घुंघराले बाल, वायु और कफ की प्रकृति तथा अधिक कामी है।

शनि का स्वरूप :—दुर्बल तथा लम्बी देह, बड़े-बड़े दाँत, डरावनी आँखें, वायु की प्रकृति, रूखा शरीर, रूखे बाल, कठोर वाणी, कामों के करने में अचतुर तथा निन्दित कार्य करने वाला है।

नोट:—जो ग्रह, जन्मकाल या प्रश्नकाल में बलवान् होता है उसी के अनुरूप पूर्वोक्त गुण-आकार तथा स्वरूप होता है।

ग्रह की सात प्रकार की राशियाँ हैं। १—स्वराशि। २—मूलत्रिकोण राशि। ३—उच्च राशि। ४—नीच राशि। ५—मित्र राशि। ६—शत्रु राशि। ७—सम राशि।

ग्रहों की स्वराशि :—

अपनी राशि को स्वराशि कहते हैं। ग्रह, अपनी स्वराशि का स्वामी होता है। सूर्य की स्वराशि सिंह है। चंद्र की स्वराशि कर्क, मंगल की स्वराशि मेष और वृश्चिक, बुध की स्वराशि मिथुन और कन्या, गुरु की स्वराशि धन और मीन, शुक्र की स्वराशि वृष और तुला, शनि की स्वराशि मकर और कुम्भ है।

ग्रहों की मूल त्रिकोण राशि :—

सूर्य की मूल त्रिकोण राशि सिंह है। १ से २० अंश तक मूल त्रिकोण राशि है, बाद में २१ से ३० अंश तक सिंह स्वराशि है। चंद्र की मूल त्रिकोण राशि वृष है। १ से ३ अंश तक वृष राशि उच्च है फिर बाद में ४ अंश से ३० अंश तक मूल त्रिकोण राशि है। मंगल की मूल त्रिकोण राशि मेष है। १ से १२ अंश तक मेष मूल त्रिकोण राशि है फिर बाद में १३ अंश से ३० अंश तक स्वराशि है। बुध की मूल त्रिकोण राशि कन्या है। १ से १५ अंश तक कन्या बुध की उच्च राशि है, १६ से २० अंश तक मूल त्रिकोण राशि है, फिर २१ से ३० अंश तक स्वराशि है। गुरु की मूल त्रिकोण राशि धन है, १ से १० अंश तक धन मूल त्रिकोण राशि है फिर बाद में ११ अंश से ३० अंश तक स्वराशि है। शुक्र की मूल त्रिकोण राशि तुला है। पहिले १ से १५ अंश तक तुला शुक्र की मूल त्रिकोण राशि है फिर बाद में १६ अंश से ३० अंश तक स्वराशि है। शनि की मूल त्रिकोण राशि कुम्भ है। १ अंश से २० अंश तक कुम्भ, शनि की मूल त्रिकोण राशि है, फिर बाद में २१ अंश से ३० अंश तक स्वराशि है।

नोट:—जो ग्रह की स्वराशि भी है और मूल त्रिकोण राशि भी है अथवा उच्चराशि भी है, उसका बटवारा अंशों के अनुसार है जो कि पूर्वोक्त है।

राहु की मूल त्रिकोण राशि कुम्भ है और केतु की मूल त्रिकोण राशि सिंह है।

ग्रहों की उच्च राशियाँ तथा परमोच्च राशियाँ :—

सूर्य की उच्च राशि मेष है। १ से १० अंश तक मेष, सूर्य की परमोच्च राशि है। चन्द्रमा की उच्च राशि वृष है। १ से ३ अंश तक वृष राशि चन्द्रमा की परमोच्च राशि है। मंगल की उच्चराशि मकर है। १ से २८ अंश तक मकर, मंगल की परमोच्च राशि है। बुध की उच्च राशि कन्या है। १ से १५ अंश तक कन्या परमोच्च राशि है। गुरु की उच्च राशि कर्क है। १ से ५ अंश तक कर्क राशि परमोच्च है। शुक्र की उच्च राशि मीन है। १ से २७ अंश तक मीन राशि परमोच्च है। शनि की उच्च राशि तुला है। १ से २० अंश तक तुला राशि परमोच्च है।

उदाहरण :—मेष राशि के सूर्य के १५ अंश हैं। अतः सूर्य परमोच्च का न होकर उच्च का है, क्योंकि १० अंश तक मेष राशि का सूर्य परमोच्च का होता है।

नोट:—राहु की उच्च राशि वृष है और केतु की उच्च राशि वृश्चिक राशि है।

ग्रहों की नीच राशियाँ तथा परम नीच राशियाँ :—

ग्रह की उच्च राशि से सातवीं नीच राशि है। जितने अंश से परमोच्च राशि है, उतने ही अंशों से नीच राशि भी परम नीच राशि होती है।

सूर्य की नीच राशि तुला है। चन्द्रमा की वृश्चिक, मंगल की कर्क, बुध की मीन, गुरु की मकर, शुक्र की कन्या, शनि की नीच राशि मेष है। राहु की नीच राशि वृश्चिक और केतुकी नीच राशि वृष है।

मित्र राशि का विवरण :—

जिस ग्रह का जो मित्रग्रह है, यदि वह उसकी राशि का होता है तो मित्र राशि का कहलाता है।

उदाहरण :—जैसे कर्क राशि का सूर्य, मित्र राशि का है। चन्द्रमा की स्वराशि कर्क है और चन्द्रमा सूर्य का मित्र है।

शत्रु राशि का विवरण :—

जिस ग्रह का जो ग्रह शत्रु है, यदि वह उसकी राशि का होता है तो शत्रु राशि का कहलाता है।

उदाहरण:—जैसे मकर का सूर्य, शत्रुराशि का है; क्योंकि मकर राशि शनि की है और शनि सूर्य का शत्रु है।

सम राशि का विवरण :—

जो न तो मित्र हो और न शत्रु ही हो उसे सम कहते हैं। जिस ग्रह का जो ग्रह सम है, यदि वह उसकी राशि का होता है तो सम राशि का कहलाता है।

उदाहरण :—मिथुन राशि का सूर्य समराशि का है; क्योंकि, बुध सूर्य का सम है और मिथुन राशि बुध की है।

कौन ग्रह किस ग्रह का मित्र है, शत्रु है तथा सम है, यह सारिणी से समझना।

ग्रहों के मित्र-सम-शत्रु ग्रहों की सारिणी :—

ग्रह	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	रा.	के.
मित्र	चं. मं. बृ.	सू. बु.	सू. चं. बृ.	सू. शु.	सू. चं. मं.	बु. श.	बु. शु.		
सम	बु.	मं. बृ. शु. श.	शु. श.	मं. बृ. श.	श.	मं. बृ.	बृ.		
शत्रु	शु श.	०	बु.	चं.	बु. शु.	सू. चं.	सू. चं. मं.		

नोट:—दो प्रकार की ग्रह मैत्री है। (१) नैसर्गिक या स्वाभाविक ग्रह मैत्री। (२) तात्कालिक ग्रह मैत्री। पूर्वोक्त ग्रह मैत्री नैसर्गिक है। इसमें कोई परिवर्तन नहीं है।

तात्कालिक ग्रह मैत्री का विवरण :—

जिस ग्रह से जो ग्रह पास के अगले तीन स्थानों (२-३-४) में हो और पास के पिछले तीन स्थानों (१२-११-१०) में हो, वह ग्रह, उस ग्रह का मित्र है। शेष स्थानों (५-६-७-८-९) में हो तो शत्रु होता है।

उदाहरण :—कुण्डली में छठे स्थान में मंगल है और सातवें स्थान में बुध है। यद्यपि नैसर्गिक मैत्री में मंगल और बुध, परस्पर शत्रु हैं, किन्तु यहाँ तात्कालिक मैत्री में परस्पर मित्र हैं।

पंचधा मैत्री का विवरण :—

पांच प्रकार की मैत्री है। १-अधिमित्र। २—अधिशत्रु। ३—सम। ४—मित्र। ५—शत्रु। दोनों प्रकार की (नैसर्गिक और तात्कालिक) मैत्री का साधन करना। दोनों मैत्री में जो ग्रह मित्र होता है, वह अधिमित्र होता है। दोनों मैत्री में जो ग्रह शत्रु होता है, वह अधिशत्रु होता है। एक मैत्री में मित्र और दूसरी में शत्रु हो तो सम होता है। एक में मित्र और दूसरी मैत्री में सम हो तो मित्र होता है। एक मैत्री में सम और दूसरी में शत्रु हो तो शत्रु होता है।

१—मित्र+मित्र=अधिमित्र। २-शत्रु+शत्रु=अधिशत्रु। ३—मित्र+शत्रु=सम। ४—सम+मित्र=सम। ५—सम+शत्रु=शत्रु।

वर्गोत्तम संज्ञा का विवरण :—

जो ग्रह जिस राशि का है नवमांश में भी उसी राशि का हो तो वर्गोत्तम राशि का कहलाता है।

उदाहरण :—जैसे कन्याराशि का सूर्य है और नवमांश में भी कन्याराशि में है तो ऐसा यह सूर्यग्रह वर्गोत्तमी है।

नोट :—पूर्वोक्त नैसर्गिक मैत्री और तात्कालिक मैत्री जातक (जन्म से संबंधित विचार को जातक कहते हैं।) की है परन्तु ताजक (वर्ष से संबंधित विचार को ताजक कहते हैं।) की नैसर्गिक मैत्री और तात्कालिक ग्रह मैत्री भिन्न-भिन्न है।

ताजक की नैसर्गिक ग्रह मैत्री :—

चन्द्रार्कारेज्याः परस्परं मित्राणि शेषाश्च ॥ इतरथा रिपवः ॥

सूर्य, चंद्र, मंगल और गुरु, ये परस्पर मित्र हैं तथा बुध, शुक्र और शनि, ये परस्पर मित्र हैं। इनके अतिरिक्त और ग्रह शत्रु है। यह स्थिर मैत्री है। इसे सारिणी द्वारा समझना।

ग्रहों की स्थिर मैत्री की सारिणी

ग्रह	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
मित्र	चं. मं. बृ.	सू. मं. बृ.	सू. चं. बृ.	शु. श.	सू. चं. मं.	बु. श.	बु. शु.
शत्रु	बु. शु. श.	बु. शु. श.	बु. शु. श.	सू. चं. मं. बृ.	बु. शु. श.	सू. चं. मं. बृ.	सू. चं. मं. बृ.

ताजक की तात्कालिक ग्रहमैत्री का विवरण :—

(क) वर्ष कुण्डली में जो ग्रह, जिस ग्रह से ३, ५, ९, ११ स्थानों में से किसी स्थानों में होता है, वह उस ग्रह का मित्र होता है।

(ख) जो ग्रह, जिस ग्रह से केन्द्र स्थानों (१-४-७-१०) में से किसी स्थान में होता है, वह उस ग्रह का शत्रु होता है।

(ग) जो ग्रह, जिस ग्रह से २, ६, ८, १२ स्थानों में से किसी भी स्थान में होता है, वह उस ग्रह का सम होता है।

नोट :—ताजिक को इस तात्कालिक ग्रह मैत्री को प्रायः सभी ताजिक आचार्य मान्यता देते हैं।

ग्रहों की दृष्टि का विवरण :—

ग्रह भाव पर तथा अपने से दूसरे ग्रह पर दृष्टि (नजर) रखता है, इसी को ग्रहदृष्टि कहते हैं। ताजक और जातक की ग्रहदृष्टि भी भिन्न है। पहले जातक की ग्रहदृष्टि प्रस्तुत की जाती है।

जातक में चार प्रकार की दृष्टि है। एक पाद $\frac{1}{4}$ दृष्टि। द्विपाद या अर्ध $\frac{1}{2}$ दृष्टि। त्रिपाद या पादोन $\frac{3}{4}$ दृष्टि। संपूर्ण दृष्टि।

जिस भाव में ग्रह स्थित हो उससे तीसरे, दशवें भाव पर या उसमें बैठे ग्रह पर उसकी एक पाद या एक चरण दृष्टि होती है। पाँचवें और नवें पर द्विपाद या अर्ध दृष्टि होती है। चौथे और आंठवें भाव पर या उसमें बैठे ग्रह पर त्रिपाद दृष्टि होती है। सातवें स्थान पर पूर्ण दृष्टि होती है।

नोट :—मंगल की चौथे और आठवें स्थान पर भी पूर्ण दृष्टि होती है। गुरु की पाँचवें और नवें भाव पर भी तथा शनि की तीसरे और दशवें स्थान पर भी पूर्ण दृष्टि होती है।

ताजक की दृष्टि का विवरण :—

ताजक में दृष्टि तीन प्रकार की है। १—मित्र दृष्टि। २-शत्रु दृष्टि। ३-समदृष्टि। जो ग्रह, जिस भाव में स्थित है वह उससे तीसरे, पाँचवे, नवें और ग्यारहवें स्थान में अथवा इन स्थानों में बैठे ग्रह पर मित्रदृष्टि रखता है। जो ग्रह, जिस भाव में स्थित है, उससे केन्द्र स्थान (१-४-७-१०) को या उसमें बैठे ग्रह को शत्रुदृष्टि से देखता है। ग्रह की शेष स्थानों (२-६-८-१२) पर समदृष्टि होती है।

ग्रह के साथ ग्रह के संबंध का विवरण :—

ग्रह का ग्रह के साथ चार प्रकार का संबंध है। १—दृष्टि संबंध। २—एकतर दृष्टि संबंध। ३—अन्योन्यस्थान संबंध। ४—एकत्रस्थित संबंध।

(१) ग्रह आपस में एक-दूसरे को देखते हों तो दृष्टि संबंध होता है। (२) एक ग्रह देखता हो और दूसरा उसको न देखता हो किन्तु देखनेवाला ग्रह, उस देखे जानेवाले ग्रह की राशि का हो, इसे एकतरदृष्टि संबंध कहते हैं। (३) दो ग्रह, आपस में एक-दूसरे की राशि में हों, इसे अन्योन्य स्थान संबंध कहते हैं। (४) दो ग्रह, एक ही स्थान में बैठे हों, इसे एकत्रस्थित संबंध कहते हैं।

ग्रहों की सजल आदि संज्ञा :—

सूर्य, मंगल और शनि, ये तीन ग्रह शुष्क (सूखे) हैं। चंद्र और शुक्र, सजल ग्रह हैं। बुध और गुरु, सजल राशि (कर्क, तुला, वृश्चिक, मकर, कुंभ, मीन) में बैठने पर सजल हो जाते हैं और यदि शुष्कराशि (मेष, वृष, मिथुन, सिंह, कन्या, धन) में बैठते हैं तो शुष्क हो जाते हैं।

ग्रहों की दीप्त आदि आठ संज्ञाओं का विवरण :—

आठ संज्ञाओं के नाम:—(१) दीप्त। (२) स्वस्थ। (३) हास्ययुक्त। (४) शान्त। (५) शक्त। (६) लुप्त। (७) दीन। (८) पीडित।

उच्चराशि के ग्रह को दीप्त कहते हैं। स्वराशि के ग्रह को स्वस्थ कहते हैं। मित्रग्रह की राशि में स्थित ग्रह को हास्ययुक्त कहते हैं। दशवर्ग में अधिक शुभ ग्रहों के वर्ग में स्थितग्रह को शान्त कहते हैं। बलवान् ग्रह को शक्त कहते हैं। अस्त के ग्रह को लुप्त कहते हैं। नीचराशि के ग्रह को दीन कहते हैं। शत्रु की राशि के अथवा पापग्रह की राशि के ग्रह को पीड़ित कहते हैं।

उक्त संज्ञाओं के फलित भी नामानुसार ही हैं।

ग्रहों की बाल आदि अवस्थाओं का विवरण:—

ग्रहों की पाँच प्रकार की अवस्थाएँ हैं। १-बाल। २-कुमार। ३-युवा।

४–वृद्ध। ६।६ अंश को एक-एक अवस्था होती है। विषम राशि में ६।६ अंश की क्रम से बाल, कुमार, युवा, वृद्ध और मृत अवस्था होती है। सम राशि में ६।६ अंश की पूर्वोक्त अवस्था उलटे क्रम से होती है, अर्थात् क्रम से मृत, वृद्ध, युवा, कुमार, बाल।

उदाहरण :—वृष राशि के सूर्य के २६ अंश हैं। वृष, समराशि है। ६।६ अंश के विभाग से २६ अंश पाँचवे विभाग में है। अतः सूर्य को बाल-अवस्था है। इत्यादि।

अवस्थाओं के फलित :—

बाल-अवस्था के ग्रह का चतुर्थांश ०।०।०।१५ फल होता है। कुमार-अवस्था के ग्रह का अर्ध यानी आधा ०।०।३०।० फल होता है। युवा-अवस्था के ग्रह का पूर्ण १।०।०।० फल होता है। वृद्ध-अवस्था के ग्रह का भी चतुर्थांश फल होता है। मृत-अवस्था के ग्रह का शून्यफल ०।०।०।० है।

जाग्रत् आदि अवस्थाओं का विवरण :—

अवस्था के तीन भेद हैं। १–जाग्रत् (जागता हुआ)। २–स्वप्न (कुछ सोता हुआ और कुछ जागता हुआ)। ३–सुषुप्ति (बेखबरी की नींद) १०।१० अंश की एक-एक अवस्था होती है।

विषम राशि में १०।१० अंश की जाग्रत्, स्वप्न और सुषुप्ति अवस्थाएँ होती हैं। समराशि में १०।१० अंश की क्रम से सुषुप्ति, स्वप्न और जाग्रत् अवस्थाएँ होती हैं।

उदाहरण :—वृष के सूर्य के २६ अंश हैं। वृष समराशि है। १०।१० अंश के विभाग से २६ अंश तीसरे-विभाग में है। अतः सूर्य जाग्रत्-अवस्था में है।

अवस्थाओं के फलित :—

जाग्रत्-अवस्था का पूर्ण फल है। स्वप्न-अवस्था आधा फल है और सुषुप्ति का शून्यफल है।

अंशों के अनुसार ग्रह के फल का विवरण :—

जो ग्रह स्पष्ट में १२ अंश से १८ अंश तक होता है, उसका पूर्ण फल होता है।

गति तथा राशि के अनुसार ग्रह का बल :—

जो ग्रह, वक्र गति में अथवा उच्च राशि में होता है, वह महाबली होता है।

अनिष्ट (अशुभ) फल न देने वाले ग्रहों का विवरण :—

१–स्वराशि का ग्रह अनिष्ट-फल नहीं देता है। २–मूल त्रिकोण राशि का ग्रह अनिष्ट-फल नहीं देता है। ३–उच्च राशि का ग्रह अनिष्ट फल नहीं देता है। ४–गुरु की जिस ग्रह पर पूर्ण दृष्टि है, वह भी अशुभ फल नहीं देता है।

स्थिति के कारण ग्रहों की निष्फलता :—

सभानुरिन्दुः शशिजश्चतुर्थे गुरुः सुते भूमिसुतः कुटुम्बे।
भृगुः सपत्ने रविजः कलत्रे विलग्नतस्ते विफला भवन्ति॥

कुण्डली में सूर्य और चन्द्र एक स्थान में होने से चन्द्र का फल व्यर्थ हो जाता है। तृतीय स्थान का मंगल व्यर्थ (बेकार) होता है। चतुर्थ स्थान का बुध, पञ्चम स्थान का गुरु, षष्ठ स्थान का शुक्र और सप्तम स्थान का शनि, व्यर्थ या निष्फल होता है।

गुरु और शनि की स्थिति या दृष्टि का विवरण :—

स्थानहानिकरो जीवः स्थानवृद्धिकरः शनिः।
दृष्टिवृद्धिकरो जीवो दृष्टिहानिकरः शनिः॥

कुण्डली में जिस स्थान में गुरु बैठता है, उस स्थान से सम्बन्धित फल की हानि करता है। शनि जिस स्थान में बैठता है उस स्थान से सम्बन्धित फल में वृद्धि करता है। गुरु की दृष्टि शुभ है और शनि की दृष्टि अशुभ है। अतएव गुरु, जिस स्थान को देखता है उसकी वृद्धि करता है, शनि की दृष्टि जिस स्थान पर होती है, उसकी हानि होती है।

ग्रहों के दोष को शान्त करने वाले ग्रहों का विवरण:—

राहुदोषं बुधो हन्यादुभयोस्तु शनैश्चरः।
त्रयाणां भूमिजो हन्ति चतुर्णां दानवार्चितः॥
पञ्चानां देवमन्त्री च षण्णां दोषांस्तु चन्द्रमाः।
सप्तदोषं रविर्हन्याद् विशेषादुत्तरायणे॥

राहु के द्वारा होने वाले अशुभ फल को बुध दूर करता है। बुध और राहु के अशुभ फल को शनि दूर करता है। बुध, शनि और राहु, इन तीन ग्रहों के अशुभ फल को मंगल दूर करता है। मंगल, बुध, शनि और राहु, इन चार ग्रहों के फल को शुक्र दूर करता है। मंगल, बुध, शुक्र, शनि और राहु, इन पाँच ग्रहों के दोष को गुरु दूर करता है। मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि और राहु, इन छः ग्रहों के दोष को चन्द्रमा दूर करता है। चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि और राहु, इन सात ग्रहों के दोष को सूर्य दूर करता है। उत्तरायण का सूर्य तो विशेष रूप से दोष दूर करता है।

बल के संकेत का विवरण :—

जातक में षड्बल १–स्थान बल। २–दिग् बल। ३–काल बल। ४–चेष्टा बल। ५–निसर्ग बल। ६–ऋणदृग् बल या धन दृग् बल।) को बल समझना। ताजक में बृहत् पञ्चवर्गी बल को तथा द्वादश वर्गी बल को बल समझना। ताजक के बल अगले प्रकरण में प्रस्तुत किये जायेंगे। जातक के बल के लिए लेखक की 'सुदर्शन-पद्धति' देखिए।

चन्द्र की अवस्थाओं का विवरण :—

चन्द्र की १२ अवस्थाएँ हैं। १–प्रवास-अवस्था। २–नष्टावस्था। ३–मृतावस्था। ४–जयावस्था। ५–हास्यावस्था। ६–रति-अवस्था। ७–क्रीडितावस्था। ८–प्रसुप्तावस्था। ९–मुक्तावस्था। १०–ज्वरावस्था। ११–कम्पितावस्था। १२–सुस्थितावस्था।

जीव मात्र का चेष्टाओं का करना स्वाभाविक-धर्म है। अतः चन्द्रमा भी चेष्टा करते हैं। चन्द्रमा की किस समय कैसी चेष्टा है ? इसका ज्ञान ज्योतिष–गणित के के द्वारा होता है। चन्द्र लोक पृथ्वी के समीप है अतः चन्द्र की चेष्टाओं का भूमण्डल पर विशेष प्रभाव है। चेष्टा ही अवस्था है। चेष्टाओं के अनुसार ही शुभ-अशुभ फल है। यात्रा में तथा प्रश्न काल में चन्द्र की चेष्टाओं का उपयोग है। अर्थात् चन्द्र की शुभ-अवस्था में यात्रा करनी चाहिए। चन्द्र की अवस्था के अनुसार पृच्छक के प्रश्न पर भी विचार होता है। यात्रा के लिए चन्द्र की जय-अवस्था सर्वोत्तम है।

मेष राशि के चन्द्र में प्रवासावस्था से आरम्भ होकर बारह अवस्थाएँ होती हैं। वृष राशि में चन्द्र में प्रष्टावस्था से आरम्भ होकर १२ अवस्थाएँ होती हैं। इसी प्रकार क्रम-क्रम से अगली-अगली राशि में अवस्था बदलती जाती हैं। चन्द्र राशि की अवस्था की अपेक्षा द्रेष्काण की और द्रेष्काण की अपेक्षा नवमांश की अवस्था बलवती होती है।

विहाय राशिं चन्द्रस्य भागा द्विघ्ना शरोद्धृताः।
लब्धं गता अवस्थाः स्युर्भोग्यायाः फलमादिशेत् ॥

जिस समय चन्द्र की अवस्था जाननी हो उस समय का चन्द्र स्पष्ट करना। चन्द्र स्पष्ट में चन्द्र की राशि को छोड़ कर अंश आदि को २ से गुणा करना। विकला में ६० से अधिक होने पर ६० से भाग देकर लब्धि कला में जोड़नी। कला के ६० से अधिक होने पर लब्धि अंश में जोड़नी। यहाँ शेष का त्याग है। अंश में ५ से भाग देना। जो लब्धि आये, उस तक चन्द्र की राशि की अवस्था के अनुसार गिनना। जो अवस्था आयेगी वह गत-अवस्था होगी, उससे अगली अवस्था वर्तमान अवस्था होती है।

उदाहरण :—वृष के २६ अंश में १७।५९ इष्ट पर चंद्र की कौन सी वर्तमान अवस्था है ? यह जानने के लिए तात्कालिक चन्द्र स्पष्ट किया। चन्द्र स्पष्ट का क्रम, अगले गणित-प्रकरण में दिया जायेगा। तात्कालिक घनराशि का चन्द्र स्पष्ट ०८।२६।४५।४७ है। यहाँ ८ राशि को छोड़कर अंश-कला-विकला को २ से गुणा किया तो ५२।९०।९४ हुए। ९४ को ६० से भाग दिया तो १ लब्धि आयी और शेष ३४ बचे। शेष का त्याग किया। १ लब्धि को ऊपर ९० कला में जोड़ा ९१ हुए। ६० से भाग दिया १ लब्धि आयी, उसे ५२ अंश में जोड़ा ५३ हुए। इनमें ५ से भाग

दिया तो १० लब्धि आयी। यहाँ चंद्र धनराशि का है। धन राशि में मुक्तावस्था से अवस्थाएँ प्रारंभ होती हैं। अतः मुक्तावस्था से १० तक गिना तो रति अवस्था है। यह चंद्र की गत (बीती हुई) अवस्था है, अगली क्रीडितावस्था चंद्र की वर्तमान अवस्था है।

अन्यक्रम :—२॥ अंश की एक अवस्था होती है। जिस भाग में स्पष्ट चंद्र के अंश आये, उस भाग तक राशि की अवस्था के अनुसार गिनने से चंद्र की वर्तमान अवस्था निकल आती है।

उदाहरण :—धनराशि के चंद्र के २७ अंश है। २॥-२॥ अंश के हिसाब से ११वें विभाग में है। धनराशि होने के कारण मुक्तावस्था से ११ तक गिना तो क्रीडितावस्था आयी, यही चंद्र की वर्तमान अवस्था है। इसका अर्थ है कि, इस समय चंद्रमा क्रीडा (खेल) में हैं।

सोलह योगों का विवरण :—

योग का अर्थ :—राशि, स्थान और ग्रह आदि के मेल से बनने वाली स्थिति को योग कहते हैं। जातक में तो अनेकों योग हैं किन्तु ताजक में १६ योग प्रधान हैं। ये १६ योग ताजक शास्त्र के सर्वस्व हैं। इन योगों का विचार प्रश्नकुण्डली में भी होता है। आचार्य पृथुयश के सिद्धान्त 'पृच्छतां जन्मतो वा' (प्रश्न करने वालों के लिए जन्म के अनुसार बतलाना) के अनुसार जन्मकाल में भी इन योगों का विचार किया जा सकता है।

सोलह योगों के नाम :—(१) इक्कवाल। (२) इन्दुवार। (३) इत्थशाल। (४) ईसराफ। (५) नक्त। (६) यमया। (७) मणऊ। (८) कंबूलम्। (९) गैरि-कंबूलम्। (१०) खल्लासरं। (११) रद्दं। (१२) दुफालिकुत्थं। (१३) दुत्थोत्थ-दिवीरं। (१४) तंबीरः। (१५) कुत्थ। (१६) दुरफ।

(१) इक्कवाल योग का विवरण :—कुण्डली के केन्द्र (१-४-७-१०) स्थान और पणफर (२-५-८-११) स्थानों में सभी ग्रह बैठे होते हैं तो यह इक्कवाल योग होता है। यह अत्यन्त शुभ योग है। इससे राज पक्ष से मान, सौख्य तथा लाभ होता है।

(२) इन्दुवार योग का विवरण :—कुण्डली में यदि सभी ग्रह, आपोक्लिम (३-६-९-१२) स्थान में होते हैं तो इन्दुवार योग होता है। इसे ताजक शास्त्र में शुभ नहीं माना गया है। वर्ष कुण्डली, मास कुण्डली तथा दिन कुण्डली में इस योग का फल अशुभ ही है।

(३) इत्थशाल योग का विवरण :—इत्थशाल योग का दूसरा नाम मुथशिल योग है। मुथशिल योग के दो भेद हैं। (१) मंदमुथशिल। (२) पूर्णमुथशिल।

दो प्रकार के ग्रह हैं। (१) शीघ्रगतिक ग्रह। (२) मन्दगतिक ग्रह। जिसकी

गति अधिक होती है, उसे शीघ्रगतिक ग्रह कहते हैं। जिस ग्रह की गति (चाल) मंद (धीमी) होती है, उसे मंदगतिक ग्रह कहते हैं। अर्थात् राशि को शीघ्र भोगने वाले ग्रह की अपेक्षा देर में राशि भोगने वाला ग्रह, मंद गति होता है। उदाहरणार्थ जैसे, चन्द्रमा एक राशि का भोग २। दिन में करता है। अतः चन्द्रमा शीघ्र है। बुध, एक राशि का भोग एक मास में करता है। अतः बुध, चन्द्रमा से मन्द है। साधारणतः चन्द्र, बुध, शुक्र, सूर्य, मंगल, गुरु, शनि, उत्तरोत्तर (एक की अपेक्षा एक) मन्दगति ग्रह है।

दीप्तांशों का विवरण:—

तिथ्यर्काष्टनगाङ्काद्रिनवदीप्तांशका रवेः।
दीप्तांशातिक्रमे शस्ता इमेऽपीति विचिन्तयेत्॥

सूर्य के दीप्तांश १५, चन्द्र के दीप्तांश १२, मंगल के ८, बुध के ७, गुरु के ९, शुक्र के ७ और शनि के दीप्तांश ९ हैं। अशुभ फल ग्रह, दीप्तांश से निकल जाने पर शुभ हो जाता है।

(क) **मन्द मुथशिल योग का विवरण :**—शीघ्र ग्रह के अंश कम हों और मन्द ग्रह के अंश अधिक हों तथा ये अंश, ग्रहों के अपने-अपने दीप्तांशों से अधिक न हों, एवं ताजक शास्त्र की दृष्टि के अनुसार आपस में दृष्टि रखते हों, तो ऐसी स्थिति में शीघ्र ग्रह, अपनी दीप्ति (तेजः या सामर्थ्य) मन्दग्रह को दे देता है।

(ख) **पूर्ण मुथशिल योग का विवरण :**—शीघ्र ग्रह के अंश, मन्द ग्रह के अंश के समान हों परन्तु शीघ्र ग्रह की कला, मन्द ग्रह की कला से कुछ कम हों तथा दीप्तांशों से अंश अधिक न हों एवं शीघ्र और मन्द गति ग्रह परस्पर दृष्टि रखते हों तो इस स्थिति में पूर्ण मुथशिल योग होता है।

नोट :—मन्द मुथशिल का फल कुछ कम होता है और पूर्ण मुथशिल का फल पूर्ण होता है।

(ग) **दृष्टि के न होने पर मुथशिल का विवरण :**—शीघ्र ग्रह राशि के अन्तिम भाग में यानी तीसवें अंश में हो और मन्द ग्रह अगली राशि में हो तथा शीघ्र ग्रह अपने दीप्तांश के अन्दर हो तो ऐसी स्थिति में शीघ्र अपना तेज मन्द ग्रह को दे देता है।

(घ) **भविष्यत् मुथशिल योग का विवरण :**—शीघ्र ग्रह के अंश अपने दीप्तांश से अधिक हों तथा मन्द ग्रह से पिछली राशि में हो तो ऐसी स्थिति में शीघ्र ग्रह अपना तेज मन्द ग्रह को देना चाहता है। इस कारण यह भविष्यत् मुथशिल योग होता है।

मन्द मुथशिल और पूर्ण मुथशिल तथा भविष्यत् मुथशिल, ये तीन प्रकार के मुथशिलों का विवरण दिया गया है। भविष्यत् मुथशिल का फल भविष्य में होता है।

इत्थशाल योग में फलित विचारने का क्रम :—लग्नेश का और जिस भाव के स्वामी का जैसा मुथशिल होगा, उसी के अनुरूप उस भाव से संबंधित फल होगा।

उदाहरणार्थ जैसे, किसी ने प्रश्न किया कि, मुझे इस वर्ष संतान संबंधी सौख्य है या नहीं ? तो वर्ष कुण्डली में संतान का पंचम भाव है। जिस स्थान से संबंधित विचार है, वह कार्यभाव है और उस स्थान का स्वामी कार्येश है। जिसको फल प्राप्त होना है, वह लग्नेश है। अब लग्नेश का और पंचमेश का जैसा भी मुथशिल होगा वैसा ही संतान-संबंधी सौख्य होगा। इस प्रकार वर्षकाल तथा प्रश्नकाल आदि में प्रत्येक भाव से सम्बन्धित विचार किया जा सकता है।

(४) ईसराफ योग का विवरण :—ईसराफ का ही नाम मूसरिफ है। मन्द ग्रह से शीघ्र ग्रह, अंश में अधिक हो तो ईसराफ योग होता है। यह योग शुभ नहीं है। अयः इस योग के होने से कार्य सम्बन्धी हानि होती है।

नोट :—ईसराफ योग के सम्बन्ध में आचार्य हिल्लाज का मन्तव्य है कि, जब शीघ्र और मन्द दोनों ही ग्रह, पाप ग्रह होते हैं तब कार्य की हानि होती है। यदि शीघ्र और मन्द दोनों ही ग्रह, शुभ ग्रह होते हैं तो कार्य की हानि नहीं होती है।

(५) नक्त योग का विवरण :—लग्नेश और कार्येश में परस्पर दृष्टि न हो, तथा इन दोनों के बीच में इन दोनों ग्रहों की अपेक्षा कोई शीघ्र ग्रह बैठा हो और उसको लग्नेश तथा कार्येश दोनों ही दीप्तांशों के अन्दर रहते हुए, को देखते हों तो वह शीघ्र ग्रह, अपनी सामर्थ्य को लग्नेश और कार्येश में जो भी मन्द गति ग्रह होगा, उसी को दे देगा। यह नक्त योग शुभ फल देने वाला होता है।

नक्त योग का उदाहरण :—कुण्डली में कन्यालग्न है। स्त्री सम्बन्धी विचार के कारण सप्तम स्थान कार्य स्थान है। लग्नेश बुध सिंह राशि का बारहवें स्थान में है, उसके १० अंश हैं। कार्येश गुरु, मीन राशि का सप्तम स्थान में है, उसके १२ अंश हैं। इन दोनों के बीच में धन राशि का चन्द्रमा चतुर्थ स्थान में है। इस स्थिति में चन्द्रमा, लग्नेश तथा कार्येश, दोनों की अपेक्षा शीघ्र है। लग्नेश बुध से कार्येश गुरु, अष्टम स्थान में है और कार्येश गुरु में लग्नेश बुध, छठे स्थान में है। अतः दोनों की छठे-आठवें होने के कारण परस्पर दृष्टि नहीं है। चन्द्रमा पर लग्नेश और कार्येश की दृष्टि है। चन्द्रमा के ११ अंश हैं, अतः चन्द्रमा दीप्तांशों के अन्दर है। ऐसी परिस्थिति में चन्द्रमा, मन्द गति ग्रह कार्येश को अपनी सामर्थ्य दे देगा। यह नक्त योग बना, जिसके फलस्वरूप प्रयत्न से स्त्री प्राप्ति होगी।

(६) यमया योग का विवरण :—लग्नेश और कार्येश की परस्पर दृष्टि न हो, इन दोनों के बीच में कोई मन्द गति ग्रह बैठा हो और उसके अंश अपने दीप्तांशों

के अन्दर हो तथा लग्नेश और कार्येश को उस पर दृष्टि हो तो वह मन्द ग्रह अपनी सामर्थ्य को लग्नेश और कार्येश में से मन्द ग्रह को देता है। यमया योग का फल भी शुभ है।

नोट :—नक्त और यमया का अन्तर :—नक्त योग में लग्नेश और कार्येश की अपेक्षा शीघ्र ग्रह, अपने दीप्तांशों के अन्दर रहता हुआ दोनों के बीच में बैठा होता है। यमया योग में लग्नेश और कार्येश की अपेक्षा मन्द ग्रह, अपने दीप्तांशों के अन्दर रहता हुआ दोनों के बीच में बैठा होता है। यही नक्त और यमया का अन्तर है।

(७) मणऊ योग का विवरण :—मणऊ योग में लग्नेश और कार्येश की परस्पर दृष्टि होनी चाहिए। लग्नेश और कार्येश के बीच में शीघ्र गति का ग्रह स्थित हो, उस शीघ्र ग्रह से पहिले या पीछे अंश से बक्री मंगल या शनि हो और वह मंगल या शनि, उस शीघ्र ग्रह पर पहिली, चौथी या सातवीं दृष्टि रखता हो अथवा एक राशि की दृष्टि रखता हो तो वह उस शीघ्र ग्रह की सामर्थ्य को हर लेता है। यदि कार्येश के साथ मुथशिल हो तो भी उसके तेज का अपहरण होता है। इस प्रकार यह मणऊ योग होता है, इसका फल अशुभ ही है। अशुभ फल का तात्पर्य कार्य की हानि से है।

मणऊ योग का उदाहरण:-कुण्डली से स्त्री संबंधी विचार करना है। स्त्री का स्थान कुण्डली में सप्तम होता है, अतः स्त्री संबंधी विचार में यह सप्तम स्थान ही कार्यस्थान माना जायगा। कुण्डली में लग्न कन्या है। लग्नेश बुध है, उसके १० अंश हैं और वह लग्न में बैठा है। सप्तम स्थान कार्यस्थान है, वहाँ मीन राशि है। उसका स्वामी गुरु है, उसके १५ अंश हैं और वह सप्तम में ही बैठा है। दशम स्थान में मिथुन राशि का मंगल है, उसके ११ अंश हैं। मंगल से बुध चौथे स्थान में है। मंगल बुध को चौथी दृष्टि से देख रहा है। उस बुध से एक अंश अधिक होकर मंगल आगे बैठा है। यहाँ मंगल ने बुध के तेज का अपहरण कर लिया। बुध पहिले है और उसके बाद गुरु है। बुध शीघ्र है और कार्येश गुरु मंदग्रह है, उससे मुथशिल भी है। ऐसी स्थिति में यह मणऊ योग है। स्त्री के संबंध में शुभ योग नहीं है।

उक्त योग में दूसरे प्रकार से विचार :—बुध की अपेक्षा (वनिस्वत) मंगल के अंश थोड़े हैं। मंगल बुध के पृष्ठ भाग में है। अतः यह मणऊ योग बना, जो कि कार्य का नाशक है।

मणऊ योग का भेद :—लग्नेश और कार्येश का मुथशिल योग हो तथा इनमें से किसी एक के साथ मंगल और शनि बैठे हों, लग्नेश और कार्येश ग्रहों के जो निर्दिष्ट दीप्तांश हैं, उनकी अपेक्षा कम या अधिक अंश हों परन्तु मंगल और शनि के अंश, अपने दीप्तांशों के अंदर हों, ऐसी स्थिति में शनि और मंगल, लग्नेश तथा कार्येश के तेज का अपहरण कर लेते हैं। यह योग भी अशुभ है।

मणऊ योग के भेद का उदाहरण :—राज्य सम्बन्धी विचार करना है। कुण्डली में तुला लग्न है। उसका स्वामी शुक्र है, उसके १५ अंश हैं और वह कर्क राशि का दशम स्थान में है। राज्य सम्बन्धी विचार है, अतः राज्य स्थान दशम स्थान है, जो कि कार्य स्थान है, उसका स्वामी चन्द्रमा कार्येश है। वह अष्टम स्थान में अपनी उच्च राशि वृष में बैठा है और उसके १० अंश हैं। मंगल भी वृष राशि में चन्द्रमा के पास बैठा है। मंगल के १६ अंश हैं। इसी प्रकार शनि के भी १६ अंश हैं और वह भी वृष राशि में बैठा है। लग्नेश और कार्येश का परस्पर इत्थशाल और मुथशिल योग है। ऐसी स्थिति में मंगल, लग्नेश और कार्येश के तेज का अपहरण कर रहा है। यह राज्य से सम्बन्धित विचार के लिए अशुभ है।

(८) कंबूल योग का विवरण :—वैसे तो कंबूल योग के १६ भेद हैं। प्रथम कंबूल योग का सामान्य लक्षण प्रस्तुत किया जाता है।

लग्नेश और कार्येश का परस्पर मुथशिल या इत्थशाल हो तथा इनमें से किसी एक के साथ चन्द्रमा इत्थशाल करता हो तो यह कंबूल योग है।

कंबूल योग के भेद :—लग्नेश, कार्येश और चन्द्रमा, इन तीनों के चार प्रकार के अधिकारों के भेद से कंबूल के १६ भेद होते हैं। सोलह भेदों के नाम :—(१) उत्तमोत्तम। (२) उत्तममध्यम। (३) उत्तम। (४) उत्तमाधम। (५) मध्यमोत्तम। (६) मध्यम-मध्यम। (७) मध्यम। (८) मध्यमाधम। (९) समोत्तम। (१०) सममध्यम। (११) सम। (१२) समाधम। (१३) अधमोत्तम। (१४) अधम-मध्यम। (१५) अधम। (१६) अधमाधम।

नोट :—चार भेद हैं। (१) उत्तम। (२) मध्यम। (३) सम। (४) अधम। फिर प्रत्येक में चार-चार भेद हैं। इस प्रकार से पूर्वोक्त १६ भेद हैं।

चार प्रकार के अधिकार :—(१) अपनी राशि में अपने उच्च के अधिकार को उत्तम कहते हैं। (२) अपनी हद्दा, अपना द्रेष्काण और अपने नवांश के अधिकार को मध्यम कहते हैं। (३) अपनी शत्रु राशि के अथवा अपनी नीच राशि के अधिकार को अधम कहते हैं। (४) पूर्वोक्त तीनों प्रकार के अधिकारों से रहित को सम कहते हैं।

(१) उत्तमोत्तम कंबूल का विवरण :—कुण्डली में लग्नेश और कार्येश स्वराशि के हों, तथा वे हद्दा में या द्रेष्काण में अथवा नवांश में उच्च राशि के हों, एवं उनमें परस्पर इत्थशाल हो और इसी प्रकार चन्द्रमा भी कुण्डली में स्वराशि का हो परन्तु वह अपनी हद्दा में या द्रेष्काण में उच्च राशि का हो, इस प्रकार का चन्द्रमा पूर्वोक्त लग्नेश और कार्येश में से किसी एक के साथ इत्थशाल करता हो तो, इस स्थिति में उत्तमोत्तम कंबूल योग होता है। इसमें तीनों को उत्तम अधिकार प्राप्त हैं।

उत्तमोत्तम कंबूल योग का उदाहरण:—संतान संबंधी विचार करना है। संतान का भाव पंचम स्थान है, अतः वह कार्यस्थान है। कुण्डली में मेष लग्न है, उसका स्वामी मंगल लग्नेश है। वह मेषराशि में लग्न में ही बैठा है। मंगल की स्वराशि मेषराशि है। पंचम भाव में सिंह राशि है, उसका पति सूर्य है, जो कि कार्येश है। सूर्य लग्न में मेष राशि का है। सूर्य की उच्चराशि मेष है। स्वराशि के लग्नेश मंगल और स्वोच्चराशि के कार्येश सूर्य का परस्पर मुथशिल योग है। चंद्रमा की स्वराशि कर्क है और उच्चराशि वृष है। लग्नेश और कार्येश के बीच में किसी भी स्थान में स्वराशि या उच्चराशि का चंद्रमा बैठकर अभिन्न-अधिकारों में स्थित लग्नेश और कार्येश के साथ मुथशिल करता हो तो यह स्थिति उत्तमोत्तम कंबूल योग कहलायेगी। इसका परिणाम भी अभीष्ट फल की प्राप्ति है।

(२) उत्तममध्यम कंबूल का विवरण:—हद्दा में या द्रेष्काण में अथवा नवांश में, अपनी हद्दा के या अपने द्रेष्काण के अथवा अपने नवांश के लग्नेश और कार्येश हों, तथा उनका परस्पर मुथशिल हो, एवं उनसे स्वराशि का या स्वोच्च राशि का चंद्रमा भी मुथशिल करता हो तो इसे उत्तममध्यम कंबूल योग कहते हैं। कारण कि, इस योग में चंद्र को तो उत्तम अधिकार प्राप्त है परन्तु लग्नेश और कार्येश को मध्यम अधिकार प्राप्त है। इस योग में थोड़े उद्योग के द्वारा अभीष्ट लाभ होता है।

उत्तम मध्यम कंबूल का उदाहरण :—भाग्य संबंधी विचार करना है। कुण्डली में तुला लग्न है, उसका स्वामी शुक्र है, उसके १० अंश हैं। वह दशम स्थान में बैठा है और अपनी हद्दा का है। भाग्य का विचार नवम स्थान से होता है, अतः नवमस्थान कार्यस्थान है। उसका पति बुध, कार्येश है। उसके १४ अंश हैं, वह सप्तम स्थान में बैठा है और अपनी हद्दा का है। लग्नेश और कार्येशका परस्पर मुथशिल है। कर्करांशि का चन्द्रमा दशम भाव में है, उसके १८ अंश हैं और वह लग्नेश तथा कार्येश के साथ मुथशिल करता है। इस स्थिति में उत्तम-मध्यम कंबूल योग बन गया है। इसका फल है कि, कुछ उद्योग के द्वारा भाग्यवृद्धि है।

नोट :—उपर्युक्त उदाहरण हद्दा का है, इसी प्रकार द्रेष्काण और नवांश के उदाहरणों की कल्पना की जा सकती है।

(३) केवल उत्तम कंबूल योग का विवरण :—उत्तम अथवा मध्यम अधिकारों से रहित लग्नेश और कार्येश का परस्पर मुथशिल हो तथा स्वराशि के या स्वोच्चराशि का चन्द्र, इनसे इत्थशाल करता हो तो यह केवल उत्तम कंबूल योग कहलाता है। इस योग में केवल चन्द्रमा को उत्तम-अधिकार प्राप्त होता है तथा लग्नेश और कार्येश को सम-अधिकार प्राप्त होते हैं।

उत्तम कंबूल योग का उदाहरण :—राज्यसंबंधी विचार करना है। कुण्डली में मिथुनलग्न है, उसका स्वामी बुध, समराशि में है। राज्यसंबंधी विचार दशम भाव से

होता है। अतः दशमभाव कार्यस्थान है। दशमेश गुरु कन्या राशि में होने से समस्थान में है। चन्द्रमा, स्वोच्चराशि वृष में बैठा है। तीनों में परस्पर मुथशिल योग है। इस स्थिति में यह उत्तम कंबुल योग बना, इसका फल राज्य के संबंध में उत्तम है।

(४) उत्तमाधम कंबूल योग का लक्षण :—लग्नेश और कार्येश, अपनी नीचराशि में या शत्रुराशि में स्थित हो, और उनमें परस्पर मुथशिल योग हो, स्वराशि या स्वोच्च-राशि में स्थित चंद्रमा, लग्नेश से या कार्येश से मुथशिल करता हो तो यह उत्तमाधम कंबूल योग बनता है। कारण कि, इसमें चन्द्रमा को उत्तम अधिकार प्राप्त होता है तथा लग्नेश और कार्येश को अधम अधिकार प्राप्त होते हैं। इस योग में सामान्यतः सफलता ही होती है।

उत्तमाधम कंबूल योग का उदाहरण :—स्त्री संबंधी विचार करना है। कुण्डली में तुला लग्न है। उसका स्वामी शुक्र, स्वनीचराशि कन्या में स्थित है और उसके १० अंश हैं। स्त्री संबंधी विचार सप्तमभाव से होता है अतः सप्तमस्थान कार्य भाव है। सप्तमेश मंगल, स्वनीचराशि कर्क में है, उसके १५ अंश हैं। चन्द्र भी स्वराशि कर्क में है और उसके १२ अंश हैं। इनमें परस्पर मुथशिल योग है। अतः यह उत्तमाधम कंबूल योग बना है। इसके फलस्वरूप स्त्री के संबंध में थोड़े उद्योग के करने से सफलता है।

(५) मध्यमोत्तम कंबूल योग का विवरण :—लग्नेश और कार्येश, स्वराशि या स्वोच्चराशि में हों और उनका परस्पर मुथशिल हो, चन्द्रमा अपने द्रेष्काण में हो या अपने नवांश में हो और वह लग्नेश से तथा अष्टमेश से मुथशिल करता हो तो यह मध्यमोत्तम कंबूल योग होता है। कारण कि, यहाँ चन्द्रमा को मध्यम अधिकार प्राप्त है और लग्नेश तथा कार्येश को उत्तम अधिकार की प्राप्ति है। यह योग, पूर्वोक्त उत्तम-मध्यम कंबूल योग से अच्छा फल नहीं देता है।

मध्यमोत्तम कंबूल योग का उदाहरण :—स्त्री संबंधी विचार करना है। कुण्डली में तुला लग्न है, उसका स्वामी शुक्र स्वगृही है और उसके २४ अंश हैं। सप्तम भाव कार्य स्थान है, उसका स्वामी मंगल कार्येश है। मंगल मेषराशि का स्वगृही है, उसके २८ अंश हैं। चन्द्रमा स्वराशि का या उच्चराशि का न होकर मकर राशि का है, उसके २२ अंश है। चन्द्रमा मकर के नवमांश में होने के कारण अपने ही नवमांश में है। इन तीनों में परस्पर मुथशिल है। अतः यह मध्यमोत्तम कंबूल योग बना। इसके फलस्वरूप स्त्री संबंधी विचार उत्तम है।

(६) मध्यमाधम कंबूल योग का विवरण:—अपनी हद्दा में या अपने द्रेष्काण में या अपने नवांश में लग्नेश और कार्येश हो तथा इनका परस्पर मुथशिल हो, चंद्रमा अपने द्रेष्काण में या अपने नवमांश में स्थित होकर लग्नेश और कार्येश से मुथशिल करता हो तो यह मध्यमाधम कंबूल योग होता है। कारण कि, इस योग में सभी को मध्यम-अधिकार प्राप्त होते हैं। इस योग से प्रयत्न के द्वारा सफलता प्राप्त होती है।

मध्यम-मध्यम कंबूल योग का उदाहरण :—संतान संबंधी विचार करना है। कुण्डली में मिथुन लग्न है। उसका स्वामी बुध, तुला राशि में है, उसके ८ अंश हैं और वह तुलाराशि की हद्दा में है अतः अपनी हद्दा में है। पंचम भाव कार्यस्थान है। पंचमेश शुक्र कार्येश है, उसके ८ अंश हैं और वह मिथुनराशि का है तथा अपनी मिथुनराशि की हद्दा में है। चंद्रमा कर्कराशि में है, वह प्रथम द्रेष्काण में है तथा अपने नवमांश में है। तीनों का परस्पर मुथशिल है। इस स्थिति में मध्यम-मध्यम कंबूल योग बन गया है। जिसका फल प्रयत्न द्वारा सन्तान सम्बन्धी सौख्य है।

(७) मध्यम कम्बूल योग का विवरण :—लग्नेश और कार्येश, दोनों ही अधिकार से रहित हों परन्तु चन्द्रमा अपने द्रेष्काण में या अपने नवमांश में हो। तीनों का परस्पर मुथशिल हो तो मध्यम-कंबूल योग बनता है। कारण कि, इस योग में लग्नेश और कार्येश को सम-अधिकार होता है और चंद्र को मध्यम अधिकार प्राप्त होता है। इस योग में कठिनता से सफलता मिलती है।

मध्यम कंबूल योग का उदाहरण :—सन्तान सम्बन्धी विचार करना है। कुण्डली में वृष लग्न है। उसका स्वामी शुक्र है। उसके ४ अंश हैं। वह मकर राशि की हद्दा में है अतः सम अधिकारी है। पञ्चमेश बुध कार्येश है। उसके ४ अंश हैं, वह तुला राशि की हद्दा में है। अतः सम अधिकारी है। चन्द्रमा कर्क राशि में है। उसके ३ अंश हैं, वह अपनी कर्क राशि के द्रेष्काण में है, अतः वह मध्यम अधिकारी है। तीनों का परस्पर मुथशिल है। इस स्थिति में यह मध्यम कंबूल योग बन गया। जिसका फल है कि, कठिनता से संतान संबंधी सौख्य होगा।

(८) मध्यमाधम कंबूल योग का विवरण :—लग्नेश और कार्येश, अपनी नीच राशि या शत्रुराशि में हों, तथा उनमें परस्पर मुथशिल हो, चन्द्रमा अपने द्रेष्काण या अपने नवांश में स्थित होकर उनसे मुथशिल करता हो तो यह मध्यमाधम कंबूल योग होता है। कारण कि, इस योग में चन्द्र को मध्यम अधिकार तथा लग्नेश और कार्येश को अधम अधिकार प्राप्त होते हैं। इस योग का फल भी कठिनता से सफलता की प्राप्ति है।

मध्यमाधम कंबूल योग का उदाहरण :—भाग्य सम्बन्धी विचार है। कुण्डली में मेष लग्न है। उसका पति मंगल कर्क राशि में नीच का है। भाग्य स्थान या नवम भाव का पति गुरु कार्येश है। वह अपनी नीच राशि मकर में बैठा है। परन्तु कर्क राशि का चन्द्रमा स्वगृही है और वह अपनी कर्क राशि के द्रेष्काण में

में है। इनमें परस्पर मुथशिल योग है। इस स्थिति में मध्यमाधम कंबूल योग बन गया। इसका फल भाग्य में गड़बड़ी है।

नोट :—यद्यपि उत्तम कंबूल का लक्षण, पूर्व प्रस्तुत किया जा चुका है परन्तु यहाँ उसका अन्य लक्षण भी दिया जा रहा है। प्रस्तुत योगों में जहाँ अधिकार शब्द आये, उसे पारिभाषिक समझना। स्वराशि, स्वोच्च राशि, स्वद्रेष्काण, स्वनवांश, स्वनीच राशि और स्वशत्रु राशि, इस प्रकार ये ६ अधिकार हैं। इनमें से कोई अधिकार प्राप्त होने पर ग्रह अधिकारी माना जाता है। 'स्व' शब्द का अर्थ, अपना या निजी है। अधिकारहीन ग्रह को सम कहते हैं।

उत्तम कंबूल योग का अन्य लक्षण :—चन्द्रमा अधिकार रहित (न स्वराशि का हो, न स्वोच्च राशि का हो, न स्वद्रेष्काण का हो, न स्वनवांशका हो, न स्वनीच राशि का हो और न स्वशत्रु राशि का हो) हो किन्तु सम हो, लग्नेश और कार्येश, स्वराशि या स्वोच्च राशि के हों तथा उनका परस्पर में मुथशिल हो, तथा इनके साथ चन्द्रमा मुथशिल करता हो तो यह उत्तम कंबूल योग बनता है। इसका फल भी उत्तम है।

उत्तम कंबूल योग का उदाहरण :—धन लाभ सम्बन्धी विचार है। कुण्डली में तुला लग्न है। लग्नेश शुक्र तुला राशि का लग्न में है। धनेश मङ्गल कार्येश है, जो कि, अपनी उच्च राशि मकर में है। चन्द्रमा मिथुन राशि के द्रेष्काण में है, जो कि, सम है। इन तीनों में परस्पर मुथशिल है। इस स्थिति से यह उत्तम कंबूल योग है। इसका फल धन लाभ के लिए उत्तम है।

मध्यम कंबूल का अन्य लक्षण :—लग्नेश और कार्येश, स्वहद्दा में या स्वद्रेष्काण में अथवा स्वनवांश में हों तथा परस्पर में मुथशिल करते हों और इनके साथ सम पूर्वोक्त छः प्रकार के अधिकार से रहित) चन्द्रमा मुथशिल करता हो तो मध्यम कंबूल योग होता है। इस योग में चंद्र अधिकारहीन होता है तथा लग्नेश और कार्येश मध्यमाधिकारी होते हैं। इस योग का फल मध्यम है।

मध्यम कंबूल का उदाहरण :—धन लाभ सम्बन्धी विचार है। कुण्डली में तुलालग्न है। लग्नेश के १० अंश हैं और वह सिंह राशि में अपनी हद्दा में है। चन्द्रमा मिथुन राशि में है और मध्यम द्रेष्काण में है। इन तीनों में परस्पर मुथशिल है। इस स्थिति से यह मध्यम कंबूल योग बना। इसके फल में धन का लाभ मध्यम है।

मध्यम कंबूल योग का अन्य लक्षण :—लग्नेश और कार्येश, उत्तम तथा मध्यम अधिकार से रहित हों और उनमें परस्पर मुथशिल हो, सम चन्द्रमा भी उनसे मुथशिल करता हो तो यह मध्यम कंबूल योग होता है। इसका फल मध्यम है।

नोट :—आचार्य नीलकण्ठ के विचार में यह मध्यम कंबूल युक्तियुक्त है। कारण कि, इसमें लग्नेश, कार्येश और चन्द्रमा, ये तीनों ही ग्रह सम हैं।

उत्तम अधिकार :—स्वराशि या स्वोच्च राशि। मध्यम अधिकार :—स्वद्रेष्का, स्वद्रेष्काण, स्वनवांश। अधम अधिकार :—स्वनीच राशि, स्वशत्रु राशि। सम-अधिकार :—पूर्वोक्त अधिकारों में से किसी प्रकार का भी अधिकार न होना।

मध्यम कंबूल योग का उदाहरण :—धन लाभ सम्बन्धी विचार है। कुण्डली में मेष लग्न है। उसका स्वामी मंगल सिंह राशि में है और उसके १० अंश हैं। धनेश शुक्र कार्येश है। वह कुम्भ राशि में है और उसके १० अंश हैं। चन्द्र तुला राशि में है और उसके १० अंश हैं। इन सबका आपस में मुथशिल है। यहाँ तीनों ग्रह सम हैं। इस स्थिति से मध्यम कंबूल बन गया है। इसके फल में धन लाभ मध्यम है।

अधम कंबूल योग का विवरण :—लग्नेश और कार्येश, स्वनीच राशि में या स्वशत्रु राशि में स्थित हों, तथा उनमें परस्पर मुथशिल हो। सम चन्द्र, इनसे मुथशिल करता हो तो अधम कंबूल योग होता है। कारण कि, इस योग में लग्नेश और कार्येश को अधम अधिकार प्राप्त होते हैं और चन्द्रमा को सम-अधिकार होता है। इसका फल कष्टसाध्य है।

अधम कंबूल योग का उदाहरण :—पुत्र प्राप्ति का विचार है। कुण्डली में कन्या लग्न है। लग्नेश बुध, स्वनीच राशि मीन में है। पंचमेश शनि कार्येश है, वह स्वनीच राशि मेष में है। चन्द्रमा, अधिकार रहित है। इन तीनों का परस्पर मुथशिल है। इस स्थिति से यह अधम कंबूल योग बन गया है। इस योग से पुत्र की प्राप्ति कुछ कष्टसाध्य है।

अधमोत्तम कंबूल योग का विवरण :—चन्द्रमा, स्वनीच राशि या स्वशत्रु राशि में हो, लग्नेश और कार्येश, स्वराशि या स्वोच्च राशि में हो तथा तीनों का परस्पर मुथशिल हो तो अधमोत्तम कंबूल योग होता है। इसका फल भी कष्ट साध्य सफलता है। इस योग में चन्द्र को अधम-अधिकार प्राप्त होता है तथा लग्नेश और कार्येश को उत्तम अधिकार प्राप्त होता है।

अधमोत्तम कंबूल योग का उदाहरण :—सुख प्राप्ति का विचार है। सुख भाव चतुर्थ स्थान है। अतः चतुर्थ स्थान कार्य स्थान है। कुण्डली में सिंह लग्न है। लग्नेश सूर्य स्वोच्च राशि मेष में है। चतुर्थेश गुरु कार्येश है, वह स्वोच्च राशि कर्क में है। चन्द्र, स्वनीच राशि वृश्चिक में है। तीनों का परस्पर मुथशिल है। इस स्थिति से यह अधमोत्तम कंबूल योग बना है। इसका फल भ्रम द्वारा सुख की प्राप्ति है।

अधम मध्यम कंबूल योग का विवरण :—लग्नेश और कार्येश, स्वहद्दा में या स्वद्रेष्काण में अथवा स्वनवांश में हों, चन्द्रमा स्वनीच राशि में हो या स्वशत्रु राशि में हो, तीनों का परस्पर मुथशिल हो तो अधम–मध्यम–कंबूल योग होता है। इस योग में लग्नेश और कार्येश को मध्यम–अधिकार प्राप्त होता है तथा चन्द्र को अधम अधिकार प्राप्त होता है। इस योग का फल, अत्यन्त आयास से सफलता है।

अधम मध्यम कंबूल योग का उदाहरण :—पुत्र प्राप्ति का विचार है। कुण्डली में कन्या लग्न है। लग्नेश बुध के ३ अंश हैं। वह मकर राशि में है और अपनी हद्दा में है। पंचमेश शनि कार्येश है, उसके ५ अंश हैं, मीन राशि में है तथा अपनी ही हद्दा में है। चन्द्रमा, स्वनीच राशि वृश्चिक में है और उसके ३ अंश हैं। तीनों में परस्पर मुथशिल है। इस स्थिति से यह अधममध्यम कंबूल योग बना है। इसका फल है, पुत्र की प्राप्ति अत्यंत आयास (कठिनता) से है।

अधम कंबूल का अन्य लक्षण:—चंद्रमा, स्वनीचराशि या स्वशत्रुराशि में हो, लग्नेश तथा कार्येश, उत्तम और मध्यम अधिकार से रहित होने के कारण सम हों एवं तीनों में परस्पर मुथशिल हो तो अधम कंबूल योग होता है। इस योग में चंद्र को अधम अधिकार प्राप्त होता है तथा लग्नेश और कार्येश सम होते हैं। इस योग का फल कष्ट साध्य है।

अधम कंबूल योग का उदाहरण:—राज्यसंबंधी लाभ का विचार है। कुण्डली में तुला लग्न है। लग्नेश सिंह राशि में है और उसके ६ अंश हैं। दशमेश शनि कार्येश है, वह वृषराशि में है और उसके १० अंश हैं। चंद्रमा, स्वनीच राशि वृश्चिक में है और उसके ३ अंश हैं। सभी में परस्पर मुथशिल है। इस स्थिति से यह अधम कंबूल योग बना है। इसका फल है कि, राज्यसंबंधी लाभ कष्टसाध्य है।

अधमाधम कंबूल योग का विवरण:—लग्नेश, कार्येश और चंद्रमा, ये तीनों स्वनीचराशि अथवा स्वशत्रुराशि में हो तथा सभी का परस्पर मुथशिल हो तो अधमाधम कंबूल योग होता है। इस योग में लग्नेश, कार्येश और चंद्र, इन तीनों को ही अधम अधिकार प्राप्त होते हैं। इस योग का फल असफलता ही है तथा दुःख है।

अधमाधम कंबूल योग का उदाहरण:—पुत्र प्राप्ति का विचार है। कुण्डली में धन लग्न है। लग्नेश गुरु स्वनीचराशि मकर में है। पंचमेश मंगल कार्येश है, वह स्वनीच राशि कर्क में है। चंद्रमा स्वनीचराशि वृश्चिक में अथवा स्वशत्रुराशि मीन में है। यहां तीनों का परस्पर मुथशिल है। अतः यह अधमाधम कंबूल योग बना है। इसका फल है कि, पुत्रप्राप्ति नहीं है।

नोट :—कंबूल योग के सोलह भेदों के विवरण तथा उदाहरण प्रस्तुत किये गये। उत्तमोत्तम कंबूल का उदाहरण छूट गया है, वह यहाँ दिया जाता है।

उत्तमोत्तम कंबूल योग का उदाहरण :—

पुत्र संबंधी विचार है। कुण्डली में मेष लग्न है। लग्नेश मंगल, स्वराशि मेष में है। पंचमेश सूर्य कार्येश है, वह स्वोच्चराशि मेष में है। चंद्रमा, स्वराशि कर्क में है अथवा स्वोच्च राशि वृष में है। लग्नेश और कार्येश का परस्पर मुथशिल है। चंद्रमा का भी इनसे मुथशिल है। ऐसी स्थिति में उत्तमोत्तम कंबूल योग बन गया। इसका फल है कि, पुत्र संबंधी अभिलाषा पूर्ण होगी।

नोट :—आचार्य समरसिंह ने अपने ग्रन्थ 'ताजिक संज्ञा तंत्र' में यह विचार प्रस्तुत किया है कि, शीघ्रगति तथा मंदगति ग्रह, दोनों एक राशि में स्थित होते हैं, तभी इत्थशाल (मुथशिल) तथा ईसराफ आदि योग होते हैं। उदाहरणार्थ जैसे—कुण्डली में चंद्रमा मेष राशि में है तथा शनि भी मेष राशि में है। चंद्र शीघ्र ग्रह है और शनि मंद ग्रह है तथा दोनों एक ही राशि में हैं। चंद्र का शनि के साथ मुथशिल है। अतः यह मध्यमाधम कंबूल योग है। परन्तु आकर ग्रन्थों का यह सिद्धान्त नहीं है। कारण कि, यह नियम है कि, लग्नेश और कार्येश, स्वनीच राशि या शत्रुराशि में हों, इन दोनों में स्वनीचराशि में या स्वशत्रुराशि में स्थित कोई एक ग्रह, स्वनीचराशि में अथवा स्वनीच राशि में स्थित दूसरे ग्रह से इत्थशाल करता है तो वह इत्थशाल कार्य का विनाशकारी होता है। यहाँ विचारणीय यह है कि, जब दोनों एकराशि में स्थित होंगे तब एक ग्रह की ही वह नीचराशि हो सकती है किन्तु दूसरे ग्रह की नीच-राशि नहीं हो सकती। जैसे शनि की नीचराशि है और चंद्र की नीचराशि वृश्चिक है। अतः यह सिद्ध हुआ कि,भिन्न-भिन्न राशि में स्थित ग्रहों का भी इत्थशाल होता है।

कंबूल योग का अन्य विचार :—पहिले तो यह विवरण दिया गया है कि, लग्नेश और कार्येश को एक से अधिकार प्राप्त हों और उनसे चंद्र मुथशिल करता हो तो कंबूल योग होता है। परन्तु यहाँ उससे भिन्न विचार है।

लग्नेश और कार्येश में से कोई एक स्वनीचराशि में हो तथा दूसरा सम (प्रत्येक अधिकार से रहित) हो, दोनों का परस्पर मुथशिल हो और इनसे सम चंद्रमा, मुथशिल करता हो तो कंबूल योग होता है। इस कंबूल योग से कार्य की थोड़ी सफलता होती है। कभी-कभी इसी योग से अधिक सफलता भी हो जाती है। जिस प्रकार कोई व्यक्ति, किसी अन्यजातीय व्यक्ति से माँगता है तो वह उसे थोड़ा दे देता है और यदि कभी वह व्यक्ति, अपने सजातीय व्यक्ति से माँगता है तो वह लज्जावश अधिक भी दे देता है। इसी प्रकार उक्त कंबूल योग का फल है।

शून्यमार्ग ग्रह का विवरण :—

ग्रह के दो प्रकार के अधिकार हैं। १—शुभ फल प्रद। २—अशुभ फल प्रद। जो ग्रह, स्वराशि, स्वोच्चराशि, स्वहद्दा, स्वद्रेष्काण अथवा स्वनवांश में होता है, वह शुभफल प्रद होता है। जो ग्रह, स्वनीच राशि या स्वशत्रु राशि का होता है, वह अशुभ फल प्रद होता है। जो ग्रह, न तो शुभफल प्रद है और न अशुभफलप्रद ही है, तथा उसे न कोई शुभग्रह देखता है और न कोई पापग्रह ही देखता है, ऐसी स्थिति के उस ग्रह को शून्यमार्ग या शून्याध्वग कहते हैं। इसका काम गैरिकंबूल योग में पड़ता है।

नोटः—आचार्य समरसिंह के मत में शून्यमार्ग ग्रह नहीं है। यह आचार्य नीलकण्ठ के मतानुसार प्रस्तुत किया गया है।

(९) गैरि कंबूल योग का विवरणः—

लग्नेश और कार्येश का इत्थशाल हो और इनमें से किसी एक के साथ शून्यमार्ग के चन्द्र का मुथशिल हो, यदि शून्यमार्ग के चंद्र का मुथशिल न हो तो शून्य मार्ग का चन्द्रमा राशि के अन्तिम भाग में रहता हुआ अगली जिस राशि में प्रवेश करता है वह राशि जिस ग्रह की स्वराशि या उच्च राशि है और वह ग्रह उस राशि में स्थित है तथा उससे चन्द्रमा मुथशिल करता है तो यह गैरिकंबूल योग है। यह पूर्वोक्त मध्यम कंबूल योग के समान है। अतः इसका फल मध्यम है।

सम राशि का चंद्र, जिस राशि में स्थित है और उसमें कोई अधिकाररहित ग्रह तथा उससे चंद्रमा मुथशिल करता हो तो यह गैरि कंबूल योग अशुभ फल देता है।

गैरि कंबूल योग का उदाहरण :—सुख प्राप्ति का विचार है। कुण्डली में सिंह लग्न है। लग्नेश सूर्य मेष में है और उसके ८ अंश हैं। चतुर्थेश मंगल कार्येश है, वह कुम्भ राशि में है और उसके १२ अंश हैं। सूर्य और मंगल का परस्पर मुथशिल योग है। कन्या राशि के चन्द्र के ३० अंश है। चन्द्रमा, स्वराशि आदि शुभ-अधिकार से रहित है। इस चन्द्रमा का लग्नेश या कार्येश के साथ मुथशिल नहीं है। परन्तु चन्द्रमा तुला राशि में जानेवाला है। शनि की उच्च राशि तुला है। यहाँ शनि तुला राशि में स्थित है। इस शनि के साथ तुला राशि में शीघ्र ग्रह चन्द्रमा पहुँच कर मुथशिल करता है। इस स्थिति से यह गैरि कंबूल योग बना है। इसका फल यह है कि, किसी सहायक के द्वारा कार्य की सफलता है।

पूर्वोक्त उदाहरण में तुला राशि में बुध, अधिकारहीन होकर स्थित है, तुला राशि में सम चन्द्रमा जाकर उस बुध से मुथशिल करता है तो यह अशुभ फल देने वाला गैरि कंबूल योग माना जायगा।

नोट :—उक्त उदाहरण में आचार्य समर सिंह की सम्मति नहीं है।

(१०) खल्लासर योग का विवरण :—

लग्नेश और कार्येश का परस्पर मुथशिल हो। शून्य मार्ग चन्द्र, लग्नेश या कार्येश से मुथशिल न करता हो और न इनमें से किसी से युक्त ही हो तो खल्लासर योग होता है। यह शुभ फल देने वाला योग नहीं हैं। मुथशिल होने पर या केवल युति (साथ) होने पर कंबूल पूर्ण होता है परन्तु इस योग में किसी के साथ मुथशिल या युति नहीं होती है। अतः यह कंबूल योग के फल को नष्ट कर देता है।

(११) रद्द योग का विवरण :—

दुर्बल ग्रह, यदि किसी भाव के स्वामी के साथ मुथशिल करता है तो वह दुर्बल ग्रह, उस भावेश के तेज को ग्रहण करने में असमर्थ रहता है। यह रद्द योग है। यह कार्य के आरम्भ का भी साधक नहीं है। अर्थात् इस योग के रहने पर कार्य का आरम्भ होना भी कठिन है।

रद्द योग के फल के सम्बन्ध में विशेष विचार:—

कार्येश दुर्बल ग्रह होकर केन्द्र में बैठे तथा लग्नेश आपोक्लिम स्थान में स्थित हो, इससे कार्येश मुथशिल करता हो तो इसके फल में कार्य प्रारम्भ में अच्छा होकर बाद में बिगड़ जाता है।

यदि आपोक्लिम (३-६-९-१२) स्थान में स्थित ग्रह, केन्द्र (१-४-७-१०) स्थान में स्थित ग्रह के साथ मुथशिल करता है तो कार्य, प्रारम्भ में बिगड़ कर बाद में अच्छा हो जाता है।

नोट :—दुर्बल ग्रह की परिभाषा :—अस्त का, वक्र, नीच राशि का, शत्रु राशि का, अथवा तेजोरहित, ग्रह दुर्बल होता है।

(१२) दुफालिकुत्थ योग का विवरण :—

मन्द गति ग्रह, स्वराशि का, स्वोच्च राशि का, स्वहद्दा का स्वद्रेक्काण का अथवा स्वनवमांश का होकर स्वराशि आदि शुभ अधिकार से रहित शीघ्रगति ग्रह के साथ इत्थशाल करता है तो यह दुफालि कुत्थ योग है। इस योग में शीघ्रगति ग्रह दुर्बल नहीं होना चाहिए। इस योग से अभीष्ट कार्य की सिद्धि होती है।

(१३) दुत्थोत्थ-दिवीर योग का विवरण :—

यह दो योगों के नाम से एक योग है। लग्नेश और कार्येश, दुर्बल ग्रह हों और लग्नेश तथा कार्येश के बीच में कोई एक तीसरा ग्रह, स्वराशि आदि शुभ अधिकार से युक्त हो, इसके साथ लग्नेश या कार्येश मुथशिल करता हो तो यह दुत्थोत्थ योग है। इस योग के होने पर किसी सहायक के द्वारा कार्य में सफलता होती है।

स्वराशि आदि शुभ अधिकार को प्राप्त कोई भी दो ग्रह, लग्नेश के या कार्येश के साथ मुथशिल करते हैं तो यह दिवीर योग होता है। इसका फल भी सहायक के द्वारा कार्य की सफलता है।

(१४) तंवीर योग का विवरण :—

लग्नेश और कार्येश में परस्पर मुथशिल न हो और इन दोनों के बीच में कोई बलवान् ग्रह स्थित हो परन्तु वह ग्रह, राशि के अन्तिम भाग (२९ अंश) में हो अतः अगली राशि में जाने वाला हो तो वह ग्रह अपने दीप्तांशों से अगली राशि में स्थित ग्रह को अपना तेज दे देता है। यह तंवीर योग है। इस योग में अगली राशि में स्थित तेज को ग्रहण करने वाला ग्रह, स्वराशि आदि अधिकार से युक्त होने के कारण बली होता है तब तो अभीष्ट कार्य की निश्चित सफलता होती है। तंवीर योग प्रायः शुभ ही है।

(१५) कुत्थ योग का विवरण :—

यावनी (फार्सी–अरबी) भाषा में कुत्थ का अर्थ बली या बलवान् है। बल, अनेक प्रकार का है। यहाँ ग्रह की सूची दी जाती है—

१—कुण्डली में सभी स्थानों की अपेक्षा लग्न में स्थित ग्रह बली होता है। २—चतुर्थ, सप्तम या दशम स्थान में स्थित ग्रह बली होता है परन्तु यह लग्न की अपेक्षा कम बली होता है। ३—केन्द्र में स्थित न होने पर पणफर (२-५-८-११) स्थान में स्थित ग्रह बली होता है। परन्तु केन्द्र की अपेक्षा पणफर का बल न्यून (कम) है। ४—इसके अभाव में लग्न पर दृष्टि रखनेवाला अर्थात् कुण्डली में तृतीय या नवम स्थान में स्थित ग्रह बली होता है। ५—कुण्डली में पंचम या नवम स्थान में स्थित ग्रह बली होता है। ६—गणित के द्वारा बलीग्रह, त्रिकस्थान (६-८-१२) में होने पर भी कुछ बली ही होता है। ७—स्वराशि, स्वोच्चराशि, स्वहद्दा, स्वमुसल्लह, स्वद्रेष्काण या स्वनवांश में स्थित ग्रह बली होता है। ८–मध्यगति ग्रह बली होता है। ९—मध्यगति ग्रह की अपेक्षा अल्पगति ग्रह बली होता है। १०—उदित ग्रह बली होता है। ११—मार्गी ग्रह बली होता है। १२—शुभ ग्रह से युक्त या दृष्ट ग्रह बली होता है। १३—पापग्रह की शत्रु दृष्टि (१-४-७-१०) से रहित तथा पापग्रह की युति से रहित ग्रह बली होता है। १४—सायंकाल में उदित चंद्र, मंगल और शुक्र बली होते हैं। १५—अर्धरात्रि के बाद गुरु और शनि बली होते हैं। १६—दिन में पुरुष ग्रह (सूर्य, मंगल और गुरु) बली होते हैं। १७—रात्रि में चंद्र, बुध, शुक्र और शनि बली होते हैं। १८—सूर्य की नवमांश राशि में न होनेवाला ग्रह बली होता है। १९—सूर्य की राशि में न होनेवाला ग्रह बली होता है। २०—स्थिर राशि में स्थित

ग्रह बली होता है। २१--कुण्डली में चतुर्थ स्थान से नवम स्थान तक स्थित स्त्रीग्रह (चंद्र, बुध, शुक्र, शनि) बली होते हैं। २२--कुण्डली में दशम स्थान से तृतीय स्थान तक स्थित पुरुष ग्रह बली होते हैं। २३--विषमराशि में स्थित पुरुष ग्रह बली होते हैं। २४--समराशि में स्थित ग्रह बली होते हैं।

नोट :—बलकी तालिका के अनुसार बलीग्रह से कुत्थ योग होता है। बलीग्रह का शुभ अधिकार जानकर ही फल का विचार करना ही युक्तियुक्त है।

१६—दुरफ योग का विवरण :—

यावनी भाषा में दुरफ का अर्थ निर्बल है। बल के समान निर्बलता भी अनेक प्रकार की है। निर्बलता से युक्त ग्रह निर्बल होता है। यहाँ निर्बल की तालिका दी जाती है—

१—कुण्डली में त्रिकस्थान में स्थित ग्रह निर्बल होता है। २--वक्र गति का ग्रह निर्बल होता है।

नोट :—जातक में वक्र ग्रह बली माना जाता है परन्तु ताजक में वक्रग्रह निर्बल माना गया है।

३—वक्र होनेवाला ग्रह निर्बल होता है। ४—नीचराशि का ग्रह निर्बल होता है। ५—शत्रुराशि का ग्रह निर्बल होता है। ६—पापग्रहों से युक्त ग्रह निर्बल होता है। ७—अस्त का ग्रह निर्बल होता है। ८—स्वनीचराशि के या स्वशत्रुराशि के क्रूरग्रह के साथ मुथशिल करनेवाला ग्रह निर्बल होता है। ९--क्रूरग्रह से शत्रुदृष्टि से देखा गया ग्रह निर्बल होता है। १०—त्रिकस्थान में स्थित ग्रहों के साथ मुथशिल चाहनेवाला ग्रह, अथवा मुथशिल करनेवाला ग्रह निर्बल होता है। ११—ग्रह, अपनी राशि से सातवीं राशि में स्थित होने पर निर्बल होता है। १२--राहु के पुच्छ तथा मुख में स्थित ग्रह निर्बल होता है।

नोट :—राहु के भुक्त (बीते) अंशों की संज्ञा पुच्छ है तथा भोग्य (आगे के शेष) अंशों की संज्ञा मुख है। उदाहरणार्थ जैसे राहु १८वें अंश में है। यहाँ २९ अंश से १९ अंश तक भुक्त हैं, ये पुच्छ कहलायेंगे। १८ अंश से १ अंश तक भोग्य हैं, ये मुख कहलायेंगे।

१३—लग्न पर दृष्टि न रखनेवाला ग्रह निर्बल होता है। १४—अस्त भाग (सूर्य, जिस नवांश राशि में है, उससे सातवीं नवांश राशि को अस्तभाग कहते हैं।) में स्थित ग्रह निर्बल होता है। १५—स्वराशि, स्वोच्चराशि, स्वहद्दा, स्वद्रेष्काण या स्वनवमांश, अधिकार से रहित ग्रह निर्बल होता है। १६—पापग्रह के साथ ईसराफ करनेवाला ग्रह निर्बल होता है।

नोट:—दुरफ वानी निर्बल ग्रह, अभीष्ट कार्य की सिद्धि करने में असमर्थ होता है। उक्त तालिका प्रायः सभी ग्रहों के विषय में लागू है। चंद्रमा के संबंध में 'दुरफ विशेष' प्रस्तुत किया जाता है—

१—कुण्डली में सूर्य से बारहवें स्थान में चन्द्र हो तो वह चंद्र निर्बल होता है। २—वृश्चिक राशि के पूर्वार्ध में चंद्र निर्बल होता है तथा अशुभ फल देता है। ३—तुला राशि के उत्तरार्ध में चंद्र निर्बल होता है तथा विशेष अशुभ फल करता है। ४—चंद्रमा जिस भाव में है, यदि उस भावेश की चंद्रमा पर दृष्टि नहीं होती है तो चंद्रमा निर्बल होता है। ५—सब ग्रहों की दृष्टि चंद्रमा पर न हो तो चंद्र निर्बल होता है। ६—शून्यमार्गग चंद्रमा पदोन (अधिकार रहित) निर्बल होता है। ७—क्षीण चंद्रमा निर्बल होता है।

नोट :—कृष्णपक्ष की अष्टमी से शुक्लपक्ष की अष्टमी तिथि तक चंद्रमा क्षीण होता है। एक मत यह भी है कि, कृष्णपक्ष की एकादशी से अमावास्या तक चंद्रमा क्षीण रहता है।

८—राशि के अंतिम नवांश का चंद्रमा निर्बल होता है तथा अशुभ फल देता है।

नोट :—यह चंद्र संबंधी विचार जन्मकाल में तथा प्रश्नकाल में करना चाहिए।

९—शुक्लपक्ष में चंद्रमा को मंगल शत्रु दृष्टि से देखे तो चंद्रमा, निर्बल तथा अशुभ फलप्रद होता है। १०—कृष्णपक्ष में चंद्रमा को शनि, शत्रुदृष्टि (१-४-७-१०) से देखे तो चंद्रमा निर्बल तथा अशुभ फलप्रद होता है।

नोट :—योग विशेष के द्वारा चंद्रमा के दोष में न्यूनाधिकता (कमी-वेशी) हो जाती है।

शुक्ल पक्ष में दिन में चंद्रमा को पुरुष राशि में स्थित शनि देखता है तो चंद्र के दुरफ दोष में कमी हो जाती है। यदि उक्त प्रकार से चंद्र को शनि नहीं देखता है तो दुरफ दोष की अधिकता हो जाती है।

कृष्णपक्ष में रात्रि में चंद्रमा को समराशि में स्थित मंगल देखता है तो चंद्र के दुरफ दोष में कमी हो जाती है। और यदि उक्त प्रकार से चंद्रमा को मंगल नहीं देखता है तो चंद्रमा के दुरफ दोष में अधिकता हो जाती है।

नोट :—सोलह योगों का सांगोपांग विवरण प्रस्तुत किया गया। ये योग अल्प-स्वल्प नहीं है किन्तु बड़े महत्वपूर्ण हैं। यद्यपि ये योग ताजक शास्त्र के हैं परन्तु इनका विचार केवल वर्ष में न होकर जन्मकाल में तथा प्रश्नकाल में भी होता है।

प्रश्नेऽथवा जनुषि बुद्धिमतोहनीयम्।

जन्म कुण्डली, वर्ष कुण्डली, मास कुण्डली, दिन कुण्डली तथा प्रश्न कुण्डली, इन सभी में सोलह योगों का उपयोग, महत्त्वपूर्ण तथा चमत्कारिक है।

कुण्डली के बारहभावों में संसार के सभी विषय आ जाते हैं। किस भाव से क्या-क्या विचार करना है? यह इसी ग्रंथ के तृतीय प्रकाश में देखिये। जिस भाव से संबंधित विचार है, वह कार्यभाव है और उस भाव का स्वामी कार्येश है। जो कुछ भी होना है, वह सजीव शरीर के लिए ही होना है, इस कारण लग्नेश का ग्रहण है। चंद्रलोक, भूलोक के अत्यंत निकट है। चंद्रमा का प्रभाव प्रत्येक प्राणी पर तथा प्रत्येक वस्तु पर पड़ता है। इस कारण चंद्रमा का ग्रहण है। प्रायः सभी योग लग्नेश, कार्येश तथा चंद्रमा पर आधारित हैं, जिनका फलित सर्वथा यथार्थ उतरता है। इसमें विचार का ठीक-ठीक होना अपेक्षित है।



श्रीनिवासपरब्रह्मणे नमः। श्रीमते श्रीभाष्यकाराय नमः।

द्वितीय-प्रकाश

मंगलाचरण

ज्ञानानन्दमयं देवं निर्मलस्फटिकाकृतिम्।
आधारं सर्वविद्यानां हयग्रीवमुपास्महे॥
श्रीशैलेशदयापात्रं धीभक्त्यादिगुणार्णवम्।
यतीन्द्रप्रवणं वन्दे रम्यजामातरं मुनिम्॥

संदर्भः—प्रथम-प्रकाश में पंचांग संबंधी विवरण तथा संज्ञाओं से संबंधित विवरण प्रस्तुत किया गया। तदनन्तर यह गणित-प्रकरण प्रस्तुत किया जा रहा है। गणित और फलित का परस्पर में अन्योन्याश्रय संबंध है। अतः ज्यौतिष की गणित का यथार्थ ज्ञान होना आवश्यक ही नहीं किन्तु अनिवार्य है। यहाँ क्रमशः समस्त उपयोगी गणित सरल रीति से प्रस्तुत करना अभीष्ट है।

विषय-प्रवेश :—जन्मपत्रिका के आधार पर ही वर्षपत्र का निर्माण होता है। जिस व्यक्ति का वर्षपत्र बनाना है, उसकी जन्मपत्रिका अपेक्षित है। जन्मपत्रिका सर्वथा शुद्ध होनी चाहिए। यदि जन्मपत्रिका शुद्ध नहीं है तो वर्षपत्र भी शुद्ध नहीं बन सकता है और फिर फलित भी ठीक नहीं बैठ सकता है। स्थानीय समय (लोकल टाइम) पर शुद्ध इष्ट बनाकर और उस पर लग्न स्पष्ट करके जन्मपत्रिका बनानी। जन्मकुण्डली में वेध-सिद्ध-गणित के द्वारा इष्टग्रह स्थापित करना सर्वथा समुचित है।

स्टैण्डर्ड टाइम से लोकल टाइम बनाने का क्रम तथा उससे इष्ट बनाने का क्रम और लग्न निकालने का क्रम तथा कुण्डली बनाने का क्रम, ये सभी विषय प्रथम-प्रकाश में दिये गये हैं। जन्मपत्रिका के निर्माण के संबंध में श्रद्धेय-आचार्य का मन्तव्य है कि-

यन्त्रैः स्पष्टतरोऽत्र जन्मसमयो वेद्योऽथ खेटाः स्फुटाः॥

घड़ी आदि में यंत्रों के द्वारा जन्म का सूक्ष्मकाल जानना तदनंतर स्पष्ट ग्रहों का साधन करना। अर्थात् जन्मकाल के आधार पर ही जन्मपत्रिका का निर्माण करना युक्तियुक्त है। जिस व्यक्ति की जन्मपत्रिका नहीं है और न उसे अपने जन्म के संबंध में किसी प्रकार का ज्ञान ही है, ऐसा वह व्यक्ति अपनी जन्मपत्रिका का निर्माण कराना चाहता है तो उसकी जन्मपत्रिका प्रश्न के द्वारा बनायी जायेगी।

आधानजन्मापरिबोधकाले सम्पृच्छतो जन्म वेदन्नराणाम्॥

अर्थात् जिस व्यक्ति के आधान (गर्भ) काल तथा जन्मकाल का पता नहीं है, उसका जन्मकाल प्रश्न से निश्चित करना। आचार्य वराहमिहिर के आदेशानुसार अज्ञात दशा में ही प्रश्न द्वारा जन्मपत्रिका का निर्माण करना समुचित है। प्रश्न के द्वारा जन्मपत्रिका निर्माण के कई क्रम हैं किन्तु यहाँ प्रामाणिक क्रम प्रस्तुत किया जायेगा।

गर्भ की स्थापना होने के समय से बनी कुण्डली को आधान कुण्डली या गर्भाधान कुण्डली कहते हैं। गर्भकुण्डली से भी जन्म कुण्डली बन जाती है तथा जन्म कुण्डली से गर्भ कुण्डली बनायी जा सकती है। इष्ट काल शोधन का भी एक उपाय माना जाता है। पाठकों के मनोरंजनार्थ गर्भ कुण्डली का विवरण प्रस्तुत किया जाता है।

जन्मकाल और निषेक (गर्भ) के बीच के समय का विचार:—

जन्मलग्न तथा जन्मकाल के चन्द्रमा को स्पष्ट करना। जन्म लग्न के भोग्य अंश लेने और चन्द्रमा के भुक्त अंश लेने। दोनों प्रकार के अंशों की संख्या का योग करना। इस योग में २४० मिलाना, जो योगफल होगा वे दिनों के रूप में गर्भकाल और जन्मकाल के बीच का अन्तर होगा। यह दिनों का अन्तर २४० से ३०० तक के अन्दर होता है। कारण कि, प्रायः गर्भकाल और जन्मकाल में ३०० दिन से अधिक का एवं २४० दिन से कम का अन्तर (फर्क) नहीं होता है। यह स्थूल (मोटा) नियम है।

कल्पित उदाहरण:—जन्मकालिक लग्न स्पष्ट ५।१०।४७।२७। जन्मकालिक चन्द्र स्पष्ट ८।२६।४५।४७। यहाँ लग्न के भोग्य अंश १९ हैं और चन्द्र के भुक्त अंश २६ हैं। दोनों अंशों की संख्या का योग किया १९ + २६ = ४५ तो ४५ संख्या हुई। इसमें २४० युक्त किये ४५ + २४० = २८५ हुए। ये ३०० के अन्दर हैं। अर्थात् जिस दिन गर्भ रहा है, उससे २८५वें दिन जन्मकाल है।

निषेक कुण्डली के निर्माण का क्रम :—

गर्भाधान के समय चन्द्रमा जिस राशि में होता है, उसी राशि में गर्भस्थ शिशु का जन्म होता है। जन्मकाल में चन्द्रमा, जिस राशि का होता है उसी राशि की लग्न में गर्भाधान होता है। अतः गर्भाधान के चन्द्र का स्पष्ट, जन्मलग्न का स्पष्ट होगा। जन्मकाल के चन्द्रमा का स्पष्ट, गर्भकाल की लग्न स्पष्ट होगा।

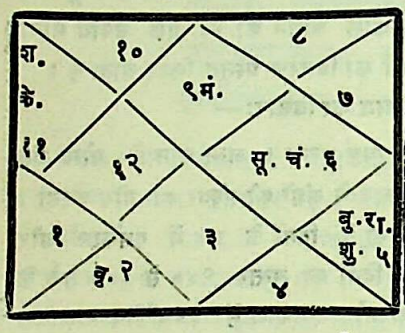
जन्मकाल के वर्तमान पञ्चाङ्ग को तथा गर्भकाल के (पिछले वर्ष के) पञ्चाङ्ग को देख कर दोनों के कालों की समानता मिलानी। दोनों की समानता जहाँ मिलेगी वही गर्भाधान काल है। गर्भाधान काल से जन्मकाल का विचार करना। जिस इष्ट पर मिलान हो जाय वह इष्ट प्रायः शुद्ध होता है।

उदाहरण :—संवत् १९६३ शक १८२८ आषाढ़ कृष्णा तृतीया शनिवार, तदनुसार ९ जुलाई सन् १९०६ ई०। जन्मकाल है। जन्मकालिक इष्ट १७।५९।

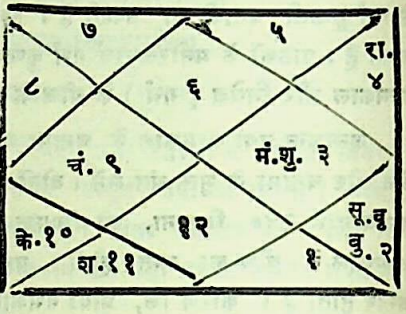
जन्मलग्न स्पष्ट ५।१०।४७।२७। जन्मकालिक चन्द्र स्पष्ट ८।२६।४५।४७ है।

उपर्युक्त नियम के अनुसार गर्भाधान की लग्न का स्पष्ट ८।२६।४५।४७ है। गर्भाधान काल के चन्द्र का स्पष्ट ५।१०।४७।४८ है। यह समय, संवत् १९६२ आश्विन शुक्ल प्रतिपदा शुक्रवार दिनांक २९।९।१९।८० को मध्याह्न काल में १४।४१।४० इष्ट पर है।

गर्भ कुण्डली



जन्म कुण्डली



नोट :—लग्न स्पष्ट का क्रम पूर्व प्रकरण में दिया है। चन्द्र स्पष्ट का क्रम आगे दिया जायगा।

प्रश्न से जन्म पत्र बनाने का क्रम :—

जिस समय पृच्छक या प्रष्टा (प्रश्नकर्ता) जन्मपत्रिका बनाने के लिए प्रश्न करे, उस समय स्थानीय समय से इष्टकाल बना कर उससे लग्न स्पष्ट करना तदनन्तर प्रश्नलग्न कुण्डली बनानी। प्रश्नलग्न के द्रेष्काण को निकालना। प्रश्न के दिन के दिनमान को जानना। राशि के गुणक (जिस अंक से गुणा की जाती है, उसे गुणक कहते हैं। तथा ग्रह के गुणक को जानना। किस राशि का तथा किस ग्रह का क्या गुणक है ? यह चक्रों से समझना।

राशि गुणक सारिणी

राशि	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धन	मकर	कुंभ	मीन
गुणक	७	१०	८	४	१०	५	७	८	९	५	११	१२

ग्रह गुणक सारिणी

ग्रह	सूर्य	चंद्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु
गुणक	५	५	८	५	१०	७	५	०	०

लग्न स्पष्ट का कला पिण्ड बनाना।

कलापिण्ड बनाने का क्रम :—

राशि की संख्या को ३० से गुणा करके अंश की संख्या जोड़नी फिर ६० से गुणा करके कला की संख्या जोड़नी। इस प्रकार बनी संख्या को रख कर उसके आगे पूर्ण विराम का चिह्न लगा कर उसके आगे विकला की संख्या रखनी। इस प्रकार कला पिण्ड बनता है।

कलापिण्ड बनने पर कर्मयोग्य पिण्ड बनाना।

कर्मयोग्य पिण्ड बनाने का क्रम :—

यदि प्रश्न लग्न में ग्रहस्थित हों तो ग्रहगुणक सारिणी से क्रमशः ग्रहों के गुणक लेना। राशि गुणक सारिणी से लग्न की राशि का गुणक लेना। लग्नराशि के गुणक से पहिले ग्रह के गुणक को गुणा करना, जो संख्या आये उसे दूसरे ग्रह के गुणक से गुणा करना। इत्यादि। गुणा करने पर जो अन्तिम संख्या आये, उससे लग्नस्पष्ट के कला-पिण्ड को गुणा करना।

नोट :—यदि प्रश्न लग्न में कोई ग्रह न हो तो केवल लग्नराशि के गुणक से ही गुणा करना।

इस प्रकार यह पिण्ड बनता है। इस पिण्ड को पृथक्-पृथक् चार जगह रखना। पहिली जगह १० से गुणा करना। दूसरी जगह ८ से गुणा करना। तीसरी जगह ७ से गुणा करना। चौथी जगह ५ से गुणा करना। चारों जगह उक्त संख्याओं से गुणा करने के बाद 'संस्कार-विशेष' करना।

संस्कार-विशेष का विवरण :—

यदि प्रश्नलग्न, प्रथम द्रेष्काण में हो तो चारों जगह पिण्ड में ९ युक्त करना। यदि प्रश्नलग्न दूसरे द्रेष्काण में हो तो शून्य मिलाना। यदि प्रश्न लग्न तीसरे द्रेष्काण में हो तो चारों जगह पिण्ड में से ९ घटना। यह संस्कार-विशेष करने पर पिण्ड, कर्मयोग्य पिण्ड बन जाता है।

नोट :—प्रथम स्थान के कर्मयोग्य पिण्ड से जन्म का संवत्, जन्म की ऋतु और जन्म का मास निकलता है। दूसरी जगह के कर्मयोग्य पिण्ड से जन्म का पक्ष और जन्म की तिथि निकलती है। तीसरी जगह के कर्मयोग्य पिण्ड से जन्म का समय (दिन या रात्रि) तथा जन्म का नक्षत्र निकलता है। चौथे स्थान के कर्मयोग्य पिण्ड से जन्मकाल का इष्ट निकल आता है।

उक्त बातें निकल आने पर जन्मपत्र बनाया जा सकता है।

(१) संवत् निकालने का क्रम :—

पहिले स्थान के कर्मयोग्य पिण्ड को १२० से भाग देने पर जो शेष बचता है, वह गताब्द (पिछला वर्ष) होता है। गताब्द की संख्या को वर्तमान संवत् में घटाने से पृच्छक का जन्म संवत् निकल आता है।

(२) ऋतु निकालने का क्रम :—

पहिले स्थान के कर्मयोग्य को पिण्ड ६ से भाग देने पर जो शेष बचे, उस संख्या तक शिशिर ऋतु से गिनने पर गत ऋतु होती है। उससे अगली ऋतु पृच्छक की जन्म ऋतु होती है।

(३) मास निकालने का क्रम:—

पहिले स्थान के कर्मयोग्य पिण्ड को २ से भाग देना। दो मासों की एक ऋतु होती है। १ शेष बचने पर ऋतु का पहिला मास जानना और शून्य शेष बचने पर ऋतु का दूसरा मास जानना। इस प्रकार पृच्छक का जन्म मास निकल आता है।

(४) सूर्य निकालने का क्रम :—

एक मास में एक राशि का सूर्य होता है। वैशाख मास से चैत्र मास तक क्रम से मेष से मीन राशि तक सूर्य होता है। जब मास निकल आता है तो जन्म के सूर्य की राशि, अनायास ज्ञात हो जाती है।

(५) पक्ष निकालने का क्रम :—

दूसरे स्थान के कर्मयोग्य पिण्ड को २ से भाग देने पर १ शेष बचने पर शुक्लपक्ष में जन्म जानना और शून्य शेष बचने पर कृष्णपक्ष में जन्म जानना।

(६) तिथि निकालने का क्रम :—

दूसरे स्थान के कर्मयोग्य पिण्ड में १५ से भाग देने पर जो शेष बचे, वह गत तिथि है, उससे अगली तिथि को जन्मतिथि जानना।

(७) वार निकालने का क्रम :—

संवत्, मास, पक्ष और तिथि, ये चार बातें ज्ञात हो गयी हैं। जन्म संवत् का ग्रहलाघवीय-अहर्गण बनाना। प्रथम चैत्रशुक्ला द्वितीया का अहर्गण बनाना। फिर चालन दे-देकर उस मास की उस तिथि का अहर्गण बनाना। अहर्गण में उस तिथि का वार आ जाता है।

नोट :—अहर्गण बनाने का क्रम आगे लिखा जायगा।

(८) जन्म का समय (दिन या रात्रि) निकालने का क्रम :—

तीसरे स्थान के कर्मयोग्य पिण्ड को २ से भाग देने पर १ शेष बचे तो दिन में जन्म और शून्य शेष बचने पर रात्रि में जन्म जानना।

९. जन्मनक्षत्र निकालने का क्रम -तीसरे स्थान के कर्मयोग्य पिण्ड को २७ से भाग देना। जो संख्या शेष बचे, उस तक अश्विनी नक्षत्र से गिनना, जो नक्षत्र आये उसे जन्मनक्षत्र जानना।

१०. जन्मनक्षत्र के चरण निकालने का क्रम - पिण्ड के आगे की जितनी विकला हों, वे १५-१५ के चार विभागों में से जिस विभाग में आवे वही नक्षत्र का चरण जानना।

११. जन्म का इष्टकाल निकालने का क्रम - पूर्वक्रम से जन्म का समय ज्ञात हो जाने पर यदि दिन में जन्म हैं तो चौथे स्थान के कर्मयोग्य पिण्ड को प्रश्न के दिन के दिनमान से भाग देना। जो शेष बचें उन्हें अनुपात से रखना। वह सूर्योदय से घड़ी-पल आदि में दिन का जन्मेष्टकाल होगा।

यदि रात्रि में जन्म है तो चतुर्थ स्थान के कर्मयोग्य पिंड को रात्रिमान से भाग देना। जो शेष बचें उन्हें अनुपात से रखना। फिर उन्हें दिनमान में युक्त करना। यह रात्रि का जन्मेष्ट काल होगा।

इष्टकाल पर लग्नसाधन कर कुण्डली बनानी, फिर उसमें यथाराशि ग्रह रखने। इस प्रकार प्रश्न द्वारा पृच्छक की जन्मपत्रिका का निर्माण हो जाता है। प्रस्तुत विषय को कल्पित उदाहरण द्वारा स्पष्टीकरण किया जाता है।

उदाहरण - एक व्यक्ति की न तो जन्मपत्रिका है और न उन्हें अपने जन्मकाल के संबंध में कोई बात ज्ञात है। उन्होंने जन्मपत्रिका बनाने के लिए प्रश्न किया।

प्रश्नकालीन इष्ट ४/३८/४०/ प्रश्नकालीन लग्नस्पष्ट ५/१५/४५/४०। प्रश्नकालीन सूर्यस्पष्ट ४/२०/५/४१। दिनमान ३१/७/२०। प्रश्नकालीन लग्न द्वितीय द्रेष्काण में है। प्रश्नकालीन लग्न में बुध, गुरु और शुक्र, ये तीन ग्रह स्थित हैं। प्रश्नकालीन कन्यालग्न का गुणक ५ है। बुध का गुणक ५ है। गुरु का गुणक १० है। शुक्र का गुणक ७ है।

यहाँ लग्न के गुणक ५ से बुध के गुणक ५ को गुणा किया २५ हुए। इन्हें गुरु के गुणक १० से गुणा किया २५० हुए। इन्हें शुक्र के गुणक ७ से गुणा किया १७५० हुए।

अब लग्नस्पष्ट का कलापिण्ड बनाना है। अत: लग्नस्पष्ट की राशि ५ को ३० से गुणा किया तो १५० हुए। इनमें १५ अंश युक्त किये १६५ हुए। इन्हें ६० से गुणा किया तो ९९०० हुए। इनमें ४५ कला और ४० विकला युक्त की तो ९९४५/४० हुए। यही लग्न का कलापिण्ड बना।

लग्न के कलापिण्ड को ९९४५/४० को पृथक्-पृथक् बायीं ओर से पूर्व आये गुणक फलित १७५० से गुणा किया। ४०×१७५ = ७००० हुए। इसमें ६० का भाग दिया तो ११६६ लब्धि आयी और ४० शेष बचे। ९९४५ को १७५०से गुणा किया ९९४५×१७५०= १७४०३७५० हुए। इसमें पहिले आये ११६६ लब्धि युक्त किये १७४०३७५०+११६६= १७४०४९१६ हुए। अब यह पिण्ड कला-विकला के रूप में १७४०४९१६/४० बना।

इस कलापिण्ड को चार स्थानों में स्थापित कर १०/८/७/५ क्रमशः गुणा किया।

१. १७४०४९१६×१०=१७४०४९१६०/४० हुए। यहाँ ४० विकला को १० से गुणा किया ४०० हुए। इनको ६० से भाग दिया तो ६ लब्धि आयी और ४० शेष बचे। शेष को ग्रहण किया और ६ लब्धि को १० से गुणा कर कलापिण्ड में युक्त किया तो १७४०४९१६६ हुए। इनके आगे ४० शेष रखे। आगे भी यह क्रम रहेगा।

२. १७४०४९१६/४०। यहाँ ४० को ८ से गुणा किया ३२० हुए। इनमें ६० से भाग दिया ५ लब्धि आयी और २० शेष रहे। १७४०४९१६ को ८ से गुणा किया १३९२३९३२८ हुए। इनमें ५ लब्धि जोड़ी १३९२३९३३३ हुए। इनके आगे २० शेष रखे।

३. तीसरे स्थान में ७ से गुणा करना है। अतः ४० को ७ से गुणा किया २८० हुऐ। इनमें ६० से भाग दिया ४ लब्धि आयी और ४० शेष बचे। शेष को ग्रहण किया। १७४०४९१६ को ७ से गुणा किया १२१८३४४१२ हुए। इनमें ४ लब्धि जोड़ी तो १२१८३४४१६ हुए। इनके ४० शेष रखे तो १२१८३४४१६।४० हुए।

४. चौथे स्थान में ८ से गुणा करना है। ४० को ८ से गुणा किया ३२० हुए। इनमें ६० से भाग दिया। ३ लब्धि आयी और २० शेष बचे। शेष को ग्रहण किया। १७४०४९१६ को ५ से गुणा किया तो ८७०२४५८० हुए। इनमें ३ लब्धि जोड़ी तो ८७०२४५८३ हुए। इनके आगे २० शेष रखे तो ८७०२४५८३/२० हुए।

विशेष संस्कार - यहाँ लग्न दूसरे द्रेष्काण में है अतः पूर्वोक्त संख्याएँ ज्यों-की-त्यों रहीं।

पूर्वोक्त प्रकार से चार कर्मयोग्य पिण्ड बनें। इन्हें चार स्थानों में क्रमशः रखा गया। इन्हीं से सब कार्य होने हैं।

प्रथम स्थान	द्वितीय स्थान	तृतीय स्थान	चतुर्थस्थान
१७४०४९१६६/४०	१३९२३९३३३/२०	१२१८३४४१६।४०	८७०२४५८३/२०

१. जन्म का संवत् निकालने का उदाहरण - प्रथम स्थान के कर्मयोग्य पिण्ड १७४०४९१६६ में १२० से भाग दिया तो ८६/४० शेष बचे। यहाँ यह फलित निकला कि पृच्छक के गताब्द (बीते हुए वर्ष) ८६ है। प्रवेश वर्ष ८९ है। वर्तमान संवत् २०२३ में हीन किया तो २०२३-८६=१९३७ शेष बचे। यही पृच्छक का जन्मसंवत् है।

२. जन्म की ऋतु निकालने का उदाहरण- प्रथम स्थान के कर्मयोग्य पिण्ड १७४०४९१६६ को ६ से भाग दिया तो २ शेष रहे। ४० विकला को ६ से भाग दिया तो ४ शेष बचे। दोनों शेषों को अनुपात से रखा २/४ हुए। शिशिर से २ तक गिना तो वसन्त ऋतु आयी। यह गत ऋतु है, उससे अगली ग्रीष्मऋतु पृच्छक की जन्मऋतु है।

३. जन्ममास के निकालने का उदाहरण - प्रथम स्थान के कर्मयोग्य पिण्ड १७४०४९६६ को २ से भाग दिया तो शून्य शेष बचा। ४० को २ से भाग दिया

तो शून्य शेष बचा। दोनों शेषों को अनुपात से रखा तो ०/० हुए। जन्म की ग्रीष्मऋतु आयी है। ग्रीष्मऋतु में ज्येष्ठ और आषाढ़ दो मास होते हैं। शून्य शेष से प्रथम मास ज्येष्ठ जन्ममास है।

नोट - पहिले शून्य से सूर्य की मेष राशि है। ४० विकला में २ से भाग देने पर २० लब्धि आयी और शून्य शेष बचा। यहाँ यह फलित निकला कि सूर्य की मेषराशि ०/२० अंश और शून्य कला है। इस प्रकार यह पृच्छक का जन्मकालिक सूर्य है।

४. जन्म का पक्ष निकालने का उदाहरण - दूसरे स्थान के कर्मयोग्य कलापिण्ड १३९२३९३३३ में २ से भाग दिया तो १ शेष बचा। २० विकला में २ से भाग दिया तो शून्य शेष बचा। अनुपात से दोनों शेषों को रखा १/० हुए। १ शेष बचता तो शुक्लपक्ष होता, यहाँ १ से अधिक शेष है अत: कृष्णपक्ष में पृच्छक का जन्म है।

५. जन्म की तिथि निकालने का क्रम - दूसरे स्थान के कर्मयोग्य पिण्ड १३९२३९३३३ को १५ से भाग दिया तो ३ शेष बचे। २० विकला को १५ से भाग दिया तो ५ शेष बचे। शेषों को अनुपात से रखा तो ३/५ हुए। अत: तृतीया गततिथि है और उससे अगली चतुर्थी जन्म की तिथि है।

६.जन्म का वार निकालने का उदाहरण - नक्षत्र और तिथि के लाने योग्य अहर्गण बनाकर उसके वार से जन्म की तिथि तक गिनने से जो वार आये वही जन्म का वार होता है।

७. जन्मकाल निकालने का क्रम - तीसरे स्थान के कर्मयोग्य कलापिण्ड १२१८३४४१६ में २ से भाग दिया तो शून्य शेष बचा। आगे ४० विकला हैं। अनुपात से रखा तो ०/४० हुए। शून्य शेष रहने पर रात्रि में जन्म होता है। यहाँ शेष शून्य से अधिक है, अत: दिन में जन्म है।

८. जन्म का नक्षत्र निकालने का उदाहरण - तृतीय स्थान के कर्मयोग्य पिण्ड १२१८३४४१६ को २७ से भाग दिया तो २१ शेष रहे। शेष को और ४० विकला को अनुपात से रखा तो २१/४० हुए। अत: गतनक्षत्र २१ और वर्तमान नक्षत्र २२वाँ है। अश्विनी से २२ तक गिनने पर २२वाँ नक्षत्र श्रवण होता है। यही पृच्छक का जन्मनक्षत्र है।

९. नक्षत्र के चरण निकालने का उदाहरण- यहाँ ४० विकला हैं, वे १५ के विभाग से तीसरे चरण में आती हैं। अत: पृच्छक के जन्मनक्षत्र का तीसरा चरण है।

जन्म का इष्टकाल निकालने का उदाहरण - चतुर्थ स्थान का कर्मयोग्य पिण्ड ८७०२४५८३ है। इसे प्रश्न के समय के दिनमान ३१/७/२० से यथा क्रम भाग दिया जायेगा; क्योंकि दिन में जन्म है। ८७०२४५८३ को ३१ से भाग दिया तो १९ शेष बचे। फिर इसी कर्मयोग्य कलापिण्ड को ७ से भाग दिया तो २ शेष बचे। फिर इसी कला पिण्ड को २० से भाग दिया तो ३ शेष बचे। २० विकला हैं। सब शेषों को और विकला को अनुपात से स्थापित किया तो १९/२/३/२० हुए। यही जन्मेष्टकाल है।

अर्थात् पृच्छक के जन्म का इष्टकाल १९ घड़ी २ पल ३ विपल और २० अनुपल है।

नोट - उक्त बातें ज्ञात हो जाने पर विस्तृत रूप में जन्मपत्र बनाना।

ग्रहलाघवीय अहर्गण का विवरण - आचार्य श्रीगणेश दैवज्ञ ने ग्रहलाघव नाम के करण ग्रन्थ की रचना की है। अहर्गण से तिथि-वार तथा ग्रहसाधन होता है। यहाँ सारिणियों के द्वारा प्रत्येक वर्ष के अहर्गण के निकालने का क्रम तथा उदाहरण प्रस्तुत किया जायेगा।

अहर्गणसारणी

शक:	१४४२	१४९९	१५५६	१६१३	१६७०	१७२७	१७८४	१८४१	१८९८	१९५५	२०१२	२०६९
चैत्र	००	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	१
शु.२	००	५	११	१७	२३	२८	३४	४०	४६	५२	५७	३
	००	४७	३३	२०	७	५४	४१	२८	१५	२	४९	३६
	१	०	५९	५८	५७	५६	५५	५४	५३	५२	५१	५०
	३	४	५	६	०	१	२	३	४	५	६	०
शक:	२२२६	२२८३	२२४०	२२९७	२३५४	२४११	२४६८	२५२५	२५८३	२६३९	२६९६	२७५३
	१	१	१	१	१	१	१	१	२	२	२	२
	९	१५	२०	२६	३२	३८	४४	४९	५५	१	७	१३
	२३	१०	५७	४४	३१	१८	५	५२	३९	१६	१३	०
	४९	४८	४७	४६	४५	४४	४३	४२	४१	४०	३९	३८
	१	२	३	४	५	६	०	१	२	३	४	५

नोट - अहर्गण सारिणी में शक १४४२ के नीचे दिनादि अहर्गण ०/०/०/१/ वार ३ (मंगल) है। यह ध्रुवांक (जिसके जो अंक निश्चित हैं, उन निश्चित अंकों को ध्रुवांक कहते हैं। ध्रुवांक में कभी कोई हेर-फेर नहीं होता है।) जानना। इसमें अहर्गण शेषाब्द सारिणी से शेषाब्द (अभीष्ट शक का और सारिणी के शक का जो अन्तर है, उसे शेषाब्द कहते हैं।) की संख्या के कोष्ठ से दिनादि अहर्गण तथा वार को लेकर युक्त करना। संस्कार करते-करते जब बहुत समय के बाद अहर्गण सारिणी में जब सबसे ऊपर का अंक ६० हो जाय तो ऊपर १ अंक और बढ़ा देना। ऐसा होने पर बजाय चार अंक के पाँच अंक ग्रहण करने।

उदाहरण- अहर्गण सारिणी में शक १४४२ के नीचे कोष्ठ में दिनादि अहर्गण ००/०/१ वार ३ है। आगे शक १४९९ में दिनादि अहर्गण तथा वार क्या होगा ? यह जानना है। शक १४४२ से शक १४९९ का अन्तर किया १४९९-१४४२ = ५७ तो ५७ शेष बचे। यही शेषाब्द है। अहर्गण शेषाब्द-सारिणी से ५७ शेषाब्द के कोष्ठ में दिनादि अहर्गण ०/५/४६/५९। वार १ है। इसे शक १४४२ के दिनादि अहर्गण तथा वार में युक्त किया तो $\frac{०/०/०/१-३}{०/५/४६/५९-१}$ $\frac{}{०/५/४७/०-४}$ ०/५/४३/०-४ बुध हुआ। अर्थात् शक १४९९ में दिनादि अहर्गण ०/५/४७ है और वार बुधवार है।

नोट -यहाँ अहर्गण चैत्र शुक्ला द्वितीया का बनता है, फिर अहर्गणचालन सारिणी से अभीष्ट दिन का बनाया जाता है । यह क्रम आगे देखियें ।

अहर्गण-शेषाब्द-सारिणी

शेषाब्द	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
दिनादि	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
अहर्गण	०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	१	१
	५	१२	१८	२४	३०	३६	४२	४८	५४	१	६	१२
	५४	१८	१२	६	३०	२४	५१	४३	३७	१	५६	५०
वार	४	३	०	४	३	०	५	४	१	०	५	२
शेषाब्द	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४
	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
	१	१	१	१	१	१	१	२	२	२	२	२
	१९	२५	३१	३७	४३	४९	५५	१	७	१३	१९	२६
	१४	९	३३	२७	२१	४५	३०	३३	५७	५२	४६	१०
वार	१	६	५	२	६	५	२	६	५	३	०	६
शेषाब्द	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	३२	३३	३४	३५	३६
	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
	०२	२	२	२	२	३	३	३	३	३	३	३
	३२	३७	४४	५०	४६	२	८	१४	२०	२६	३३	३९
	०५	५९	२३	१७	४१	३५	२९	५३	४८	४३	७	१
वार	४	१	०	४	३	०	४	३	१	६	५	२
शेषाब्द	३७	३८	३९	४०	४१	४२	४३	४४	४५	४६	४७	४८
	००	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
	०३	३	३	४	४	४	४	४	४	४	४	४
	४५	५१	५७	३	९	१५	२१	२७	३३	४०	४५	५१
	२५	२०	१४	३८	३२	२६	५०	४५	३९	३	५७	५२
वार	१	६	३	२	६	३	२	०	४	३	०	५
शेषाब्द	४९	५०	५१	५२	५३	५४	५५	५६	५७	५८	५९	६०
	००	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
	०४	५	५	५	५	५	५	५	५			
	५८	४	१०	१६	२२	२८	३४	४०	४६			
	१६	१०	३४	२८	२२	४६	४१	३५	५९			
वार	४	१	०	४	१	०	५	२	१			

अहर्गण चालन-सारिणी

मास तिथि	वै. कृ. २	वै. शु. २	ज्ये. कृ. २	ज्ये. शु. २	आ. कृ. २	आ. शु. २	श्रा. कृ. २	श्रा. शु. २	भा. कृ. २	भा. शु. २	आ. कृ. २	आ. शु. २
दिनादि अहर्गण	० ० ० १५	० ० ० ३०	० ० ० ४४	० ० ० ५९	० ० १ १४	० ० १ २९	० ० १ ४३	० ० १ ५८	० ० २ १३	० ० २ २८	० ० २ ४२	० ० २ ५७
वार	१	२	२	३	४	५	५	६	०	१	१	२
मास तिथि	का. कृ. २	का. शु. २	मा. कृ. २	मा. शु. २	पौ. कृ. २	पौ. शु. २	मा. कृ. २	मा. शु. २	फा. कृ. २	फा. शु. २	चै. कृ. २	चै. शु. २
	० ० ३ १२	० ० ३ २७	० ० ३ ४१	० ० ३ ५६	० ० ४ ११	० ० ४ २६	० ० ४ ४०	० ० ४ ५५	० ० ५ १०	० ० ५ २५	० ० ५ ३९	० ० ५ ५४
वार	३	४	४	५	६	०	०	१	२	३	३	४

अहर्गण निकालने का क्रम - जिस शक में अहर्गण लाना है उस शक के पास के अहर्गण-सारिणी में दिये गये शक को लेकर अभीष्ट शक से अन्तर करना। यह अन्तर शेषाब्द होगा। अहर्गण-सारिणी के शक का दिनादि अहर्गण तथा वार लेना और अहर्गण शेषाब्द सारिणी से शेषाब्द का दिनादि अहर्गण तथा वार लेना। दोनों का योग करना। यह उस शक का चैत्र शुक्ला द्वितीया का अहर्गण बनेगा। अब जिस मास की जिस तिथि का अहर्गण बनाना है, अहर्गणचालन-सारिणी से अहर्गणचालन लेकर युक्त करना; फिर वह तिथि, द्वितीया से जितनी आगे हो, उसी हिसाब से दिन की तथा वार की संख्या जोड़नी तो, उस शक के उस मास के उस तिथि का स्पष्ट अहर्गण होगा।

अहर्गण बनाने का उदाहरण - शक १८२८ की आषाढ़ कृष्णा तृतीया शनिवार का अहर्गण बनाना है। अहर्गण-सारिणी में शक १८२८ नहीं है, अतः उसके पूर्व के शक १७८४ को लेकर दोनों शकों का अन्तर किया $\frac{१८२८}{१७८४}$ तो ४४ शेष बचे। ये ही शेषाब्द हैं। अहर्गण-सारिणी से शक १७८४ का दिनादि अहर्गण तथा बार लिया तो ०/३४/४१/५५-२ हुए। अब अहर्गणशेषाब्दसारिणी से ४४ शेषाब्द का दिनादि अहर्गण तथा वार लिया तो ०/४/२७/४५-० हुए। दोनों का योग किया तो $\frac{०/३४/४१/५५-२}{०/४/२७/४५-०}$ तो ०/३९/०९/४०-२ हुए। यहाँ यह फलित हुआ कि शक १८२८ में चैत्र शुक्ला द्वितीया का वार सोमवार (२) है और दिनादि अहर्गण ०/३९/०९/४० है।

अब आषाढ़ कृष्णा तृतीया का बनाना है। अतः अहर्गणचालनसारिणी से आषाढ़ कृष्णा द्वितीया का अहर्गणचालन लेकर युक्त किया $\frac{०/३९/९/४०-२}{०/०/१/१४-४}$ तो आषाढ़ कृष्णा द्वितीया का अहर्गण ०/३९/१०/५४ तथा ६ (शुक्र) वार हुआ। तृतीया के बनाने के लिए १ दिन तथा १ वार जोड़ा तो शुक्रवार का शनिवार हुआ और १ दिन ५४ में जोड़ा तो अहर्गण ०/३९/१०/५५ हुआ। दिन शनि का मिल गया। इसी प्रकार प्रत्येक दिन का अहर्गण बनाया जा सकता है।

नोट- जब कभी वार न मिले तो वहाँ वार तथा दिन में १/१ न्यूनाधिक (कम-ज़्यादा) कर लेना।

अहर्गणसारिणी में शक १४४२ से आरम्भ है। यदि इससे पूर्व के शक का बनाना हो तो अभीष्ट शक का तथा शक १४४२ का अन्तर करके जो शेषाब्द हो उसके फल को ऋण (हीन) करना। यह वक्राहर्गण बनेगा।

अहर्गण के सर्वदिन बनाने का क्रम - अहर्गण के पहिले अंक को ६० से गुणा करके आगे का अंक जोड़ना। फिर ६० से गुणा करके अगला अंक जोड़ना। इस प्रकार सर्वदिन बनते हैं। सर्वदिन में ७ से भाग देकर जो शेष बचे, उस तक मंगलवार से गिनने पर वार होता है।

अहर्गण के सर्वदिन बनाने का उदाहरण - अहर्गण ०/३९/१०/५५ है। इसके सर्वदिन बनाने हैं। शून्य को ६० से गुणा करने पर शून्य हुआ, उसमें ३९ जोड़े तो ३९ हुए। ३९ को ६० से गुणा किया तो २३४० हुए। इनमें आगे के अंक १० जोड़े तो २३५० हुए। इन्हें ६० से गुणा किया तो १४१००० हुए। इनमें आगे के अंक ५५ जोड़े तो १४१०५५ हुए। ये सर्वदिन या समस्त दिन बनें।

सर्वदिन के चक्र बनाने का क्रम - अहर्गण के सर्वदिन में ४०१६ का भाग देने से लब्धिचक्र होता है।

सर्वदिन के चक्र बनाने का उदाहरण - सर्वदिन १४१०५५ में ४०१६ का भाग दिया तो ३५ लब्धि आयीं। ये ही चक्र है।

नोट - अहर्गण से पंचाग का तथा ग्रहों का साधन होता है। इसके लिए लेखक का 'सुदर्शन-सिद्धान्त' देखिये।

प्रथम वर्षपत्र का स्वरूप प्रसतुत किया जाता है, उसी के अनुसार वर्षपत्र की गणित प्रस्तुत की जायेगी।

वर्षपत्र का स्वरूप - १. जन्मकालिक पंचाग सहित जन्मकुण्डली। २. मंगलाचरणपूर्वक वर्षप्रवेशकालिक पंचागलेखन। ३. वर्षकुण्डली। ४. वर्षप्रवेश कालिक पंचांग। (तिथि-वार-नक्षत्र-योग-करण) का फल। ५. गतिसहित स्पष्ट ग्रह चक्रम्। ६. स्पष्ट द्वादश भाव चक्रम्। ७. चलित चक्रम्।८. ग्रहाणां चय-क्षय-फल-

विंशोपकाचक्रम् । ९. वर्ष कुण्डली के भावों में स्थित ग्रहों के फल । १०. मुंथा का फल । ११. मुन्थेश का फल । १२. भाव में स्थित पुण्य सहम का फल । १३. नैसर्गिक ग्रहमैत्रीचक्रम् । १४. तात्कालिकग्रहमैत्रीचक्रम् । १५. द्वादश वर्गों की बारह कुण्डलियाँ। १६. ग्रहाणां हद्दाचक्रम् । १७. नैसर्गिकमैत्रेयबृहत्पञ्चवर्गीबलचक्रम् । १८. तात्कालिक-मैत्रेयबृहत्पंञ्चवर्गीबलचक्रम् । १९. हर्षस्थानबलचक्रम् । २०. हर्षस्थान स्थित ग्रहों के फल। २१. द्वाराशवर्गीबलचक्रम् । २२. द्वादशवर्गी का फल । २३. ग्रहाणामुपरि ग्रहदृष्टिचक्रम् । २४. भावानामुपरि ग्रहदृष्टिचक्रम् । २५. दृष्टि का फल । २६. लघुपञ्चेशचक्रम् । २७. वर्षेश का फल । २८. इष्ट-कष्ट-बलचक्रम् । २९. अरिष्ट योगों का लेख । ३०. अरिष्टभंग योगों का लेख। ३१. राजयोगों का लेख । ३२. राजभंग योगों का लेख । ३३. सहमचक्रम् । ३४. सहमों के फल। ३५. दलीलक का निर्णय । ३६. भावों में स्थित दलीलद के फल। ३७. द्वादश भावों के विचार। ३८. हीनांशग्रहचक्रम् । ३९. पात्यांशग्रहचक्रम् । ४०. हीनांशपात्यांशग्रहदिनाददशाचक्रम्। ४१. दशाओं के फल। ४२. हीनांश-पात्यांशग्रहान्तर्दशाचक्रम् । ४३. अन्तर्दशाओं के फल। ४४. मुद्दादशाचक्रम् । ४५. मुद्दादशा के फल। ४६. मुद्दान्तर्दशाचक्रम् । ४९. मुद्दा की अन्तर्दशा के फल ।

नोट - विद्वान् लोग वर्षपत्र का निर्माण उपर्युक्त पद्धति से करें, तभी वर्ष का वास्तविक फल निर्णय में आ सकता है । अगला प्रकरण फलित का है । उसके द्वारा फलित लिखना । यह प्रकरण गणित का है, इसके द्वारा गणित करके लिखना ।

यदि अन्य विशेषता से वर्षपत्र बनाना हो तो यह क्रम करना - १. बारह मासों की द्वादश मास कुण्डलियाँ लिखनी । २. मासकुण्डलियों में स्थित ग्रहों के फल । ३. मासदशाचक्रम् । ४. मासदशा के फल ।

यदि और विशेषता करनी हो तो यह क्रम करना -

१. सौरवर्ष के ३६० दिनों की ३६० दिन कुण्डलियाँ लिखनी ।

२. कुण्डली के भावों में स्थित ग्रहों के फल ।

३. दिनदशाचक्रम् ।

४. दिनदशा के फल ।

जन्मकुण्डली का स्वरूप

श्रीसीतारामचन्द्राभ्यां नमः । श्रीराधाकृष्णाभ्यां नमः । श्रीसरस्वत्यै नमः ।

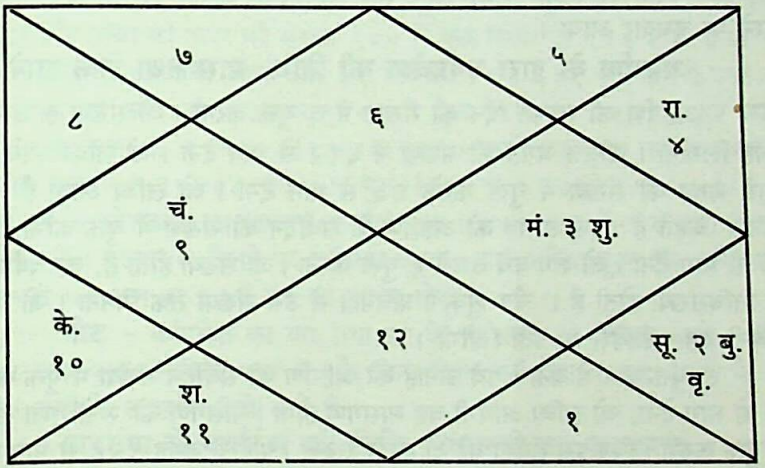
अथश्री वैक्रमसंवत्सरे १९६३ शालिवाहनीयशके १८२८ आषाढमासे कृष्णपक्षे तृतीयायां शनिवासरे ३५/२६ पूर्वाषाढनक्षत्रे १५/३३ शुक्लयोगे ०८/४५ व.करणे ०७/४८ तदुपरान्तं विष्टिकरणे १६/०९ एवं पञ्चागशुद्धौ सौम्यायने सौङ्म्यगोले ग्रीष्मर्तौ दिनमानम् ३३/५० रात्रिमानम् २६/१० अहोरात्रमानम् ६०/०० वृषार्कगतांशाः २६/ भोग्यांशाः ०४/ श्रीमन्मार्तण्डमण्डलोदयादिष्टम् ११/५९ गतर्क्षम् ०२/२६ सर्वर्क्षम् ५७/४३ ग्रहलाघवीयाहर्गणसमस्तदिनानि १४१०५५ अयनांशस्पष्टम् २२/३१/५९/३२/२२ जन्मकालिककन्यालग्नस्पष्टम् ०५/०१/२८/५३/३० प्रत्रावसरे

शुभा-खेटावलोकितकाले उत्तरप्रदेशीये मुरादाबादमण्डले अमरोहानगरे निवासिनः ज्योतिर्विदग्रेसरस्य श्री. पं० केदारनाथ शर्ममहोदयस्य गृहे धर्मपत्नी पुत्ररत्नं प्रासोष्ट। उत्तराषाढनक्षत्रस्य प्रथमपादे। अंग्रेजीमतानुसारेण जन्मतिथ्यादिकम् ९ जून सन् १९०६ ई० । शुभं भूयात्।

जन्मकालिक स्पष्टसूर्यादिग्रहचक्रम्

ग्रहाः	सू.	चं.	मं.	बु.	वृ.	शु.	श.	रा.	के.
राशि	१	८	०२	०१	१	०२	१०	०३	०९
अंश	२५	२६	०५	२३	२६	२३	१९	२२	२२
कला	२८	४५	४६	४३	२८	३७	१०	१७	१७
विकला	५२	४७	४८	११	४५	३९	२१	४९	४९
गति	५७	००	४०	१११	१३	७८	०१	०३	०३
	१४	००	१४	५६	२८	०८	५७	११	११
चार	मार्गी	शीघ्र	मा०	मा०	मा०	मा०	मा०	वक्र	व०

अथ जन्मलग्नचक्रम्



आगामी (आगे आने वाले) वर्ष के साधन का क्रम-

सौरवर्षदिनाद्येन हतेनाब्दाः कतुल्यजः ।
जन्मोत्थद्युगणेनाढ्या ईज्याद् वर्षमुखे गणः ।।

सौरवर्ष ३६५ दिन १५ घड़ी ३१ पल और ३० विपल का होता है । जन्मसंवत् को वर्तमान संवत् में हीन करने से गतवर्ष होता है । गतवर्षों को सौरवर्ष के

दिनादिक से गुणा करना । गुणनफल में जन्मकाल का ब्रह्मतुल्य (ब्रह्मसिद्धान्त के करणकुतूहल ग्रन्थ) का सावयव (जन्मसमय के इष्ट के घड़ी-पल-विपल सहित) अहर्गण युक्त करना । इस क्रम से वर्षप्रवेश के समय का सावयव (वर्ष प्रवेश काल के इष्ट की घड़ी-पल-विपल) अहर्गण बनता है ।

नोट : ब्रह्मतुल्य अहर्गण का वार गुरुवार से आरंभ होता है । अहर्गण में ७ से भाग देने पर जो शेष बचे, उस तक गुरुवार से गिनने पर वर्षप्रवेश का वार होता है।

ग्रहलाघव के अहर्गण से ब्रह्मतुल्य का अहर्गण बनाने का क्रम - ग्रहलाघव के अहर्गण के सर्वदिन में १२३११३ युक्त करके ४०१६ से भाग देना, जो लब्धि आयेगी वह चक्र है । चक्र को पृथक् रखना । चक्र से ४०१६ को गुणा करना। गुणनफल को ग्रहलाघव के अहर्गण के सर्वदिन में १२३११३ मिली हुई संख्या में युक्त करना । इस क्रम से ब्रह्मतुल्य अहर्गण बन जाता है ।

ग्रहलाघव के अहर्गण से ब्रह्मतुल्य के अहर्गण बनाने का कल्पित उदाहरण - ग्रहलाघवीय अहर्गण के सर्वदिन १४१०५५ है । इसमें १२३११३ युक्त किये तो २६४१६८ हुए । इसमें ४०१६ से भाग दिया तो ६५ लब्धि आयी, यह चक्र है । इससे ४०१६ को गुणा किया तो २६१०४० हुये । इस संख्या को पूर्वोक्त संख्या २६४१६८ में युक्त किया तो ५२५२०८ हुए । यही ब्रह्मतुल्य का अहर्गण बना । इसमें ७ से भाग दिया तो ६ शेष बचे । शून्य बचने पर गुरुवार होता है । आगे क्रम से गणना करने पर बुधवार आया ।

अहर्गण के द्वारा वर्षप्रवेश की तिथि, मास तथा शक लाने का क्रम - अहर्गण की समस्त दिन की संख्या में ३ युक्त करना । जो संख्या हो उसे दो ज़गह लिखना । पहिली जगह की संख्या में ६९२ से भाग देना । जो लब्धि आये उसे दूसरी जगह की संख्या में युक्त करके ६३ से भाग देना । जो लब्धि आती है उसे 'ऊनाह' कहते हैं । इस ऊनाह को अहर्गण के सर्वदिन की संख्या में युक्त करना, फिर ३० से भाग देना । जो शेष बचे उसमें १ युक्त करना । जो संख्या होती है, वह वर्षप्रवेश की तिथिसंख्या होती है । चैत्र शुक्ला प्रतिपदा से उस संख्या तक गिनना । जो तिथि आयेगी वह वर्षप्रवेश की तिथि होगी ।

उपर्युक्त क्रम से बनाये गये ऊनाह को अहर्गण की सर्वदिन संख्या में युक्त करके ३० से भाग देना, जो लब्धि आयेगी वह मासगण होगा । मासगण को २ से गुणा करके ६६ युक्त करना । फिर इस संख्या को दो जगह रखना । पहिली जगह ९२८ से भाग देना जो लब्धि आये उसे दूसरी जगह की संख्या में हीन करना । जो शेष बचे, उसमें ६७ से भाग देना । जो लब्धि आये, उसे पूर्वोक्त मासगण में से हीन करना । जो शेष बचे उसमें १२ से भाग देना, जो शेष बचे उस तक चैत्र शुक्ला प्रतिपदा से गिनना। जो मास आयेगा वह गत मास होगा और उससे अगला मास वर्षप्रवेश का मास होगा।

पूर्वोक्त मासगण को १२ से भाग देने पर जो लब्धि आती है उसे 'गताब्दसमूह' कहते हैं । गताब्दसमूह में ११०५ मिलाने पर वर्षप्रवेश का शालिवाहन शक होता है।

शक में १३५ युक्त करने पर वर्षप्रवेश का विक्रम संवत् होता है ।

इस प्रकार अहर्गण के द्वारा वर्षप्रवेश का वार, इष्ट के घड़ी-पल-विपल, तिथि, मास और शक तथा संवत् निकल आता है ।

प्रत्येक के उदाहरण -

१. ग्रहलाघव के अहर्गण से ब्रह्मतुल्य का अहर्गण बनाने का उदाहरण - ग्रहलाघवीय अहर्गण के सर्वदिन १४१०५५ है । इसमें पूर्वोक्त क्रम के अनुसार ब्रह्मतुल्य का अहर्गण बनाया तो ५२५२०८ ब्रह्मतुल्य का अहर्गण बना । इसी से सब क्रियाएँ होंगी ।

२. सावयव ब्रह्मतुल्य का अहर्गण साधन करने का उदाहरण - ब्रह्मतुल्य के अहर्गण के आगे क्रमशः इष्टकाल के घड़ी १७ पल ५९ आदि रखें तो ५२५२०८ । १७/५९/ यह ब्रह्मतुल्य का प्रथम-सावयव-अहर्गण बना ।

३. ब्रह्मतुल्य से आगामी ६१ वर्ष के प्रवेश समय का सावयव अहर्गण साधन करने का उदाहरण - ६१वें वर्ष का प्रवेश है, अतः गताब्द (बीता वर्ष) ६० है । सौरवर्ष ३६५ । १५/३१/३० को गताब्द ६० से गुणा किया तो २१९००/९०० । १८६०/१८०० हुए । इनमें अंतिम सख्या को ६० से भाग दिया तो ३० लब्धि आयी और २० शेष बचा । शून्य को अंतिम संख्या १८०० के स्थान में रखा और लब्धि ३० को ऊपर की १८६० संख्या में युक्त किया तो १८९० हुए । इनमें ६० से भाग दिया तो ३१ लब्धि आयी और शेष शून्य बचा । शून्य को १८९० के स्थान में रखा और लब्धि को ऊपर की संख्या ९०० में युक्त किया तो ९३१ हुए । इनमें ६० से भाग दिया तो १५लब्धि आयी और ३१ शेष बचे । इन्हें ९३१ के स्थान में रखा और १५ लब्धि को ऊपर की संख्या २१९०० में युक्त किया तो २१९१५ हुए । इन्हें अनुपात से रखा तो २१९१५/३१/०/० हुआ । इसमें ब्रह्मतुल्य का जन्मकालिक सावयव अहर्गण ५२५२०८/१७/५९ युक्त किया तो ५४७१२३/४८/५९/० यह ६१वें वर्ष के प्रवेशकाल का सावयव अहर्गण हुआ । ५४७१२३ में ७ से भाग दिया तो ३ शेष बचे । गुरुवार से गिनने पर शनिवार आया । यहाँ फलित हुआ कि शनिवार को ४८ घड़ी ५९ पल पर ६१वें वर्ष का आरंभ होगा ।

नोट - वर्षप्रवेश का वार तथा इष्ट के घड़ी-पल तो निकल आये, वर्ष का आंरभ किस शक के किस मास में और किस तिथि को होगा ? यह जानने के लिए पूर्वोक्त क्रमों के उदाहरण दिये जाते हैं ।

अहर्गण से वर्षारंभ की तिथि निकालने का उदाहरण - वर्षप्रवेश काल के ब्रह्मतुल्य अहर्गण ५२५२०८ में ३ युक्त किये तो ५२५२११ हुए । इनको दो जगह रखा- ५२५२११/५२५२११ । पहिली जगह के ५२५२११ में ६९२ से भाग दिया तो ७५८ लब्धि आयी । इसे दूसरी जगह के ५२५२११ में युक्त किया तो ५२५९६९ हुये । इनमें ६३ से भाग दिया तो ८३४८ लब्धि आयी । इसे अहर्गण ५२५२११ में युक्त किया तो ५३४१५९ हुए । इनमें तीस से भाग दिया तो ९ शेष बचे। इसमें १ युक्त किया तो १० हुए । यहाँ यह फलित हुआ कि १०वीं तिथि को वर्षप्रवेश

होगा । चैत्र शुक्ला प्रतिपदा तिथि से १० तक गिना तो शुक्ल पक्ष की दशमी तिथि आयी । अर्थात् शुक्ल पक्ष की दशमी तिथि में वर्षप्रवेश होगा ।

नोट - अब वार इष्ट, के घड़ी-पल तथा तिथि निकल आयी, अब मास जानना है।

अहर्गण से वर्षप्रवेश के मास के निकालने का उदाहरण - अहर्गण ५२५२११ को ३० से भाग दिया तो १७५०७ लब्धि आयी । यह मासगण है । इसे २ से गुणा किया तो ३५०१४ हुए । इनमें ६६ युक्त किये तो ३५०८० हुए । इनको दो जगह रखा -३५०८०/३५०८० पहली जगह ९२८ से भाग दिया तो ३७ लब्धि आयी । इसे दूसरी जगह के मासगण में हीन किया तो ३४९७७ हुए । इनको ६७ से भाग दिया तो ५२२ लब्धि आयी । इसे पूर्वोक्त मासगण १६९७४/१७५०७ में हीन किया तो १६९८५ शेष बचे । इनमें १२ से भाग दिया तो ५ शेष बचे । चैत्र शुक्ला प्रतिपदा से गिना तो फाल्गुन शुक्ला प्रतिपदा तक ११ मास हुए । यह गत मास है । इसके आगे चैत्र शुक्ला तक १२ मास है । पूर्व उदाहरण में तिथि, कृष्ण पक्ष की एकादशी आयी है । अत: फलित हुआ कि वैशाख कृष्णा एकादशी को वर्षारंभ होगा।

वर्षप्रवेश के शक के निकालने का उदाहरण - पूर्वोक्त मासगण १६९५४ को १२ से भाग दिया तो १४१२ लब्धि आयी । यह 'गताब्दसमूह' है । इसमें ११०५ युक्त किये तो २५१७ हुए । यह वर्षप्रवेश का शालिवाहन शक है ।

अब गताब्द से वर्षप्रवेश निकालने का क्रम प्रस्तुत किया जाता है-

सौरवर्ष का अर्थ - सिद्धान्तशिरोमणि ग्रन्थ में श्रीभास्कराचार्य ने उल्लेख किया है- 'खेश्वक्रभोगोर्कवर्षं प्रदिष्टम्' अर्थात् सूर्य द्वारा राशिचक्र के भोग को सौरवर्ष कहा जाता है ।

संवत् की प्रवृत्ति का समय - 'मधो: सितादेर्दिनमासवर्षयुगादिकानां युगपत् प्रवृत्ति:'=अर्थात् चैत्र शुक्ला प्रतिपदा से संवत् की प्रवृत्ति होती है ।

शक की प्रवृत्ति का समय - 'वर्षायनर्तुयुगपूर्वकमत्र सौरात्'=अर्थात् मेष की संक्रान्ति के दिन से शक की प्रवृत्ति आरंभ होती है ।

नोट - शक आरंभ होने से पहिले का वर्ष बनाना हो तो पहिले शक से बनाना। उदाहरणार्थ जैसे- वैशाख शुक्ला तृतीया को मेषसंक्रान्ति होगी तो इसी दिन से शक का आरंभ होगा। यदि वैशाख कृष्णा तृतीया का वर्ष बनाना है तो पहिले शक से बनेगा ।

गताब्द का अर्थ - अभीष्ट शक में अर्थात् जिस शक में बनाना है, उस शक में जन्म के शक को हीन करना, जो शेष बचेगा उसे गताब्द कहा जायेगा ।

वर्षप्रवेश का समय - जन्म समय के सूर्य के समान सूर्य जिस दिन और जिस समय आते हैं, उसी समय वर्ष का प्रवेश होता है ।

वर्षप्रवेश के वार, इष्ट के घड़ी और पल आदि निकालने का क्रम - गताब्द या गत वर्षों को १००७ से गुणा करना । जो गुणनफल आये उसमें ८०० से भाग देना । लब्धि को पृथक् रखना । शेष को ६० से गुणा करके ८०० से भाग देना । लब्धि को पृथक् रखना । शेष को ६० से गुणा करके ८०० से भाग देना। लब्धि को पृथक् रखना । शेष को ६० से गुण करके ८०० से भाग देना । लब्धि को

पृथक् रखना। इस प्रकार चार लब्धियाँ लेनी। लब्धियों को अनुपात से रखना। पहिली लब्धि को वार जानना। दूसरी लब्धि को इष्ट की घड़ी, तीसरी को पल और चौथी को को विपल जानना।

पूर्वोक्त क्रम से आयी हुई लब्धियों में जन्म के वार की संख्या तथा इष्ट के घड़ी-पल और विपल युक्त करने। जो फल होगा वह वर्षप्रवेश का वार तथा इष्ट के घड़ी-पल और विपल होंगे।

वार की संख्या ७ से अधिक हो तो ७ से भाग देना। जो शेष बचे, उस तक रविवार से गिनना, जो वार आयेगा वह वर्षप्रवेश का वार होगा।

वर्ष प्रवेश के वार, इष्ट के घड़ी-पल आदि निकालने का उदाहरण- जन्म का शक १८२८। आषाढ़-कृष्णा तृतीया शनिवार। जन्मकालिक इष्ट १७/५९ स्पष्ट सूर्य १/२५/२८/५२/ स्पष्ट चंद्र ८/२६/४५/४७। स्पष्ट जन्मलग्न ५/१०/४७/२७।

शक १८८८ में वर्ष बनाना है। अत: शक १८८८ में जन्म शक १८२८ को हीन किया तो ६० शेष बचे। यही गताब्द या गतवर्ष है।

गताब्द को १००७ से गुणा किया तो ६०×१००७= ६०४२० हुए। इनमें ८०० से भाग दिया तो ७५ लब्धि आयी और ४२० शेष बचे। लब्धि पृथक् रखी और शेष ४२० को ६० से गुणा किया तो २५२०० हुए। इनमें ८०० से भाग दिया। ३१ लब्धि आयी और शेष ४०० बचे। लब्धि पृथक् रखी और शेष ४०० को ६० से गुणा कर के ८०० से भाग दिया तो ३० लब्धि आयी और शून्य शेष बचा। शून्य बचने के कारण आगे की क्रिया समाप्त हो गयी। लब्धियों को अनुपात से रखा ७५/३१/३० हुईं। इनमें जन्म के शनिवार की संख्या और जन्म के इष्ट की १७ घड़ी और ५९ पल युक्त किये $\frac{७/१७/४९}{८/४९/२९}$ तो वर्षप्रवेश के ८२ वार, इष्ट की ४९ घड़ी और २९ पल हैं। ८२ वार में ७ से भाग दिया तो ५ शेष बचे। अत: वर्षप्रवेश का वार गुरुवार है और इष्ट की ४९ घड़ी तथा २९ पल पर वर्षप्रवेश है।

वर्ष प्रवेश की तिथि निकालने का क्रम - गताब्द या गतवर्षों को ग्यारह से गुणा करके दो जगह रखना। पहिली जगह १७० से भाग देना। जो लब्धि आये, उसे दूसरी जगह रखी संख्या में युक्त करना, फिर शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से जन्मतिथि तक गिनने पर जो संख्या आये, उसे युक्त करना। फिर ३० से भाग देना, जो शेष बचे उस तक शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से गिनना, जो संख्या आयेगी वह वर्षप्रवेश की तिथि होगी।

नोट - जन्म के सूर्य के अंश जिस वार में मिले वही वर्षप्रवेश का दिन है। वर्षप्रवेश में वार की ही प्रधानता है।

यदि उक्त क्रम से लायी गयी वर्षप्रवेश की तिथि ठीक न मिले तो यह क्रम करना। यदि तिथि से वर्ष प्रवेश का वार पहिले हो तो तिथि में १ या २ कम करना और यदि तिथि से वार आगे हो तो तिथि में १ या २ मिला देना। इस प्रकार तिथि ठीक हो जाती है।

वर्षप्रवेश की तिथि निकालने का उदाहरण - गताब्द या गतवर्ष ६० हैं। इनको ११ से गुणा किया तो ६६० हुए। इनको दो जगह रखा /६६०/६६०। **पहली**

जगह के ६६० में १७० से भाग दिया तो ३ लब्धि आयी । इसे दूसरी जगह स्थापित ६६० में मिलाया तो ६६३ हुए । आषाढ़ कृष्णा तृतीया जन्मतिथि है । इस तक शुक्ल प्रतिपदा से गिना तो १८ हुए । इन्हें ६६३ में युक्त किया तो ६८१ हुए । इनमें ३० से भाग दिया तो २१ शेष बचे । शुक्ला प्रतिपदा से २१ तक गिना तो कृष्णपक्ष की षष्ठी तिथि आयी । पूर्वोक्त गणित से आया उस दिन गुरुवार भी है ।

जन्म के वृषार्क गतांश २५ है । संवत् २०२३ के वृष के सूर्य के २५ गतांश पर आषाढ़ कृष्णा षष्ठी तिथि है ।

पूर्वोक्त क्रम से वर्षप्रवेश काल का इष्ट ४९/२९ है । अत: आषाढ़ कृष्णा षष्ठी गुरुवार को ४९ घड़ी २९ पल पर वर्षप्रवेश होगा ।

वर्षप्रवेश का लग्न लाने का क्रम - गताब्द या गतवर्ष को ३ से गुणा करके दो जगह रखना । पहिली जगह १० से भाग देना, जो लब्धि आये उसे दूसरी जगह रखी संख्या में युक्त करना, फिर जन्मलग्न की संख्या को युक्त करना, जो योग आये उसमें १२ से भाग देना, जो शेष बचे उस तक मेषलग्न से गिनना । वही उस वर्ष का वर्ष लग्न होता है। यह स्थूलमान (मोटा हिसाब) है । सूक्ष्ममान तो लग्नस्पष्ट करना ही है।

वर्षप्रवेश का लग्न लाने का उदाहरण - गताब्द ६० हैं । जन्मलग्न कन्या है । गताब्द ६० को इसे गुणा किया १८० हुए । इन्हें दो जगह रखा । १८०/१८०। पहिली जगह के १८० में १० से भाग दिया तो १८ लब्धि आयी । इसे दूसरी जगह रखे १८० में युक्त किया तो १९८ में हुए । इसमें जन्मलग्न कन्या की ६ राशि युक्त की तो २०४ हुए । इनमें १२से भाग दिया तो शून्य शेष बचा । मेष से गिना तो बारहवाँ मीनलग्न आया । यह वर्षप्रवेश का लग्न है ।

नोट - इसी प्रकार वर्षप्रवेश के नक्षत्र-योग आदि भी निकल आते हैं । उन्हें पंचांग से ही जान लेना ।

वर्षप्रवेश का वार तथा इष्टकाल निकालने का अन्य क्रम - गताब्द को तीन स्थानों में रखना । पहिली जगह गताब्द की संख्या को सवाया करके रखना । दूसरी जगह गताब्द की आधी संख्या रखना । तीसरी जगह गताब्द की ड्योढ़ी संख्या रखना । पूर्वोक्त सवायी की गयी संख्या में जन्म के वार की संख्या, आधी की गयी संख्या में जन्मकाल के इष्ट की घड़ी और ड्योढ़ी की गयी संख्या में जन्म के इष्ट के पल को युक्त करना । विपल में ६० या ६० से अधिक हों तो ६० से भाग देकर शेष को उसके स्थान में रखना और लब्धि को ऊपर की संख्या यानी पल की संख्या में युक्त करना । यह क्रिया घड़ी तक हो । घड़ी की संख्या को ६० से भाग देकर लब्धि को वार की संख्या में मिलाना । यदि वार की संख्या ७ से अधिक हों तो ७ से भाग देकर जो शेष बचे, उस तक रविवार से गिनना जो वार आये वही वर्षप्रवेश का वार है तथा पूर्वोक्त वर्षप्रवेश के इष्ट के घड़ी-पल हैं ।

नोट - सुगमता के लिए वर्षसारिणी है। उससे गताब्द के कोष्ठ के ध्रुवांक लेकर उनमें जन्म के वार की संख्या तथा जन्मेष्ट के घड़ी-पल युक्त करने से वर्षप्रवेश का वार तथा इष्टकाल होता है।

गताब्द को तीन जगह रखा $\begin{matrix}६०/६०/६०\\ ७५/३०/६०\\ ७/१७/४९\end{matrix}$ $\overline{८२/४७/१४९}$ पहिली जगह वार, दूसरी जगह जन्मेष्ट की घड़ी और तीसरी जगह जन्मेष्ट के पल युक्त किये तो ८२/४७/१४९ हुए।१४९ पल में ६० से भाग दिया तो २ लब्धि आयी और २९ शेष बचे। २९ को पल के स्थान में रखा। २ लब्धि को ऊपर ४७ घड़ी में युक्त किया तो ४९ हुए। वार की संख्या में ८२ हैं। इन्हें ७ से भाग दिया तो ५ शेष बचे। रविवार से गिना तो गुरुवार आया। वृषार्कगतांश २५ पर देखा तो संवत् २०२३ शक १८८८ के पंचांग में आषाढ़ कृष्णा षष्ठी गुरुवार है। अतः इसी दिन सूर्योदय काल से ४९ घड़ी २९ पल पर वर्षप्रवेश है। इस इष्टकाल पर लग्नसारिणी से सूर्यफल धृषार्गगतांश २५ को लेकर युक्त किया तो

सूर्यफल इष्ट $\begin{matrix}४९/२९\\ १०/५४/३०\\ ००/२३/३०\end{matrix}$ हुआ। इसे लग्नसारिणी में देखा तो मीनराशि के सामने १० अंश के नीचे के कोष्ठ में ०/२१/५४ है, अतः लग्नफल इससे आगे निकल गया है और ११ अंश के नीचे के कोष्ठ में ०/२९/१२ है। यह सूर्यफल से कम है। अतः पूर्वोक्त लग्नफल भी ११ अंश में माना जायेगा। लग्न के स्पष्ट में प्रथम एक कम की गयी राशि की संख्या, फिर अंश की संख्या तदनंतर कला-विकला आदि की संख्या, रखी जायेगी। जैसे यहाँ ११/११/००/२३/३० मीनलग्न का स्पष्ट है। यह स्पष्ट लग्नसारिणी के द्वारा है।

वर्षसारिणी के द्वारा वर्षप्रवेश निकालने का उदाहरण - गताब्द ६० है। वर्षसारिणी में ६० गताब्द के कोष्ठ में ५/३१/३०/० ध्रुवांक हैं। इनमें जन्मकाल के शनिवार की संख्या तथा जन्मेष्टकाल १७/५९ युक्त किये तो $\begin{matrix}५/३१/३०/०\\ ७/१७/५९\end{matrix}$ $\overline{१२/४९/२९/०}$ १२ वार वर्षप्रवेश काल के इष्ट की ४९ घड़ी २९ पल और शून्य विपल है। वार १२ है जो कि ७ से अधिक हैं, अतः इनमें ७ से भाग दिया तो ५ शेष बचे। रविवार से ५ तक गिना तो गुरुवार आया।

संवत् २०२३ के पंचांग में देखा तो वृष के सूर्य के २५ अंश पर आषाढ़ कृष्णा षष्ठी को गुरुवार है। यहा वर्षारंभ की तिथि और वार है। इष्टकाल पर मीनलग्न है। यही वर्षलग्न है।

वर्षप्रवेश-सारिणी

गताब्द	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
वार	१	२	३	०५	६	००	१	३	४	५	६	१
घड़ी	१५	३१	४६	०२	१७	३३	४८	४	१९	३५	५०	०६
पल	३१	०३	३४	०६	३७	०९	४०	१२	४३	१५	४६	१८
विपल	३०	००	३०	००	००	००	३०	००	३०	००	३०	००
गताब्द	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४
	०२	०३	०४	०६	००	१	२	४	५	६	००	२
	२१	३७	५२	०८	२३	३९	५४	१०	२६	४१	५७	१२
	४९	२१	५२	२४	५५	२७	५८	३०	०१	३३	४	३६
	३०	००	३०	००	३०	००	३०	००	३०	००	३०	००

२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	३२	३३	३४	३५	३६	३७	३८	३९	४०	४१	४२	४३
३ २८ ७ ३०	४ ४३ ३९ ००	५ ५९ ९० ३०	० १४ ४२ ००	१ ३० १३ ३०	२ ४५ ४५ ००	४ १ १६ ३०	५ १६ ४८ ००	६ ३२ १९ ३०	० ४७ ५१ ३०	३ १८ २२ ३०	३ १८ ५४ ३०	४ ३४ २५ ३०	५ ४९ ५७ ००	० ५ २८ ३०	१ २९ ०० ३०	२ ३६ ३१ ३०	३ ५२ ३ ००	५ ७ ३४ ३०
४४	४५	४६	४७	४८	४९	५०	५१	५२	५३	५४	५५	५६	५७	५८	५९	६०	६१	६२
.६ २३ .६ ००	१ ५४ ९ ००	.३ २५ .९ ३०	४ २५ १२ ००	५ ४० ४३ ३०	६ ५६ १५ ००	१ १२ १६ ३०	२ २७ १८ ००	३ ४२ १९ ३०	४ ५८ २१ ००	५ १२ ५२ ३०	६ २३ २४ ००	० २९ २४ ००	१ ४४ ५५ ३०	३ ०० २७ ००	४ १५ ५८ ३०	०५ ३१ ३० ००	.३ ४७ .१ ३०	१ २ ३३ ००
४३	४४	४५	४६	४७	४८	४९	५०	५१	५२	५३	५४	५५	५६	५७	५८	५९	६०	६१
०२ ४८ ३३ ३०	०३ ३३ ३६ ३०	०४ ४९ ३९ ३०	०५ ०४ ०७ ३०	०६ २० ३९ ३०	०१ ५१ ४३ ३०	०२ ५ ४३ ३०	४ ६ २२ ३०	५ २२ ३७ ३०	६ ३७ ४८ ३०	०० ५३ ४९ ३०	०२ ०८ ५१ ३०	०३ २४ ३९ ००	०४ ३९ ५४ ३०	०५ ५४ २५ ३०	० १० ५७ ३०	१ २० २८ ३०	२ ४२ ०० ३०	०२ ५७ ३१ ३०
८२	८३	८४	८५	८६	८७	८८	८९	९०	९१	९२	९३	९४	९५	९६				
०५ ४३ ०३ ३०	०६ २८ ३४ ००	०० २४ ३७ ००	१ ५९ ३० ००	३ ०४ ४० ३०	०४ ४६ १२ ००	०० ०१ १७ ३०	०१ ३२ ४६ ३०	०२ ३३ ४५ ००	०३ ४८ १८ ३०	०४ ०३ ४९ ३०	०५ ०३ ४९ ३०	०६ ४९ २२ ३०	०० ३४ ५२ ३०	०१ ०५ २४ ००				

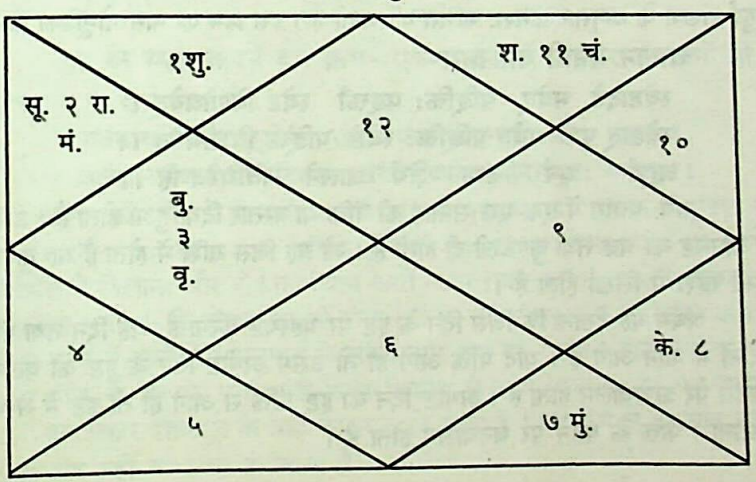
नोट- ज्यौतिषशास्त्र में आयु के तीन विभाग माने गये हैं-१. अल्प । २. मध्य। ३. दीर्घ । जन्म से ३२ वर्ष तक की अवस्था अल्पायुः है। ३३ वर्ष की अवस्था से ६४ वर्ष की अवस्था तक मध्यायुः या मध्यमायुः है । ६५ वर्ष की अवस्था से ९६ वर्ष की अवस्था तक दीर्घायुः है । अतएव वर्ष सारिणी में ९६ गताब्द या गतवर्ष तक के ध्रुवांक दिये गये हैं । वर्षसारिणी के द्वारा वर्षप्रवेश काल निकालने में बड़ी सरलता रहती है ।

वर्षपत्र में पंचांग सहित वर्ष लिखने का स्वरूप प्रस्तुत किया जाता है । पहिले जन्मपत्रिका लिखनी, उसका स्वरूप पहिले दिया जा चुका है । वर्षपत्र का स्वरूपः- श्रीसीतारामचन्द्राभ्यां नमः । श्रीराधाकृष्णाभ्यां नमः । श्रीसरस्वत्यै नमः ।

ज्ञानानन्दमयं देवं निर्मलस्फटिकाकृतिम् ।
आधारं सर्वविद्यानां हयग्रीवमुपास्महे ।।
आदित्यादिग्रहाः सर्वे नक्षत्राणि च राशयः ।
दीर्घमायुः प्रयच्छन्तु यस्यैषा वर्षपत्रिका ।।

अथ श्रीमन्नृपतिविक्रमार्कसंवत्सरे २०२३ शालिवाहनीयशकवत्सरे १८८८ आषाढमासे कृष्णे दले षष्ठ्यां गुरुवासरे ३०/३६ घनिष्ठानक्षत्रे ३०/३१ वैधृतियोगे २४/१७ ववकरणे ३०/३६ विष्टिकरणे ६०/० एवं पञ्चाङ्गशुद्धौ सौम्यायने सौम्यगोले ग्रीष्मर्तौ दिनमानम् ३३/४९ रात्रिमानम् २६/११ अनयोर्द्वयोरैक्यादहोरात्रम् ६०/० वृषार्क-गतांशाः २५ भोग्यांशाः ०५ श्रीमन्मार्तण्डमण्डलोद्वर्षप्रवेशकालिकेष्टम् ४९/२९/० वर्ष-प्रवेशकालिकमीनलग्नस्पष्टम् ११/११/००/२३/३० अंग्रेजीमतानुसारेण प्रवेशकालिक-तिथ्यादिकम् १० जून सन् १९६६ ई०। गतर्क्षम् ४७/१८/सर्वर्क्षम् ६६/३४ अत्र शुभखेटावलोकितसमये श्रीमतः आयुष्मतः पण्डितवर्यसुदर्शनाचार्य्यशास्त्रिणो वर्षप्रवेशोऽभूत् । शुभमस्तु । मङ्गलमस्तु । श्रीरस्तु ।

अथ वर्षलग्नकुण्डलिका



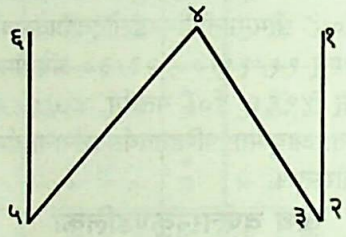
अब ग्रहों के स्पष्ट करने का क्रम प्रस्तुत किया जायेगा । तदनन्तर द्वादश भावों के स्पष्ट करने का क्रम दिया जायेगा । ग्रहस्पष्ट तथा भावस्पष्ट हो जाने पर ही आगे की गणित चलती है ।

ग्रहस्पष्ट से यह पता लगता है कि ग्रह किस राशि के कितने अंश, कितनी कला और कितनी विकला में है । अतएव ग्रहस्पष्ट में प्राय: चार संख्याएँ होती हैं । ऊपर से नीचे को क्रमश: राशि, अंश, कला और विकला होती है । राशि के अंक में १ कम करके लिखा जाता है । कारण कि एक राशि अंश-कला-विकला में विभक्त हो जाती है।

ग्रहस्पष्ट का क्रम - ग्रहस्पष्ट करने के लिए चालन बनाया जाता है । चालन के दो भेद हैं- १. ऋण चालन । २. धन चालन । पचांग में दिये गये प्रस्तार या पंक्ति के ग्रह के स्पष्ट में ऋणचालन के द्वारा लाया गया मार्गी (सीधी चाल से चलने वाले) ग्रह का स्पष्ट घटता है और वक्र (उलटी चाल से चलने वाले) ग्रह का स्पष्ट जुड़ता है। धनचालन में पूर्वोक्त क्रम के विपरीत होता है । अर्थात् धनचालन में मार्गी ग्रह का स्पष्ट जुड़ता है और वक्र ग्रह का स्पष्ट घटता है ।

चालन को ग्रह की गति से गोमूत्रिका की रीति से गुणा किया जाता है ।

गोमूत्रिका रीति का रहस्य - गो का अर्थ बैल है । बैल का मूत्र पृथ्वी पर गिरकर एक आकार-विशेष को धारण करता है, उस आकार विशेष को गोमूत्रिका कहते है। गोमूत्रिका का स्वरूप यह है -



दी हुई संख्या के अनुसार क्रमश: गणित की जाती है । इस क्रम का नाम गोमूत्रिका क्रम है-

चालन बनाने का क्रम-

स्वेष्टादग्रे भवेत् पङ्क्तिः पङ्क्तौ स्वेष्टं विशोधयेत् ।
स्वेष्टात् पृष्ठे भवेत् पङ्क्तिः स्वेष्टे पङ्क्तिं विशोधयेत् ।।
ऋणं धनं तथा ज्ञेयं चालने विधिरेव हि ।।

प्राय: पंचांग में एक-एक सप्ताह की पंक्ति या प्रस्तार दिया हुआ होता है । उसी के साथ ग्रहस्पष्ट का चक्र तथा कुण्डली दी होती है । जो ग्रह जिस राशि में होता है वह कुण्डली में उसी राशि में लिखा होता है ।

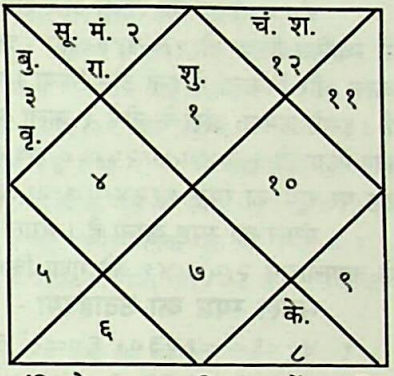
प्रथम यह देखना कि जिस दिन के इष्ट पर ग्रहस्पष्ट करना है, वह दिन तथा पंक्ति, इन दोनों में कौन आगे है । यदि पंक्ति आगे हो तो उसमें अभीष्ट दिन के इष्ट को घटाना। इष्ट घटने पर ऋणचालन होता है । अभीष्ट दिन का इष्ट पंक्ति से आगे हो तो इष्ट में से पंक्ति को घटाना । पंक्ति के घटने पर धनचालन होता है ।

घटाने का क्रम - घटाने में पंक्ति के दिन का वार तथा मिश्रमान के घड़ी-पल लेने। इसी प्रकार इष्ट के दिन का वार तथा इष्ट के घड़ी-पल लेने। वार के अंक लिये जाते हैं। रविवार से शनिवार तक क्रम से १ से लेकर ७ अंक होते हैं। घटाने का क्रम वायीं ओर से आरंभ होगा। घटाने में यदि पल न घट सकते हों तो घड़ियों में से १ घड़ी लेकर उसके ६० पल बनाकर उन्हें पलों में मिलाकर उनसे घटाना। इसी प्रकार घड़ी न घटे तो वार से १ वार लेकर उसकी ६० घड़ी बनाकर घड़ियों में मिलाकर उनसे घटाना। यदि वार न घटे तो ऊपर से ७ मिलाकर घटाना।

चालन बनाने का उदाहरण - संवत् २०२३ शक १८२८ आषाढ़ कृष्णा षष्ठी गुरुवार को वर्षप्रवेशकालिक इष्ट ४९/२९।

पंक्ति - आषाढ़ कृष्णा अष्टमी शनिवार मिश्रमान ४७/१०

ग्रह	सू.	चं.	बु.	बृ.	शु.	श.	रा.	के.
राशि	१	१	२	२	०	११	०१	०७
अंश	२४ २६	१५	१४	१४	२०	४	२	२
कला	५१	२९	४	४२	२३	०	४८	४८
विकला	२५	५७	२४	५७	१०	३१	०९	९
गते कला	५७	४२	१०९	१३	७१	२	३	३
विक.	०१	३०	३३	१०	२३	५९	११	११
	मा.	मा.	मा.	मा.	मा.	मा.	व.	व.



यहाँ इष्ट दिन से पंक्ति आगे है। अत: पंक्ति के वार तथा मिश्रमान में इष्ट दिन के वार तथा इष्टकाल के घड़ी पल घटाये तो $\frac{७ \,/\, ४७ \,/\, १०}{५ \,/\, ४९ \,/\, २९}$ न घट सके तो पूर्वोक्त

$$१ \,/\, ५७ \,/\, ४१$$

रीति से घटाना पड़ा। १/५७/४१ शेष बचे। यही ऋण चालन हुआ।

ग्रह के स्पष्ट करने का क्रम- एक चन्द्रमा को छोड़कर शेष सभीग्रहों का स्पष्ट चालन के द्वारा होता है।

गतगम्यदिनाहतद्युमुक्तेः खरसाप्तांशवियुग्युतो ग्रहः स्यात्।
तत्कालभवस्तथा घटिघ्नाः खरसैर्लब्धकलनोनसंयुतः स्यात्॥

चालन को पंक्ति में दी गयी ग्रह की गति से गुणा करना। पूर्वोक्त गोमूत्रिका रीति से गुणा करना। ६० या ६० से अधिक होने पर ६० से भाग देकर लब्धि को आगे के गुणितफल में मिलाना और शेष का त्याग करते जाना। यह क्रम नंवर ५ के गुणित फल तक चलेगा। नं० ५ के शेषक को भी लेना। नं. ६ के गुणित फल की लब्धि और शेष दोनों ही कार्य में आते हैं। अनुपात से लब्धि और शेष को रखना। फिर इन्हें चालन के अनुसार पंक्ति के ग्रह के स्पष्ट अंश-कला-विकला में ऋण (घटाना) या धन (जोड़ना) करना। इस प्रकार इष्टकाल के ग्रहों का स्पष्ट हो जाता है। इस क्रम से एकमात्र चंद्र को छोड़कर शेष ग्रहों का स्पष्ट हो जाता है।

ग्रह स्पष्ट करने का उदाहरण- धनचालन २/५७/४१ है । सूर्य का स्पष्ट करना है । पंक्ति में सूर्य की गति ५७ कला और १ विकला है । क्रमशः गणित (गोमूत्रिकारीति) दी जाती है ।

१. ४१ × १ = ४१÷६० = ० लब्धि ।

२. ४१ × ५७ = २३३७÷६० = $\overset{+}{३७}$ लब्धि /५७ शेष का त्याग ।

३. ५७ × १ = ५७+३८ = ९५÷६० = $\overset{+}{१}$ लब्धि । ३५ शेष का त्याग ।

४. ५७×५७= ३२४९ + १ = ३२५०÷ ६० = ५४ लब्धि । १० शेष का त्याग।

५. २×१=२+५४=५६÷६०= $\overset{+}{०}$ शेष शून्य का ग्रहण ।

६. २×५७=११४+०=११४÷६०=१लब्धि । शेष शून्य का ग्रहण ।

नं० ६ स्थान की लब्धि और शेष को तथा नं. ५ के स्थान के शेष को अनुपात से स्थापित किया तो १/५४/००हुए । ऋणचालन होने के कारण पंक्ति के सूर्यस्पष्ट के कला और विकला में इन्हें हीन किया । पंक्ति के सूर्य का स्पष्ट १/२६/५१/२५/०० है । इसमें क्रमशः अंश के नीचे १ कला के नीचे ५४ और विकला के नीचे शून्य रखकर हीन किया तो १/२४/५७/२५/०० शेष बचे । यहाँ यह फलित हुआ कि वर्षप्रवेशकालिक इष्ट पर सूर्य का स्पष्ट १/२४/५७/२५ है ।

मंगल का स्पष्ट करना है । मंगल की गति ४२/३० है । इससे गोमूत्रिका रीति से ऋणचालन २/५७/४१ को गुणा किया ।

मंगल स्पष्ट का उदाहरण -

१. ४१×३० =१२३०÷ ६०=२$\dot{}$ लब्धि । २ शेष का त्याग ।

२. ४१×४२=१७२२+२=१७२४÷६०=२८$\dot{}$ लब्धि । ४४ शेष का त्याग ।

३. ५७×३०=१७१०+२=१७१२÷६०=२८$\dot{}$ लब्धि । ३२ शेष का त्याग ।

४. ५७×४२=२३९४+२८=२४२२÷६०=४०$\dot{}$ लब्धि । २२ शेष का त्याग ।

५. २×३०=६०+४०=१००÷६०=१$\dot{}$ लब्धि । ४० शेष का ग्रहण ।

६. २×४०=८०+१=८१÷६०= १ लब्धि । २१ शेष ।

नंबर ६ के स्थान की १ लब्धि और २१ शेष तथा नं० ५ के स्थान के ४० शेष को अनुपात से स्थापित किया तो १/२१/४० हुए । इन्हें पंक्ति के मंगल के स्पष्ट
१ / १५ / २९ / ५७
१ / २१ / ४०
में हीन किया तो १/१४/८/१७ शेष रहे । यही वर्ष प्रवेश
१ / १४ / ०८ / १७
कालिक मंगल ग्रह का स्पष्ट है ।

अब बुध का स्पष्ट करना है । पंक्ति में बुध की गति १०९/३३ है । इससे ऋण चालन २/५७/४१ को पृथक्-पृथक् गुणा किया ।

१. ४१×३३=१३५३÷६०=२२$\dot{}$ लब्धि । शेष ३३ का त्याग ।

२. ४१×१०९=४४६९+२२=४४८१÷६०=७४$\dot{}$ लब्धि । शेष ४१ का त्याग ।

३. ५७×३३=१८८१+७४=१९५५÷६०=३२$\dot{}$ लब्धि । शेष ३१ का त्याग ।

४. ५७×१०९=६२१३+३२=६२४५÷६०=१०४$\dot{}$ लब्धि । ०५ का त्याग ।

५. २×३३=६६+१०४=१७०÷६०=२' लब्धि । शेष ५ का ग्रहण ।

६. २×१०९=२१८+२=२२०÷६०=३ लब्धि का ग्रहण । शेष ४० का ग्रहण ।

नंवर ६ के स्थान की लब्धि ३ और शेष ४० तथा नं० ५ के स्थान के ५ शेष को अनुपात से स्थापित किया तो ३/४०/५ हुए । इन्हें पंक्ति के बुध के स्पष्ट २/१४/०४/२४ में हीन किया तो २/१०/२४/१९ शेष वचे । यही वर्ष प्रवेश काल के बुध का स्पष्ट है ।

अब गुरु का स्पष्ट करना है । पंक्ति में वृहस्पति की गति १३/१० है । इससे ऋणचालन २/५७/४१ को पृथक्-पृथक् गुणा किया ।

१. ४१×१०=४१०÷६०=६' लब्धि । शेष ५० का त्याग ।

२. ४१×१३=५३३+६=५३९÷६०=८' लब्धि । शेष ५९ का त्याग ।

३. ५७×१०=५७०+८=५७८÷६०=९' लब्धि । शेष ३८ का त्याग ।

४. ५७×१०३=७४१+९=७५०÷६०=१२' लब्धि । शेष ३० का त्याग ।

५. २×१०=२०+१२=३२÷६०=० लब्धि । शेष ३२ का ग्रहण ।

६. २×१३=२६+०=२६÷६०=० लब्धि । शेष २६ का ग्रहण ।

नं. ६ के स्थान की लब्धि ० और शेष २६ तथा नं. ५ के स्थान के शेष ३२ को अनुपात से रखा तो ०/२६/३२ हुए । इन्हें पंक्ति के गुरु के स्पष्ट २/१४/४२/५७ में हीन किया तो २/१४/२६/२५ शेष बचे । यही वर्षकालिक गुरु का स्पष्ट है ।

अब शुक्र का स्पष्ट करना है । पंक्ति में शुक्र की गति ७१/२३ है । इससे ऋण चालन २/५७/४१ को गुणा किया ।

१. ४१×२३=९४३÷६०=१५' लब्धि । ४३ शेष का त्याग ।

२. ४१×७१=२९११+१५=२९२६÷६०=४८' लब्धि । ४६ शेष का त्याग ।

३. ५७×२३=१३११+४८=१३५९÷ ६०=२२' लब्धि । ३९ शेष का त्याग ।

४. ५७×७१=४०४७+२२=४०६९÷६०=६७' लब्धि । शेष ४९ का त्याग ।

५. २×२३=४६+६७=११३÷६०=१' लब्धि । शेष ५३ का ग्रहण ।

६. २×७१=१४२+१=१४३÷६०=२' लब्धि । शेष २३ का ग्रहण ।

नं० ६ के स्थान की २ लब्धि और शेष २३ को तथा नं. ५ के स्थान के ५३ शेष को अनुपात से रखा तो २/२३/५३ हुए । इन्हें पंक्ति के शुक्र के स्पष्ट ०/२०/२३ /१० में हीन किया तो शेष बचे ०/१७/५९/१७ यही वर्षप्रवेशकालिक शुक्र का स्पष्ट है ।

अब शनि को स्पष्ट करना है । पंक्ति में शनि की गति २/५९ है ।

इससे ऋणचालन २/५७/४१ को गुणा किया ।

१. ४१×५९=२४१९÷६०=४०'लब्धि । शेष १९ का त्याग ।

२. ४१×२=८२+४०=१२२÷६०=२' लब्धि । २ शेष का त्याग ।

३. ५७×५९=३३६३+२=३३६५÷६०=५६' लब्धि । शेष ५ का त्याग ।

४. ५७×२=११४+५६=१७०÷६०=२' लब्धि । शेष ५० का त्याग ।

५. २×५९=११८+२=१२०÷६०=२' लब्धि । शेष० ।

६. २×२=४+२=६÷६०=०लब्धि । ६ शेष का ग्रहण ।

नं. ६ के स्थान की शून्य लब्धि तथा ६ शेष को अनुपात से रखा तो ०/६ हुए। इन्हें पंक्ति के शनि के स्पष्ट ११/४/०/३१ में हीन किया तो ११/३/५४/३१ हुए। यही वर्षकालप्रवेश के शनि का स्पष्ट है।

अब राहु को स्पष्ट करना है। राहु की गति पंक्ति में ३/११ है। इससे ऋण चालन २/५७/४१ को गुणा किया।

१. ४१×११=४५१÷६०=७' लब्धि। शेष ३१ का त्याग।
२. ४१×३=१२३+७=१३०÷६०=२' लब्धि। शेष १० का त्याग।
३. ५७×११=६२७+२=६२९÷६०=१०' लब्धि। शेष २९ का त्याग।
४. ५७×३=१७१+१०=१८१÷६०=३' लब्धि। शेष १ का त्याग।
५. २×११=२२+३=२५÷६०=०' लब्धि। शेष २५ का ग्रहण।
६. २×३=६+०=६÷६०= ०लब्धि। शेष ६ का ग्रहण।

नं. ६ के स्थान की लब्धि ० और शेष ६ को तथा नं. ५ के स्थान के शेष २५ को अनुपात से रखा तो ०/६/२५ हुए। ऋणचालन होने के कारण इन्हें पंक्ति के राहु के स्पष्ट १/२/४८/९ में युक्त किया तो १/२/५४/३४ हुए। यही वर्षप्रवेशकालिक राहु का स्पष्ट है।

अब केतु को स्पष्ट करना है। यह ध्यान रखने की बात है कि सदैव राहु से सातवीं राशि में केतु रहता है। राहु के अंश, कला, विकला तथा गति के समान ही केतु के भी अंश, कला, विकला और गति होती है। राहु के स्पष्ट में राशि में ६ राशि जोड़ने से केतु का स्पष्ट होता है। १२ या १२ से अधिक हाने पर १२ से भाग देकर शेष को रशि जानना। यहाँ राहु के स्पष्ट में १ राशि है, उसमें ६ राशि जोड़ने से ९ राशि हुई। अत: केतु का स्पष्ट ७/२/५४/३४ है।

नोट - स्पष्ट ग्रहचक्र लिखकर उसमें स्पष्ट ग्रहों के राशि, अंश, कला, विकला तथा गति अंकों में लिखना। जिस गति से जो ग्रह स्पष्ट किया गया है, उसकी वही गति लिखनी। जो ग्रह मार्गी या वक्र हो वह भी लिखना।

सूर्य से केतु तक आठ ग्रहों के स्पष्ट का क्रम तथा उदाहरण दिये गये। अब चंद्र के स्पष्ट का क्रम प्रस्तुत किया जाता है-

अश्विभादिन्दुभुक्तानि भानि षष्टिहतानि च।
तद्भुक्तिनाडीसंयुक्तं द्विगुणं नन्दनाद् भजेत्।।

पहिले पूर्वोक्त क्रम से गतर्क्ष और सर्वर्क्ष बनाना। जिस दिन के जिस इष्टकाल पर चंद्रस्पष्ट करना है, उस समय वर्तमान नक्षत्र तक अश्विनी नक्षत्र से गिनना जो संख्या आये उसमें १ कम करके ६० से गुणा करना। जो संख्या आये उसे गतर्क्ष की घड़ियों में युक्त करना। फिर घड़ी और पलों को २ से गुणा करना। फिर गतर्क्ष की घड़ियों को ९ से भाग देना। लब्धि को पृथक् रखना। शेष को ६० से गुणा करके गतर्क्ष के पल जोड़ना। फिर ९ से भाग देना। लब्धि को पृथक् रखना। शेष ६० से गुणा करके ९ से भाग देना। लब्धि को पृथक् रखना।

सबसे पहिले आयी हुई लब्धि को ३० से भाग देना। लब्धि राशि होती है और

शेष अंश होता है । आगे की लब्धियाँ क्रम से कला और विकला होती हैं । इस प्रकार चंद्रमा स्पष्ट हो जाता है ।

चंद्रमा के स्पष्ट का उदाहरण - वर्षप्रवेशकाल में शतभिषा नक्षत्र है । अश्विनी से शतभिषा तक गिना तो २४ संख्या आयी । इसमें १ कम किया तो २३ हुई? गतर्क्ष ४७/१८ है । २३ को ६० से गुणा किया तो १३८० हुए । इन्हें गतर्क्ष की घड़ी में युक्त किया तो १४२७ हुए । अब पलों के सहित इनको २ से गुणा किया तो २८५४/३६ हुए । गतर्क्ष की २८५४ घड़ी में ९ से भाग दिया तो ३१७ लब्धि आयीं और १ शेष बचा । लब्धि को पृथक् रखा । शेष १ को ६० से गुणा कर के ३६ पल जोड़े तो ९६ हुए । इनको ९ से भाग दिया तो १० लब्धि आयी और ६ शेष बचे । लब्धि को पृथक् रखा और शेष ६ को ६० से गुणा किया ३६० हुए । इनमें ९ से भाग दिया तो ४० लब्धि आयी और शून्य शेष बचा ।

सबसे पहिले आयी लब्धि ३१७ में ३० से भाग दिया तो १० लब्धि आयी, यह राशि है । १७ शेष बचे, ये अंश हैं । आगे की १० लब्धि कला है और ४० लब्धि विकला हैं । इस प्रकार चन्द्रमा का स्पष्ट १०/१७/१०/४० है ।

नोट - प्राय: ज्यौतिषी लोग चंद्र की गति के निकालने के झंझट में न पड़कर चन्द्रस्पष्ट की गति के कोष्ठ में शून्य लिख देते है । जो गति निकालना चाहें, उनके लिए गति निकालने का क्रम प्रस्तुत किया जाता है ।

खखशून्याष्टवेदेषु गतिर्भभोगभाजिता ॥

८०० में सर्वर्क्ष का भाग देकर तीन लब्धियाँ लेनी । यह चंद्रमा की अंशादिक स्पष्ट गति होती है । अंश को ६० से गुणा करके कलाओं को युक्त करना । इससे चंद्र की कलादिक होती है ।

नोट - यदि भाज्य (जिसे भाग दिया जाय उसे भाज्य कहते हैं) और भाजक (जिससे भाग दिया जाय उसे भाजक कहते हैं) घड़ी पलों के रूप में हों तो उन्हें सवर्णित कर लिया जाता है ।

सवर्णित करने का क्रम - घड़ी की संख्या को ६० से गुणा कर के पलों की संख्या को मिलाना । यह सवर्णित संख्या होगी ।

चंद्र की गति स्पष्ट करने का उदाहरण - सर्वर्क्ष ६६/३४ है । इससे ८००/०० में भाग देना है । दोनों ही घड़ी-पलों में हैं । अत: इन्हें सवर्णित करना है। ८०० को ६० से गुणा किया ४८०० हुए । पल शून्य है, अत: पल को युक्त नहीं किया । सर्वर्क्ष की ६६ घड़ी को ६० से गुणा किया तो ३९६० हुए । इनमें ३४ पल युक्त किये तो ३९९४ हुए । दोनों के सवर्णित हो जाने पर भाज्य ४८०० में भाजक ३९९४ से भाग दिया तो १ लब्धि आयी और ८०६ शेष बचे । लब्धि को पृथक् रखा। शेष ८०६ को ६० से गुणा किया ४८३६० हुए । इनमें पूर्वोक्त भाजक ३९९४ से भाग दिया तो १२ लब्धि आयी और ४३२ शेष बचे । लब्धि पृथक् रखी । शेष ४३२ को ६० से गुणा किया २५९२० हुए । इनमें ३९९४ से भाग दिया तो ६ लब्धि आयी । इस प्रकार लब्ध तीन फल १/१२/६ हुए । यह चन्द्र की अंशादिक गति है । इसकी कलादिक

गति बनाने के लिए अंश १ को ६० से गुणा करके १२ मिलाये तो ७२ हुए। इसके आगे ६ विकला को रखा तो चंद्र की ७२/६ कलादिक गति हुई ।

मुन्था स्पष्ट करने का क्रम - सूर्यैकांशभोगकाले मुन्थापञ्चकला भुनक्ति ॥ सूर्य के एक अंश के भोगने में मुंथा ५ कला भोगती है अर्थात् मुंथा प्रतिदिन ५ कला चलती है ।

जन्मकालिक लग्न के स्पष्ट में केवल राशि में गताब्द की संख्या मिलानी । यदि यह संख्या १२ से अधिक हो तो १२ से भाग देकर जो शेष बचे उसे राशि के स्थान में रखना । शेष, अंश, कला और विकला लग्न स्पष्ट की रखनी । यह मुंथा का स्पष्ट होगा। मुंथा की गति के स्थान में ५/० रखना ।

मुंथास्पष्ट का उदाहरण - गताब्द ६० । जन्म लग्न का स्पष्ट ०५/१०/४७/२७ है । यहाँ ५ राशि में गताब्द ६० को मिलाया ६५ हुए । १२ से भग दिया तो ५ शेष बचे । अर्थात् मुंथा कन्या राशि में वर्षकुण्डली में लिखनी । पूर्वोक्त रीति से मुंथा का स्पष्ट लिखना ।

नोट - ग्रहों के स्पष्ट हो जाने पर सगतिक स्पष्ट ग्रहचक्र लिखना । ग्रह की जिस गति से गोमूत्रिका रीति द्वारा गणित की गयी है, उसी गति को ग्रह की गति के स्थान में रखना । गति के नीचे के कोष्ठ में मार्गी आदि लिखना । चक्र का नमूना दिया जाता है ।

अथ सगतिकस्पष्टग्रहचक्रम्

ग्रहाः	सू.	चं.	मं.	बु.	वृ.	शु.	श.	रा.	के.	मुन्था
राशि	०१	१०	०१	०२	०२	००	११	०१	०७	०५
अंश	२४	१७	१४	१०	१४	१७	०३	०२	०२	१०
कला	५७	१०	०८	२४	२६	५९	५४	५४	५४	४७
विकला	२५	४०	१७	१९	२५	१७	३१	३४	३४	२७
गति कला	५७	७२	४२	१०९	१३	७१	०२	०३	०३	०५
विकला	०१	०६	३०	३३	१०	२३	५९	११	११	००
स्थिति	मा०	शी०	मा०	मा०	मा०	मा०	मा०	व०	व०	मा०

भावस्पष्ट का विवरण- जिस प्रकार ग्रह के स्पष्ट से यह जाना जाता है कि अमुकग्रह राशि के इतने अंश, इतनी कला और इतनी विकला में है, उसी प्रकार भाव के स्पष्ट से भी यह पता लगता है कि अमुक भाव अमुक राशि के इतने अंश, इतनी कला और इतनी विकला में है । ग्रहस्पष्ट तथा भावस्पष्ट समस्त गणित की आधारशिलाएँ (नींव के पत्थर) हैं । कुण्डली में बारह भाव (स्थान) होते हैं । भावों की १२ संधियाँ हैं।

प्रत्येक भाव, दो संधियों से संवद्ध है । अत: प्रत्येक भाव की दो संधियाँ हैं। १. आरंभसंधि । २. विराम संधि । उदाहरणार्थ जैसे - तृतीय भाव की संधि तृतीय भाव की विराम संधि है और चतुर्थ भाव की आरंभ संधि है इत्यादि ।

द्वादश भाव स्पष्ट करने के लिए पहिले लग्न का स्पष्ट करना । फिर सप्तम भाव स्पष्ट करना । तदनन्तर चतुर्थ और दशम भाव स्पष्ट करना । इन चारों भावों के स्पष्ट की सहायता से अन्य सभी भाव स्पष्ट हो जाते हैं तथा भावों की संधियाँ भी स्पष्ट हो जाती हैं । यहा सरल क्रम प्रस्तुत किये जाते हैं ।

लग्नसाधन का क्रम - इष्टकाल बनाकर उस समय जिस राशि के सूर्य के जितने अंश हों, लग्नसारिणी में राशि के सामने और अंश के नीचे के कोष्ठ में ऊपर से नीचे को तीन अंक लिखे हैं, इनको सूर्यफल कहते हैं । इष्ट के घड़ी-पल और विपल में क्रम से सूर्यफल के तीन अंक युक्त करने, जो योगफल आये उसे सारिणी में देखना। जिस राशि के सामने मिलें वही लग्न है । जिस अंश के नीचे हो वही अंश है ।

इष्टफल और सूर्यफल के जोड़ने से जो योगफल आता है, वह तो प्राय: लग्न-सारिणी में मिलता नहीं है । अत: उससे कुछ कम या कुछ ज्यादा देखना । योगफल से कुछ कम सूर्यफल के कोष्ठक को अल्पकोष्ठक कहते हैं । योगफल से कुछ ज्यादा सूर्यफल के कोष्ठक को ऐष्यकोष्ठक कहते हैं ।

लग्नस्पष्ट करने का क्रम - पहिले इष्टकालिक सूर्य का स्पष्ट करना । लग्नसारिणी में सूर्य की राशि के सामने और अंश के नीचे के कोष्ठ में जो सूर्यफल हो उसे लेकर इष्टकाल में युक्त करना । यदि विपल में ६० या ६० से अधिक हो तो ६० से भाग देकर उसके स्थान में शेष रखना और लब्धि को पल में जोड़ना । यदि पल ६० या ६० से अधिक हैं तो ६० से भाग देकर शेष को पल के स्थान में रखना और लब्धि को घड़ी में जोड़ना । यदि घड़ी ६० या ६० से अधिक है तो ६० से भाग देकर शेष को घड़ी के स्थान में रखना और लब्धि का त्याग करना । इस प्रकार जो योगफल आये, उसे लग्नसारिणी में देखना । इस योगफल से अल्पकोष्ठक की राशि तथा अंश लेने, फिर इष्टकालिक स्पष्ट सूर्यकला और विकला लेनी । फिर अल्पकोष्ठक की पहिले राशि फिर अंश, फिर इष्टकालिक स्पष्टसूर्य की कला और विकला रखनी ।

इष्ट का और सूर्यफल का जो योगफल है, उसका और अल्पकोष्ठक का अन्तर करना । यह भाज्य होता है । लग्नसारिणी से अल्पकोष्ठक और ऐष्यकोष्ठक को लेकर उनका अन्तर करना । यह अन्तर भाजक होता है । अन्तर पलादिक होता है, अत: भाग देने के लिए सवर्णित कर लेना । सवर्णित भाज्य में सवर्णित भाजक से भाग देना ।

सवर्णित करने का क्रम- राशि को ३० से गुणा करके अंश जोड़ना । जो संख्या बने उसे ६० से गुणा करके कला जोड़नी । जो संख्या बने उसे ६०से गुणा करके उसमें विकला जोड़नी । इस प्रकार यह संख्या सवर्णित पिण्ड होगी ।

पूर्वोक्त रीति से लाये गये भाज्य में भाजक से भाग देने पर लब्धि को पृथक्

रखना। शेष को ६० से गुणा करके पूर्वोक्त भाजक से भाग देना। लब्धि को पृथक् रखना। शेष को ६० से गुणा करके पूर्वोक्त भाजक से भाग देना। लब्धि को पृथक् रखना और शेष का त्याग करना। इस प्रकार तीन फल (तीन लब्धियाँ) लेने। तीन लब्धियों को अनुपात से रखना। इनमें पहिली लब्धि अंश, दूसरी लब्धि कला और तीसरी लब्धि विकला है।

लग्नसारिणी से लिये गये राशि तथा अंश और इष्टकालिक स्पष्टसूर्य की कला-विकला में तीन लब्धियाँ क्रमशः अंश, कला और विकला में युक्त करनी। जो योगफल होगा वही लग्नस्पष्ट है।

निष्कर्ष - भानुभांशजं लग्नपत्रकोष्ठकमिष्टान्वितं तन्यूनकोष्ठजं भांशं भानुकलाद्यन्वितं तत इष्टाल्पकोष्ठान्तरेऽल्पैष्यकोष्ठान्तरेऽणाप्तमंशादिफलं पूर्वत्र योजितं लग्नं भवेत्।

१. इष्टकाल बनाना। २. इष्टकालिक सूर्य का स्पष्ट करना। ३. लग्नसारिणी में सूर्य की रीशि के सामने और अंश के नीचे के कोष्ठ से सूर्यफल के ऊपर से नीचे को तीन अंक लेकर उन्हें क्रम से इष्ट की घड़ी, पल तथा विपल में युक्त करना। यह इष्टकोष्ठक होगा। ४. इष्ट से युक्त कोष्ठक से कुछ कम अंक जहाँ लग्नसारिणी में मिले, उसे राशिका अंक तथा अंश के अंक लेने। ५. राशि की संख्या में १ कम करके रखना, उसके आगे अंश के अंक, फिर उसके आगे इष्टकालिक स्पष्ट सूर्य की कला के अंक रखना। फिर उसके स्पष्ट सूर्य की विकला के अंक रखना। ६. इष्टयुक्त कोष्ठक का तथा अल्पकोष्ठक का अन्तर करना, इस अन्तर को सवर्णित पिण्ड करना, यह भाज्य होता है। ७. अल्पकोष्ठक तथा ऐष्य (अल्पकोष्ठक से अगला) कोष्ठक का अन्तर करना, इस अंतर को सवर्णित पिण्ड करना। यह भाजक होता है। ८. भाजक से भाज्य को भाग देना, लब्धि को पृथक् रखना और शेष को ६० से गुणा करके पूर्वोक्त भाजक से भाग देना। इस प्रकार तीन लब्धियाँ लेनी। ९. अल्पकोष्ठक (लग्नसारिणी से लिये सूर्यफल में इष्टकाल युक्त करने पर बने योगफल से कुछ कम अंक वाले कोष्ठ) के राशि तथा अंश के अंक एवं इष्टकालिक स्पष्ट सूर्य की कला और विकला लेकर उनमें अंश, कला और विकला में क्रम से तीन लब्धियाँ युक्त करनी। यह योगफल लग्न का स्पष्ट होगा।

लग्नस्पष्ट का उदाहरण - इष्टकाल ४९/२९ इष्टकालिक सूर्य का स्पष्ट १/२४/५७/२५। यहाँ लग्न स्पष्ट करना है। काशी विश्व पंचांग की लग्नसारिणी में वृष राशि के सामने २४ अंश के नीचे के कोष्ठ में १०/४४/१४ हैं। ये तीन अंक सूर्यफल हैं। इन्हें इष्ट ४९/२९ में युक्त किया $\frac{४९/२९/००}{१०/४४/१४}$ तो ६०/७३/१४ हुए। ७३ $\overline{६०/७३/१४}$ में ६० से भाग दिया १ लब्धि आयी और १३ शेष बचे। १३ शेष को पल के स्थान में रखा। १ लब्धि को ऊपर ५९ में युक्त किया तो ६० हुए। इनमें ६० से भाग दिया, शून्य शेष बचा, इसे ६० घड़ी के स्थान में रखा तो ००/१३/१४ हुए। यह इष्ट युक्त कोष्ठक है। इसे लग्न सारिणी में देखा तो मीनराशि के सामने ८ अशं के नीचे अल्प कोष्ठक के ००/०७/१८ ये तीन अंक मिले। अब मीनराशि के ११ अंक, ८ अंश के ८ अंक लिये तथा इष्टकालिक सूर्यस्पष्ट की ५७ कला और २५ विकला लीं। इन्हें

अनुपात से रखा तो ११/०८/५७/२५ हुए ।

अब इष्टयुक्त कोष्ठक ००/१३/१४ में ००/०७/१८ को हीन किया तो ००/०५/५६ अन्तर निकला। यह भाज्य पल आदिक में है, अत: इसका सवर्णित पिण्ड बनाने के लिए शून्य राशि को ३० से गुणा न हो सका, अत: ५ को ६० से गुणा करके ५६ विपल युक्त किये तो ५×६०=३००+५६=३५६ हुए। यह सवर्णित भाज्यपिण्ड बना।

अल्प कोष्ठक ००/०७/१८ को ऐष्य (उससे अगले) कोष्ठक ०/१४/३६ में हीन किया $\frac{०/१४/३६}{०/०७/१८}$ तो ०/७/१८ शेष बचे । यह अन्तर निकला । यह भाजक, पल आदिक में है । इसका सवर्णित पिण्ड बनाने के लिए शून्यराशि को ३० से गुणा न हो सका । अत ७ पल को ६० से गुणा करके १८ विपल युक्त किए तो ०७×६०= ४२०+१८=४३८ सवर्णित भाजकपिण्ड बना ।

भाज्य ३५६ में ४३८ भाजक से भाग दिया तो शून्य लब्धि आयी और शेष ३५६ बचे । लब्धि को पृथक् रखा । शेष ३५६ को ६० से गुणा किया ३५६×६०= २१३६० हुए । इनमें पूर्वोक्त भाजक ४३८ से भाग दिया तो ४८ लब्धि आयी और ३३६ शेष बचे । लब्धि को पृथक् रखा । शेष ३३६ को ६० से गुणा किया तो ४६ लब्धि आयी । तीन लब्धियाँ ही ली गयीं । लब्धियों को अनुपात से रखा तो ००/४८/ ४६ हुए । इन्हें अल्प कोष्ठक की राशि ११, अंश ८, इष्टकालिक स्पष्टसूर्य की ५७ कला और २५ विकला में युक्त किया $\frac{११/८/५७/२५}{००/००/४८/४६}$ तो ११/०९/४६/११ हुए । यही राश्यादि लग्नस्पष्ट है । अर्थात् वृषराशि के सूर्य के २५ अंश के दिन ४९/२९इष्ट पर मीनलग्न के ९ अंश ४६ कला और ११ विकला है ।

सप्तम भाव के स्पष्ट का क्रम - लग्नभाव के स्पष्ट में ६ राशि युक्त करने से या हीन करने से सप्तम भाव का स्पष्ट होता है ।

सप्तम भाव के स्पष्ट का उदाहरण - लग्नभाव का स्पष्ट ११/९/४६/ ११ है । इसमें ११ राशि में ६ राशि युक्त की तो ११+६ = १७ हुए । १२ से अधिक होने के कारण १२ से भाग दिया ५ शेष बचे । राशि के स्थान में ५ रखनी तथा अंश, कला और विकला यथावत् । (ज्यों-की-त्यों) रखी तो ५/९/४६/११ सप्तम भाव का स्पष्ट हुआ ।

लग्नभाव की ११ राशि में ६ राशि हीन की ११-६=५ तो ५ राशि बची । शेष अंश, कला और विकला पूर्ववत् रखीं । इस प्रकार भी सप्तमभाव स्पष्ट हुआ ।

दशम भाव और चतुर्थ भाव के साधन का क्रम -

उदयादिष्टकालेषु द्युदलं हि प्रपातयेत् ।
दशमस्य भवेदिष्टं सारी खाङ्गौ सुखाङ्गने ।।

जिस दिन का इष्टकाल है, उस दिन के दिनार्ध (दिनमान का आधा) को इष्ट में से हीन करना । जो शेष बचता है वह दशम भाव का इष्ट होता है ।

जिस दिन का इष्टकाल है, उस दिन के रात्र्यर्ध (रात्रिमान का आधा) युक्त करने से चतुर्थ भाव का इष्ट होता है ।

दशम भाव के स्पष्ट की राशि में ६ राशि युक्त करने से या हीन करने से चतुर्थ भाव का स्पष्ट होता है । इसी प्रकार चतुर्थ भाव के स्पष्ट में ६ राशि युक्त करने से या हीन करने से दशम भाव का स्पष्ट होता है ।

पूर्वोक्त लग्नभाव के स्पष्ट के क्रमानुसार ही चतुर्थभाव या दशम भाव का स्पष्ट होता है, किन्तु यहाँ भावसारिणी से काम लिया जाता है ।

दशम भाव स्पष्ट करने का क्रम -जिस दिन के इष्टकाल पर दशम भाव का स्पष्ट करना है, उस दिन के दिनार्ध को इष्टकाल में हीन करना । जो शेष बचता है, वह दशम भाव का इष्ट होता है ।

जिस दिन का दशम भावस्पष्ट करना है । उसदिन के इष्ट पर सूर्य का स्पष्ट करना । भावसारिणी में इस स्पष्ट सूर्य की राशि के सामने तथा अंश के नीचे ऊपर से नीचे को सूर्यफल के तीन अंक लेकर उन्हें दशम भाव के इष्ट में युक्त करना । यह योगफल इष्टयुक्त कोष्ठक होता है । भावसारिणी में इष्टयुक्त कोष्ठक से जहाँ कुछ कम अंक मिले, उसे अल्प कोष्ठक जानना । अल्प कोष्ठक के वायीं ओर की राशि तथा ऊपर के अंश लेने एवं स्पष्ट सूर्य की कला और विकला लेनी । इन सबको अनुपात (पहिले राशि की संख्या, फिर अंश की संख्या, फिर कला की संख्या और फिर विकला की संख्या से अलग रखना । यह राश्यादिक कहलाता है ।

तदनंतर इष्टयुक्त को कोष्ठक का और अल्प कोष्ठक का अन्तर करना । यह पलादिक अन्तर होगा । इसको सवर्णित करना । यह भाज्य होता है । अल्प कोष्ठक का और उसके आगे वाले ऐष्य कोष्ठक का अन्तर (हीन करना या घटाना) करना । यह पलादिक अन्तर होगा । इसको सवर्णित करना । यह भाजक होता है ।

भाज्य को भाजक से भाग देना । जो लब्धि आये उसे पृथक् रखना । शेष को ६० से गुणा करके भाजक से भाग देना । लब्धिको पृथक् रखना । शेष को ६० से गुणा करके भाजक से भाग देना । लब्धि को पृथक् रखना ।

इस प्रकार तीन लब्धियाँ लेनी । लब्धियों को अनुपात से रखना । राश्यादिक में राशि को छोड़कर अंश, कला, विकला के नीचे तीनों लब्धियों को क्रम से युक्त करना । इस प्रकार यह दशम भाव का स्पष्ट होगा ।

दशम भाव के स्पष्ट का उदाहरण - इष्टकाल ४९/२९/ इष्टकालिक स्पष्ट सूर्य १/२४/५७/२५/ दिनमान ३३/४९/ दिनार्ध १६/५४/३०/ अब दशम भाव का इष्ट बनाना है, अतः इष्टकाल ४९/२९/ में दिनार्ध १६/५४/३०/ को हीन किया तो ३२/३४/३०/ शेष बचे । यह दशम भाव का इष्ट हुआ । इष्टकालिक स्पष्ट सूर्य की राशि वृष है और अंश २४ हैं । अतः भावसारिणी में वृषराशि के सामने २४ अंश के नीचे १२/४०/२ सूर्यफल है । इसको लेकर दशम भाव के इष्ट में युक्त किया तो ५५/१४/२ हुए । यह इष्टयुक्त कोष्ठक है । भावसारिणी में देखा तो कुंभ राशि के सामने

६ अंश के नीचे ५५/१२/२ अंक है । ये इष्टयुक्त कोष्ठक से कुछ कम होने के कारण अल्पकोष्ठक हैं । राश्यादिक बनाने के लिए कुंभ राशि की १० संख्या, ६ अंशसंख्या, स्पष्ट सूर्य की ५७ कलासंख्या और २५ विकला संख्या लेकर अनुपात से स्थापित किया तो १०/६/५७/२५ हुए । यह राश्यादिक हुआ ।

इष्ट युक्त कोष्ठक ५५/१४/२/ का और अल्पकोष्ठक ५५/१२/२ का अन्तर किया तो ००/०२/००पलादिक अन्तर हुआ । इसे सवर्णित किया तो १२० हुए । यह भाज्य है ।

भावसारिणी में ऐष्य (अगला) कोष्ठक ५५/२२/०० है । अल्पकोष्ठक और ऐष्य कोष्ठक का अन्तर किया तो ००/९/५८ पलादिक अंतर हुआ । इसे सवर्णित किया तो ५९८ हुए । यह भाजक है । १२० भाज्य में ५९८ भाजक से भाग दिया तो शून्य लब्धि आयी, १२० शेष बचे । शेष १२० को ६० से गुणा किया ७२०० हुए । इनमें ५९८ भाजक से भाग दिया तो १२ लब्धि आयी और २४ शेष बचे । लब्धि को पृथक् रखा । शेष २४ को ६० से गुणा किया १४४० हुए । इनमें ५९८ भाजक से भाग दिया तो २० लब्धि आयी । इस प्रकार तीन लब्धियाँ ली गयीं । लब्धियों को अनुपात से रखा तो ००/१२/०२ हुई । इन्हें राश्यादिक १०/६/५७/२५ में युक्त किया तो १०/७/९/२७ दशम भाव का स्पष्ट हुआ ।

दशम भाव के स्पष्ट में ६ राशि युक्त या हीन की तो ४/७/९/२७ हुए । यह चतुर्थ भाव का स्पष्ट है ।

अन्यान्य भाव तथा सन्धियों के स्पष्ट का क्रम -

लग्नं तुर्यात् सप्तमात् तुर्यभावं शोध्यं राशिः पञ्चभिस्ताडितोऽशाः ।
अंशाद्याश्चेद्विग्धताः स्युः कलाद्याः लग्ने तुर्ये पञ्चवारं प्रदद्यात् ।।
तन्वाद्याः सन्धिसहिता भावाः षड्युताः परे ।
यदन्त्यारम्भयोः सन्ध्योरन्तरथस्तद्गतो ग्रहः ।।

लग्नस्पष्ट को चतुर्थ भाव के स्पष्ट में हीन करना । जो शेष बचे उसमें राशि की संख्या को ५ से गुणा करना । अंश, कला और विकला की संख्या को पृथक्-पृथक् १० से गुणा करना । यदि विकला ६० या ६० से अधिक हो तो ६० से भाग देकर शेष को विकला के स्थान में रखना और लब्धि को ऊपर कला में मिलाना । कला यदि ६० या ६० से अधिक हो तो ६० से भाग देकर शेष को कला के स्थान में रखना और लब्धि को अंश में युक्त करना । यदि अंश ३०या ३० से अधिक हो तो ३० से भाग देकर लब्धि राशि में मिलानी और शेष को अंश के स्थान में रखना । यदि राशि १२ से अधिक हो तो शेष को राशि के स्थान में रखना और लब्धि का त्याग करना । इस प्रकार यह अंशादि फल होगा। फिर अंश, कला, विकला और प्रतिविकला को या अनुकला को अनुपात से रखकर उसमें लग्नस्पष्ट को युक्त करना । यह द्वितीय भाव की आरंभ संधि का स्पष्ट होगा । फिर उक्त अंशादि फल को द्वितीय भाव की आरंभ संधि में युक्त करने से द्वितीय भाव का स्पष्ट होगा। उक्त अंशादि फल को द्वितीय भाव के स्पष्ट में युक्त करने

से तृतीय भाव की आरंभ संधि होती है । तृतीय भाव की आरंभ संधि में उक्त अंशादि फल को युक्त करने से तृतीय भाव का स्पष्ट होता है । तृतीय भाव में उक्त अंशादि फल को युक्त करने से चतुर्थ भाव की आंरभ का स्पष्ट होता है । चतुर्थ भाव की आरंभ संधि में उक्त अंशादिफल को युक्त करने से चतुर्थ भाव का स्पष्ट होगा ।

चतुर्थ भाव के स्पष्ट को सप्तम भाव के स्पष्ट में हीन करना । जो शेष बचे उसमें राशि को ५ से गुणा करना । अंश, कला और विकला को अलग-अलग १० से गुणा करना । पूर्वोक्त रीति से अंशादि फल बनाना । इसे चतुर्थ भाव के स्पष्ट में युक्त करने से पंचमभाव की आरंभ संधि का स्पष्ट होता है । पंचम भाव की आरंभ संधि में उक्त अंशादि फल को युक्त करने से पंचम भाव का स्पष्ट होता है । पंचम भाव के स्पष्ट में उक्त अंशादि फल को युक्त करने से षष्ठ भाव की आरम्भ संधि का स्पष्ट होता है । षष्ठ भाव की आरम्भ संधि में उक्त अंशादि फल को युक्त करने से षष्ठ भाव का स्पष्ट होता है । षष्ठ भाव के स्पष्ट में उक्त अंशादि फल को युक्त करने से सप्तम भाव की आरंभ संधि का स्पष्ट होता है ।

लग्नस्पष्ट की राशि में ६ राशि युक्त या हीन करने से सप्तम भाव का स्पष्ट होता है । लग्नभाव की संधि के स्पष्ट में ६ राशि युक्त करने से अष्टम भाव की आरंभ संधि स्पष्ट होती है । द्वितीय भाव में ६ राशि युक्त करने से अष्टम भाव का स्पष्ट होता है । द्वितीय भाव की संधि में ६ राशि युक्त करने से नवम भाव की आरंभ संधि स्पष्ट होती है । इसी प्रकार ६-६ राशि युक्त करने से क्रम से संधि सहित द्वादश (बारह) भाव स्पष्ट हो जाते हैं ।

चतुर्थ भाव स्पष्ट करने का सरल क्रम - इष्टकाल में रात्र्यर्ध (रात्रिमान का आधा) युक्त करने से चतुर्थ भाव का इष्ट होता है । इष्टकालिक स्पष्ट सूर्य की राशि के सामने और अंश के नीचे भावसारिणी के कोष्ठ से सूर्यफल लेकर चतुर्थ भाव के इष्ट में युक्त करना। जहाँ ६०या ६० से अधिक हो वहाँ ६० से भाग देकर शेष को रखना और लब्धि को आगे मिलाना । जहाँ आगे मिलाने का अवसर न हो, वहाँ लब्धि का त्याग करना । इस प्रकार यह इष्टयुक्त कोष्ठक होता है । इससे न्यून (अल्प) कोष्ठक जहाँ भावसारिणी में मिले, उसकी राशि तथा अंश लेने, फिर इष्टकालिक स्पष्ट सूर्य की कला और विकला लेनी । फिर इन सब संख्याओं को अनुपात से रखना । यह राश्यादिक होगा।

तदनन्तर इष्टयुक्त कोष्ठक का तथा भावसारिणी से अल्पकोष्ठक का अन्तर करना । यह पलादिक अन्तर भाज्य होगा । तत्पश्चात् भावसारिणी के अल्पकोष्ठक तथा भावसारिणी के ऐष्य (अल्पकोष्ठक से आगे के कोष्ठ के अंक) कोष्ठक का अन्तर करना। यह पलादिक अन्तर भाजक होगा। भाज्य और भाजक पलादिक हों तो उनको सवर्णित करके भाज्य को भाजक से भाग देना । भाग देने पर लब्धि को पृथक् रखना और शेष को ६० से गुणा करके भाजक से भाग देना । लब्धि को पृथक् रखना और शेष को ६० से गुणा करके भाजक से भाग देना । इस प्रकार लब्धियों के रूप में तीन अंशादिक फल लेने । इनको अनुपात से रखकर राश्यादिक में युक्त करना । यह योगफल चतुर्थ भावका स्पष्ट होगा।

चतुर्थ भाव के स्पष्ट का उदाहरण - इष्टकाल ४९/२९ । इष्टकालिक स्पष्ट सूर्य ०१/२४/५७/२५। रात्रिमान २६/११। रात्र्यर्ध १३/५/३०/ चतुर्थ भाव का इष्ट बनाना है। अत: इष्टकाल में रात्र्यर्ध युक्त किया तो $\frac{४९/२९}{१३/५/३०}$ $\frac{}{६२/३४/३०}$ ६२/३४/३० हुए । यहाँ ६२ में ६० से भाग दिया तो २ शेष बचे । १ लब्धि का त्याग । २ को ६२ के स्थान में रखा तो २/३४/३० यह चतुर्थ भाव का इष्ट हुआ। लग्न लाने की विधि के समान भावसारिणी में वृषराशि के २४ अंश के कोष्ठक से १२/४०/२ सूर्यफल लेकर चतुर्थ भाव के इष्ट २/३४/३० में युक्त किये तो १५/१४/३२ हुए । यह इष्टयुक्त कोष्ठक हुआ । भावसारिणी में इससे कम मिथुन राशि के सामने ८ अंश के नीचे के कोष्ठ में १५/१०/४६ हैं । यह अल्पकोष्ठक है । मिथुन राशि की संख्या ३ में १कम करके २ राशि, ८ अंश और इष्टकालिक स्पष्ट सूर्य की ५७ कला और २५ विकला को लिया । इन सबको अनुपात से रखा तो २/८/५७/२५ हुए । यह राश्यादिक है ।

अब इष्ट युक्त कोष्ठक का तथा अल्प कोष्ठक का अन्तर किया तो $\frac{१५/१४/३२}{१५/१०/४६}$ $\frac{}{०/०३/४६}$ ०/३/४६ शेष बचे । यह पलादिक अंतर भाज्य है । अल्पकोष्ठ का और ऐष्यकोष्ठक को भावसारिणी से लेकर उनका अंतर किया $\frac{१५/२१/३२}{१५/१०/४६}$ $\frac{}{०/१०/४६}$ तो ०/१०/४६ शेष बचे । यह पलादिक अंतर भाजक है ।

पलादिक भाज्य को सवर्णित करने के लिए शून्य अंश को ३० से गुणा किया शून्य हुआ । तीन कला को युक्त किया तो तीन हुए । ३ को ६० से गुणा किया १८० हुए । इनमें ४६ कला युक्त की २२६ हुए । यह सवर्णित पिण्ड भाज्य बना । इसी प्रकार पलादिक भाजक ०/१०/४६ को सवर्णित करने के लिए शून्य अंश को छोड़कर १० को ६० से गुणा किया तो ६०० हुए । इनमें ४६ पल युक्त किये तो ६४६ हुए । यह सवर्णित भाजक पिण्ड बना ।

सवर्णित भाज्यपिण्ड २२६ को सवर्णित भाजकपिण्ड ६४६ से भाग दिया। शून्य लब्धि आयी और २२६ शेष बचे । इनको ६० से गुणा किया । १३५६० हुए । इनमें पूर्वोक्त भाजक ६४६ से भाग दिया तो २० लब्धि आयी और ६४० शेष बचे । लब्धि को पृथक् रखा । शेष ६४० को ६० से गुणा किया ३८४०० हुए । इनको ६४६ से भाग दिया ५९ लब्धि आयी । इस प्रकार तीन फल लिये गये । लब्धियों को अनुपात से रखा तो ०/२०/५९ हुए । इन्हें पहिले आये राश्यादिक ०२/८/५७/२५ में युक्त किया $\frac{२/८/५७/२५}{००/००/२०/५९}$ $\frac{}{२/०९/१८/२४}$ तो २/९/८/२४ हुए । यह चतुर्थ भाव का स्पष्ट हुआ ।

अन्यान्य भाव स्पष्ट करने के उदाहरण - लग्नभाव का स्पष्ट ११/९/४६/११ इसमें ६ राशि युक्त या हीन करने से ५/९/४६/११ यह सप्तम भाव का स्पष्ट हुआ। चतुर्थ भाव का स्पष्ट ०२/०९/१८/२४ है । इसमें ६ राशि युक्त करने से

०८/०९/१८/२४ यह दशम भाव का स्पष्ट हुआ। इस प्रकार चार भावों के स्पष्ट बन गये।

लग्नभाव के स्पष्ट ११/९/४६/११ को चतुर्थ भाव के स्पष्ट २/९/१८/२४ में हीन किया $\frac{२/९/१८/२४}{१९/९/४६/११}$ तो २/२९/३२/१३ शेष बचे। यहाँ २ राशि को ५ से गुणा किया १० हुए। शेष अंश आदि को १० से गुणा किया तो २९००/३२००/१३०० हुए। १३०० कला में ६० से भाग दिया तो २१ लब्धि आयी ४० शेष बचे। विकला के स्थान में ४० शेष रखे। २१ लब्धि को ऊपर ३२०० कला में मिलाया तो ३२२१ हुए। इनमें ६० से भाग दिया तो ५३ लब्धि आयी और २० शेष बचे। २ शेष को कला के स्थान में रखा और लब्धि २० को ऊपर अंश २९०० में मिलाया तो २९२० हुए। इनमें ६० से भाग दिया तो ४८ लब्धि आयी और २० शेष बचे। २० को अंश के स्थान में रखा। लब्धि ४८ को राशि के १० अंक में मिलाया तो ५८ हुए। इनमें ३० से भाग दिया तो २८ शेष रहे। इन्हें अंश के स्थान में रखा। ये अंशादिक हैं। सब अंकों के क्रम से रखा तो २८/२०/२०/४० हुए। ये अंशादिक हैं। ये ही अंशादिक आगे-आगे युक्त होते रहेंगे।

लग्नभाव के स्पष्ट ११/९/४६/११ में युक्त किया $\frac{११/९/४६/११}{/२८/२०/२०/४०}$ तो ००/०७/०६/३१/४०/४० हुए। यहाँ ३१ कला को ३२ कला करके आगे के ४० त्याग दिये। ०/७/६०/३२/४० हुए। यह द्वितीय भाव की आरंभ संधि का स्पष्ट हुआ। द्वितीय भाव की आरंभ संधि के स्पष्ट में पूर्वोक्त २८/२०/२१ युक्त किये। यहाँ आगे की ४० अनुकला की १ विकला मान कर १ को २० विकला में युक्त किया तो २१ विकला हुई, आगे सर्वत्र २१ विकला ही रहेगी। ०१/०५/२६/५२ यह द्वितीय भाव का स्पष्ट हुआ। इसमें पूर्वोक्त २८/२०/२१ युक्त किये तो २/३/४७/१३ हुए। यह तृतीय भाव की आरंभ संधि का स्पष्ट हुआ। इसमें पूर्वोक्त २८/२०/२१ युक्त किये तो ०३/४/७/३४ हुए। यह तृतीय भाव का स्पष्ट हुआ। इसमें पूर्वोक्त अंशादिक २८/२०/२१ युक्त किये तो ४/०/२७/५५ चतुर्थ भाव की आरंभ संधि हुई। इसमें पूर्वोक्त अंशादिक २८/२०/२१ युक्त किये तो ४/२८/४८/१६ चतुर्थ भाव का स्पष्ट हुआ। इसे सप्तमभाव के स्पष्ट ५/९/४६/११ में हीन किया तो ०/४०/५७/५५ शेष बचे। राशि शून्य को ५ से गुणा किया तो शून्य ही रहा। शेष अंश आदि को १० से गुणा किया। साठ से अधिक अंक आने पर शेष को उसके स्थान में रखा और लब्धि को ऊपर युक्त किया। सब अंकों को अनुपात से रखा तो ००/४०/३९/१० हुए। ये अंशादिक हुए। इनको क्रम से चतुर्थ भाव के स्पष्ट में युक्त किया। युक्त करने में आगे के १० अंक त्याग दिये हैं। ४/२९/२८/५५ यह पंचम भाव की आरंभ संधि हुई। इसमें पूर्वोक्त अंशादिक ००/४०/३९ युक्त किये तो ५/००/९/३४ पंचम भाव हुआ।

इसमें पूर्वोक्त अंशादिक ०/४०/३९ युक्त किये तो ५/०/५०/१३ हुए। यह षष्ठ भाव की आरंभ संधि का स्पष्ट है। इसमें पूर्वोक्त अंशादिक ००/४०/३९ युक्त किये तो ५/१/३०/५२ हुए। यह षष्ठ भाव का स्पष्ट हुआ। इसमें पूर्वोक्त अंशादिक ०/४०/३९ युक्त किये तो ५/२/११/३१ हुए। यह सप्तम भाव की आरंभ संधि का स्पष्ट है। इसमें पूर्वोक्त ०/४०/३९ अंशादिक युक्त किये तो ५/२/५२/१० हुए। यह सप्तम भाव का स्पष्ट हुआ। इसमें पूर्वोक्त अंशादिक ००/४०/३९ युक्त किये तो ५/३/३२/४९ हुए। यह सप्तम भाव की संधि का स्पष्ट हुआ।

लग्न से क्रम से ६/६ राशि युक्त करने पर संधि सहित शेष भावों का स्पष्ट हो जाता है।

नोट - अन्य रीति से भावों के तथा संधियों के स्पष्ट का क्रम प्रस्तुत किया जाता है।

भावों के तथा उनकी संधियों के स्पष्ट का क्रम - पहिले चार भावों का स्पष्ट बना लेना- १. लग्नभाव का स्पष्ट। २. चतुर्थ भाव का स्पष्ट। ३. सप्तमभाव का स्पष्ट। ४. दशम भाव का स्पष्ट। लग्नभाव के स्पष्ट को चतुर्थ भाव के स्पष्ट में घटाना। जो शेष बचे उसका षष्ठांश (छठा भाग) निकालना।

षष्ठांश निकालने का क्रम- राशि को ३० से गुणा करके अंश की संख्या जोड़नी। जो संख्या बने, उसको ६ से भाग देना। लब्धि को पृथक् रखना जो शेष बचे उसको ६० से गुणा करके कला की संख्या जोड़कर ६ से भाग देना। लब्धि को पृथक रखना। शेष को ६० से गुणा करके विकला जोड़नी। फिर ६ से भाग देना। लब्धि लेनी। लब्धियों को अनुपात से रखना। इस प्रकार यह षष्ठांश होता है।

संधि तथा भावों के स्पष्ट का क्रम- १. लग्नभाव के स्पष्ट में षष्ठांश को जोड़ने से लग्नभाव की विराम संधि या द्वितीय भाव की आरम्भ संधि का स्पष्ट बनता है। २. लग्नभाव की विराम संधि में षष्ठांश जोड़ने से द्वितीय भाव का स्पष्ट बनता है। ३. द्वितीय भाव के स्पष्टमें षष्ठांश जोड़ने से द्वितीय भाव की विराम संधि का स्पष्ट होता है। ४. द्वितीय भाव की विराम संधि में षष्ठांश जोड़ने से तृतीय भाव का स्पष्ट होता है। ५. तृतीय भाव के स्पष्ट में षष्ठांश जोड़ने से तृतीय भाव की विराम संधि या चतुर्थ भाव की आरंभ संधि का स्पष्ट होता है। चतुर्थ भाव का स्पष्ट पूर्व बन ही चुका है।

शुद्ध षष्ठांश बनाने का क्रम- षष्ठांश को ३० (२९/५९/६०) में घटाने से जो शेष बचता है, उसे शुद्ध षष्ठांश कहते हैं।

६. चतुर्थ भाव के स्पष्ट में शुद्धषष्ठांश जोड़ने से चतुर्थ भाव की विराम संधि का स्पष्ट होता है। ७. चतुर्थ भाव की विराम संधि में शुद्ध षष्ठांश जोड़ने से पंचम भाव का स्पष्ट होता है। ८. पंचम भाव के स्पष्ट में शुद्ध षष्ठांश जोड़ने से पंचम भाव की विराम संधि का स्पष्ट होता है। ९. पंचमभाव की विराम संधि में शुद्ध षष्ठांश जोड़ने से षष्ठ भाव का स्पष्ट होता है। १०. षष्ठ भाव के स्पष्ट में शुद्ध षष्ठांश जोड़ने से षष्ठ भाव

की विराम संधि का स्पष्ट होता है । ११. लग्न की संधि के स्पष्ट में ६ राशि जोड़ने से सप्तम भाव की संधि स्पष्ट होती है । १२. द्वितीय भाव के स्पष्ट में ६ राशि जोड़ने से अष्टम भाव स्पष्ट होता है । १३. द्वितीय भाव की संधि के स्पष्ट में ६ राशि जोड़ने से अष्टम भाव की संधि स्पष्ट होती है । १४. तृतीय भाव के स्पष्ट में ६ राशि जोड़ने से नवम भाव स्पष्ट होता है । १५. तृतीय भाव की संधि के स्पष्ट में ६ राशि जोड़ने से नवम भाव की संधि स्पष्ट होती है । १६. चतुर्थ भाव की संधि में ६ राशि जोड़ने से दशम भाव की सन्धि स्पष्ट होती है । १७. पंचम भाव की संधि में ६ राशि जोड़ने से एकादश भाव का स्पष्ट होता है । १८. पंचम भाव के स्पष्ट में ६ राशि जोड़ने से एकादश भाव की संधि स्पष्ट होती है । १९. षष्ठ भाव के स्पष्ट में ६ राशि जोड़ने से द्वादश भाव का स्पष्ट होता है । २०. षष्ठ भाव की संधि के स्पष्ट में ६ राशि जोड़ने से द्वादश भाव की संधि का स्पष्ट होता है ।

नोट - पूर्वोक्त क्रम से सरलतापूर्वक भाव तथा भावों की संधियाँ स्पष्ट हो जाती हैं । स्पष्ट की राशि में ही ६ राशि जोड़ी जाती है । जहाँ राशि १२ हो जाय वहाँ राशि के स्थान में शून्य रखना और जहाँ १२ से अधिक हो वहाँ १२ से भाग देकर शेष की संख्या को रखना ।

भाव तथा संधि के स्पष्ट के उदाहरण- लग्नभाव का स्पष्ट ११/९/४६/११। चतुर्थ भाव का स्पष्ट २/९/१८/२४/ सप्तम भाव का स्पष्ट ५/९/४६/११/ दशम भाव का स्पष्ट ८/९/१८/२४ ।

चतुर्थ भावस्पष्ट २/९/१८/२४ में लग्नस्पष्ट ११/९/४६/११ को घटाया। २/२९/३२/१३ शेष बचे । इसका षष्ठांश निकालने के लिए २ राशि को ३० से गुणा किया तो ६० हुए । इनमें २९ अंश मिलाये तो ८९ हुए । इसमें ६ से भाग दिया १४ लब्धि आयी और ५शेष बचे । लब्धि को पृथक् रखा । ५ शेष को ६० से गुणा किया ३०० हुए । इनमें ३२ कला मिलायी ३३२ हुए । इनमें ६ से भाग दिया । ५५ लब्धि आयी । २ शेष बचे । लब्धि को पृथक् रखा । शेष २ को ६० से गुणा किया १२० हुए, इनमें १३ विकला मिलायी १३३ हुए । इनमें ६ से भाग दिया २२ लब्धि आयी । तीनों लब्धियों को अनुपात से रखा तो १४/५५/२२ हुई । ये ही षष्ठांश हैं ।

नोट - एक अन्य क्रम यह है कि चतुर्थ भाव के स्पष्ट को सप्तम भाव के स्पष्ट में घटाकर जो शेष बचे उसका षष्ठांश निकालना ।

आगे के संधि सहित भावों के स्पष्ट के उदाहरण - लग्नस्पष्ट ११/९/४६/११ में षंष्ठाश १४/५५/२२ को युक्त किया तो ११/२४/४१/३३ हुए । यह द्वितीय भाव की आरंभ संधि का स्पष्ट है । इसमें षष्ठांश युक्त किया तो ००/९/३६/५५ द्वितीय भाव का स्पष्ट हुआ । इसमें षष्ठांश युक्त किया तो द्वितीय भाव की विराम संधि या तृतीय भाव की आरंभ संधि का स्पष्ट ००/२४/३२/१७ हुआ । इसमें षष्ठांश युक्त किया तो ०१/०९/२७/३९ तृतीय भाव का स्पष्ट हुआ । तृतीय भाव के स्पष्ट में पूर्वोक्त

षष्ठांश युक्त किया तो ०१/२४/२३/०१ तृतीय भाव की विराम संधि या चतुर्थ भाव की आरंभ संधि का स्पष्ट हुआ। चतुर्थ भाव का स्पष्ट २/९/१८/२४ पूर्व बन ही चुका है। इसमें युक्त करने के लिए शुद्ध षष्ठांश बनाया। षष्ठांश को एक राशि में यानी ३० अंश (२९/५९/६०) में घटाया $\frac{२९/५९/६०}{१४/५५/२२}$ तो १५/४/३८ शुद्ध षष्ठांश हुआ। इसे पूर्वोक्त चतुर्थ भाव के स्पष्ट में युक्त किया तो ०२/२४/२२/०२ यह चतुर्थ भाव की विराम सन्धि या पंचम भाव की आरंभ संधि का स्पष्ट हुआ। इसमें शुद्धषष्ठांश युक्त किया तो ०३/०९/२६/४० यह पंचमभाव का स्पष्ट हुआ। इसमें शुद्ध षष्ठांश १५/०४/३८ युक्त करने से पंचम भाव की विराम संधि या षष्ठभाव की आरंभ संधि का स्पष्ट ०३/२४/३१/१८ हुआ। इसमें शुद्ध षष्ठांश युक्त किया तो ०४/२४/४०/३४ यह षष्ठभाव की विराम संधि का का सप्तमभाव की आरंभ संधि का स्पष्ट हुआ। इस प्रकार लग्नस्पष्ट से लेकर षष्ठ भाव की विराम संधि तक का स्पष्ट बना। अब आगे को संधि सहित भावस्पष्ट करने के लिए लग्नस्पष्ट से लेकर षष्ठ भाव की विराम संधि तक के स्पष्ट में क्रम-क्रम से केवल राशि में ही ६-६ राशि युक्त करने से आगे के संधि सहित भावों का स्पष्ट बनेगा।

लग्नस्पष्ट ११/९/४६/११ की ११ राशि में ६ राशि जोड़ने से १७ हुई। इसमें १२ से भाग दिया तो ५ शेष बचे। इसे राशि के स्थान में रखकर आगे के अंश, कला, विकला को क्रम से रखा तो ५/९/४६/११ हुआ। यह सप्तम भाव का स्पष्ट बना। लग्नभाव की विराम संधि के स्पष्ट ११/२४/४१/३३ में ६ राशि युक्त की तो ५/२४/४१/३३ हुआ। यह सप्तम भाव की विराम संधि या अष्टम भाव की आरंभ संधि का स्पष्ट हुआ। द्वितीय भाव के स्पष्ट ००/९/३६/५५ में ६ राशि युक्त करने से अष्टम भाव का स्पष्ट ०६/०९/३६/५५ बना। द्वितीय भाव की विराम संधि के स्पष्ट ००/२४/३२/१७ में ६ राशि युक्त करने से अष्टमभाव की विराम संधि का स्पष्ट ६/२४/३२/१७ बना। तृतीय भाव के स्पष्ट १/९/२७/३९ में ६ राशि युक्त करने से ७/९/२७/३९ नवम भाव का स्पष्ट हुआ। तृतीय भाव की विराम संधि के स्पष्ट ०१/२४/२३/०१ में ६ राशि युक्त करने से अष्टम भाव की विराम संधि का स्पष्ट ७/२४/२३/०१ बना। चतुर्थ भाव के स्पष्ट २/९/१८/२४ में ६ राशि युक्त करने से ८/९/१८/२४ दशम भाव का स्पष्ट बना। चतुर्थ भाव की विराम संधि के स्पष्ट ०२/२४/२२/२ में ६ राशि युक्त करने से ८/२४/२२/८ दशम भाव की विराम संधि का स्पष्ट बना। पंचम भाव के स्पष्ट ३/९/२६/४० में राशि जोड़ने से एकादश भाव का स्पष्ट ९/९/२६/४० बना। पंचम भाव की विराम संधि के स्पष्ट ०३/२४/३१/१८ में ६ राशि युक्त करने से एकादश भाव की विराम संधि का स्पष्ट ९/२४/३१/१८ बना। षष्ठभाव के स्पष्ट ०४/९/३५/५६ में ६ राशि युक्त करने से द्वादश भाव का स्पष्ट १०/९/३५/५६ बना। षष्ठ भाव की विराम संधि के स्पष्ट ४/२४/४०/३४ में ६ राशि जोड़ने से द्वादशभाव की विराम संधि का स्पष्ट १०/२४/४०/३४ बना।

इस प्रकार संधि सहित द्वादश भावों का स्पष्ट बना। अब सब स्पष्ट क्रम से चक्र में लिखे जायेंगे।

अथ सन्धिसहितद्वादशभावस्पष्टचक्रम्

भाव	ल.	सं.	द्वि.	सं.	तृ.	सं.	च.	सं.	पं.	सं.	ष.	सं.
राशि	१९	११	००	००	०१	०१	०२	०२	०३	०३	०४	०४
अंश	९	२४	९	२४	०९	२४	९	२४	९	२४	०९	२४
कला	४६	४१	३६	३२	२७	२३	१८	२२	२६	३१	३५	४०
विकला	११	३३	५५	१७	३९	०१	२४	२	४०	१८	५६	३४
भाव	स.	सं.	अ.	सं.	न.	सं.	द.	सं.	ए.	सं.	द्वा.	सं.
राशि	५	०५	०६	०६	७	७	८	८	९	९	१०	१०
अंश	९	२४	९	२४	९	२४	९	२४	९	२४	९	२४
कला	४६	४१	३६	३२	२७	२३	१८	२२	२६	३१	३५	४०
विकला	११	३३	५५	१७	३९	०१	२४	२	४०	१८	५६	३४

चलित चक्र बनाने का क्रम- कुण्डली में जो ग्रह जिस भाव या स्थान में स्थित है, उस भाव का तथा उस ग्रह का स्पष्ट देखना। भाव की आरंभ संधि का तथा भाव की विराम संधि का स्पष्ट देखना।

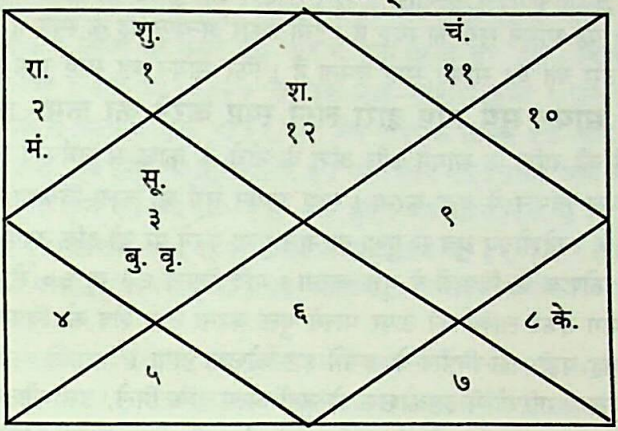
१. जिस ग्रह का स्पष्ट अपने बैठे हुए भाव की आरंभ संधि से तो अधिक हो किन्तु उस भाव की विराम संधि के स्पष्ट से न्यून हो तो वह ग्रह, उसी भाव में स्थित माना जायगा। २. भाव में स्थित ग्रह का स्पष्ट, भाव की आरंभ संधि के स्पष्ट से न्यून होगा तो वह ग्रह, उस भाव से पहिले भाव में माना जायगा। ३. भाव में स्थित ग्रह का स्पष्ट, उस भाव की विराम संधि के स्पष्ट से अधिक होगा तो वह ग्रह, उस भाव से अगले भाव में माना जायेगा। ४. भाव में स्थित ग्रह का स्पष्ट, उस भाव की आरंभ संधि के स्पष्ट के बीच में होगा तो वह ग्रह संधि में स्थित माना जायेगा।

ग्रह के फल की व्यवस्था - यदि भाव में स्थित ग्रह का स्पष्ट, उस भाव की आरंभ संधि के स्पष्ट से न्यून होता है तो वह ग्रह उस भाव से पहिले भाव का फल देता है। २. यदि भाव में स्थित ग्रह का स्पष्ट, उस भाव की विराम संधि के स्पष्ट से अधिक होता है तो वह ग्रह, अपने बैठे हुए भाव से अगले भाव का फल देता है। ३. संधि में स्थित ग्रह, दोनों भावों का फल देता है। अर्थात् कभी उस भाव का और कभी आगे के भाव का फल दिया करता है।

चलित का उदाहरण- कुण्डली में सूर्य तृतीय भाव में स्थित है। सूर्य का स्पष्ट १/२४/५७/२५ है। तृतीय भाव की आरंभ संधि का स्पष्ट ०/२४/३२/१७ है। तृतीय भाव की विराम संधि का १/२४/२३/१ है। यहाँ सूर्य का स्पष्ट तृतीय भाव की आरभं संधि से अधिक है किन्तु तृतीय भाव की विराम संधि से भी कुछ ही अधिक है। अतः सूर्य चलित में है। अगले भाव में कुण्डली में लिखा जायेगा। अगले भाव में होने

के कारण सूर्य चतुर्थ भाव का अपना फल दिया करेगा। चलित कुण्डली का उदाहरण दिया जाता है।

अथ चलितचक्रम्



ग्रहस्पष्ट, भावस्पष्ट तथा चलित का महत्त्व -

स्फुटखचारिविलेखनमन्तरा न विदितं सकलोऽपि शुभाशुभम्।
निगदितुं न विभुः सकलं यतः स्फुटखचारिविलेखनमत्र हि ।।

ताजक कौस्तुभ ग्रन्थ में ग्रहस्पष्ट तथा भावस्पष्ट के प्रयोजन में वर्णन है कि, संपूर्ण विषय का ज्ञाता भी ग्रह के स्पष्ट के विना, ग्रह का शुभ तथा अशुभ फल, जान ही नहीं सकता। अतः वर्षकाल के ग्रहों का स्पष्ट भी लिखना अनिवार्य है।

यथा कार्यजातं मनसोऽधीनमास्ते तथा भावसन्ध्योरधीनं समस्तम्।
फलं खेचराणामतो भावसन्धिप्रलेखो विधेयो जनुर्हायनाद्ये ।।

जिस प्रकार मन के अधीन समस्त कार्यों का समूह होगा है उसी प्रकार भावों के तथा उनकी संधियों के स्पष्ट के अधीन ग्रहों के फल हैं। इस कारण जन्मपत्र तथा वर्षपत्र आदि में संधि सहित भावों के स्पष्ट का लिखना अनिवार्य है।

विना चलितचक्रेण वृथोक्तं भावजं फलम्।
नारी यौवनसम्पन्ना पतिहीना न शोभते ।।

आचार्य माधव का मन्तव्य है कि, जिस प्रकार यौवनवती नारी, पति से रहित हो जाने पर शोभित नहीं होती है, उसी प्रकार चलित चक्र के विना भावजनति फल भी व्यर्थ रहते हैं। अतः चलित चक्र लिखना भी अनिवार्य है।

सायनग्रह स्पष्ट करने का क्रम- आजकल सायनगणना को विशेष महत्त्व दिया जा रहा है। अयनांश के संबंध में भी मतभेद रहा किन्तु केतकरीय अयनांश की वास्तविकता है। अतः यहाँ अक्त अयनांश का ही उपयोग है।

तात्कालिक ग्रह स्पष्ट में अयनांश युक्त करने से सायन ग्रह स्पष्ट होता है। अयनांश बनाने का क्रम तथा उदाहरण, पूर्वप्रकरण में दिया जा चुका है।

अयनांश ग्रह के स्पष्ट का उदाहरण- संवत् २०२३ यानी शक १८८८ के वृषके सूर्यकाल का अयनांश २३/२२/१७/१८ है । तात्कालिक सूर्यस्पष्ट १/२४/५७/२५ में तात्कालिक अयनांश २३/२२/१७/१८ युक्त किया तो २/१८/१९/४२/१८ हुए । यह सायन सूर्य का स्पष्ट है । इसी प्रकार अन्यान्यग्रह के स्पष्ट में अयनांश युक्त करने से उस ग्रह का सायन स्पष्ट बनता है । फिर सायन ग्रह स्पष्ट चक्र लिखना ।

सायन सूर्य स्पष्ट द्वारा लग्न स्पष्ट करने का क्रम- लग्नसारिणी में सायनसूर्य की राशि के सामने और अंश के नीचे के कोष्ठ से सूर्यफल लेकर इष्टकाल के घड़ी-पल-विपल में युक्त करना । स्पष्ट सायन सूर्य की कला-विकला को सायनसूर्य की राशि के स्वदेशोदय ध्रुव से गुणा करना । गुणा करने पर जो अंक आयें, उन्हें इष्टयुक्त किये हुए कोष्ठक के विपलों में युक्त करना । यदि विपल ६० या ६० से अधिक हो तो ६० से भाग देकर लब्धि को ऊपर पलमें युक्त करना तथा शेष को विपल के स्थान में रखना । यह घड़ी-पल-विपल के रूपमें इष्ट कोष्ठक होगा ।

लग्नसारिणी में इष्टकोष्ठक से जहाँ अल्प अंक मिले, उस कोष्ठकी राशि तथा अंश को लेना । इस राशि की संख्या के आगे अंश की संख्या रखनी । फिर आगे कला-विकला के स्थान में शून्य-शून्य रखना । तत्पश्चात् इष्टकोष्ठक का और अल्पकोष्ठक का अन्तर करना । यह अन्तर भाज्य होता है । इस पलादिक अन्तर को सवर्णित करके रखना।

लग्नसारिणी से लिये गये अल्प कोष्ठक का तथा ऐष्य (उसके आगे के कोष्ठ के अंक) कोष्ठक का अन्तर करना । यह पलादिक अन्तर भाजक होता है । इस पलादिक अन्तर को सवर्णित करना ।

पूर्वोक्त सवर्णित भाज्य को पूर्वोक्त सवर्णित भाजक से भाग देना । जो लब्धि आयेगी वह अंश है । शेष को ६० से गुणा करके पूर्वोक्त भाजक से भाग देना । लब्धि कला होगी । शेष को ६० से गुणा करके पूर्वोक्त भाजक से भाग देना । लब्धि विकला होगी । इस प्रकार तीन अंश आदि लब्धियों को अनुपात से रखना । इन तीन फलों को इष्टयुक्त कोष्ठक से अल्प कोष्ठक के राशि-अंश आदि में युक्त करना । जो योग फल बने उसमें से अयनांश को हीन (घटाना) करना । जो शेष बचता है, वह लग्न भाव का स्पष्ट होता है ।

सायन स्पष्ट सूर्य से लग्नभाव के स्पष्ट का उदाहरण - इष्टकाल ४९/२९ सायन सूर्य स्पष्ट २/१८/१९/४२/१८/लग्न स्पष्ट करना है ।अतः मिथुनराशि सायन सूर्य की है और १८ अंश हैं । लग्नसारिणी में मिथुन राशि के सामने और १८ अंश के नीचे काष्ठमें सूर्यफल १५/४/५ है । इसे लेकर इष्ट काल में युक्त किया तो ४/३३/५ हुआ । यह इष्ट से युक्त कोष्ठक है ।

सायन सूर्य की मिथुन राशि का मान ५/९ है । इसको दो से गुणा किया तो १०/१८ हुए । यह मिथुन राशि का स्वोदय ध्रुव है । इस स्वोदय ध्रुव से सायन सूर्य की

कला १९ और विकला ४२ को गुणा किया तो १९×१०=१९०। ४२×१८=७५६ हुए। ७५६ विकला को ६० से भाग दिया १२ लब्धि आयी। शेष का त्याग किया। १२ लब्धि को ऊपर १९० में युक्त किया तो २०२ हुए। इन्हें इष्ट से युक्त कोष्ठक के ५ विपल में युक्त किया तो २०७ हुए। इनमें ६० से भाग दिया तो ३ लब्धि आयी और २७ शेष बचे। ३ लब्धि को ऊपर ३३ पल में युक्त किया ३६ हुए। विपल के स्थान में २७ शेष रखे। अब ४/३६/२७ यह इष्ट युक्त कोष्ठक हुआ। लग्न सारिणी में इष्टयुक्त कोष्ठक से अल्प कोष्ठक ४/३१/३९ मेष राशि के सामने १३ अंश के नीचे के कोष्ठ में है। अत: मेष राशि का शून्य और १३ अंश लिये गये। इसके आगे कला-विकला के स्थान में शून्य-शून्य रखे गये। ०/१३/०/० हुए। यह राश्यादिक है।

इष्टयुक्त कोष्ठक ४/३६/२७ और अल्पकोष्ठक ४/३१/३९ का अन्तर किया तो ०/४/४८ पलादिक अन्तर हुआ। यह भाज्य है। इसका सवर्णित पिण्ड बनाया तो २८८ हुए।

अल्पकोष्ठक ४/३१/३९ और उससे अगले ऐष्य कोष्ठक ४/३९/४१ का अन्तर किया तो ०/८/२ पलादिक अन्तर हुआ। यह भाजक है। इसका सवर्णित पिण्ड बनाया तो ४८२ हुए।

पूर्वोक्त सविर्णत पिण्ड भाज्य २८८ में पूर्वोक्त सवर्णित पिण्ड भाजक ४८२ से भाग दिया तो शून्य लब्धि आयी और २८८ शेष बचे। लब्धि को पृथक् रखा। शेष २८८ को ६० से गुणा किया तो १७२९० हुए। इनमें ४८२ भाजक से भाग दिया तो ३५ लब्धि आयी और ४२० शेष बचे। लब्धि को पृथक् रखा। शेष ४२० को ६०से गुणा किया २५२०० हुए। इनमें ४८२ भाजक से भाग दिया तो ५२ लब्धि आयी और शेष का त्याग किया। इस प्रकार आये तीन लब्ध फलों को अनुपात से रखा तो ०/३५/५२ अशांदिक हुए। इन्हें पूर्वोक्त राश्यादि ०/१३/०/० में युक्त किया तो ०/१३/३५/५२ हुए। इनमें २३/२२/१७/१८ अयनांश को हीन किया तो ११/२०/१३/४२ शेष बचे। यह लग्नभाव का स्पष्ट हुआ। इसमें ६ राशि युक्त करने से ५/२०/१३/३४/४२ सप्तम भाव का स्पष्ट हुआ।

सायन स्पष्ट सूर्य से दशम भाव के स्पष्ट का क्रम -

भांशजौ सायनार्कस्य खाङ्गाङ्कौ स्वेष्टयुक् कृतौ।
कलाद्यास्तद् ध्रुवघ्नाः स्युर्विपलाद्यास्तु संयुताः।।
तदल्पकोष्ठजौ भांशौ ग्राह्यौ लिप्तादिका वियत्।
अल्पेष्टविवरात् पार्श्वान्तराप्तांशादिसंयुतौ।।
अयनांशादिवियुताल्लग्नं मध्यं स्फुटं भवेत्।।

१. प्रथम दशम भावका इष्ट बनाना। दिनार्ध यानी दिनमान के आधे भाग को इष्टकाल में हीन करने से दशम भाव का इष्ट होता है।

२. इष्टकाल के सूर्य के स्पष्ट में अयनांश युक्त करने से सायन सूर्य बनता है। भावसारिणी में सायनसूर्य की राशि के सामने और अंश के नीचे जो सूर्यफल हो, उसे

लेकर इष्टकाल के घड़ी-पल-विपल में युक्त करना । यह योगफल, इष्ट से युक्त कोष्ठक होता है ।

३. सायन सूर्य के स्पष्ट में जो कला-वकला हैं, उन्हें सायन सूर्य की राशि के ध्रुव से गुणा करना और गुणा करने पर आये हुए अंकों को इष्ट से युक्त किये हुए कोष्ठक के विपल की संख्या में युक्त करना ।

४. इष्टसे युक्त कोष्ठक से अल्प (कम) अंक, भावसारिणी में जिस राशि के सामने और जितने अंश के नीचे के कोष्ठ में हो उस राशि की संख्या में १ कम करके राशि की संख्या तथा अंश की संख्या लेना । इसके आगे कला और विकला के स्थान में शून्य-शून्य रखना । यह राश्यादि होता है ।

५. इष्टयुक्त कोष्ठक का और भाव सारिणी से लिये गये अल्प कोष्ठक का अन्तर करना । यह पलादिक अन्तर भाज्य होता है । इस पलादिक अन्तर को सवर्णित करना ।

६. भावसारिणी से लिये गये अल्प कोष्ठक का तथा उससे आगे के ऐष्य कोष्ठक का अन्तर करना । यह पलादिक अन्तर भाजक होता है । इस पलादिक अन्तर को सवर्णित करना ।

७. पूर्वोक्त भाज्य में भाजक से भाग देकर लब्धि को पृथक् रखना और शेष को ६० से गुणा करके पूर्वोक्त भाजक से भाग देना । लब्धि को पृथक् रखना और शेष को ६० से गुणा करके पूर्वोक्त भाजक से भाग देना । लब्धि को पृथक् रखना । इस प्रकार तीन लब्धफल लेने । लब्धियों को अनुपात से रखना । पहिली बार आयी लब्धिको अंश जानना, दूसरी बार की लब्धि को कला और तीसरी बार की लब्धि को विकला जानना।

८. भावसारिणी में इष्ट कोष्ठक के द्वारा लिये गये अल्प कोष्ठक के राश्यादि में पूर्वोक्त तीन फलों को युक्त करना । फिर इस योग फल में अयनांश को हीन करना। जो शेष बचता है, वह दशमभाव का स्पष्ट होता है ।

९. दशमभाव के स्पष्ट में ६ राशि हीन करने से चतुर्थ भाव का स्पष्ट होता है। पूर्वोक्त क्रम से भावों का तथा संधियों का स्पष्ट होता है ।

सायन स्पष्ट सूर्य से दशम भाव के स्पष्ट का उदाहरण - इष्टकाल ४९/२९। इष्टकालिक स्पष्ट सूर्य १/२४/५७/२५, दिनमान ३३/४९, दिनार्ध १६/५४/३०, अयनांश २३/२२/१७/१८, सायन स्पष्ट सूर्य २/१८/१९/४२/१८।

१. दशम भाव का इष्ट बनाना है । अत: दिनार्ध १६/५४/३० को इष्टकाल ४९/२९ में हीन किया तो ३३/३४/३० शेष बचे । यह दशम भाव का इष्ट बना । सायन सूर्य की राशि वृष है और अंश १८ हैं । भावसारिणी में वृष राशि के सामने और १८ अंश के नीचे के कोष्ठ में से सूर्यफल ११/३५/२६ लेकर दशम भाव के इष्ट में युक्त किया $\frac{३३/३४/३०}{११/३५/२६}$ $\overline{४४/३९/५६}$ तो योगफल ४४/३९/५६ हुआ । यह इष्ट से युक्त कोष्ठक हुआ । इसको पृथक् रखा ।

२. सायन स्पष्ट सूर्य की ४२ कला और १८ विकला को वृष राशि के लंकोदय के ध्रुव पल-विपलों ९/५८ से गुणा किया ४२×९= ३७८ । १८×५८ = १०४४ हुए। विपलों १०४४ में ६० से भाग दिया तो १७ लब्धि आयी और २४ शेष बचे । शेष का त्याग किया। १७ लब्धि को ऊपर ३७८ में युक्त किया तो ३९५ हुए । इन्हें इष्ट से युक्त कोष्ठक के ५६ विपल में युक्त किया तो ४४/३९/५१ हुए । ४५१ विपलों में ६० से भाग दिया तो ७ लब्धि आयी और ३१ शेष बचे । ३१ शेष को विपल के स्थान में रखा और ७ लब्धि को ऊपर ३९ पल में युक्त किया ४६ हुए । अब ४४/४६/३१ इष्ट कोष्ठक हुआ ।

३. इस ४४/४६/३१ से न्यूनसंख्या भावसारिणी में ४४/३८/२८ है । यह धनराशि के सामने और ५ अंश के नीचे के कोष्ठ में है । इष्ट से कम होने के कारण यह अल्पकोष्ठक है । इसकी ८ राशि और ५ अंश लिये । इसके आगे कला और विकला के स्थान में शून्य-शून्य लिखा । इस प्रकार ८/५/०/० राश्यादि हुआ ।

४. पूर्वोक्त इस कोष्ठक ४४/४६/३१ का और पूर्वोक्त ४४/३८/२८ अल्पकोष्ठक का अन्तर किया $\frac{४४/४६/३१}{४४/३८/२८}$ तो ०/८/३ अन्तर हुआ । यह पलादिक अन्तर भाज्य है। इसको सवर्णित किया तो ४८३ हुए ।

५. भावसारिणी में अल्प कोष्ठक से अगला ऐष्य कोष्ठक ४४/४९/१४ है । अल्प कोष्ठक और ऐष्य कोष्ठक के अन्तर $\frac{४४/४९/१४}{४४/३८/२८}$ करने पर ०/१०/४६ शेष बचा। यह पलादिक अन्तर भाजक है । इसको सवर्णित किया तो ६४६ हुए ।

६. पूर्वोक्त भाज्य ४८३ में ६४६ भाजक से भाग दिया तो शून्य लब्धि आयी और ४८३ शेष बचे । लब्धि को पृथक् रखा । शेष ४८३ को ६० से गुणा किया २८९८० हुए। इनमें पूर्वोक्त भाजक ६४६ से भाग दिया तो ४४ लब्धि आयी और ५५६ शेष बचे । लब्धि को पृथक् रखा और शेष ५५६ को ६० से गुणा किया तो ५१ लब्धि आयी और ४१४ शेष बचे । लब्धि को पृथक् रखा और शेष का त्याग किया । इस प्रकार आये तीन लब्धफलों को अनुपात से रखा तो ०/४४/५१ हुए । ये अंशादिक फल हैं । अर्थात् शून्य अंश,४४ कला और ५१ विकला है ।

७. अंशादिक फल ०/४४/५१ को पूर्वोक्त ८/५/०/० राश्यादि में युक्त किया $\frac{०८/५/०/०}{०/४४/५१}$ तो हुआ इसमें २३/२२/१७/१८ अयनांश को हीन किया तो $\frac{८/०५/४४/५१}{८/५/४४/५१}$ $/२३/२२/१७$ ७/१२/२२/३४ शेषं बचा । यह दशम भाव का स्पष्ट हुआ।

नोट - लग्न आदि भाव के स्पष्ट करने का अन्यक्रम भी है किन्तु उक्त क्रम शिष्ट सम्मत है । अतः इसी को प्रस्तुत किया गया है ।

ग्रह के फल का विवरण - ग्रह का फल चार प्रकार का होता है । १. पूर्ण । २. शून्य । ३. चय । ४. क्षय । जिस भाव में जो ग्रह बैठा है, उस भाव का

स्पष्ट तथा उस ग्रह का स्पष्ट, राशि-अंश-कला और विकला में बिल्कुल समान हो, उस ग्रह का फल पूर्ण (पूरा) होता है । जो ग्रह, जिस भाव में बैठा है, उस भाव की विराम संधि का स्पष्ट तथा उस ग्रह का स्पष्ट, बिल्कुल समान होता है तो उस ग्रह का फल शून्य होता है अर्थात् ऐसा ग्रह, अपना भाव संबंधी फल कुछ भी नहीं देता है ।

ग्रह का चयफल-क्षयफल तथा विंशोपका (विश्वा) स्पष्ट करने का क्रम प्रस्तुत किया जाता है ।

भावतुल्ये ग्रहे रूपं सन्धितुल्ये तु निष्फलम् ।
भावसन्ध्यन्तरेणाप्तं खेटसन्ध्यन्तरं च यत् ।।
भावान्न्यूनाधिके खेटे फलं वृद्धिक्षयाभिधम् ।।
न्यूनसन्धिग्रहाभावाच्छोध्यो भावाल्पके खगे ।
तदग्रिमाच्च संशोध्यो ग्रहो भावस्तथाधिके ।
फलस्याग्न्यंशको विश्वा यद्वा विंशहतं फलम् ।।

१. भाव में स्थित ग्रह का स्पष्ट तथा उस भाव का स्पष्ट, पूर्णरूप से समान होने पर पूर्णफल होता है पूर्ण फल का रूप- १/०/०/

२. भाव की विराम संधि का स्पष्ट तथा भाव में स्थित ग्रह का स्पष्ट, पूर्णरूप से समान होने पर ग्रह का शून्यफल होता है । शून्य फलका रूप - ०/०/०/

३. जिस भाव में जो ग्रह बैठा है, यदि उस ग्रह का स्पष्ट, भाव के स्पष्ट से न्यून होता है तो उस ग्रह का फल 'चय' होता है ।

४. जिस भाव में जो ग्रह बैठा है, यदि उस ग्रह का स्पष्ट, उस भाव के स्पष्ट से अधिक होता है तो उस ग्रह का फल 'क्षय' होता है ।

चय फल के स्पष्ट करने का क्रम - यदि भाव में स्थित ग्रह का स्पष्ट, यदि उस भाव के स्पष्ट से न्यून है तो, उस भाव की आरंभ संधि के साथ उस ग्रह के स्पष्ट का अन्तर करना जो शेष बचता है वह उस ग्रह का चयफल कहलाता है । इसका अर्थ यह है कि, ग्रह के भाव संबंधी फलों में इस औसत से फल मिलेगा ।

चय फल के स्पष्ट का उदाहरण - कुण्डली में शनि लग्नभाव में मीनराशि का है । उसका स्पष्ट लग्नभाव के स्पष्ट से कम है । अत: शनि का फल न तो पूर्ण है और न शून्य ही है किन्तु उसका स्पष्ट, भाव के स्पष्ट से कम होने के कारण उसका फल चय है। कितना चयफल है ? यह जानना है । लग्नभाव के स्पष्ट से शनि का स्पष्ट न्यून है । अत: लग्नभाव की आरंभ सन्धि (द्वादशभाव की विराम संधि) के स्पष्ट १०/२४/४०/३४ से शनि के स्पष्ट ११/३/५४/३१ से अन्तर $\frac{११/३/५४/३१}{१०/२४/४०/३४}$ किया ०१/९/१३/५७ चय फल प्राप्त हुआ।

क्षय-फल के स्पष्ट करने का क्रम - जिस भाव में जो ग्रह बैठा है, यदि उस ग्रह का स्पष्ट, उस भाव के स्पष्ट से अधिक है तो उस भाव की विराम संधि के स्पष्ट के साथ उस ग्रह के स्पष्ट का अन्तर करना। जो शेष बचता है, वह उस ग्रह का 'क्षय फल' होता है। इसका अर्थ यह है कि, ग्रह के भाव संबंधी फलों में इस औसत से कमी होगी।

क्षय फल के स्पष्ट करने का उदाहरण - कुण्डली में सूर्य तृतीय भाव में वृष राशि का है। उसका स्पष्ट तृतीय भाव के स्पष्ट से अधिक है। अत: उसका फल न तो पूर्ण है और न शून्य ही है किन्तु क्षय है। क्योंकि, सूर्य का स्पष्ट, तृतीय भाव के स्पष्ट से अधिक है, वह क्षयफल कितना है ? यह जानना है। सूर्य का स्पष्ट, तृतीय भाव के स्पष्ट से अधिक है अत: तृतीय भाव की विराम संधि के स्पष्ट १/२४/२३/०१ के सूर्य के १/२४/५७/२५ स्पष्ट से अन्तर किया $\frac{१/२४/५७/२५}{१/२४/२३/०१}$ तो ०/०/३४/२४ क्षय फल प्राप्त हुआ।

विंशोपका का विवरण - विंशोपका का अर्थ विश्वा है। विश्वे २० होते हैं। विश्वे निकालने पर फल के औसत का स्पष्टीकरण होता है। अर्थात् चयफल जितने विश्वे हैं, उतना ही ग्रह का भावजनित फल होगा। इसी प्रकार क्षयफल जितने विश्वे हैं,उतना ही ग्रह का भावजनित फल नहीं होगा। चयफल तथा क्षयफल का स्पष्ट होने पर ही विंशोपका निकलते हैं। विंशोपका के संबंध में आचार्य माधव का सिद्धान्त :-

विंशोपकाबलं बिना कथ्यते भावजं फलम्।
तत्सर्वं व्यर्थतां याति मद्यभाण्डोदकं यथा।।

विंशोपका बल के बिना यदि भावजनित फल कहा जाता है तो वह इस प्रकार व्यर्थ होता है, जिस प्रकार की मदिरा के पात्र का जल व्यर्थ होता है।

विंशोपका लाने का क्रम - ग्रहसंध्यन्तर तथा भाव संध्यन्तर निकालना। इनमें ग्रह संध्यन्तर भाज्य होता है और भाव सन्ध्यन्तर भाजक होता है। ग्रहसंध्यन्तर तथा भावसंध्यन्तर दोनों ही अंशादिक होते हैं। अत: दोनों को सवर्णित करके भाज्यपिण्ड तथा भाजक पिण्ड बनाना।

अंशादिक के सवर्णित पिण्ड बनाने का क्रम - स्पष्ट की राशि को ३० से गुणा करके अंश की संख्या उसमें युक्त करनी। जो संख्या बने उसे ६०से गुणा करके उसमें कला की संख्या युक्त करनी। जो संख्या बने उसे ६० से गुणा करके उसमें विकला की संख्या जोड़नी। जो संख्या बनेगी वह सवर्णित पिण्ड होगा।

सवर्णित पिण्ड बनाने का उदाहरण - सूर्य का स्पष्ट १/२४/५७/२५ है। यहाँ १ राशि को ३० से गुणा करके २४ अंश युक्त किये ५४ हुए। इनको ६० से गुणा किया ३२४० हुए। इनमें ५७ कला युक्त की तो ३२९७ हुए। इनको ६० से गुणा किया १९७८२० हुए। इनमें २५ कला युक्त की तो १९७८४५ हुए। यह सवर्णित पिण्ड बना।

ग्रह संध्यन्तर बनाने का क्रम - भाव की संधि के स्पष्ट से ग्रह के स्पष्ट का अंतर करने पर ग्रहसंध्यन्तर बनता है।

ग्रह संध्यंतर बनाने का उदाहरण - कुण्डली में सूर्य तृतीय भाव में है। तृतीय भाव की संधि का स्पष्ट १/२४/२३/१ है। सूर्य का स्पष्ट १/२४/५७/२५ है।

इन दोनों का अन्तर किया $\frac{१/२४/५७/२५}{१/२४/२३/०१}$ $\overline{०/००/३४/२४}$ तो ०/०/३४/२४ अन्तर हुआ। यही ग्रह संध्यन्तर है ।

भाव संध्यन्तर बनाने का क्रम - भाव के स्पष्ट का तथा भाव की विराम संधि का स्पष्ट, इन दोनों का जो अन्तर होता है, उसे भाव संध्यन्तर कहते हैं ।

भावसंध्यन्तर बनाने का उदाहरण - तृतीय भाव का स्पष्ट १/९/२७/३९ है । तृतीय भाव की संधि का स्पष्ट ०१/२४/२३/०१ है । इन दोनों का अन्तर $\frac{१/२४/२३/०१}{१/९/२७/३९}$ $\overline{०/१४/५५/२२}$ किया तो ०/१४/५५/२२ शेष बचा । यही भाव संध्यन्तर है ।

नोट - ग्रह संध्यन्तर और भाव संध्यन्तर बना लेने पर फिर पूर्वोक्त रीति से इनके सवर्णित पिण्ड बनाने ।

ग्रह संध्यन्तर का सवर्णित पिण्ड बनाने का उदाहरण - ग्रह संध्यन्तर ०/०/३४/२४ है । राशि शून्य है और अंश भी शून्य है । अत: इनके साथ कोई क्रिया नहीं की गयी । ३४ कला को ६० से गुणा करके २४ विकला युक्त की तो ३४×६०=२०४० +२४=२०६४ हुए । यह ग्रह संध्यन्तर भाज्य पिण्ड बना ।

भाव संध्यन्तर का सवर्णित पिण्ड बनाने का उदाहरण - भाव संध्यन्तर ०/१४/५५/२२ है । यहाँ राशि शून्य है । अत: उसे ३० से गुणा नहीं किया गया । १४ अंश को ६० से गुणा किया गया ८४० हुए । इनमें कला की ५५ संख्या को युक्त किया ८५९ हुए । इन्हें ६० से गुणा करके २२ विकला युक्त की ८५९×६०= ५१४४०+२२=५१४६६ हुए । यह भावसंध्यन्तर भाजक पिण्ड बना ।

नोट - ग्रह संध्यन्तर भाज्य पिण्ड को भाव संध्यन्तर भाजक पिण्ड से भाग देने पर लब्धि को पृथक रखना । शेष को ६० से गुणा करके भाजक से भाग देना । इस क्रम से तीन लब्धफल लेने फिर इनको अनुपात से रखना । यही ग्रह का चयफल या क्षयफल होता है । प्रत्येक ग्रह का फल निकालना अनिवार्य है ।

सूर्य के क्षयफल के निकालने का उदाहरण - पूर्वोक्त २०६४ भाज्य को पूर्वोक्त भाजक ५१४६६ से भाग दिया तो शून्य लब्धि और २०६४ शेष बचे । इनको ६० से गुणा किया १२३८४० हुए । इनको ५१४६६ भाजक से भाग दिया तो २ लब्धि आयी और २०९०८ शेष बचे । लब्धि को पृथक् रखा । शेष २०९०८ को ६० से गुणा किया १२५४४८० हुए । इनको ५१४६६ से भाग दिया तो २४ लब्धि आयी । इस प्रकार आये तीन लब्ध फलों को अनुपात से रखा तो ०/२/२४ हुए । अर्थात् शून्य अंश, २ कला और २४ विकला, यह सूर्य का क्षयफल है । इसी प्रकार अन्यान्यग्रहों के फलों का साधन करना ।

विंशोपका (विश्वे) निकालने का क्रम - ग्रह का फल चार प्रकार का माना गया है । १. पूर्ण । २. शून्य । ३. चय । ४. क्षय । इनमें चय और क्षय फल के

ही विश्वे निकाले जाते हैं। विश्वे २० होते हैं। भाव में स्थित ग्रह का जितना फल आचार्यों ने कहा है, उसे २० विश्वे जानना। चय फल जितने विश्वे होता है, वह फल उसी औसत से होता है। क्षयफल जितने विश्वे होता है, वह फल उसी औसत से नष्ट हो जाता है।

फल का तृतीय अंश विश्वा होता है अथवा फल को २० से गुणा करने पर विश्वा होता है।

तृतीय अंश निकालने का क्रम - राशि की संख्या को ३ से भाग देकर लब्धि को पृथक् रखना और शेष को ६० से गुणा करके कला की संख्या मिलानी। फिर इस योग में ३ से भाग देकर लब्धि को पृथक् रखकर शेष को ६० से गुणा करके विकला की संख्या मिलानी। फिर ३ से भाग देकर लब्धि को ग्रहण करना और शेष का त्याग करना। लब्धियों को अनुपात से रखना। यह विश्वा-प्रतिविश्वा और अनुविश्वा होंगें।

तृतीय अंश (भाग) निकालने का उदाहरण - सूर्य का क्षयफल ०/२/२४ है। शून्य अंश में भाग नहीं दिया गया। लब्धि और शेष शून्य है। २ में ३ से भाग दिया तो शून्य लब्धि आयी और २ शेष बचे। २ को ६० से गुणा करके २४ विकला युक्त की तो १४४ हुए। इनमें ३ से भाग दिया तो ४८ लब्धि आयी। लब्धियों को अनुपात से रखा ०/०/४८ हुए। यह विश्वा है। इसका अर्थ यह है कि, सूर्य के २० विश्वे फल में केवल ४८ अनुविश्वा फल शेष रह गया है, शेष सब फल का क्षय हो गया है।

विश्वा निकालने का अन्य उदाहरण - सूर्य के क्षयफल ०/२/२४ को २० से गुणा किया ४०/४८० हुए। ४० में ६० से भाग दिया शून्य लब्धि आयी और ४० शेष बचे। ४० को ६० से गुणा करके ४८० युक्त किये ४०×६०=२४००+४८०= २८८० हुए। इनमें ६० से भाग दिया तो ४८ लब्धि आयी। लब्धियों को अनुपात से रखा तो ०/०/४८ हुए। यही विश्वा है।

नोट - प्रत्येक ग्रह का चयफल या क्षयफल निकालकर उसके विश्वे निकालने फिर फल का साधन, फलका नाम और विश्वे, चक्र में लिखना। चक्र का नमूना दिया जाता है। चक्र के खाली स्थान, क्रम के आधार पर उदाहरण की सहायता से भरिये।

अथ ग्रहाणां चय-क्षय-फल-विंशोपकाचक्रम्

ग्रह	सू.	चं.	मं.	बु.	वृ.	शु.	श.	रा.
	०							
	२							
फल	२४							
फल नाम	क्षय							
	०							
विश्वा	०							
	४४							

दृष्टि के साधन का क्रम -

द्रष्टा विहीनदृश्यस्य क्रमादेकादिभे दृशः ।
भागार्धं तिथियुग् भागा भागर्द्धोनशराब्धयः ।।
भोग्यभागा द्विनिघ्नांशाः क्रमात् षड्भाधिके ग्रहे ।
दिग्भ्यः शुद्धे लवार्धं च ज्ञेया लिप्तादिका दृशः ।।

ग्रह, भाव या स्थान को तथा ग्रह को देखता है । ग्रह के देखने को ग्रहदृष्टि कहते हैं । जातक की दृष्टि का विवरण पूर्व संज्ञाप्रकरण में प्रस्तुत किया जा चुका है। जातक से ताजक की दृष्टि भिन्न है ।

ताजक की दृष्टि का विवरण - ताजक में दृष्टि तीन प्रकार की हैं । १. मित्र दृष्टि । २. समदृष्टि । ३. शत्रुदृष्टि । जो ग्रह, जिस भाव में बैठता है, वह वहाँ से तीसरे, पाँचवें, नवें और ग्यारहवे भाव पर मित्रदृष्टि रखता है । पहिले, चौथे, सातवें और दशवें स्थान पर शुत्रदृष्टि होती है । उक्त स्थानों के अतिरिक्त अन्य स्थानों पर समदृष्टि होती है । इसी प्रकार ग्रह की ग्रह पर भी दृष्टि होती है । ग्रह दृष्टि साधन से ग्रह की कलात्मक दृष्टि निकल आती है । ग्रह की ग्रह पर दृष्टि साधन का चक्र लिखना अनिवार्य है । इसी प्रकार ग्रह की भावों पर दृष्टि का साधन करके चक्र लिखना अनिवार्य है । ज्यौतिष शास्त्र में ग्रह की दृष्टि को विशेष महत्त्व दिया गया है ।

फलं दृष्टिप्रमाणेन स्वयं यच्छन्ति खेचराः ।
तत्फलं बलमानेन ज्ञात्वादेश्यं शुभाशुभम् ।।

ग्रह, स्वयं दृष्टि के अनुसार फल दिया करता है । ग्रह के बलके अनुरूप उसका शुभ-अशुभ फल जानकर कथन करना उचित है ।

वर्षकाल में भी ग्रह की दृष्टि का विशेष महत्त्व माना गया है । ताजकालङ्कार ग्रन्थ में उल्लेख है -

नभश्चराणां न प्रोक्तं यावद्वीक्षणलक्षणम् ।
तावन्न शक्यते वक्तुं फलं वर्षे शुभाशुभम् ।।

ग्रहों की कितने मान में दृष्टि है, जब तक यह न जान लिया जायगा तबतक वर्ष में ग्रहों का शुभ-अशुभ फल नहीं जाना जा सकेगा ।

अगले प्रकरण में दृष्टि फल लिखा जायगा । यदि ग्रह की पूर्ण दृष्टि होती है तो दृष्टि का फल पूर्ण (१/०/०) होता है । जितनी कलात्मक दृष्टि होगी, उसी औसत से दृष्टि फल भी होगा ।

ग्रह की कलात्मक दृष्टि के साधन का क्रम - दृष्टि के संबंध में द्रष्टा और दृश्य को जान लेना अनिवार्य है ।

द्रष्टा की परिभाषा - यस्य ग्रहस्य दृष्टिरानीयते असौ द्रष्टा । अर्थात् जिस ग्रह की दृष्टि निकाली जाती है, उसे द्रष्टा कहते हैं ।

दृश्य की परिभाषा -यं ग्रहं प्रति दृष्टिरानीयते असौ दृश्यः । अर्थात् जिस ग्रह पर दृष्टि लायी जाती है, उसे दृश्य कहते हैं ।

दृश्य ग्रह के स्पष्ट में द्रष्टा ग्रह के स्पष्ट को हीन करना । जो शेष बचे उसमें १ राशि से ९ राशि तक निम्नलिखित क्रियाएँ करनी ।

(क) १ राशि शेष बचे तो राशि को छोड़कर अंश की संख्या को आधा करना ।

(ख) २ राशि शेष बचे तो अंश की संख्या में १५ युक्त करना ।

(ग) ३ राशि शेष बचे तो अंश की संख्या का आधा कर ४५ में हीन करना ।

(घ) ४ राशि शेष बचे तो अंश की संख्या को ३० में हीन करना ।

(ङ) ५ राशि शेष बचे तो अंश की संख्या को २ से गुणा करना ।

(च) ६, ७,८,९ राशियों में से कोई राशि शेष बचे तो शेष राशि अंश, कला,विकला को १० राशि (९/२९/५९/६०) में शोधना यानी हीन करना (घटाना) । हीन करने पर जो शेष बचे उसमें अंश आदि की संख्या को आधा करना ।

उक्त दृष्टि साधन के क्रम से ग्रह की कलात्मक (कला-विकला और अनुकला के रूप में) दृष्टि का स्पष्ट होता है ।

ग्रह की कलात्मक दृष्टि के साधन का उदाहरण - कुण्डली में मीन लग्न है। तृतीय स्थान में सूर्य वृष राशिका है । दशम स्थान में चंद्र कुंभराशि का है। सूर्य की चंद्र पर शत्रुदृष्टि है । सूर्य द्रष्टा है और चंद्रमा दृश्य है । सूर्य की चंद्रमा पर कितनी कलात्मक दृष्ट है ? यह जानना है ।

द्रष्टा ग्रह सूर्य के स्पष्ट १/२४/५७/२५ को दृश्य ग्रह चंद्र के स्पष्ट १०/१७/१०/४० में हीन किया तो ८/२२/१३/१५ शेष बचे । यहाँ ८ राशि शेष बची है । अतः पूर्वोक्त नियमानुसार शेष राश्यादि को १० राशि में शोधित किया

$$\begin{array}{r} ८/२९/५९/६० \\ \underline{८/२२/१३/१५} \\ १/०७/४६/४५ \end{array}$$

तो १ राशि ७ अंश ४६ कला ४५ विकला, शेष बचा । राशि को छोड़कर अंश आदि का आधा किया तो ३/५३/२२/३० हुआ । यहाँ अन्तिम संख्या ३० को त्याग कर क्रम से तीन अंक लिये तो ३/५३/२२ हुए । यहाँ फलित निकला कि सूर्य की ३ कला ५३ विकला २२ अनुकला दृष्टि चंद्रमा पर है ।

नोट - दृष्टि साधन में यदि दृश्य के स्पष्ट में द्रष्टा के स्पष्ट को घटाकर यदि १० आदि राशि शेष बचती है तो वहाँ शून्य दृष्टि (०/०/०) लिखनी ।

जिस भाव पर ग्रह की दृष्टि हो उस भाव को दृश्य और ग्रह को दृष्टा मानकर पूर्वोक्त क्रम से दृष्टि का साधन करना । चक्र के खाली स्थानों में कलात्मक दृष्टि लिखिये।

अथ ग्रहाणामुपरि ग्रहदृष्टिसाधनचक्रम्

सू.	चं.	मं.	बु.	वृ.	शु.	श.	सू.		
० ० ०							चं.		
०३ ५३ २२	० ० ०						मं.		
		० ० ०					बु.		
			० ० ०				वृ.		
				० ० ०			शु.		
					० ० ०		श.		
						० ० ०			

भावपर ग्रह की कलात्मक दृष्टि के साधन का उदाहरण - कुण्डली में मीन लग्न है। तृतीय स्थान में वृष राशि का सूर्य है। उसकी लग्नभाव पर मित्र दृष्टि है। सूर्य की लग्नभावपर कितनी कलात्मक दृष्टि है ? यह जानना है। यहाँ लग्न भाव दृश्य है और सूर्य द्रष्टा है। दृश्य लग्नभाव के स्पष्ट ११/९/४६/११ में द्रष्टा सूर्य के स्पष्ट १/२४/५७/२५ को हीन किया तो ९/१४/४८/४६ शेष बचे। पूर्वोक्त नियम के अनुसार ९राशि शेष रहने पर १० राशि (९/२९/५९/६०) में शोधन किया तो०/१५/११/१४ शेष बचे। शून्यराशि को छोड़कर अंश आदि का आधा किया तो ७/३५/३७ हुआ। यही लग्न भाव पर सूर्य की कलात्मक दृष्टि है। इसी प्रकार प्रत्येक ग्रह की भावों पर दृष्टि साधन कर चक्र में लिखनी। चक्र के खाली स्थानों को क्रम के आधार पर उदाहरण की सहायता से भरिये।

अथ भावानामुपरि ग्रहदृष्टिसाधनचक्रम्

भाव	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
सू	० ७ ३५											
चं.												
मं.												
व.												
वृ.												
शु.												

ग्रहमैत्री का विवरण - ग्रह की मैत्री दो प्रकार की है । १. नैसर्गिक २. तात्कालिक । तात्कालिक ग्रहमैत्री को ताजक में विशेष मान्यता दी गयी है ।

त्रिपञ्चनवमायेषु स्थितो मित्रग्रहो भवेत् ।
केन्द्रेषु शत्रुर्विज्ञेयो ह्यन्यस्थाने समो भवेत् ।।

वर्ष कुण्डली में जिस ग्रह से जो ग्रह, ३,५,७,९,११ स्थान में होता है तो वह उसका तात्कालिक मित्र होता है । १,४,७,१० स्थान में ग्रह हो तो वह तात्कालिक शत्रु होता है । अन्य स्थान (२,६,८,१२) का ग्रह सम होता है ।

स्थिर मैत्री -चन्द्रार्का रेज्याः परस्परं मित्राणि शेषाश्चेतरथा रिपवः ॥

स्थिर मैत्री (नैसर्गिक या स्वाभाविक मैत्री) में सूर्य, चंद्र, मंगल और वृहस्पति, परस्पर मित्र हैं । बुध, शुक्र, शनि, ये भी परस्पर मित्र हैं । इनके अतिरिक्त शेष ग्रह शत्रु होते हैं । स्थिर मैत्री में मित्र और शत्रु होते हैं किन्तु सम नहीं होते । सरलता से समझने के लिए सारिणी प्रस्तुत की जाती है ।

स्थिरमैत्री-सारिणी

ग्रह	सू.	चं.	मं.	बु.	वृ.	शु.	श.
मित्र	चं. मं. वृ.	सू. मं. वृ.	सू. चं. वृ.	शु. श.	सू. चं. म.	बु. श.	बु. शु.
शत्रु	बु. शु. श.	बु. शु. श.	बु. शु. श.	सू. चं. मं. वृ.	बु. शु. श.	सू. चं. मं. वृ.	सू. चं. मं. वृ.

मैत्री के संबंध में आचार्य यादव का मन्तव्य है :-

विना मित्रादिचक्रेण बलज्ञानं न जायते ।
तस्माद् विलिखयेच्चक्रं मित्रशत्रुसमाह्वयम् ।।

मैत्रीचक्र के विना बल का ज्ञान नहीं होता । अतः वर्षपत्र में मित्र-शत्रु-सम ग्रहों से संबंधित मैत्री चक्र का लिखना अत्यावश्यक है ।

नोट- सारिणी तो सबके लिए एक ही है किन्तु तात्कालिक मैत्री चक्र, प्रत्येक के लिए भिन्न-भिन्न होता है ।

तात्कालिक ग्रहमैत्री का उदाहरण - कुण्डली में सूर्य तृतीय स्थान में हैं । उससे चंद्रमा, दशम स्थान में है, अतः वह सूर्य का तात्कालिक शत्रु है । सूर्य से मंगल प्रथम स्थान में है अतः वह भी शत्रु है । सूर्य से बुध और गुरु द्वितीय स्थान में हैं अतः ये सूर्य के सम हैं। सूर्य से शुक्र बारहवें स्थान है, अतः वह सम है । सूर्य से शनि ग्यारहवें स्थान में है अतः वह उसका मित्र है । इस प्रकार प्रत्येक ग्रह के तात्कालिक मित्र-सम-शत्रुग्रह चक्र में लिखने । चक्र के खाली स्थान, क्रम के आधार पर पूर्वोक्त उदाहरण की सहायता से भरिये ।

अथ ग्रहाणां तात्कालिकमैत्र्यादिचक्रम्

ग्रह	सू	चं.	मं.	बु.	वृ.	शु.	श.
मित्र	श.						
सम	बु. वृ. शु.						
शत्रु	चं. मं.						

द्वादश वर्ग का विवरण - १२ वर्गों के समूह को द्वादशवर्ग कहते हैं।

द्वादश वर्गों के नाम - १. ग्रह । २. होरा । ३. द्रेष्काण । ४. चतुर्थांश । ५. पंचमांश । ६. षष्ठांश । ७. सप्तमांश । ८. अष्टमांश । ९. नवमांश । १०. दशमांश । ११. एकादशांश । १२. द्वादशांश । इन १२ वर्गों का साधन करके प्रत्येक वर्ग की कुण्डली लिखनी । तदनन्तर द्वादशवर्गीबल चक्र लिखना । योगसुधानिधि ग्रंथ में उल्लेख है: -

अथ ब्रुवे द्वादशवर्गिकां च बलाबलज्ञानकरीं ग्रहाणाम् ।
ग्रहं तदर्धाग्नियुगेषुषष्ठागाष्टाङ्कदिग्रुद्रकरेन्दुभागाः ।।

ग्रहों के बल और अबल का ज्ञान कराने वाली को द्वादशवर्गी कहा जाता है । ग्रह, होरा आदि वर्गों के समुदाय को द्वादश वर्ग कहते हैं । द्वादशवर्गों से प्राप्त हुए बल को द्वादशवर्गीबल कहते हैं ।

द्वादशवर्ग के प्रत्येक वर्ग का क्रमशः विवरण प्रस्तुत किया जाता है ।

१. गृह का विवरण - जन्मलग्न या वर्षलग्न आदि की कुण्डली में ग्रह जिस राशि में स्थित है, वह राशि, उस ग्रह की गृह कहलाती है और उस राशि का स्वामी गृहराशीश कहलाता है । मित्र, सम और शत्रु, जैसा भी गृहराशीश होता है, उसी के अनुसार उसका बल होता है ।

गृह का उदाहरण - कुण्डली में सूर्य वृष राशि का है । वृष राशि का स्वामी शुक्र है, जो कि यहाँ गृहराशीश है । स्थिरमैत्री में शुक्र, सूर्य का शत्रु है । कुण्डली में शुक्र मेष राशि का है, सूर्य से बारहवें स्थान में होने के कारण शुक्र, सूर्य का तात्कालिक मैत्री में सम है ।

२. होरा का विवरण - एक राशि ३० अंश की होती है । १५/१५ अंश के दो भागों की होरा होती है । विषमराशि में १ से १५ अंशतक

सूर्य की होरा होती है । १६ अंश से ३० अंश तक चंद्र की होरा होती है । समाराशि में १ अंश से १५ अंश तक चंद्र की होरा होती है और १६ अंश से ३० अंश तक सूर्य की होरा होती है । सरलता से जानने के लिए होरा सारिणी दी जाती है ।

होरासारिणी

राशि	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
अंश १-१५	सू. ५	चं. ४	सू. ५	चं. ४	सू. ५	चं. ४	सू. ५	चं. ४	सू. ५	चं. ४	सू. ५	चं. ४
१६-३०	चं. ४	सू. ५	चं. ४	सू. ५	चं. ४	सू. ५	चं. ४	सू. ५	चं. ४	सू. ५	चं. ४	सू. ५

नोट - पहिले लग्न की होरा निकालकर होरा लग्न कुण्डली लिखनी फिर जो ग्रह, जिस होरा में है, उसे उस राशि की होरा में लिखना । होरा केवल कर्क और सिंह, इन दो राशियों की ही होती है ।

होरा लग्न कुण्डली बनाने का उदाहरण - मीन लग्न के १० अंश हैं। होरा सारिणी में मीन राशि के नीचे १ से १५ अंश तक चंद्र की कर्क राशि की होरा है। अत: मीन लग्न, चंद्र की यानी कर्क राशि की होरा में है । वृष के सूर्य के २५ अंश हैं। होरा सारिणी में वृष राशि के नीचे के कोष्ठ में १६ से ३० अंश तक सूर्य की सिंह राशि की होरा है । अत: सूर्य, होरा कुण्डली में ५ राशि में लिखा जाएगा । होरा लग्नकुंडली का नमूना दिया जाता है ।

अथ होरालग्नकुण्डली

४ | ५ सू.

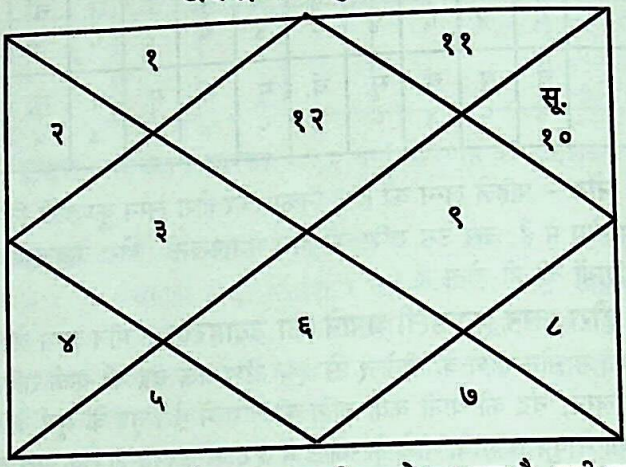
द्रेष्काण का विवरण - १०/१० अंशों के तीन विभाग राशि के करने पर द्रेष्काण होता है । पहला द्रेष्काण उसी राशि का, दूसरा द्रेष्काण उस राशि से पाँचवी राशि का और तीसरा द्रेष्काण नवीं राशि का होता है ।

द्रेष्काण-सारिणी

अंश	मे.	वृ.	मि.	कर्क	सिं.	क.	तु.	वृश्चि.	ध.	म.	कु.	मी.
१-१०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
११-२०	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४
२१-३०	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८

द्रेष्काण कुण्डली बनाने का उदाहरण - मीन लग्न १० वें अंश में है। सारिणी में १० अंश तक मीन राशि के नीचे द्रेष्काण राशि मीन है। अतः मीन लग्न, मीन के ही द्रेष्काण कुंडली में मीन लग्न लिखी जायेगी। फिर उसमें प्रत्येक ग्रह, अपनी-अपनी राशि में लिखा जायगा। जैसे वृष के सूर्य के २५ अंश हैं। द्रेष्काण सारिणी में वृष के तीसरे द्रेष्काण में मकर राशि है। अतः सूर्य मकर राशि के द्रेष्काण में होने से द्रेष्काण कुण्डली में जहाँ मकर राशि है, वहाँ लिखा जायगा। इसी प्रकार प्रत्येक ग्रह के संबंध में जानना। द्रेष्काण कुण्डली का नमूना दिया जाता है।

अथ द्रेष्काण कुण्डली



नोट - जिस प्रकार द्रेष्काण कुण्डली बनाने का क्रम है, उसी प्रकार प्रत्येक वर्ग के क्रम के अनुसार प्रत्येक वर्ग की कुण्डली बनती है।

द्रेष्काण के संबंध में अन्यमत का विवरण - ग्रहे प्रथमद्रेष्काणगे तद्राशौ वह्नियोगे, मध्यद्रेष्काणगे तद्राशौ सैकेन्त्यद्रेष्काणगे रसयोगे तद्राशौ मुनिभक्ते शेषऽर्काद्याः पतयः ॥

अर्थात् ग्रह, प्रथम द्रेष्काण में हो तो उस ग्रह की राशि की संख्या में ३ युक्त करना। ग्रह दूसरे द्रेष्काण में हो तो उसकी राशि की संख्या में १ युक्त करना। ग्रह, तीसरे द्रेष्काण में हो तो उसकी राशि में ६ युक्त करना। इस प्रकार संस्कार करने में जो राशि की संख्या बने, उसमें ७ से भाग देना। १ शेष बचने से सूर्य द्रेष्काण का स्वामी होता है। २ शेष से चंद्र, ३ शेष से मंगल, ४ शेष से बुध, ५ शेष से गुरु, ६ शेष से शुक्र और ७शेष बचने से शनि द्रेष्काण का स्वामी होता है।

ग्रह के द्रेष्काण का स्वामी, तात्कालिक मैत्री में मित्र आदि जैसा भी होता है, उसी के अनुसार उसका बल होता है। बृहत्पंचवर्गी में तथा द्वादशवर्गी में इस प्रकार का बल लेना।

द्रेष्काण के स्वामी जानने का उदाहरण - वृष के सूर्य के २५ अंश हैं। सूर्य तीसरे द्रेष्काण में है, अतः पूर्वोक्त निमय के अनुसार सूर्य की राशि संख्या २ में ६

युक्त किये तो ८ हुए। इनमें ७ से भाग दिया तो १ शेष बचा। अतः सूर्य ही द्रेष्काण का स्वामी है। अतः सूर्य का गृहबल है।

नोट - पूर्व क्रम तथा यह क्रम, दोनों ही क्रम मान्य हैं। अतः द्रेष्काण बल में दोनों ही क्रमों के अनुसार बल लेना।

चतुर्थांश का विवरण - एक राशि के ४ भाग को चतुर्थांश कहते हैं। चतुर्थांश का प्रत्येक विभाग ७ अंश, ३० कला का होता है। चतुर्थांश का प्रथम विभाग, अयनीराशिका, दूसरा विभाग अपनी राशि से चौथी राशि का, तीसरा विभाग अपनी राशि से सातवीं राशि का और चौथा विभाग अपनी राशि से दशवीं राशि का होता है। सरलता से निकालने के लिए चतुर्थांश सारिणी दी जाती है।

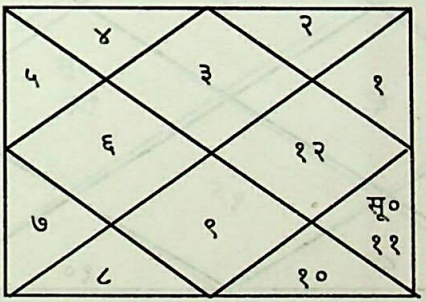
चतुर्थांश-सारिणी

अंश/कला	मे.	वृ.	मि.	कर्क	सिं.	क.	तु.	वृश्चि.	ध.	म.	कुं.	मी.
७-३०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
१५-०	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३
२२-३०	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६
३०-०	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९

चतुर्थांश कुण्डली बनाने का उदाहरण - मीनग्रह के १० अंश हैं। चतुर्थांश सारिणी में १० अंश दूसरे विभाग में हैं, उसके सामने मीन राशि के नीचे दूसरे कोष्ठ में मिथुन राशि की ३ संख्या है। अतः फलित हुआ कि, मीनलग्न मिथुनराशि के चतुर्थांश में है। कुण्डली बनाकर लग्नभाव में मिथुनराशि रखकर शेष भावों में क्रमशः राशियाँ लिखनी। प्रत्येक ग्रह की चतुर्थांश राशि भी उक्त क्रम से निकालकर उसकी चतुर्थांश में उस ग्रह को लिखना। चतुर्थांश कुण्डली तैयार हो जायगी। चतुर्थांश कुण्डली का नमूना दिया जाता है। खाली स्थानों में ग्रह भरना।

अथ चतुर्थांशकुण्डली

पंचमांश का विवरण - एक राशि के पाँच भाग को पंचमाश कहते हैं।



पंचमांशका प्रत्येक विभाग ६/६ अंशों का होता है ।

१. विषम राशि में प्रथम विभाग का स्वामी मंगल होता है । दूसरे विभाग का स्वामी शनि, तीसरे का गुरु, चौथे का बुध और पांचवें विभाग का स्वामी शुक्र होता है।

२. समराशि में प्रथम विभाग का स्वामी शुक्र होता है । दूसरे का बुध, तीसरे का गुरु, चौथे का शनि और पाँचवें विभाग का स्वामी मंगल होता है ।

नोट - जिस ग्रह की दो राशियाँ हैं उसमें से कोईसी भी राशि लिखनी ।

पञ्चमांश - सारिणी

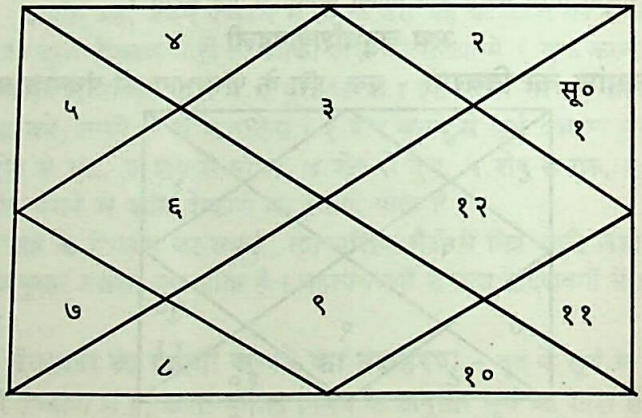
पंचमांश निकालने का उदाहरण - मीनलग्न के ९ अंश, ४६ कला और

अंश	मे	वृष.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	मं.	कुं.	मी.
६	मं.	शु.	मं.	शु.	मं.	शु.	मं.	शु.	मं.	शु.	मं.	शु.
६	श.	बु.	श.	बु.	श.	बु.	शु.	बु.	श.	बु.	श.	बु.
६	वृ.	वृ.	वृ.	वृ.	वृ.	वृ.	वृ.	वृ.	वृ.	वृ.	वृ.	वृ.
६	बु.	श.	बु.	श.	बु.	श.	बु.	श.	बु.	श.	बु.	श.
६	शु.	मं.	शु.	मं.	शु.	मं.	शु.	मं.	शु.	मं.	शु.	मं.

११ विकला हैं । मीन राशि सम है और १० अंश होने के कारण पंचमांश के दूसरे विभाग में है । अतः बुध के पंचमांश में है । बुध की दो राशियाँ हैं, मिथुन और कन्या। कुण्डली में इनमें से कोईसी भी राशि लग्नभाव में लिखी जा सकती है । वृष के सूर्य के २५ अंश हैं । वृषाराशि सम है और २५ अंश, पंचमांश के पाँचवे विभाग में है । पंचमांश सारिणी में वृष राशि के पाँचवे विभाग में मंगल का पंचमांश है । मंगल की मेष और वृश्चिक राशि है, इनमें से किसी भी राशि में सूर्य लिखा जायगा । इस प्रकार प्रत्येक ग्रह का पंचमांश निकालकर कुण्डली में लिखना। पंचमांश कुण्डली का नमूना दिया जाता है।

अथ पञ्चमांशकुण्डली

षष्ठांश का विवरण - एक राशि के छः भाग को षष्ठांश कहते हैं । एक



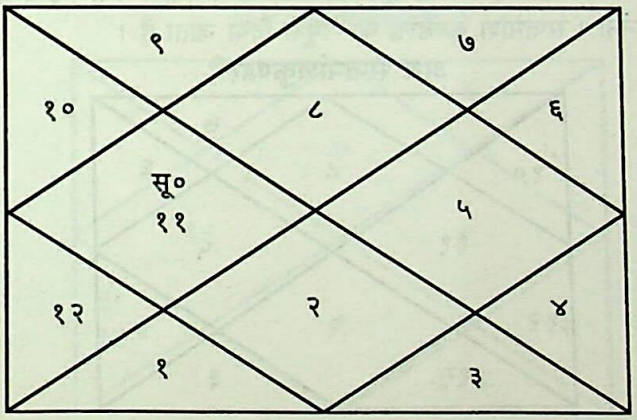
षष्ठांश ५ अंश का होता है । विषम राशि में षष्ठांश मेष से आरंभ होता है और समराशि में षष्ठांश तुलाराशि से आरंभ होता है । सरलता से षष्ठांश निकालने के लिए षष्ठांश सारिणी दी जाती है ।

षष्ठांश - सारिणी

अंश	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
५	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७
१०	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८
१५	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९
२०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०
२५	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११
३०	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२

षष्ठांश का उदाहरण - मीनलग्न के १०अंश हैं । मीनलग्न सम है और १० अंश के अंदर है । १० अंश के सामने मीनराशि के कोष्ठ में वृश्चिक राशि है । अत: फलित हुआ कि वृश्चिकराशि के षष्ठांश में । षष्ठांश कुण्डली बनाने के लिये लग्न भाव में वृश्चिक राशि लिखनी । वृषराशि के सूर्य के २५ अंश हैं । वृषराशि सम है । २५ अंश के सामने वृषराशि के नीचे के कोष्ठमें षष्ठांश सारिणी में ११ राशि है । अत: फलित हुआ कि, सूर्य कुंभ के षष्ठांश में है । इस प्रकार प्रत्येक ग्रह की षष्ठांश राशि को निकालकर उसी राशि में षष्ठांश कुण्डली में लिखना । षष्ठांश कुण्डली का नमूना दिया जाता है।

अथ षष्ठांशकुण्डली



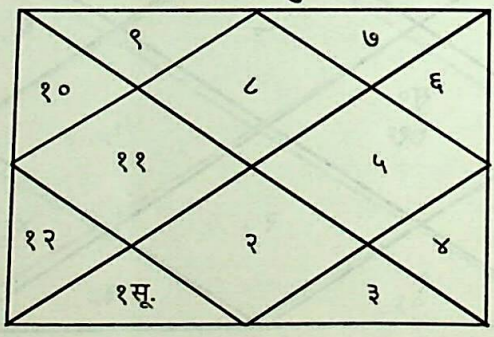
सप्तमांश का विवरण - राशि के सात विभाग करने पर सप्तमांश होता है। सप्तमांश का प्रत्येक विभाग (हिस्सा) ४ अंश १७ कला और ८ विकला का होता है। यह विषम राशि में अपनी राशि से आरंभ होता है और समराशि में उससे सातवीं राशि से प्रारंभ होता है। सुगमता से सप्तमांश जानने के लिए सप्तमांशसारिणी दी जाती है।

सप्तमांश-सारिणी

अं. क. वि.	मे.	वृ.	मि.	कर्क	सिं.	क.	तु.	वृश्चि.	ध.	म.	कु.	मी.
४-११-८	१	८	१	८	१	८	१	८	१	८	१	८
८-३४-१७	२	९	२	९	२	९	२	९	२	९	२	९
१२-५१-२५	३	१०	३	१०	३	१०	३	१०	३	१०	३	१०
१७-८-३४	४	११	४	११	४	११	४	११	४	११	४	११
२१-२५-४२	५	१२	५	१२	५	१२	५	१२	५	१२	५	१२
२५-४२-५२	६	१	६	१	६	१	६	१	६	१	६	१
३०-०-०	७	२	७	२	७	२	७	२	७	२	७	२

सप्तमांश का उदाहरण -मीनलग्न के १० अंश हैं। यह सप्तमांश के तीसरे विभाग में है। मीनलग्न सम है। समराशि होने के कारण उससे सातवीं राशि कन्या से तीन तक गिना तो वृश्चिक राशि आयी। इसी प्रकार सप्तमांश सारिणी में मीनराशि के नीचे के कोष्ठ में तीसरे विभाग के सामने ८ राशि है। अत: फलित हुआ कि, सप्तमांश लग्न वृश्चिक है। सप्तमांश कुण्डली में वृश्चिक लग्न लिखकर शेष ग्रहों की सप्तमांश राशि में निकालकर उनमें उन ग्रहों को लिखा जायेगा। वृष के सूर्य के २५ अंश हैं। यह सप्तमांश के छठे विभाग में है। सप्तमांश सारिणी में वृषराशि के नीचे छठे विभाग में मेष राशि है। अत: सूर्य मेष राशि के सप्तमांश में है। इसी प्रकार अन्य ग्रहों को जानना। सप्तमांश कुण्डली का नमूना दिया जाता है।

अथ सप्तमांशकुण्डली



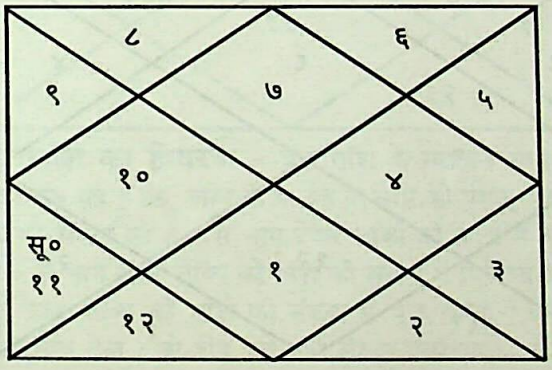
अष्टमांश का विवरण - राशि के आठवें भाग को अष्टमांश कहते हैं। एक अष्टमांश-विभाग, ३ अंश ४५ कला का होता है। चरराशि में मेषराशि से, स्थिर राशि में धन राशि से और द्वि:स्वभाव राशि में सिंह राशि से आरंभ होता है। सरलता से अष्टमांश जाने के लिए अष्टमांश सारिणी दी जाती है।

अष्टमांश-सारिणी

अं.- क.	मे.	वृ.	मि.	कर्क	सिं.	क.	तु.	वृश्चि.	ध.	म.	कुं.	मी.
३-४५	१	९	५	१	९	५	१	९	५	१	९	५
७-३०	२	१०	६	२	१०	६	२	१०	६	२	१०	६
११-१५	३	११	७	३	११	७	३	११	७	३	११	७
१५-०	४	१२	८	४	१२	८	४	१२	८	४	१२	८
१८-४५	५	१	९	५	१	९	५	१	९	५	१	९
२२-३०	६	२	१०	६	२	१०	६	२	१०	६	२	१०
२६-१५	७	३	११	७	३	११	७	३	११	७	३	११
३०-०	८	४	१२	८	४	१२	८	४	१२	८	४	१२

अष्टमांश का उदाहरण - मीनलग्न के १० अंश हैं। यह तीसरे विभाग में हैं। मीन राशि, द्वि: स्वभाव है। अष्टमांश सारिणी में मीनराशि के नीचे के तीसरे कोष्ठ में ७ राशि है। अत: फलित हुआ कि, मीन लग्न तुला राशि के अष्टमांश में है। अष्टमांश कुण्डली में तुलालग्न लिखा जायेगा। वृष के सूर्य के १० अंश हैं। वृष स्थिर राशि है। १० अंश, तीसरे विभाग में आते हैं। अष्टमांश सारिणी में वृष राशि के नीचे तीसरे कोष्ठ में ११ राशि है। अत: सूर्य कुंभ राशि के अष्टमांश में है। इस प्रकार प्रत्येक ग्रह का अष्टमांश निकालकर लिखना। अष्टमांश कुण्डली का नमूना दिया जाता है।

अथ अष्टमांशकुण्डली



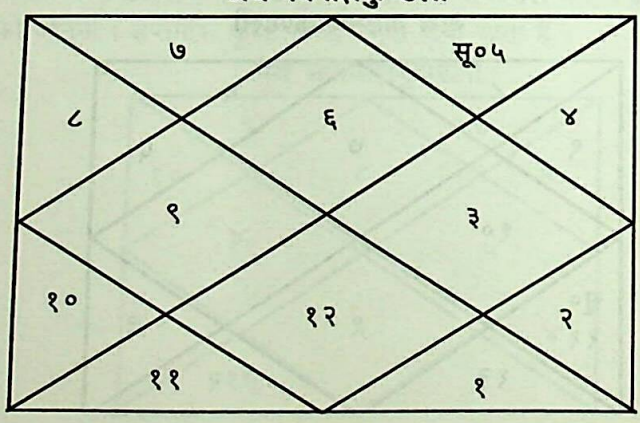
नवमांश का विवरण - एक राशि के नौवें भाग को नवमांश कहते हैं। नवमांश का १ विभाग, ३ अंश २० कला का होता है। मेष से मीन तक क्रमशः मेष, मकर, तुला और कर्क राशि से आरंभ करके गिनना। जो राशि आये वह नवांश राशि होती है। उस राशि का स्वामी नवांशेश होता है। सरलता के लिए नवांश सारिणी दी जाती है -

नवमांश-सारिणी

अं.- क.	मे.	वृ.	मि.	कर्क	सिं.	क.	तु.	वृश्चि.	ध.	म.	कुं.	मी.
३-२०	१	१०	७	४	१	१०	७	४	१	१०	७	४
६-४०	२	११	८	५	२	११	८	५	२	११	८	५
१०-०	३	१२	९	६	३	१२	९	६	३	१२	९	६
१३-२०	४	१	१०	७	४	१	१०	७	४	१	१०	७
१६-४०	५	२	११	८	५	२	११	८	५	२	११	८
२०-०	६	३	१२	९	६	३	१२	९	६	३	१२	९
२३-२०	७	४	१	१०	७	४	१	१०	७	४	१	१०
२६-४०	८	५	२	११	८	५	२	११	८	५	२	११
३०-०	९	६	३	१२	९	६	३	१२	९	६	३	१२

नवमांश का उदाहरण -मीनलग्न १० अंश के अंदर है। यह नवांश के तीसरे विभाग में है। नवांश सारिणी में मीनराशि के नीचे तीसरे कोष्ठ में ६राशि है। अतः फलित हुआ कि, यह मीनलग्न, कन्या राशि के नवांश में है। नवांश कुण्डली में कन्या लग्न लिखी जायगी। वृष राशि के सूर्य के २५० अंश हैं। ये नवमांश के आठवें विभाग में है। नवामांश सारिणी में वृष के नीचे आठवें कोष्ठ में ५ राशि है। अतः सूर्य सिंह राशि के नवमांश में है। इसी प्रकार प्रत्येक ग्रह की नवमांश राशि निकाल कर उसी राशि में उस ग्रह को नवमांश कुण्डली में लिखना। नवमांश कुण्डली का नमूना दिया जाता है।

अथ नवमांशकुण्डली

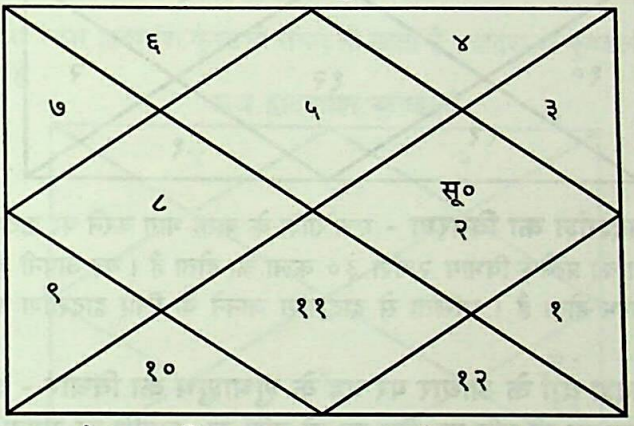


नोट - ज्यौतिष में नवामांश को विशेष महत्व दिया गया है ।

दशमांश का विवरण - एकराशि के दशवें भाग को दशमांश कहते हैं । लग्न या ग्रह के स्पष्ट की राशि, अंश, कला और विकला को अलग-अलग १० से गुणा करना । विकला की संख्या को ६० से भाग देकर लब्धि को कला में मिलाना और शेष का त्याग करना । कला में ६० से भाग देकर लब्धि को अंश की संख्या में मिलाना। फिर अंश की संख्या में ३० से भाग देकर लब्धि को राशि की संख्या में मिलाना । तदनंतर राशि की संख्या में १२ से भाग देना । जो शेष बचे वह दशमांश की राशि है।

दशंमाश का उदाहरण - लग्न का स्पष्ट ११/९/४६/११ है । प्रत्येक को १० से गुणा किया तो ११०/९०/४६०/११० हुए । ११० विकला में ६० से भाग दिया तो १ लब्धि आयी और ५० शेष बचे । शेष का त्याग किया । १ लब्धि को ऊपर ४६० कला में युक्त किया तो ४६१ हुए । इनमें ६० से भाग दिया तो ७ लब्धि आयी। इन्हें ऊपर ९० अंश में युक्त किया ९७ हुए । इनमें ३० से भाग दिया तो ३ लब्धि आयी । इन्हें ११० राशि में युक्त किया तो ११३ हुए । इनमें १२ से भाग दिया तो ५ शेष बचे । यहाँ यह फलित निकाला कि, मीन लग्न सिंह राशि के दशमांश में है । दशमांश कुण्डली में सिंह लग्न लिखी जायेगी । इसी प्रकार प्रत्येक ग्रह की दशमांश राशि निकालकर उसी राशि में दशमांश कुण्डली में उस ग्रह को लिखना । दशमांश कुण्डली का नमूना दिया जाता है-

अथ दशमांशकुण्डली

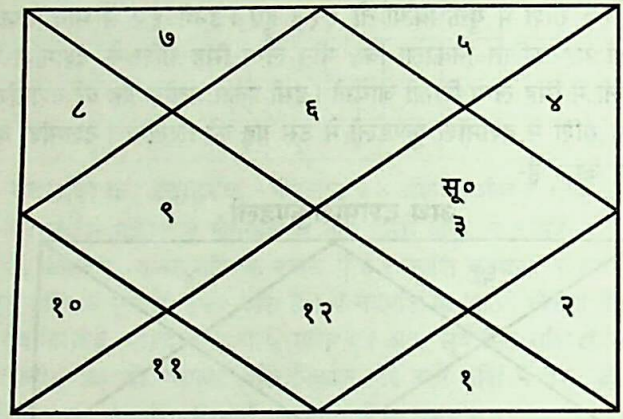


एकादशांश का विवरण - एक राशि के ग्यारहवें भाग को एकादशांश कहते हैं, जिसका क्रम यह है कि, लग्न के या ग्रह के स्पष्ट को पृथक्-पृथक् ११ से गुणा करना । विकला की संख्या को ६० से भाग देकर लब्धि को कला में युक्त करना। कला की संख्या में ६० से भाग देकर लब्धि को अंश की संख्या में मिलाना । अंश की संख्या में ३० से भाग देकर लब्धि को राशि की संख्या में युक्त करना । तत्पश्चात् राशि की संख्या में १२ से भाग देना । जो शेष बचे वही संख्या एकादशांश की राशि होती है ।

एकादशांश का उदाहरण - मीन लग्न का स्पष्ट ११/९/४६/११ है। सबको पृथक्-पृथक् ११ से गुणा किया तो १११/९९/५०६/१११ हुए। १११ विकला में ६० से भाग दिया तो १ लब्धि आयी। १ लब्धि को ५०६ कला में मिलाया तो ५०७ हुए। इनमें ६० से भाग दिया तो ८ लब्धि आयी। ८ लब्धि को ९९ अंश में मिलाया तो १०७ हुए। इनमें ३० से भाग दिया तो ३ लब्धि आयी। इसे १११ राशि में मिलाया तो ११४ हुए। इनमें १२ से भाग दिया तो ६ शेष बचे। यहाँ फलित हुआ कि, मय मीन लग्न, कन्या राशि के एकादशांश में है। एकादशांश कुण्डली में कन्या लग्न लिखी जायेगी।

प्रत्येक ग्रह की एकादशांश राशि निकालनी। जिस ग्रह की जो एकादशांश राशि आये, एकादशांशकुण्डली में उस राशि में उस ग्रह को लिखना। एकादशांश कुण्डली का नमूना दिया जाता है।

अथ एकादशांशकुण्डली



द्वादशांश का विवरण - एक राशि के बारह भाग करने पर द्वादशांश होता है। द्वादशांश का प्रत्येक विभाग २अंश ३० कला का होता है। यह अपनी ही राशि से द्वादशांश आरंभ होता है। सरलता से द्वादशांश जानने के लिए द्वादशांश सारिणी दी जायगी।

द्वादश वर्ग के आधार पर ग्रह के शुभाशुभ का विचार - द्वादश वर्गों में जो ग्रह, शुभ ग्रह की राशि का, मित्र ग्रह की राशि का, स्वराशि का अथवा उच्चराशि का होर अधिक वर्गों में बैठेगा वह शुभफल देगा।

इसी प्रकार द्वादश वर्गों में जो ग्रह, पापग्रह की राशि का, शत्रु राशि का या नीच राशि का होकर अधिक वर्गों में बैठेगा तो वह ग्रह श्रेष्ठ होने पर भी अशुभ फल देगा।

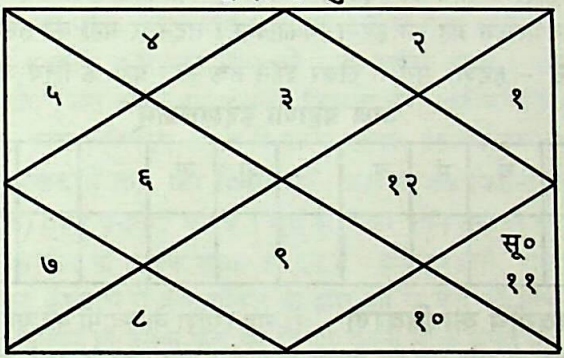
द्वादशांश-सारिणी

अं.- क.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृश्चि.	ध.	म.	कुं.	मी.
०२-३०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
५-०	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१
७-३०	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२
१०-०	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३
१२-३०	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४
१५-०	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५
१७-३०	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६
२०-०	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७
२२-३०	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८
२५-०	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९
२७-३०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
३०-०	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११

द्वादशांक का उदाहरण - मीनलग्न १० अंश के अन्दर है अत: चौथे विभाग में है। द्वादशांश सारिणी में मीनराशि के नीचे चौथे कोष्ठ में ३ राशि है। फलित हुआ कि, यह मीनलग्न, मिथुन राशि के द्वादशांश में है। द्वादशांश कुण्डली के लग्नभाव में मिथुन राशि लिखाी जायेगी। प्रत्येक ग्रह, अपनी-अपनी द्वादशांश राशियों में लिखे जायेंगे।

इस प्रकार द्वादशांश कुण्डली तैयार हो जाती है। द्वादशांश-कुण्डली का नमूना दिया जाता है -

अथ द्वादशांश कुण्डली



हद्दा का विवरण - हद्दा शब्द फार्सी भाषा का प्रतीत होता है। हद अर्थात् किस सीमा तक किस ग्रह का अधिकार है, यह हद्दा है। हद्दा का स्वामी ग्रह हद्देश कहलाता है। यह हद्दा ताजक शास्त्र की देन है। प्रत्येक राशि में अंशों के विभाग से पाँच ग्रहों की हद्दा होती है। जैसे, मेष राशि में ६० अंश तक मंगल की हद्दा, तदनंतर ६ अंश तक शुक्र की हद्दा, फिर ८ अंशतक बुध की हद्दा, उसके आगे ५ अंश तक मंगल

की हद्दा तत्पश्चात् ५ अंश तक शनि की हद्दा होती है। इस प्रकार मेषराशि, ६+६+८+५+५ अंशों के विभाग से अपने तीस अंशों में पाँच ग्रहों की हद्दा में विभक्त है। इसी प्रकार अन्यान्य राशियाँ भी भिन्न-भिन्न अंशों के विभाग से भिन्न-भिन्न पाँच ग्रहों की हद्दाओं में विभक्त हैं। सरलता से हद्दा जानने के लिए हद्दा सारिणी दी जाती है।

हद्दा-सारिणी

राशि	मे.	वृ.	मि.	कर्क.	सि.	क.	तु.	वृ.	धिं.	म.	कुं.	मी.
अंश	६	८	६	७	६	७	६	७	१२	७	७	१२
हद्देश	मं.	शु.	बु.	मं.	वृ.	बु.	श.	मं.	वृ.	बु.	शु.	शु.
	१२	१४	१२	१३	११	१७	१४	११	१७	१४	१३	१६
	शु.	बु.	शु.	शु.	शु.	शु.	बु.	शु.	शु.	वृ.	बु.	वृ.
	२०	२२	१७	१९	१८	२१	२१	१९	२१	१८	२०	१९
	बु.	वृ.	वृ.	बु.	श.	वृ.	वृ.	बु.	बु.	शु.	वृ.	बु.
	२५	२७	२४	२६	२४	२८	२८	२४	२६	२६	२५	२८
	मं.	श.	मं.	वृ.	बु.	मं.	शु.	वृ.	मं.	श.	मं.	मं.
	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०
	श.	मं.	श.	श.	मं.	श.	मं.	श.	श.	मं.	श.	श.

हद्देश का उदाहरण - वृषराशि का सूर्य २५ अंश के अन्तर्गत है। हद्दा सारिणी में २५ अंश, चौथे विभाग में है। अर्थात् वृष राशि के नीचे चौथे कोष्ठ में २७ अंश और शनि का (श.) लिखा हुआ है। यहाँ यह फलित हुआ कि २३ अंश से २७ अंश तक वृषराशि में शनि की हद्दा है। अत: सूर्य शनि की हद्दा में है और हद्देश शनि है। इस प्रकार प्रत्येक ग्रह का हद्देश निकालना। तदनंतर ग्रहों का हद्देश चक्र लिखना।

नोट - हद्देश, सूर्य से लेकर शनि तक सात ग्रहों के लिये जाते हैं।

अथ ग्रहाणां हद्देशचक्रम्

ग्रह	सू.	चं	मं.	बु.	वृ.	शु.	श.				
हद्देश	श.										

पंचवर्गीय का विवरण - १. गृह (राशि के स्वामी को गृह कहते हैं। जैसे, वृष राशि में सूर्य है और वृष का स्वामी शुक्र है। अत: वृष के सूर्य का गृह शुक्र है।) २. उच्च। ३. हद्दा। ४. द्रेष्काण। ५. नवांश। ये पाँच वर्ग हैं। इनके समुदाय को पंचवर्गी कहते हैं। द्रेष्काण, नवांश और हद्दा के विवरण पूर्व दिये गये हैं। उच्चबल शेष रहता है, उसको भी प्रस्तुत कया जाता है-

उच्चबल का विवरण -

नीचोनितः ग्रहः षडधिकको मण्डलशोधितः ।
शेषस्यांशा नन्दभक्ता बलमुच्चस्य जायते ।।

ग्रहों की उच्चराशियाँ पूर्व दी गयी हैं । उच्चराशि से सातवीं राशि नीच राशि होती है । परमोच्च के जो अंश हैं, वे ही परम नीच के अंश हैं । ये सब संज्ञा प्रकरण में वर्णित हैं । प्रत्येक ग्रह का उच्चबल निकाला जाता है ।

उच्चबल निकालने का क्रम - जिस ग्रह का उच्चबल निकालना हो, उस ग्रह के स्पष्ट को उस ग्रह के नीच (राशि और अंश हैं) में हीन करना । शेष बचने पर यदि राशि ६ से अधिक हो तो मण्डल (१२ संख्या को मंडल कहते हैं ।) से शोधित (हीन) करना । जो शेष बचे उसके अंश करना । अर्थात् राशि की संख्या को ३० से गुणा करके अंश की संख्या को युक्त करने से अंश बनते हैं ।

अंश की संख्या में ९ से भाग देकर लब्धि को पृथक् रखना । शेष को ६० से गुणा करके कला की संख्या मिलानी फिर इसमें ९ से भाग देना । लब्धि को ग्रहण करना और शेष का त्याग करना । पहिली बार आयी लब्धि कला होती है और दूसरी बार आयी लब्धि विकला होती है । ये ही कला-विकला, ग्रह का उच्चबल होता है ।

उच्चबल निकालने का उदाहरण - जैसे सूर्य का उच्चबल निकालना है। सूर्य का स्पष्ट १/२४/५७/२५ है । सूर्य का नीच ६/१०है । सूर्य के स्पष्ट में सूर्य के नीच को हीन किया तो ७/१४/५७/२५ शेष बचे । यहाँ ७ राशि ६ से अधिक होने के कारण १२ राशि (११/२९/५९/६०) में से हीन किया तो ४/१५/२३५ शेष बचे । इसके अंश बनाने के लिए ४ राशि को ३० से गुणा किया तो १२० हुए । इसमें १५ अंश युक्त किये तो १३५ हुए । इनमें ९ से भाग दिया तो १५ लब्धि आयी और शेष शून्य बचा । लब्धि को पृथक् रखा । शेष शून्य को ६० से गुणा करके २ कला युक्त की तो २ संख्या हुई । इसमें ९ से भाग दिया तो शून्य लब्धि आयी । पहिले आयी १५ लब्धि कला हैं और दुबारा आयी शून्य लब्धि विकला है । यहाँ फलित हुआ कि, सूर्य का उच्चबल १५ कला ०विकला है । इसी प्रकार प्रत्यके ग्रह का उच्चबल निकालना ।

बृहत् पंचवर्गी बल का विवरण - ग्रह का बल कितना है ? यह जानने का साधन (पैमाना) वृहत् पंचवर्गी बल है । सूर्य से लेकर शनि तक ही सात ग्रहों का बल देखा जाता है । यह क्रम भी ताजक शास्त्र की देन है । वर्ष कुण्डली, मास कुण्डली, दिन कुण्डली तथा प्रश्न कुण्डली में पंचवर्गीबल के द्वारा ग्रह के बल की माप-तौल हो जाती है । ग्रह का बल जानकर ही उसके फल का विचार करना युक्ति संगत है । आचार्य यादव के सिद्धान्त है -

बलं विंशोपकाज्ञानं पञ्चवर्गबलं विना ।
न स्यादतो लिखेच्चक्रे पञ्चवर्गी च तद्बलम् ।।

पञ्चवर्गी बल के निकाले विना ग्रह का बल और बल के विश्वों का पता नहीं लगता, इसका कारण पंचवर्गी का चक्र लिखना और पंचवर्गीबल का चक्र लिखना ।

पंचवर्गी दो प्रकार की है । १. लघुपंचवर्गी । २. बृहत् पंचवर्गी । १. जन्म । २. वर्ष । ३. मुंथा । ४. दिन या रात्रि । ५. त्रिराशि । इन पांचों को लघु पंचवर्गी कहते हैं । इससे वर्षेश (वर्षपति) का निर्णय होता है । १. स्वगृह । २. उच्च । ३. हद्दा । ४. द्रेष्काण । ५. नवमांश । इन पाँचों को बृहत् पंचवर्गी कहते हैं । इससे प्रत्येक ग्रह के बल का निर्णय होता है ।

बृहत् पंचवर्गी चक्र तथा बृहत्पंचवर्गीबल चक्र, चार प्रकार से बनाया जाता है। १. तात्कालिक मैत्री के द्वारा । २. स्थिर मैत्री के द्वारा । ३. (क) तात्कालिक मैत्री में द्रेष्काण राशिपति के द्वारा । (ख) तात्कालिक मैत्री में द्रेष्काण पति ग्रह के द्वारा । ४. (क) स्थिर मैत्री में द्रेष्काण राशि पति के द्वारा । (ख) स्थिर मैत्री में द्रेष्काणपति ग्रह के द्वारा।

तात्कालिक मैत्री का तथा स्थिर मैत्री का विवरण पूर्व दिया जा चुका है तथा द्रेष्काण के दोनों प्रकारों का विवरण भी पूर्व दिया जा चुका है ।

ग्रह के चार प्रकार के भेद हैं । १. स्वराशि का ग्रह । २. मित्र राशि का ग्रह । ३. समराशि का ग्रह । ४. शत्रुराशि का ग्रह । चार प्रकार के विभागों (१. गृह । २. हद्दा। ३. द्रेष्काण । ४. नवांश) में प्रत्येक प्रकार के ग्रह का अंशात्मक बल भिन्न-भिन्न होता है। इसे सरलता से जानने के लिए 'चतुर्वर्गबल-सारिणी' दी जाती है -

चतुर्वर्ग-बल-सारिणी

	स्व	मित्र	सम	शत्रु
ग्रह	३० ००	२२ ३०	१५ ००	७ ३०
हद्दा	१५ ००	११ १५	७ ३०	३ ४५
द्रेष्काण	१० ००	७ ३०	५ ००	२ ३०
नवांश	५ ००	३ ४५	२ ३०	१ १५

नोट- यहाँ चतुर्वर्ग-बल-सारणी में ऊपर की संख्या अंश है और नीचे की संख्या अंश का भाग है । सपाद (सवाया) की सांकेतिक संख्या १५, अर्ध (आधे) की सांकेतिक संख्या ३० और पादोन (पौन), सांकेतिक संख्या ४५ है । जैसे, २/३० से ढाई बल जानना । १/१५ से सवा अंश बल जानना और ३/४५ से पौने चार अंश बल जानना ।

उच्चवर्ग के मिलाने से उक्त चारवर्गों का पंचवर्ग बन जाता है । उच्चवर्ग का बल, प्रत्येक ग्रह का भिन्न-भिन्न होता है । उच्चबल बनाने का क्रम पूर्व दिया जा चुका है । बृहत्पंचवर्ग बलचक्रों के बनाने से पूर्व बृहत् पंचवर्ग चक्र बना लेने, फिर तो बृहत्पंचवर्ग चक्र सुगमता से बन जायेंगें ।

बृहत्पंचवर्गीबल चक्र में ऊपर के कोष्ठों में सूर्य से शनितक ग्रह लिखकर उनके नीचे के पाँच कोष्ठों में क्रमश: गृहबल, उच्चबल, हद्दाबल, द्रेष्काणबल और नवांशबल लिखने । छठे कोष्ठ में पाँचों बलों का योग करके लिखना । यह 'पंचवर्ग बलैक्य' कहलाता है । सातवें काष्ठ में विंशोपका (विश्वा) बल लिखना । इस प्रकार बृहत्पंचवर्गी-बल-चक्र बनकर तैयार हो जाता है ।

नोट- पंचवर्ग बलैक्य में ४ से भाग देना । लब्धि को पृथक् रखना । शेष को ६० से गुणा करके कला की संख्या मिलानी । इसमें ४ से भाग देना । लब्धि को पृथक् रखना । शेष को ६० से गुणा करके विकला की संख्या मिलानी । इसमें ४ से भाग देना। लब्धि को पृथक् रखना, आयी हुई लब्धियों को अनुपात से रखना । यह विंशोपका बल निकालता है ।

बल की संज्ञाएँ - तीन प्रकार का बल है । १. अल्पपल या हीनबल । २. मध्यम बल । ३. पूर्णबल । विंशोपका बल ६ से कम होने पर अल्पबल या हीनबल माना जाता है । अल्पबल वाला ग्रह, अल्पबली कहलाता है । विंशोपका बल ६ से १२ तक होने पर मध्यम बल होता है । मध्यम बल का ग्रह, मध्यबली कहलाता है । विंशोपका बल १२ से ऊपर होने पर पूर्णबल होता है । पूर्णबल का ग्रह, पूर्णबली कहलाता है ।

१. तात्कालिक मैत्री के द्रेष्काण राशि पति के अनुसार बृहत्पंच वर्गी बल चक्र बनाने का उदाहरण -कुण्डली में सूर्य वृष राशिका है । वृष राशि का स्वामी शुक्र है, वह कुण्डली में मेषराशि का है । सूर्य से शुक्र बारहवें स्थान में होने के कारण सूर्य का शुक्र सम है । सूर्य, मकर राशि के द्रेष्काण में है । मकर राशि का स्वामी शनि है । कुण्डली में सूर्य से शनि ग्यारहवें स्थान में है, अत: वह स्वराशि का है । इस प्रकार प्रत्येक ग्रह के पाँचों वर्ग निकालकर पचंवर्गी चक्र में लिखने तदनन्तर उसी के अनुसार बृहत्पंचवर्गीबल चक्र में लिखने ।

अथ तात्कालिकग्रहमैत्रेयद्रेष्काणराशिपतिवशात् वृहत्पञ्चवर्गीचक्रम्

ग्रह	सू.	चं.	मं.	बु.	वृ.	शु.	श.
स्वगृह	शु. सम						
उच्च	० १०						
हद्दा	श. मित्र						
द्रेष्काण	श. मित्र						
नवांश	सू. स्वराशि						

बृहत्पंचवर्गी में बल निकालने का उदाहरण -स्वगृह के सूर्य की राशि का पति शुक्र है, जो कि उसका सम है। स्वगृह में समका बल बृहत् पंचवर्ग बल सारिणी में १५/० अंश लिखा है। उसे सूर्य के नीचे स्वगृह के कोष्ठ में लिखना। उसके नीचे पूर्वोक्त क्रम से निकाला उच्च बल १५/० लिखना। सूर्य, शनि की हद्दा में है। शनि उसका मित्र है। पूर्वोक्त बलसारिणी में हद्दा में मित्र ग्रह का सवाग्यारह अंश बल है। अत: हद्दा के सामने के कोष्ठ में सूर्य का हद्दाबल ११/१५ लिखना। सूर्य, शनि के द्रेष्काण में है, शनि मित्र है। बलसारिणी में द्रेष्काण में मित्र राशि के ग्रह का बल सोढेसात अंश है। अत: द्रेष्काण के सामने सूर्य का ७/३० बल लिखना। सूर्य, सिंह राशि के नवांश में है, अत: वह स्वराशि के नवांश में है। बलसारिणी में नवांश में स्वराशि के ग्रह का बल पाँच अंश है। अत: नवांश के सामने सूर्य का ५/० बल लिखना। इन सब बलों को जोड़कर योग के सामने के कोष्ठ में लिखना। यह पंचवर्ग बलैक्य है। इसमें ४ से भाग देकर विंशोपका (विश्वा) निकालकर उससे नीचे के कोष्ठ में लिखना। यही बल का क्रम प्रत्येक ग्रह के संबंध में लागू है। वृहत्पंचवर्गीबल के चक्र का नमूना दिया जाता है। प्रत्येक ग्रह का वल निकाल कर चक्र में लिखें।

अथ तात्कालिकग्रहमैत्रेयद्रेष्काणराशिपतिवशात् बृहत्पञ्चवर्गीबलचक्रम्

	सू.	चं.	मं.	बु.	वृ.	शु.	श.
गृहबल	१५ ००						
उच्चबल	१५ ००						
हद्दाबल	११ १५						
द्रे. ब.	०७ ३०						
न. ब.	०५ ००						
योग	५३ ४५						
विंशोपका	१६ २६ ०४						

नोट - यहाँ सूर्य का विश्वा बल १३/२६/४० है, जो कि १२ से अधिक है। अत: सूर्य पूर्ण बली है। इसी प्रकार प्रत्येक ग्रह के संबंध में बल जानना।

(ख) तात्कालिक ग्रह मैत्री में द्रेष्काणेश के अनुसार वृहत्पञ्चवर्गीबल चक्र बनाने का उदाहरण - वृष राशि के सूर्य के २५ अंश हैं। द्रेष्काण में १०/१० अंश के तीन भाग होते हैं। २५ अंश अन्त्य भाग में है। अत: सूर्य की

स्पष्टराशि १ में ६ युक्त किये तो ७ हुए। इसमें ७ से भाग दिया शून्य बचा तो द्रेष्काणेश शनि हुआ। तात्कालिक ग्रहमैत्री में शनि, सूर्य का मित्र है। पहिले क्रम में भी सूर्य, शनि के द्रेष्काण में है। अतः पूर्वोक्त ही बृहत्पंचवर्गीबल चक्र रहेगा।

२. (क) स्थिर मैत्री में द्रेष्काण राशिपति के अनुसार बृहत्पंच वर्गीचक्र बनाने का क्रम - स्थिर मैत्री में बृहत्पंचवर्गबल, पूर्वोक्त बल से भिन्न है। स्थिर मैत्री में मित्र और शत्रु है किन्तु सम नहीं है। स्थिर मैत्री के अनुसार पंचवर्ग बलसारिणी दी जाती है -

स्थिरमैत्रेयबृहत्पञ्चवर्गबलसारिणी

	गृह	हद्दा	द्रेष्काण	नवांश
स्वराशि	३० ००	१५ ००	१० ००	५ ००
मित्रराशि	१५ ००	७ ३०	५ ००	२ ३०
शत्रुराशि	७ ३०	३ ४५	२ ३०	१ १५

स्थिर मैत्री के अनुसार पर्वूवत् पंचवर्ग चक्र बनाना, तदनंतर बृहत्पञ्चवर्गीबल चक्र बनाना। यह चक्र भी पूर्वोक्त रीति के अनुसार ही बनता है।

स्थिर मैत्री के अनुसार बृहत्पंचवर्गीचक्र बनाने का उदाहरण - सूर्य वृष राशि का है। वृष का स्वामी शुक्र है। स्थिर मैत्री में शुक्र, सूर्य का शत्रु है। सूर्य, शनि की हद्दा में है। स्थिर मैत्री में शनि, सूर्य का शत्रु है। सूर्य, शनि के द्रेष्काण में है। स्थिर मैत्री में शनि सूर्य का शत्रु है। नवमांश में सूर्य स्वराशि का है। इस प्रकार प्रत्येक ग्रह के विषय में जानकर बृहत्पंचवर्गीचक्र बनाना, जिसका नमूना दिया जाता है-

अथ स्थिरमैत्रेयद्रेष्काणराशीशवशात् बहत्पञ्चवर्गीचक्रम्

	सू.	चं.	मं.	बु.	वृ.	शु.	श.
स्वगृह	श. शत्रु						
उच्चबल	० १०						
हद्दा	श. शत्रु						
द्रेष्काण	श. शत्रु						
नवांश	सू. स्वराशि						

बृहत् पंचवर्गीबल चक्र बनाने का उदाहरण - सूर्य, स्वगृह में शत्रु राशि का है। बल सारिणी में स्वगृही शत्रुराशि के ग्रह का बल साढ़े सात अंश है। अतः

बृहत्पञ्चवर्गीबल चक्र में सूर्य के नीचे और स्वगृह के सामने के कोष्ठ में ७/३० लिखना। सूर्य के नीचे उच्चबल के सामने कोष्ठ में १५/०० उच्चबल लिखना। हद्दा के सामने शनि का शत्रु बल ३/४५ सूर्य के नीचे लिखना। द्रेष्काण के सामने सूर्य के नीचे शत्रुबल २/३० लिखना। नवांश के सामने सूर्य के नीचे स्वराशिबल ०५/०० लिखना। फिर इनसब बलों का योग ३३/४५ योग के सामने सूर्य के नीचे लिखना। योग के नीचे इसके विंशोपका (विश्वे) ८/५१/३० लिखना। १२ से कम होने के कारण मध्यबल है। अतः सूर्य माध्यम बली है। इस प्रकार प्रत्येक ग्रह का बल चक्र में लिखना। चक्र का नमूना दिया जाता है।

अथ स्थिरमैत्रेयद्रेष्काणराशिवशात् बृहत्पञ्चवर्गीबलचक्रम्

	सू.	चं.	मं.	बु.	वृ.	शु.	श.
स्वगृहबल	७/३०						
उच्चबल	१५/००						
हद्दाबल	३/४५						
द्रेष्काणबल	२/३०						
नवांशबल	०५/००						
योग	३३/४५						
विंशोपका	८/५१/३०						

(ख) स्थिरमैत्री में द्रेष्काणेश शनि शत्रु है। अतः वृहत् पंचवर्गी चक्र तथा बृहत्पंचवर्गीबल चक्र यही रहेगा।

नोट- तात्कालिक मैत्री में जब द्रेष्काणराशीश और द्रेष्काणेश, एक ही जैसे होते हैं तो एक ही प्रकार का बृहत्पञ्चवर्गीबल चक्र बनता है, अन्यथा दो बनते हैं। इसी प्रकार स्थिर मैत्री में जब द्रेष्काण राशीश और द्रेष्काणेश एक ही जैसे होते हैं तो स्थिर मैत्री के अनुसार एक ही प्रकार का बृहत्पंचवर्गीबल चक्र बनता है, अन्यथा दो बनते हैं।

द्वादश वर्ग चक्र का विवरण - तात्कालिक ग्रहमैत्री के अनुसार तथा स्थिर मैत्री के अनुसार द्वादशवर्गीबल चक्र दो प्रकार से बनता है। यहाँ द्रेष्काण की राशि के पति को लिया जाता है। पहिले द्वादश वर्गी चक्र बनाना फिर उसकी सहायता से द्वादश वर्गीबल चक्र बनाना।

जातक में जिस प्रकार सप्तवर्ग जन्य बल को लिया जाता है, ताजक में उसी प्रकार द्वादश वर्ग जन्य बल को लिया गया है। सप्तवर्ग की अपेक्षा द्वादशवर्ग विशेष

है। पंचवर्गी बल तथा द्वादश वर्गीबल, ये दोनों ताजक शास्त्रकी देन है । आचार्य यादव ने बृहत्पंच वर्गीबल को तथा आचार्य वामन ने द्वादशवर्गीबल को महत्व दिया है । अपना विचार तो यह है कि दोनों के ही आधार पर ग्रह के बल का निर्णय करना समुचित है ।

तात्कालिक ग्रह मैत्री के अनुसार द्वादशवर्गी के बल का विवरण इस प्रकार है। स्वराशि में २० अंश बल, मित्रराशि में १५ अंश बल, समराशि में १० अंश बल और शत्रुराशि में ५ अंश बल होता है । सरलता के लिए बल की सारिणी दी जाती है-

तात्कालिकमैत्रेयद्वादशवर्गीयबलसारिणी

राशि	स्वराशि	मित्रराशि	समराशि	शत्रुराशि
बल	२० ००	१५ ००	१० ००	०५ ००

द्वादशवर्गीबल चक्र में प्रत्येक ग्रह के नीचे, वर्ग के सामने बल लिखना। फिर द्वादशवर्गीबल चक्र में प्रत्येक ग्रह के नीचे वर्ग के सामने बल लिखना । फिर द्वादशवर्गों के बलों का योग करना । बल के योग में १२ से भाग देने पर लब्धियाँ विंशोपका (विश्वा) बल होता है । विंशोपका बल के आधार पर ही ग्रह के पूर्ण बली, मध्यबली होने का निर्णय होता है ।

द्वादशवर्गी चक्र बनाने का उदाहरण -सूर्य वृष राशि का है, वृष का स्वामी शुक्र है । कुण्डली में मेषराशि का शुक्र,सूर्य से बारहवें स्थान में होने के कारण सूर्य का सम है । अत: गृह में सूर्य समराशि का है । होरा में सूर्य, सिंह राशि का है । द्रेष्काण में सूर्य, शनि की मकर राशि का है । तात्कालिक ग्रहमैत्री में शनि, सूर्य का मित्र है । चतुर्थांश में सूर्य, कुंभराशि का है । कुंभराशि का स्वामी शनि, सूर्य का मित्र है । पंचमांश में सूर्य, मेष राशि का है । मेष राशि का स्वामी मंगल, सूर्य का शत्रु है । षष्ठांश में सूर्य कुंभराशि का है । उसका स्वामी शनि, सूर्य का मित्र है । सप्तमांश में सूर्य, मेष राशि में है। मेष का स्वामी मंगल, सूर्य का शत्रु है । अष्टमांश में सूर्य कुंभराशि का है, उसका स्वामी शनि, सूर्य का मित्र है । नवमांश में सूर्य स्वराशि का है । दशमांश में सूर्य वृष राशि का है, उसका स्वामी शुक्र सूर्य का सम है । एकादशांश में सूर्य मिथुन राशि का है, उसका स्वामी बुध सूर्य का सम है। द्वादशांश में सूर्य कुंभ राशि का है, उसका स्वामी शनि, सूर्य का मित्र है । स्वगृह से लेकर द्वादशांश तक बारह वर्गों में सूर्य के ग्रहवर्ग निकालकर प्रत्येक वर्ग के सामने ग्रह तथा उसके नीचे मित्र आदि लिखना । इसी प्रकार सूर्य के समान प्रत्येक ग्रह के द्वादशवर्गों के ग्रहवर्ग निकालकर द्वादशवर्गी चक्र में लिखने । द्वादश वर्गी चक्र का नमूना दिया जाता है । उसमें क्रम के अनुसार उक्त उदाहरण की सहायता से खाली स्थानों को भरिये ।

अथ तात्कालिकग्रहमैत्रेयद्वादशवर्गीचक्रम्

वर्ग	सू.	चं.	मं.	बु.	वृ.	शु.	श.
स्वगृह	शु. सम.						
होरा	सू. स्वराशि						
द्रेष्काण	श. मित्र						
चतुर्थांश	श. मि.						
पंचमांश	म. शत्रु.						
षष्ठांश	श. मि.						
सप्तमांश	मं. श.						
अष्टमांश	श. मि.						
नवमांश	सू. स्व.						
दशमांश	शु. स.						
एकादशांश	बु. स.						
द्वादशांश	श. मि.						

तात्कालिक ग्रह मैत्री के अनुसार द्वादशवर्गी बल का चक्र बनाने का उदाहरण - स्वगृह में सूर्य समराशि का है। बलसारिणी में उसका बल १० अंश है। होरा में सूर्य स्वराशि का होने से २० अंश बल है। द्रेष्काण में सूर्य मित्र राशि का है, उसका बल १५ अंश है। चतुर्थांश में भी मित्रराशि के सूर्य का १५ अंश बल है। पंचमांश में शत्रुराशि के सूर्य का ५ अंश बल, षष्ठांश में मित्रराशि के सूर्य का १५ अंश बल, सप्तमांश में शत्रु राशि के सूर्य का ५अंश बल, अष्टमांश में मित्रराशि के सूर्य का १५ अंश बल, नवमांश में स्वराशि के सूर्य का २० अंश बल, दशमांश में समराशि के सूर्य का १० अंश बल, एकादशांश में सम राशि के सूर्य का १० अंश बल तथा द्वादशांश में मित्र राशि के सूर्य का १५ अंश बल है। सब बलों का योग १५५ द्वादश वर्गैक्य बल है। विंशोपका लाने के लिए इसमें १२ से भाग दिया तो लब्धि १२/५५ विंशोपका बल है। यह बल १२ से कुछ अधिक होने से पूर्णबल है। अत: सूर्य पूर्णबली है। द्वादशवर्गीबल के चक्र का नमूना दिया जाता है।

अथ ग्रहमैत्रेयद्वादशवर्गीबल चक्रम्

वर्ग	सू.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.
स्वगृहबलम्	१०						
होराबलम्	२०						
द्रेष्काणबलम्	१५						
चतुर्थांशबलम्	१५						
पंचमांशबलम्	५						
षष्ठांशबलम्	१५						
सप्तमांशबलम्	५						
अष्टमांशबलम्	१५						
नवमांशबलम्	२०						
दशमांशबलम्	१०						
एकादशांशबलम्	१०						
द्वादशांशबलम्	१५						
योग	१५५						
विंशोपका	१२ ५५						
बलसंज्ञा	पू. ब.						

स्थिर मैत्री के अनुसार द्वादशवर्गी का बल, तात्कालिक मैत्री के बल से भिन्न है। स्थिर मैत्री के बल से भिन्न है । स्थिर मैत्री में कलात्मक बल होता है और उसमें सम ग्रह का बल नहीं है । बल की सारिणी दी जाती है ।

स्थिरमैत्रेय द्वादशवर्गीबल-सारिणी

राशि	स्वराशि	मित्रराशि	शत्रुराशि
बल कला	१००	५०	२५

स्थिर मैत्री के अनुसार द्वादशवर्गी चक्र का नमूना दिया जाता है।

अथ स्थिरमैत्रेयद्वादशवर्गीबलचक्रम्

वर्ग	सू.	चं.	मं.	बु.	वृ.	शु.	श.
स्वगृह	शु. शत्रु						
होरा	सू. स्वराशि						
द्रेष्काण	श. शत्रु						
चतुर्थांश	श. श.						
पंचमांश	मं. मित्र.						
षष्ठांश	श. श.						
सप्तमांश	मं. मि.						
अष्टमांश	श. श.						
नवमांश	सू. स्व.						
दशमांश	शु. श.						
एकादशांश	बु. श						
द्वादशांश	श. श.						

स्थिर मैत्री में द्वादशवर्गी चक्र के आधार पर द्वादश वर्गीबल चक्र बनाना। जिसका नमूना दिया जाता है। उसमें ग्रह का कलात्मक बल है।

नोट - स्थिर मैत्री के अनुसार द्वादशवर्ग बलैक्य में ६० से भाग देने पर लब्धि विंशोपका बल होता है

अथ स्थिरमैत्रेयद्वादशवर्गीबलचक्रम्

वर्ग	सू.	चं.	मं.	बु.	श.	वृ.	शु.
स्वगृहबल	२५ ००						
होराबल	१०० ००						
द्रेष्काण बल	२५ ००						
चतुर्थांश बल	२५ ००						
पंचमांश बल	५० ००						
षष्ठांश बल	२५ ००						
सप्तमांशबल	५० ००						

अष्टमांश बल	२५ ००						
नवमांश बल	१०० ००						
दशमांश बल	२५ ००						
एकादशांश बल	२५ ००						
द्वादशांशबल	२५ ००						
योग	५००						
विंशोपका बल	०८ २०						
बलसंज्ञा	मध्यब.						

नोट- जो ग्रह चारों प्रकार के बृहत्पञ्चवर्गीबल के द्वारा तथा चारों प्रकार के द्वादशवर्गीबल के द्वारा पूर्णबली है, वही वास्तव में पूर्ण बली है । जो दो प्रकारों में पूर्णबली तथा दो प्रकारों में मध्यम बली है, उसका आधाफल, मध्यम बल का तथा पूर्णबल का आधाफल होगा । जो दो प्रकारों में मध्यबली और दो प्रकारों में अल्पबली है, उसका आधाफल अल्प बल का और आधा बल मध्यबल का होगा जो दो प्रकारों में अल्पबली है और दो प्रकारों में पूर्णबली है, उस ग्रह का फल, मध्यबल का होगा । जो ग्रह चारों प्रकारों में मध्यबली है, वह वास्तव में मध्यबली है । जो ग्रह चारों प्रकारों में अल्पबली है, वह वास्तव में अल्पबली है । इस प्रकार औसत लगाकर ग्रह के बल के अनुसार ही उसका फलित निर्णय करना सर्वथा उपयुक्त है । बल के संबंध में ग्रंथ में उल्लेख है कि -"षडल्पोऽल्पबली रव्यधिक: पूर्णबली" अर्थात् ६ बल से कम बलवाली अल्पबली और १२ से अधिक बल वाला ग्रह पूर्णबली होता है ।

हर्षषद का विवरण - यदि किसी उन्नत तथा बलवान् व्यक्ति को हर्ष नहीं है तो उसके लिए बल तथा उन्नति भी यथार्थ लाभकारी नहीं होती । इसी प्रकार ग्रह के संबंध में भी है । हर्षपद या हर्ष स्थान के विषय में ताजकरत्न ग्रन्थ में वर्णन है -

विना हर्षस्य चक्रेण वृथोक्तं हर्षजं फलम् ।
तस्मादत्र लिखेच्चक्रं हर्षस्थानबलाह्वयम् ।।

हर्षबल चक्र के विना ग्रह का हर्षजन्य फलित व्यर्थ होता है । अत: वर्षपत्र में हर्षबल चक्र का लिखना अत्यन्त आवश्यक है ।

हर्षपद चार प्रकार का होता है । १. स्वराशि या उच्चराशि के ग्रह का प्रथम हर्षपद होता है । दूसरा पद, विशेष स्थान में स्थित ग्रह का दूसरा हर्षपद होता है । नवम स्थान में सूर्य का, तीसरे स्थान में चंद्र का, छठे स्थान में मंगल का, लग्नभाव में बुध का, ग्यारहवें स्थान में गुरु का, पंचम स्थान में शुक्र का और बारहवें स्थान में बैठने से शनि का, हर्षपद होता है ।

पुरुषग्रह- सूर्य, मंगल और गुरु । स्त्री ग्रह-चंद्र, बुध, शुक्र और शनि । दिन में वर्ष लग्न का प्रवेश होने पर पुरुष ग्रहों का हर्षपद होता है और रात्रि में वर्ष प्रवेश होने पर स्त्रीग्रहों का हर्षपद होता है । यह तीसरा हर्षपद है ।

चौथा हर्षपद-कुण्डली में लग्नभाव से द्वादश भावतक क्रमशः तीन-तीन भाव, स्त्रीसंज्ञक तथा पुरुषसंज्ञक है । १/२/३ भाव स्त्रीसंज्ञक ।४/५/६ स्थान पुरुष संज्ञक । ७/८/९ भाव स्त्रीसंज्ञक ।१०/११/१२ भाव पुरुष संज्ञक है । पुरुष संज्ञक स्थान में पुरुष ग्रह बैठे तो उसे हर्षपद होता है । इसी प्रकार स्त्री संज्ञक स्थान में स्त्रीग्रह बैठे तो उसे हर्षपद होता है । यह चौथा हर्षपद होता है ।

प्रत्येक हर्षपद में हर्षपद वाले ग्रह का ५ विश्वे बल होता है । जिस ग्रह का हर्षपद नहीं होता है तो हर्षपद चक्र में उसके स्थान में शून्य लिखा जाता है । उक्त हर्षपदों का विवरण एक श्लोक में दिया गया है -

नन्दत्रिषड्लग्नभवर्क्षपुत्रव्ययादिनाद्धर्षपदं स्वभोच्चम् ।
त्रिभिस्त्रिभिर्लग्नभतः क्रमेण स्त्रीणां नृणां रात्रिदिने च तेषाम् ।।

उक्त श्लोक की व्याख्या पूर्व दी जा चुकी है । अब हर्षपदों के उदाहरण दिये जाते हैं । १. प्रथम हर्षपद-वर्षकुण्डली में कोई भी ग्रह स्वराशि या उच्च नहीं है । अतः सबका बल शून्य है । २. द्वितीय हर्ष पद-कुण्डली में कोई भी ग्रह हर्ष स्थान में नहीं है। अतः सबका बल शून्य है । ३. तृतीय हर्षपद-रात्रि में वर्षलग्न का प्रवेश है । अतः प्रत्येक स्त्रीग्रह (चं. बु. शु. श.) को ५/५ विश्वेबल मिला । ४. चतुर्थ हर्षपद-स्त्रीसंज्ञक भावों में स्त्रीग्रह बुध, शुक्र और शनि बैठे हैं । अतः प्रत्येक को ५/५ विश्वे बल मिला । पुरुष संज्ञक भावों में केवल गुरु है, अतः गुरु का ५ विश्वे बल है । हर्षपद चक्र का नमूना दिया जाता है।

अथ ग्रहाणां हर्षपदचक्रम्

		सू.	च.	म.	बु.	वृ	शु.	श.
प्रथम हर्षपदम्	स्व. उ.रा.	०	०	०	०	०	०	०
द्वितीय ह.प.	स्था. ब.	०	०	०	०	०	०	०
तृतीय ह.प.	रा.ब.	०	०५	०	०५	०	०५	०५
चतुर्थ ह.प.	स्त्री पु.ब.	०	०	०	०	०५	०	०
योग	०	०	०५	०	०५	०५	०५	०५
बल संज्ञा	६	ही. ब.	अ. ब.	ही. ब.	अ.ब.	अ. ब.	अ. ब.	अ.ब.

नोट - ५ विश्वे अल्पबल है । १० विश्वे मध्यबल है । १५ विश्वे पूर्णबल है । २० विश्वे पूर्ण हर्षबल है ।

लघुपंचेश का विवरण - आचार्य यादव का कथन है -

जन्मलग्नपतिरिन्थिहाधिपोऽहर्निशं रविशशाङ्कराशिपः ।
स्युस्त्रिराशिपतिरब्दलग्नपः पञ्चहायनपतित्वयोग्यकाः।।
विना पञ्चाधिकारिणो वर्षेशो न प्रजायते ।
अतोऽत्र विलिखेद्धीमान् चक्रं पञ्चेश्वरान्वितम् ।।

१. जन्मलग्नेश । २. मुंथेश । ३. (क) दिन में वर्ष प्रवेश होने पर सूर्य की राशि का स्वामी । (ख) रात्रि में वर्ष प्रवेश होने पर चंद्र की राशि का स्वामी । (४) त्रिराशिपति । ५. वर्षलग्नेश । ये पाँच लघु पंचेश हैं । इन पंचाधिकारियों के विना वर्षेश का निर्णय नहीं हो सकता है । अतः विद्वान् को वर्षपत्र में लघुपंचेश चक्र लिखना चाहिए।

त्रिराशिपति का विवरण- दिन तथा रात्रि में वर्ष प्रवेश होने पर वर्षलग्न के अनुसार त्रिराशिपति होता है । सारिणी दी जाती है ।

दिनेऽर्कशुक्रार्किसितेज्यचन्द्रज्ञारार्किभौमेज्यचन्द्रा रात्रौ ।
जीवेन्दुज्ञारार्कसितार्किशुक्रमन्दारेज्यचन्द्रा मेषादित्रिराशिपाः ।।

त्रिराशिपति-सारिणी

लग्न	मे.	वृष	मि.	कर्क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
दिन	सू.	शु.	श.	शु.	वृ.	चं.	बु.	मं.	श.	मं.	वृ.	चं.
रात्रि	वृ.	चं.	बु.	मं.	सू.	शु.	श.	शु.	श	मं.	वृ.	चं.

लघुपंचेश चक्र का उदाहरण -जन्मलग्न कन्या का स्वामी बुध है । कन्याराशि की मुंथा का स्वामी बुध है । रात्रि में वर्ष प्रवेश है और कुण्डली में कुम्भ राशि का चंद्र है, चंद्रराशीश शनि है । रात्रि में वर्षलग्न मीन का प्रवेश है, अतः त्रिराशिपति चंद्र है । वर्षलग्न मीन का पति गुरु है । इन्हें चक्र में लिखना । चक्र का नमूना दिया जाता है।

अथ लघुपञ्चेश (पञ्चाधिकारि)चक्रम्

	जन्मपति	मुंथापति	रात्रिपति	त्रिराशिपति	वर्षपति
ग्रहाः	बुधः	बुधः	शनिः	चन्द्रः	गुरुः
बलम्	०५				
बलीसंज्ञा	अल्पबली				

वर्षेश का निर्णय - १. पंचाधिकारियों में सबसे अधिक बलवान् तथा वर्ष लग्न पर दृष्टि रखने वाली ग्रह वर्षेश या वर्षेश्वर होता है । २. अनेकग्रह, समान बली हों तो उनमें से जिसकी लग्न पर दृष्टि होती है, वह वर्षेश होता है । ३. अनेक ग्रहों का बल तथा वर्षलग्न पर दृष्टि समान हो तो उनमें से जिस ग्रह के अधिकार अधिक होगें वह वर्षेश होगा । ४. ग्रहों के बल, दृष्टि और अधिकार समान होते हैं तो मुंथेश वर्षपति होता है । ५. पूर्वोक्त पंचाधिकारियों में से कोई भी ग्रह, वर्षलग्न को नहीं देखता हो तो, मुंथेश और वर्षलग्नेश, इन दोनों से भिन्न ग्रह जो वर्ष में अधिकारी होकर जन्म कुण्डली में वर्षलग्न की राशि को देखता हो । इन तीनों में जिसका बल अधिक होता है, वही वर्षेश होता है । ६. उक्त तीनों अधिकारियों का बल समान होता है तो मुंथेश ही वर्षेश होता है । ७. उक्त रीति से चंद्र वर्षेश होता हो तो, जो ग्रह, चंद्र के साथ इत्थशाल करता होगा, वही वर्षेश होगा और यदि कोई भी ग्रह चंद्र से इत्थशाल नहीं करता है तो चंद्र की राशि का स्वामी वर्षेश होगा । यह कितने आचार्यों का मत है ।

नोट - कितने आचार्यों ने वर्षकाल को राज्य माना है । राज्य के ७ अंग हैं। १. राजा । २. रानी । ३. मंत्री । ४. राजपुरोहित । ५. सेनापति । ६. युवराज । ७. रस, धान्य तथा धातु का अधिपति ।

वर्षेश ग्रह राजा होता है । सप्तमांश पतिग्रह, रानी है । मुंथेश मंत्री है । जन्मलग्नेश राज पुरोहित है । होरालग्नेश सेनापति है । पंचमांश लग्नपति युवराज है । त्रिराशिपति, रस, धान्य तथा धातु अधिकारी होते हैं । इस प्रकार वर्षरूपी राज्य के सात प्रधान अधिकारी होते हैं । इनमें जो सबसे अधिक बलवान् तथा सौम्य होता है, उसी के द्वारा सुख आदि का विचार होता है । वर्ष में वर्षेश को विशेष महत्व दिया गया है । आचार्य यादव का मत है -

विविधभावविभूषणविग्रहा सुनयना नयनाञ्चितमन्मथा ।
युवतिवन्न विभाति पतिं विना शरदतः शरदां पतिरुच्यते ।।

जो युवति, सुंदर शरीरवाली, आभूषणों से युक्त, विविध हाव-भावों से युक्त, सुंदर नेत्रों वाली तथा नेत्रों में काम देव को धारण की हुई है, यदि वह पति से रहित है तो शोभा नहीं पा सकती । इसी प्रकार वर्ष भी वर्ष पति के विना शोभित नहीं होता।

नोट -वर्षेश के बल के संबंध में बृहत्पंचवर्गी तथा द्वादशवर्गी के द्वारा बल का निर्णय किया जाता है, परन्तु ताजकालंकार ग्रन्थ में उल्लेख है कि, षड्विध (छः प्रकार का) बल के द्वारा वर्षेश का निर्णय करना चाहिए ।

वीर्यज्ञाने वर्षनाथः प्रसिद्धः कर्तुं शक्यो नैव यस्माच्च षड्भिः ।
ज्ञातुं वीर्यं सूर्यतः खेचराणां तस्माल्लेख्यं षड्विधानि बलानि ।।

बल ज्ञान में वर्षेश प्रसिद्ध है । षड्बल के विना वर्षेश का निर्णय नहीं हो सकता । सूर्य आदि समस्त ग्रहों के बल जानने के लिए षड्बलों का लिखना आवश्यक है ।

षड्बल का विवरण -बल के स्पष्टीकरण से ग्रह के बल का पता चलता है

बल छः प्रकार का होने से उसे षड्बल कहा जता है । षड्बल के नामः - १. स्थानबल। २. काष्ठा बल या दिग्बल । ३. कालबल । ४. चेष्टाबल । ५. निसर्गबल। ६. छबल । (क) ऋण दृग्बल । (ख) धन दृग्बल ।

नोट - षड्बल की रीति तथा सोदाहरण स्पष्टीकरण लेखक के सुदर्शनपद्धति नामक ग्रंथ में देखिये ।

ताजक रत्नावली में ग्रहों के इष्टबल तथा कष्टबल लगाने का उल्लेख है -

ताजकोक्तफलादेशः प्रकर्तुं शक्यते यतः ।
इष्टकष्टफलज्ञानान्निर्णयस्तदथोच्यते ।।

इष्ट फल तथा कष्ट फल के ज्ञान होने पर ताजकोक्त फलादेश का निर्णय हो सकता है ।

नोट - इष्टफल तथा कष्टफल जानने के लिए लेखक की "सुदर्शन-पद्धति" देखिये ।

यद्यपि 'अधिकस्याधिकं फलम्' के अनुसार जितनी भी विशेष गणित लगायी जायगी, फलादेश भी उतना ही तथ्य उतरेगा । जन्मपत्र के निर्माण में तो ये सब गणित अत्युपयोगी हैं । वर्षपत्र में तो सामान्यतः बृहत् पंचवर्गीबल तथा द्वादशवर्गी बल से काम चल जाता है ।

दलील का विवरण - आचार्य हिल्लाज के मत में दलील या दलीलक ग्रह का विशेष महत्व है । ताजक सुधानिधि आदि ग्रंथ में दलील के भावगत फलादेश वर्णित हैं ।

ग्रहं तथोच्चं परतस्तु हद्दा त्रैराशिको नन्दलवः क्रमेण ।
पञ्चाधिकारेषु बलान्वितो यः संवीक्षते यः स दलीलकः स्यात् ।।

जिस प्रकार वर्षेश के निर्णय में पंचाधिकारों को काम में लाया जाता है, उसी प्रकार दलील के निर्णय में भी पंचाधिकारों को काम में लाया जाता है । दलील के संबंध में पंचाधिकार भिन्न हैं । पंचाधिकार - १. ग्रह । २. उच्च । ३. हद्दा । ४. त्रिराशि । ५. नवमांश । ये पाँच अधिकार हैं । इनके स्वामीग्रह पंचाधिकारी होते हैं । पंचाधिकारियों में जो ग्रह सबसे बलवान् होगा तथा अपने भाव दृष्टि रखता होगा, वही ग्रह दलीलक होगा । प्रत्येक भाव का दलीलक होता है वर्ष में वर्षेश तो एक ही होता है किन्तु दललीक बारह होते हैं ।

लग्न भाव के दलीलक बनाने का उदाहरण - लग्नभाव का स्पष्ट ११/९/४६/११ है । इसका स्वामी गुरु, मिथुन राशि में है । मिथुन का स्वामी बुध है। अतः लग्न का स्वगृही बुध है । लग्नेश गुरु की उच्चराशि कर्क है, उसका स्वामी चन्द्र है ।

मीनलग्न हद्देश शुक्र है । लग्न का प्रवेश रात्रि में होने से उसका त्रिराशिपति चंद्र है । मीन लग्न कन्या राशि के नवांश में है । उसका स्वामी बुध है । इस प्रकार

पंचाधिकारी हुए। दलीलोपयोगी पंचाधिकारी चक्र बनाकर उसमें पंचाधिकारी लिखकर, उनके नीचे बृहत्पंचवर्गी बलचक्र के अनुसार बल के विंशोपका लिखने। जो सबसे बलवान् हो और लग्नभाव पर उसकी मित्र दृष्टि भी है, वही दलीलक है। चक्र का नमूना दिया जाता है-

अथ दलीलोपयोगीलग्नभावपञ्चाधिकारिचक्रम्

अधिकारी	स्वगृहपति:	उच्चपति:	हद्देश:	त्रिराशिपति:	नवांशपति:
ग्रह	बुध:	चन्द्र:	शुक्र:	चन्द्र:	बुध:
बल	५	५	५	५	५
दृष्टि	शत्रुदृष्टि	समदृष्टि	समदृष्टि	समदृष्टि	शत्रुदृष्टि

नोट - उक्त प्रकार से प्रत्येक भाव के दलीलोपयोगी पंचाधिकारी चक्र बनेगें।

लग्नभाव के दलील का उदाहरण - लग्नपर बुध की शत्रुदृष्टि है। अत: वह अनधिकारी है। चंद्र और शुक्र की समदृष्टि है। इन दोनों में से कोई एक हो सकता है। कौन हो ? इसके निर्णय के लिए चंद्र और शुक्र का नवमांश देखा तो चंद्र मिथुन के नवांश में है और शुक्र का नवमाशं देखा तो चंद्र मिथुन के नवांश में है और शुक्र, अपनी नीचराशि कन्या के नवमांश में है। यद्यपि दोनों का बल समान है तब भी नवमांश के विचार से चंद्र की अपेक्षा शुक्र निर्बल है। चंद्र की अपेक्षा शुक्र निर्बल होने के कारण चंद्र ही लग्नभाव का दलील या दलीलक ग्रह है। इसी प्रकार प्रत्येक भाव के दलीलक ग्रह का निर्णय करना उचित है।

सहम का विवरण - सहम शब्द फार्सी भाषा का है, जिसका अर्थ भाग या हिस्सा है। सहम के योग से ही भाव की पूर्णता होती है। ताजक सुधानिधि ग्रन्थ में सहम की उपयोगिता के संबंध में वर्णन है -

सकलभावफलस्यं सहायतां विदधते सहमं हि सदा यत: ।
विधिरिवोद्यमनस्य नृणामत: सहमसन्नयनं च विधेधुना ।।

जिस प्रकार मनुष्य के उद्योग में सहायक विधि (भाग) है, उसी प्रकार समस्त भावों के फलों में सहम सदा सहायक होते हैं।

यद्यपि सहम अनेक हैं, किन्तु जिस व्यक्ति के लिए जो सहम अपेक्षित हैं, उसके लिए वे ही सहम स्पष्ट करने उचित हैं। उदाहरणार्थ, वृद्ध-अवस्था की स्त्री के वर्षपत्र में गर्भसहम का स्पष्टीकरण करना व्यर्थ है। अत: अपेक्षित सहमों का स्पष्टीकरण ही सर्वथा समुचित है। सहम का स्पष्टीकरण करके उसकी कुण्डली बनानी। सहम के स्पष्ट में जो राशि आये, उसे लग्नभाव में लिखकर शेष भावों में यथाक्रम राशियाँ तथा वर्षप्रवेश काल के ग्रह लिखने। इस प्रकार सहम कुण्डली तैयार हो जाती है।

सहमों की नामावली - जिस भाव के जो उपयोगी सहम हैं, उस क्रम से

सहमों के नाम प्रस्तुत किये जाते हैं । प्राय: सहम ५७ हैं ।

१. लग्नभाव के उपयोगी सहम -१. ज्ञान सहम । २. गुरु सहम । ३. मान सहम । ४. माहात्म्य सहम । ५. आशा सहम । ६. सामर्थ्य सहम । ७. गौरव सहम । ८. जीवित सहम । ९. जलसहम । १०. कलि (कलह) सहम । ११. वंदक सहम। १२. संताप सहम । १३. प्रीतिसहम । १४. क्षमासहम । १५. देह सहम । १६. गुरुता सहम । १७. उपाय सहम । १८. भक्ति सहम । १९. क्लेशसहम । २०. जाति सहम। २१. उद्यम सहम । २२. भव्य (कल्याण) सहम । २३. बंधन सहम । २४. बन्ध मोक्ष (कैद से छूटना) सहम । २५. वर्णसहम । २६. चिह्न सहम ।

२. द्वितीय भाव संबंधी सहम - १. धन सहम । २. दरिद्र सहम । ३. दृष्टि सहम । ४. अश्व सहम ।

३. तृतीय भाव संबंधी सहम - १. भ्रातृ सहम । २. सेवक सहम । ३. भृत्य सहम । ४. पंथा सहम । ५. बल सहम ।

४. चतुर्थ स्थान संबंधी सहम - १. मित्र सहम । २. मातृसहम । ३. पितृसहम । ४. निधि सहम । ५. गृहसहम । ६. क्षेत्रसहम । ७. सुख सहम । ८. दुख सहम । ९. आगम सहम ।

५. पंचम भाव संबंधी सहम - १. आधान (गर्भ की स्थिति) सहम । २. सूति (प्रसव होना) सहम । ३. पुत्र सहम । ४. कन्या सहम । ५. शास्त्र सहम । ६. कला सहम । ७. सन्मति सहम । ८. विद्या सहम । ९. सत्य सहम । १०. असत्य सहम ।

६. षष्ठ स्थान संबंधी सहम - मातुल (मामा) सहम । २. वंद सहम । ३. रोगसहम । ४. बंधन सहम । ५. शत्रु सहम । ६. परांगना (दूसरे की स्त्री) सहम । ७. घात (चोट आदि) सहम । ८. गज सहम् । ९. अश्व सहम । १०. उष्ट्र सहम । ११. अन्य कार्य सहम ।

७. सप्तमभाव संबंधी - १. उद्वाह (विवाह) सहम । २. भार्या सहम । ३. काम सहम । ४. वणिक् सहम । ५. व्यापार सहम । ६. आगम सहम । ७. दास्य (नौकरी) सहम ।

८. अष्टमस्थान संबंधी सहम - १. मृत्यु सहम । २. जलपथ सहम ।

९. नवमभाव संबंधी सहम - १. पुण्य सहम । २. श्रद्धा सहम । ३. सन्मति सहम । ४. कीर्तिसहम । ५. गुरु सहम ।

१०. दशमभाव संबंधी सहम - १. राज्य सहम । २. व्यापार सहम । ३. वृष्टि सहम । ४. जलपात सहम । ५. उन्नति सहम ।

११. एकादश भाव संबंधी सहम - १. बन्धुसहम । २. कार्य सिद्धि सहम । ३. लाभ सहम । ४. रत्न सहम ।

१२. द्वादश भाव संबंधी सहम - १. पितृव्य (ताउ-चाचा) सहम। २. आखेट (शिकार) सहम। ३. व्यसन (किसी प्रकार की लत) सहम। ४. ऋण (कर्जा) सहम। ५. कृषि (खेती-वाड़ी)सहम। ६. चतुष्पद (चौराहा) सहम।

सहम साधन करने का क्रम - प्राय: सभी सहमों के साधन करने में शोध्य, शुद्ध्याश्रय और खेपक का उपयोग होता है। शोध्य की परिभाषा - जिसके स्पष्ट को हीन (घटाना) किया जाता है, उसे शोध्य कहते हैं। शुद्ध्याश्रय की परिभाषा : जिसके स्पष्ट में से हीन किया जाता है, उसे शुद्ध्याश्रय कहते हैं। क्षेपक - मिलाये जाने वाले स्पष्ट को क्षेपक कहते हैं।

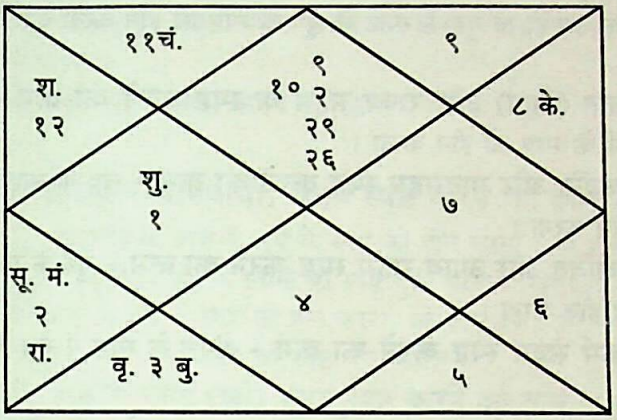
नोट - १. जिस सहम के साधन में कोई क्षेपक नहीं कहा गया है, वहाँ लग्नस्पष्ट को क्षेपक जानना। २. जिस सहम के साधन में कोई समय नहीं कहा गया है, यदि उस सहम का साधन करना है और रात्रि में वर्ष प्रवेश है तो शोध्य और शोधक का व्यस्त (उल्टा) क्रम होता है अर्थात् शोध्य को शुद्ध्याश्रय और शुद्धाश्रय को शोध्य मानकर सहम साधन करना। ३. शुद्ध्याश्रय और शोध्य के बीच में क्षेपक नहीं आये तो सहम सिद्ध करके राशि में १ संख्या युक्त करनी।

१. पुण्य सहम के साधन करने का क्रम - सूर्य स्पष्ट शोध्य,चन्द्र स्पष्ट शुद्ध्याश्रय तथा लग्नस्पष्ट क्षेपक है, अर्थात् चन्द्र के स्पष्ट में सूर्य के स्पष्ट को हीन करना। जो शेष बचे उसमें लग्नस्पष्ट को युक्त करना।

यदि शोध्य की राशि, अंश आदि से शोधक के राशि, अंश तक गिनने पर बीच में क्षेपक (लग्न) की राशि आ जायगी तो सिद्ध सहम की राशि में १ युक्त नहीं होगा। यदि क्षेपक की राशि बीच में नहीं आयगी तो सिद्ध सहम की राशि में १ युक्त होगा।

पुण्य सहम के साधन का उदाहरण - शोध्य सूर्य का स्पष्ट १/२४/५७/२५ है। शुद्ध्याश्रय चंद्र का स्पष्ट १०/१७/१०/४० है। वर्ष लग्न का स्पष्ट ११/९/४६/११ है। चंद्रस्पष्ट में सूर्यस्पष्ट को हीन किया $\frac{१०/१७/१०/४०}{१/२४/२६/२५}$ तो ८/२२/४३/१५ शेष बचे। इसमें लग्नस्पष्ट को युक्त किया $\frac{०८/२२/४३/१५}{११/०९/४६/११}$ तो २०/२/२९/२६ हुआ। शोध्य के राशि, अंश आदि १/२४ से शोधक के राशि, अंश आदि तक गिना तो क्षेपक (लग्न) के राशि, अशं ११/९ आदि बीच में नहीं आये, इस कारण सिद्ध सहम की राशि २० में १ मिलाया तो २१ हुए। १२ से अधिक होने के कारण २१ में १२ से भाग दिया। ९ शेष बचे। यह राशि हुई। पुण्य सहम का स्पष्ट ९/२/२९/२६ है। मकर लग्न से पुण्य सहम कुण्डली बनेगी। वर्ष प्रवेश काल के सब ग्रह लिखे जायेगें। पुण्य सहम कुण्डली का नमूना दिया जा रहा है।

अथ पुण्यसहमकुण्डली



नोट - इसी प्रकार प्रत्येक अपेक्षित सहम का नियमानुसार स्पष्ट करके उसकी कुण्डली बनती है ।

गुरु, ज्ञान और ख्याति (जाति) सहम के स्पष्ट का क्रम - सूर्य स्पष्ट में चन्द्र स्पष्ट को हीन करना। (क्षेपक नहीं कहा गया है, अतः शेष में लग्नस्पष्ट को क्षेपक मानकर युक्त करना । यदि शोध्य चंद्र की राशि आदि से शुद्ध्याश्रय या शोधक सूर्य के राशि, अंश तक क्षेपक की राशि बीच में आ जाय तो १ युक्त न करना और यदि दोनों के बीच में राशि न आये तो १ युक्त करना । इस प्रकार उक्त सहमों का साधन होता है।

यशः, देह, सैन्य और घात सहम के स्पष्ट करने का क्रम - गुरु के स्पष्ट में पुण्य सहम के स्पष्ट को हीन करना ।

मित्र सहम स्पष्ट करने का क्रम - ज्ञान सहम के स्पष्ट में पुण्य सहम के स्पष्ट को हीन करके शेष में क्षेपक (शुक्र के स्पष्ट) को युक्त करना ।

माहात्म्य, धैर्य और शौर्य सहम स्पष्ट करने का क्रम - पुण्य सहम के स्पष्ट में मंगल के स्पष्ट को हीन करना ।

इच्छा सहम के स्पष्ट करने का क्रम - शनि के स्पष्ट में शुक्र के स्पष्ट को हीन करना ।

सामर्थ्य सहम स्पष्ट करने का क्रम - मंगल के स्पष्ट में लग्नेश के स्पष्ट को हीन करना । **विशेष** - यदि मंगल ही लग्नेश हो तो गुरु के स्पष्ट में लग्नेश मंगल के स्पष्ट को हीन करना ।

भातृ सहम स्पष्ट करने का क्रम - गुरु के स्पष्ट में शनि के स्पष्ट को हीन करना ।

गौरव सहम स्पष्ट करने का क्रम - गौरव का अर्थ गुरुता यानी भारी-भरकम पन या बड़प्पन है । यह दिन-रात्रि के भेद से स्पष्ट होता है । (क) दिन में वर्ष

प्रवेश हो तो गुरु के स्पष्ट में चंद्र के स्पष्ट को हीन करके सूर्य के स्पष्ट को युक्त करना। (ख) रात्रि का इष्ट हो तो गुरु के स्पष्ट में सूर्य के स्पष्ट को हीन करके चंद्र के स्पष्ट को युक्त करना ।

तात (पिता) और राज्य सहम के स्पष्ट करने का क्रम - शनि के स्पष्ट में सूर्य के स्पष्ट को हीन करना ।

कान्ति और मातृसहम स्पष्ट करने का क्रम - चंद्र के स्पष्ट में शुक्र के स्पष्ट को हीन करना ।

जीवित और उपाय सहम स्पष्ट करने का क्रम - गुरु के स्पष्ट में शनि के स्पष्ट को हीन करना ।

कर्म सहम स्पष्ट करने का क्रम - मंगल के स्पष्ट में बुध के स्पष्ट को घटाना ।

रोग सहम के साधन करने का क्रम - लग्न के स्पष्ट को चन्द्र के स्पष्ट में हीन करना ।

काम सहम स्पष्ट करने का क्रम - (क) जन्म या वर्ष आदि की कर्क लग्न हो तो सूर्य के स्पष्ट में चन्द्र के स्पष्ट को हीन करना । (ख) यदि कर्क लग्न के अतिरिक्त और कोई लग्न हो तो चंद्र के स्पष्ट में लग्नेश के स्पष्ट में हीन करना ।

कलि और क्षमा सहम स्पष्ट करने का क्रम - गुरु के स्पष्ट में मंगल के स्पष्ट को हीन करना ।

शास्त्रसहम स्पष्ट करने का क्रम - गुरु के स्पष्ट में शनि के स्पष्ट को हीन करके शेष में बुध के स्पष्ट को मिलाना ।

बंधु सहम स्पष्ट करने का क्रम - बुध के स्पष्ट में चंद्र के स्पष्ट को हीन करना ।

पराश्रय (दूसरे का आसरा) सहम के साधन का क्रम - चद्रं के स्पष्ट में बुध के स्पष्ट को हीन करना ।

मृत्यु सहम के साधन करने का क्रम - अष्टम भाव के स्पष्ट में चंद्र के स्पष्ट को हीन करना और शेष में शनि के स्पष्ट को युक्त करना ।

देशान्तर सहम स्पष्ट करने का क्रम - नवम भाव के स्पष्ट में नवमेश के स्पष्ट को हीन करना ।

धनसहम स्पष्ट करने का क्रम- एकादशभाव के स्पष्ट में एकादश (ग्यारहवें) भाव के पति के स्पष्ट को हीन करना ।

लाभ सहम स्पष्ट करने का क्रम - एकादश भाव के स्पष्ट में एकादश (ग्यारहवें) भाव के पति के स्पष्ट को हीन करना ।

परांगना (पर स्त्री) सहम के स्पष्ट करने का क्रम - शुक्र के स्पष्ट में सूर्य

के स्पष्ट को हीन करना ।

दास्य (सेवकाई) सहम स्पष्ट करने का क्रम - चंद्र के स्पष्ट में शनि के स्पष्ट को हीन करना ।

वाणिज्य सहम स्पष्ट करने का क्रम - चंद्र के स्पष्ट में बुध के स्पष्ट को हीन करना ।

कार्यसिद्धि (कामयावी) सहम स्पष्ट करने का क्रम - (क) दिन का इष्टकाल हो तो शनि के स्पष्ट में सूर्य के स्पष्ट को हीन करना । जो शेष बचे उसमें सूर्य की राशि (जिसमें स्थित हो) के स्वामी का स्पष्ट युक्त करना । (ख) रात्रि का इष्टकाल हो तो शनि के स्पष्ट में चंद्र के स्पष्ट को हीन करना, जो शेष बचे उसमें चन्द्र की राशि (जिस राशि में स्थित हो) के स्वामी का स्पष्ट युक्त करना ।

विवाह और भार्या (स्त्री) सहम स्पष्ट करने का क्रम - शुक्र के स्पष्ट में शनि के स्पष्ट को हीन करना ।

आधान (गर्भ) सहम के स्पष्ट करने का क्रम - गुरु के स्पष्ट में बुध के स्पष्ट को हीन करना ।

संताप सहम के स्पष्ट करने का क्रम - मानसिक व्यथा को अथवा शरीर और इन्द्रियों के अवसाद को संताप कहते हैं ।

शनि के स्पष्ट में चंद्र के स्पष्ट को हीन करने से जो शेष बचे उसमें षष्ठ भाव के स्पष्ट को युक्त करना ।

श्रद्धा (अस्तिक्य वृद्धि) सहम के स्पष्ट करने का क्रम - शुक्र के स्पष्ट में मंगल के स्पष्ट को हीन करना ।

प्रीति (प्रिय वस्तु में मन की अभिनिवेश) सहम के स्पष्ट करने का क्रम - ज्ञान सहम के स्पष्ट में पुण्य सहम का स्पष्ट हीन करना ।

जाड्य (मान-अपमान को न समझना या लोक व्यवहार को न जानना अथवा विद्या का ग्रहण न कर सकना) सहम के स्पष्ट करने का क्रम - मंगल के स्पष्ट को शनि के स्पष्ट में हीन करके शेष में बुध के स्पष्ट को युक्त करना ।

व्यापार सहम स्पष्ट करने का क्रम - मंगल के स्पष्ट में बुध के स्पष्ट को हीन करना ।

जलपात सहम स्पष्ट करने का क्रम - शनि के स्पष्ट में चंद्र के स्पष्ट को हीन करना ।

शत्रु सहम के स्पष्ट करने का क्रम - मंगल के स्पष्ट में शनि के स्पष्ट को हीन करना ।

दारिद्र्य सहम के स्पष्ट करने का क्रम - पुण्यसहम के स्पष्ट में बुध के

स्पष्ट को हीन करना । जो शेष बचे उसमें बुध के स्पष्ट को युक्त करना ।

पुत्र सहम के स्पष्ट करने का क्रम - गुरु के स्पष्ट में चंद्र के स्पष्ट को हीन करना ।

पुत्री सहम के स्पष्ट करने का क्रम - शुक्र के स्पष्ट में चन्द्र के स्पष्ट को हीन करना ।

जलपथ सहम के स्पष्ट करने का क्रम - साढ़े तीन राशि (३ राशि और १५ अंश) में शनि के स्पष्ट को हीन करना ।

बन्धन सहम के स्पष्ट करने का क्रम - पुण्य सहम के स्पष्ट में शनि के स्पष्ट को हीन करना ।

बन्धमोक्ष (कैद से छूटना) सहम के स्पष्ट करने का क्रम - शनि के स्पष्ट को पुण्य सहम के स्पष्ट में हीन करके जो शेष बचे उसमें शनि के स्पष्ट को युक्त करना ।

अश्व (घोड़ा) सहम के स्पष्ट करने का क्रम - पुण्य सहम के स्पष्ट में सूर्य के स्पष्ट को हीन करके जो शेष बचे उसमें एकादश भाव के स्पष्ट को युक्त करना।

गज (हाथी) सहम के स्पष्ट करने का क्रम - चंद्र के स्पष्ट में गुरु के स्पष्ट को हीन करना ।

पशु सहम के स्पष्ट करने का क्रम - द्वादश भाव के स्पष्ट में शत्रु सहम के स्पष्ट को हीन करना ।

कृषि (खेती) सहम के स्पष्ट करने का क्रम - मंगल के स्पष्ट में शनि के स्पष्ट को हीन करना ।

उष्ट्र (ऊँट) सहम के स्पष्ट करने का क्रम - शनि के स्पष्ट में मंगल के स्पष्ट को हीन करना ।

व्यसन सहम के स्पष्ट करने का क्रम - लग्न के स्पष्ट में शनि के स्पष्ट को हीन करना ।

दुःख सहम के स्पष्ट करने का क्रम - पुण्य सहम के स्पष्ट में गुरु के स्पष्ट को हीन करके जो शेष बचे उसमें मंगल के स्पष्ट को मिलाना ।

सत्य सहम के स्पष्ट करने का क्रम - चंद्र के स्पष्ट में बुध के स्पष्ट को हीन करना ।

बुद्धि सहम के स्पष्ट करने का क्रम - गुरु के स्पष्ट में सूर्य के स्पष्ट को हीन करना ।

निधि (धन का खजाना) सहम के स्पष्ट करने का क्रम - लग्न के स्पष्ट में चतुर्थभाव के स्वामी के स्पष्ट को हीन करना ।

ऋण (कर्जा) सहम के स्पष्ट करने का क्रम - शनि के स्पष्ट में शुक्र

के स्पष्ट को हीन करना ।

मण्डलेश (चार कोश का एक योजन होता है । ४०० योजन के देश का स्वामी मण्डलेश होता है) सहम के स्पष्ट करने का क्रम - (क) दिन का इष्ट हो तो सूर्य के स्पष्ट को उसके उच्च (० राशि, १० अंश) में हीन करना । (ख) रात्रि का इष्ट हो तो चंद्र के स्पष्ट को उसके उच्च (१ राशि, ३ अंश) में हीन करना ।

आखेट (शिकार) सहम के स्पष्ट करने का क्रम - षष्ठ भाव के पति के स्पष्ट को षष्ठभाव के स्पष्ट में हीन करके जो शेष रहे उसमें द्वादश भाव के स्पष्ट को युक्त करना ।

भृत्य सहम के स्पष्ट करने का क्रम - चंद्र के स्पष्ट में बुध के स्पष्ट का हीन करना ।

पितृव्य सहम के स्पष्ट करने का क्रम - सूर्य के स्पष्ट को शनि के स्पष्ट में हीन करना ।

नोट - जो सहम अपेक्षित हो, उसे पहिले जन्म-पत्र में लगाना । फिर उसका बल-निर्बल देखना ।

बलवान् सहम की परिभाषा- जो सहम, कुण्डली में शुभस्थान में हो और अपने स्वामी से लग्नेश से तथा शुभग्रह से युक्त और दृष्ट हो तो वह सहम, बली या बलवान् होता है । निर्बल सहम की परिभाषा- जो सहम, कुण्डली में त्रिकस्थान में हो, अपने स्वामी से और लग्नेश से युक्त तथा दृष्ट न हो एवं अशुभ ग्रह से युक्त या दृष्ट हो तो वह सहम निर्बल होता है ।

जन्मकाल में जो सहम बलवान् होते हैं, वे ही सहम वर्षकाल में फलप्रद होते हैं ।

जो सहम जन्मकाल में संभव हैं, उन्हीं को प्रतिवर्ष वर्ष काल में लगाना । तभी वे संभव हो सकते हैं ।

सहम के फल के समय का विचार - सहम का फल कब होगा ? इस संबंध में तीन विचार हैं । १. मोटा विचार तो यह है कि, सहम का फल, उसके स्वामी की दशा में होता है ।

२. आचार्य यादव का सिद्धान्त - सहम के स्पष्ट का और सहम के स्वामी के स्पष्ट का अन्तर करना । जो शेष बचता है, वह राश्यादि अन्तर होता है । राश्यादि अंतर में इष्टकाल के सूर्यस्पष्ट को युक्त करना । जो राशि होगी, उसी राशि के सूर्य में सहम का फल होगा ।

उदाहरण - पुण्यसहम का फल कब होगा ? यह जानना है । अतः पुण्य सहम का स्पष्ट ९/२/२९/२६ है । पुण्य सहम के स्वामी शनि का स्पष्ट ११/३/५४/३१ है। अब इसका अन्तर करना है । अतः शनि का स्पष्ट अधिक संख्या में है, उसमें कम संख्या वाले पुण्य सहम को हीन किया $\frac{११/३/५४/३१}{९/२/२९/२६}$ तो २/१/२५/०५ शेष बचा। इसमें सूर्य

के स्पष्ट १/२४/५७/२५ को युक्त किया तो $\frac{११/३/५४/३१}{९/२/२९/२६}$ $\frac{}{२/१/२५/०५}$ तो ३/२६/२२/३० हुए। यहाँ यह फलित निकला कि, मिथुन के सूर्य के २६ अंश के बाद से कर्क के सूर्य के २७ अंश के अंदर पुण्य सहम का फल होगा।

३. आचार्य रोमक का सिद्धान्त - सहम के स्पष्ट में सहम की राशि के पति के स्पष्ट को हीन करना। जो शेष बचे उसे सवर्णित पिण्ड (राशि की संख्या को ३० से गुणा करके अंश जोड़ना, जो संख्या बने उसे ६० से गुणा करके कला की संख्या जोड़नी, जो संख्या बने उसे ६० से गुणा करके विकला की संख्या जोड़नी। इस प्रकार यह संख्याओं की एकीकरण सवर्णित पिण्ड होगा।) करके सहम की राशि के स्वोदय पलों (सहम की राशि के मान की घड़ी की संख्या को ६० से गुणा करके पलों की संख्या को जोड़ना। यह स्वोदय पल होगें।) से गुणा करके ३६० से भाग देना। जो लब्धि आयेगी वह दिन आदि है। इससे अर्थ यह होगा कि, वर्ष प्रवेश काल से या प्रश्न के समय के इतने दिनों बाद अमुक (फलाँ) सहम के फल का उदय होगा।

उदाहरण - कार्य की सिद्धि कब होगी ? यह जानना है, अत: प्रथम कार्य की सिद्धि के सहम का साधन करना है। रात्रि का इष्टकाल है, इस कारण शनि, शुद्ध्याश्रय या शोधक है और चंद्र क्षेपक है। शनि के स्पष्ट ११/३/५४/३१ में चंद्र के स्पष्ट १०/१७/१०/४० को हीन किया तो ००/१६/४३/५१ शेष बचे। इसमें क्षेपक (चन्द्र के स्पष्ट) १०/१७/१०/४० को युक्त किया तो ११/३/५४/३१ हुए। शोध्य चंद्र की राशि १०/१७ से शोधक शनि की राशि ११/३ तक गिना तो क्षेपक चंद्र की राशि बीच में है। अत: राशि में १ युक्त नहीं किया गया। यहाँ फलित हुआ कि, कार्यसिद्धि सहम का स्पष्ट ११/३/५४/३१ है।

अब आगे का क्रम प्रस्तुत किया जाता है। कार्य सिद्धि सहम की मीन राशि है, मीनराशि का स्वामी गुरु है, वह कार्य सिद्धि सहम का पति (स्वामी या ईश) है। कार्यसिद्धि सहम के स्पष्ट में कार्यसिद्धि सहमेश गुरु के स्पष्ट २/१४/२६/२५ को हीन किया $\frac{११/३/५४/३१}{२/१४/२६/२५}$ $\frac{}{८/१९/२८/०६}$ तो ८/१९/२८/०६ शेष बचे। इनका सवर्णित पिण्ड ९३४०८६ है। पुण्य सहम की मीन राशि का स्वोदय मान ३ घड़ी ३३ पल है। इसके पल बनाये ३×६०=१८०+३३=२१३ हुए। इनसे सवर्णित पिण्ड को गुणा किया तो १९८९५९३१८ हुए। इनमें ३६० से भाग दिया तो ५५१२८७५ लब्धि आयीं। ये ३६० से अधिक हैं। अत: ३६० से भाग दिया तो १५५ शेष बचे। अत: फलित हुआ कि, वर्ष प्रवेश काल से या प्रश्न काल से १५५ दिन के उपरान्त कार्य की सिद्धि होगी।

नोट - उक्त तीनों क्रमों में क्रमश: एक की अपेक्षा एक बलवान् है।

दशा-प्रकरण

दशा का विवरण - सुखरूप या दुखरूप अवस्था को दशा कहते हैं। जिस समय ग्रह शुभफल देता है, वह समय व्यक्ति के लिए सुख रूप होता है और जिस समय

ग्रह अशुभ फल देता है, वह समय व्यक्ति के लिए दुखरूप होता है । अतएव सुख-दुख के भोग काल को दशा कहते हैं । दशा के संबंध में आचार्य सूर्यसूरि का कथन है -

यदपि सूचितमत्र दशाफलं तनुधनादिगतैः खचरैस्तु यत् ।
दिनविभागमृतेन हि गम्यते तदहमत्र दशानयनं ब्रुवे ।।

कुण्डली में भाव या स्थानों में स्थित ग्रहों का फल होता है । वह फल किस समय और किस दिन होगा, यह जानना दशा के विना अत्यन्त कठिन है । अत: दशा का लगाना अत्यावश्यक है । शास्त्र ने 'फल किस समय होगा ?' यह जानने के लिए साधन रूप दशा निर्देश किया है ।

ताजक शास्त्र में दशाएँ बहुत प्रकार की हैं परन्तु ताजक के आचार्यों ने प्रधानत: आठ प्रकार की दशाएँ मानी हैं । दशाओं के नाम - १. हीनांश-पात्यांश दशा। २. तासीर दशा । ३. काल होरा दशा । ४. हद्दादशा । ५. निसर्गदशा । ६. मुद्दा दशा । ७. राममत दशा । ८. वर्ष योगिनी दशा ।

उक्त दशाओं का परिचय - वर्षकाल में जिस ग्रह के स्पष्ट में अंश और सब ग्रहों के अंशों से कम है यदि वह बृहत् पंचवर्गीबल तथा द्वादश वर्गीबल में सबसे अधिक बलवान् है तो वर्ष पत्र में हीनांश-पात्यांश दशा लगानी ।

(क) वर्ष लग्न पर सभी ग्रहों की दृष्टि हो तो तासीर दशा लगानी ।

(ख) सभी ग्रह, समानरूप में बलवान् हों तो तासीर दशा लगानी ।

(ग) लग्न सबसे अधिक बलवान् हो तो तासीर दशा लगानी ।

वर्ष के प्रवेश काल में जिस ग्रह की कालहोरा है, यदि वह ग्रह सबसे अधिक बलवान् है तो काल होरा दशा लगानी ।

वर्ष कुण्डली की लग्न, जिस ग्रह की हद्दा में होती है, वह हद्देश कहलाता है। यदि हद्देश ग्रह, सब ग्रहों से अधिक बलवान् है तो हद्दा दशा लगानी ।

वर्षकाल में यदि चंद्र सब ग्रहों से बलवान् है तो निसर्ग या नैसर्गिक दशा लगानी ।

जन्म की राशि का स्वामी ग्रह वर्षकाल में सब ग्रहों से अधिक बलवान् हो तो मुद्दा दशा लगानी ।

वर्ष काल में चंद्र जिस राशि में बैठा हो, यदि उस राशि का स्वामी ग्रह सब ग्रहों से अधिक बलवान् है तो राममतदशा लगानी ।

वर्ष योगिनी दशा प्राय: सभी के लगानी ।

नोट - हीनांश-पात्यांश दशा पर ताजक शास्त्र के आचार्यों ने विशेष जोर दिया है । अत: यह दशा सभी के वर्ष में लगानी ।

हीनांश-पात्यांश दशा के साधन का क्रम - ग्रहों के स्पष्ट चक्र में देखना कि, लग्न के स्पष्ट में तथा सूर्य से लेकर शनि तक सातग्रहों के स्पष्ट में कौन न्यून यानी अल्प (सबसे कम अंशों वाला) अंश का है । आठ कोष्ठों का चक्र बनाकर सबसे पहिले उसे लिखकर उसके नीचे अंशादि (अंश, कला और विकला) लिखना । फिर उस अल्प-अंश के ग्रह से अधिक अंश के ग्रह के अंशादि लिखना फिर उससे अधिक अंश

के ग्रह के अंशादि लिखना। इस क्रम से सबसे अधिक अंश के ग्रह तक अंशादि लिखना। इस प्रकार लिखे हुए ग्रहों के अंशादि की 'हिनांश' संज्ञा होती है।

नोट - यदि स्पष्ट में दो ग्रह अंशादि (अंश-कला-विकला)में समान (बराबर) हों तो उनमें जो अधिक बलवान् हो उस ग्रह के अंशादि पहिले लिखना और उक्त यदि प्रकार के दोनों ग्रह बल में भी समान हों तो उनमें जिसकी गति अल्प हो उस ग्रह के अंशादि लिखना।

हीनांश ग्रहों का चक्र उदाहरण में दिया जाता है-

अथ हीनांशग्रहचक्रम्

ग्रह	श.	ल.	बु.	मं.	वृ.	चं.	शु.	सू.
अंश	०३	०९	१०	१४	१४	१७	१७	२४
कला	५४	४६	२४	८	२६	१०	५९	५७
विकला	३१	११	१९	१७	२५	४०	१७	२५

हीनांशों के पात्यांश साधन करने का क्रम - प्रथम १० कोष्ठों का एक चक्र बनाना। उसमें हीनांश ग्रह चक्र के समान ग्रह तथा लग्न लिखकर उनके नीचे पात्यांशों को लिखना। पात्यांश की परिभाषा - एक ग्रह के कम अंश आदि को दूसरे ग्रह के अधिक अंश आदि में हीन करने से जो शेष बचता है, उसे पात्यांश कहते हैं।

ग्रह पात्यांश चक्र में जो ग्रह सबसे कम अंश का है उस ग्रह को तथा उसके हीनांशों को यथावत् (जैसे के तैसे) लिखना। पहिले ग्रह के हीनांशादि को दूसरे ग्रह के अंशादि में शोधन (घटाना) करना। दूसरे ग्रह के अंशादि को तीसरे ग्रह के अंशादि में शोधन करना। इस प्रकार शोधित अंशादि अंत के ग्रह तक करना। उक्त प्रकार से शोधित हीनांशों की पात्यांश संज्ञा होती है। अन्त के कोष्ठ में पात्यांशों के अंशादि के योग लिखने।

उदाहरणार्थ ग्रहों का पात्यांश चक्र प्रस्तुत किया जाता है -

अथ ग्रहपात्यांशचक्रम्

ग्रह	श.	ल.	बु.	मं.	वृ.	चं.	शु.	सू.	योग
अंश	०३	०५	०३	००	२	००	०६	२४	१८
कला	५४	५१	४३	१८	१४	४८	५८	५७	४६
विकला	३१	४०	५८	१८	१५	३७	०८	२५	५२

उदाहरण - पात्यांश चक्र में सबसे हीनांश (कम अंशों वाला) शनि है। उसके अंशादि ३/५४/३१ यथावत् लिखे गये। इससे अधिक अंशादि लग्न के हैं। शनि के अंशादि को लग्न अंशादि ९/४६/११ में हीन किया $\frac{९/४६/११}{३/५४/३१}$ $\frac{}{५/५१/४०}$ तो ५/५१/४०/शेष बचे। ये लग्न के पात्यांश हैं। इन्हें चक्र में लग्न के नीचे लिखा। तदनंतर बुध के अंशादि १०/२४/१९ को अगले मंगल ग्रह के अंशादि १४/८/१७ में शोधन किया तो ३/४३/५८ शेष बचे। ये बुध के पात्यांश हैं। चक्र में बुध के नीचे लिखे गये। इस प्रकार प्रत्येक ग्रह के पात्यांश निकाल कर चक्र में लिखे गये। अंतिम ग्रह के अंशादि यथावत् (ज्यों के त्यों) लिखे गये। पात्यांश का उदाहरण चक्र पूर्व दिया जा चुका है। योग में विकला के स्थान पर ६० से भाग देकर शेष संख्या रखी गयी और लब्धि को कला की संख्याओं के योग में मिला कर ६० से भाग देकर शेष को रखा गया। लब्धि को अंशों की संख्या के योग में जोड़कर ३० से भाग देकर शेष संख्या को अंश के स्थान में रखा गया। इस प्रकार ग्रह-पात्यांश चक्र बन गया।

दिनादि ध्रुव बनाने का क्रम - वर्ष के ३६० दिन हैं अथवा ३६५ दिन १५घड़ी ३१ पल ३० विपल हैं। वर्ष के दिनों को पात्यांश के ऐक्य या योग से भाग देने पर प्राप्त होने वाली लब्धियाँ दिनादिक ध्रुव बनती हैं।

नोट - वर्ष के दिनादिक को तथा पात्यांश के योग के दिनादिक को सवर्णित कर के भाज्य, भाजक बनाकर भाग देना।

दिनादिक ध्रुव बनाने का उदाहरण - वर्ष दिनादि ३६०/०/० भाज्य है। पात्यांश योग दिनादि १८/४६/५२ है। दोनों दिनादि हैं। अतः सवर्णित किया। वर्ष दिनादि सवर्णित १२९६००० भाज्य है। पात्यांश योग दिनादि सवर्णित १८×६०= १०८०+४६=११२६ ×६०=६७५६०+५२=६७६१२ भाजक हैं।

भाज्य १२९६००० में भाजक ६७६१२ का भाग दिया तो १९ लब्धि आयी। ये दिन हैं। लब्धि को पृथक् रखा। शेष ११३७२ को ६० से गुणा किया ६८२३२० हुए। इनमें पूर्वोक्त भाजक ६७६१२ का भाग दिया तो १० लब्धि आयी। ये घड़ी हैं। लब्धि को पृथक् रखा। शेष ६२०० को ६० से गुणा किया तो ३७२००० हुए। इनमें ६७६१२ से भाग दिया। ५ लब्धि आयी। ये पल हैं। लब्धि को पृथक् रखा। शेष ३४९४० को ६० से गुणा किया तो १४९६४०० हुए। इनमें ६७६१२ से भाग दिया तो २२ लब्धि आयी। ये विपल हैं। शेष का त्याग किया। चार लब्ध फल जो लिये गये हैं वे अनुपात से रखने पर १९/१०/५/२२ हुए। यही दिनादिक ध्रुव है।

दिनादिक ध्रुव से दशा के दिनादि बनाने का क्रम - क्रम से प्रत्येक ग्रह के पात्यांश को दिनादि ध्रुव से गोमूत्रिका गुणन की रीति से गुणा करना। गुणनफल दिनादि होता है। यदि ३० या ३० से अधिक हो तो ३० से भाग देकर शेष को दिन के स्थान में रखना और लब्धि को मास के स्थान में रखना। प्रत्येक ग्रह की दशा के

दिनादि भिन्न-भिन्न होते हैं ।

प्रत्येक ग्रह की दिनादि दशा स्पष्ट करके नौ कोष्ठों का ग्रहों की दिनादि दशा का चक्र बनाना । चक्र के ऊपर के कोष्ठों में हीनांश के अनुसार ही लग्नसमेत सूर्य से शनि तक ग्रह लिखने । प्रत्येक ग्रह के नीचे स्पष्ट किये गये मास, दिन, घड़ी, पल, विपल के रूप में अंक लिखने । इनके नीचे के कोष्ठ में वर्ष प्रवेश काल का संवत् लिखना । उसके नीचे के कोष्ठों में वर्ष प्रवेश काल के सूर्य का स्पष्ट, ग्रह की दिनादि दशा में क्रम-क्रम से जोड़-जोड़ कर लिखते जाना । जोड़ने में विकलाओं से जोड़ना आरंभ करना ।

वर्ष के सूर्य के स्पष्ट की विकला को हीनांश के प्रथम ग्रह की दशा के पल में जोड़ना । यदि ६० या ६० से अधिक हो तो ६० से भाग देकर लब्धि को ऊपर घड़ी में युक्त करना तथा शेष को पल के स्थान में रखना । सूर्य के स्पष्ट की कला को ग्रह की दशा की घड़ी में युक्त करना । यदि ६० या ६० से अधिक हो तो ६० से भाग देकर लब्धि को दिन में जोड़ना और शेष को घड़ी के स्थान में रखना । सूर्य के स्पष्ट के अंश को ग्रह की दशा के दिन में युक्त करना । यदि दिन ३० या ३० से अधिक होतो ३० से भाग देकर शेष को दिन के स्थान में रखना और लब्धि को ऊपर मास में युक्त करना। सूर्य के स्पष्ट की राशि को ग्रह की दशा के मास में युक्त करना । यदि मास १२ या १२ से अधिक हो तो १२ से भाग देकर लब्धि को ऊपर संवत् में युक्त करना और शेष को मास के स्थान में रखना । प्रथम ग्रह की दशा के योग को दूसरे ग्रह की दशा के दिनादि में युक्त करना । दूसरे को तीसरे में, इत्यादि । इसी क्रम से जोड़ लगाते चले जाना । यहाँ यह अर्थ होगा कि, इस ग्रह की दशा, इस सौर मास (संक्रान्ति) के इतने अंश, इतनी घड़ी और इतने पल तक रहेगी ।

सूर्य के जितने स्पष्ट से जोड़ आरंभ किया जाता है, वही स्पष्ट दशा के अन्त में आ जाता है । यही क्रम प्रत्येक दशा के जोड़ लगाने में जानना ।

ग्रह की दिनादि दशा निकालने का उदाहरण - हीनांश , पात्यांश तथा दिनादि ध्रुव निकालने के क्रम तथा उदाहरण पूर्व दिये गये हैं । अब दिनादि दशा के साधन का उदाहरण दिया जाता है ।

ग्रहों के स्पष्ट में सबसे कम अंशों का शनि है । शनि का पात्यांश ०३/५४/३१ है । इसे दिनादिक ध्रुव १९/१०/५/२२ से गोमूत्रिका रीति द्वारा गुणा किया गया।

१. ३१×२२=६८२÷६०=११$^{+}$ लब्धि । २२ शेष का त्याग ।
२. ३१×५=१५५+११ =१६६÷६०=२$^{+}$ लब्धि । ४६ शेष त्याग ।
३. ३१×१०=३१०+२=३१२÷६०=५$^{+}$ लब्धि । १२ शेष त्याग ।
४. ३१×१९=५८९+५९४÷६०=९$^{+}$ लब्धि । ५४ शेष त्याग ।
५. ५४×२२=११८८+९=११९७÷६०=१९$^{+}$ लब्धि । ५७ शेष त्याग ।
६. ५४×५=२७०+१९=२८९÷६०=९$^{+}$ लब्धि । ४९ शेष त्याग ।
७. ५४×१०=५४०+४=५४४÷६०=९$^{+}$ लब्धि । ४ शेष त्याग ।
८. ५४×१९=१०२६+१९=१०३५÷६०=१७$^{+}$ लब्धि । १५ शेष त्याग ।

९. ३×२२=६६+१७=८३÷६०= $\overset{+}{१}$ लब्धि । २३ शेष त्याग ।

१०. ३×५=१५+१=१६÷६०=$\overset{०}{}$ लब्धि । १६ शेष ग्राह्य ।

११. ३×१०=३०+०=३०÷६०= $\overset{+}{०}$ लब्धि । १६ शेष ग्राह्य ।

१२. ३×१९=५७+०=५७÷६०=० लब्धि ग्राह्य । ५७ शेष ग्राह्य ।

गोमूत्रिका रीति द्वारा दिनादि ध्रुव से शनि के पात्यांश को गुणा करने पर ० लब्धि, ५७ शेष, ३० शेष तथा १६ शेष, ये चार अंक प्राप्त हुए । ये क्रमशः मास, दिन, घड़ी और पल हैं । इनमें सूर्य स्पष्ट को युक्त किया $\frac{१/२७/३०/१६}{१/२४/५७/२५}$ तो शनि की दशा का जोड़ ३/ $\frac{}{३/२२/२७/४१}$ २२/२७/४१ हुआ । इसका अर्थ यह है कि, कर्क राशि के २२ अंश के २७ घड़ी और ४१ पल तक शनि की दशा रहेगी । इस प्रकार प्रत्येक ग्रह की दशा का साधन करके सूर्य के स्पष्ट से जोड़ लगाकर उत्तीर्णांक निकालने । दशा के चक्र में लिखने । दशा के चक्र का उदाहरण दिया जाता है । चक्र के खाली स्थानों को क्रम के अनुसार उदाहरण की सहायता से भरिये ।

अथ पात्यांशानुसारेण ग्रहदिनादिदशाचक्रम्

	श.	ल.	बु.	मं.	वृ.	चं.	शु.	सू.	ग्र.
	१								मास
	२७								दिन
	३०								घड़ी
	१६								पल
२०२३	२०२३								संवत्
१	३								राशि
२४	२२								अंश
५७	२७								घड़ी
२५	४१								पल

स्पष्टार्क

नोट - यहाँ फलित यह है कि, संवत् २०२३ के कर्क के सूर्य के २३ अंश की २७ घड़ी और ४१ पलतक शनि की पात्यांश दशा है । इसके आगे फिर क्रम से लग्न आदि की दशा रहेगी ।

पात्यांश दशा में अन्तर्दशा निकालने का क्रम - एक ग्रह की दशा में अन्य सब ग्रहों की दशा बीतती है । ग्रह की दशा के अन्दर की दशा को अन्तर्दशा कहते हैं।

यस्य दशामानं पात्यांशैक्येन भक्तं तल्लब्धदिनाद्येन स्वस्वपात्यांशाहता: पाकेशतोऽन्तर्दशादिनाद्या: ॥

ग्रह की दशा का जितना समय है, उसे दशामान कहते हैं। जिस ग्रह की दशा है, उसमें पहिली दशा उसी ग्रह की होती है। उसके आगे जो ग्रह होता है, उसकी दूसरी दशा होती है, इसी क्रम से आगे-आगे के ग्रह की अन्तर्दशा चलती है।

जिस ग्रह की दशा में अन्तर्दशा निकालनी हो उस ग्रह के दशामान को पात्यांशों के ऐक्य (योग) से भाग देना। जो लब्धि आयें उन्हें दिनादि ध्रुव जानना। जिस ग्रह की दशा है, उस ग्रह के पात्यांश को दिनादि ध्रुव से गुणा करना। यह गुणनफल दिनादि अन्तर्दशा होती है। इसी प्रकार आगे-आगे के प्रत्येक ग्रह की अन्तर्दशा निकल-निकालकर अन्तर्दशा के चक्र में लिखनी। अन्तर्दशा, दिन-घड़ी और पल की होती है। अन्तर्दशा का जोड़ भी पूर्वोक्त क्रम से लगाना।

शनि की पात्यांशदशा में शनि की अन्तर्दशा का उदाहरण - शनि की पात्यांश दशा में शनि की अन्तर्दशा निकालनी है। शनि की दशा १ मास २७ दिन ३० घड़ी १६ पल की है। पात्यांशों का ऐक्य या योग १८/४६/५२ है। शनि की दशा का मान भाज्य है और पात्यांशों का ऐक्य भाजक है। अत: भाग के लिए दोनों को सवर्णित करना है। दशा के १ मास और २७ दिन के सर्वदिन ५७ दिन हैं। ५७ दिन को ६० से गुणा करके ३० घड़ी युक्त की फिर ६० से गुणा करके १६ पल युक्त किये तो ५७×६०=३४२०+३०=३४५०×६०=२१७०००+१६=२१७०१६ हुए। यह भाज्य है। पात्यांशों के योग के १८ अंश को ६० से गुणा करके ४६ पल युक्त करके ६० से गुणा कर के ५२ पल युक्त किये तो (उपपत्ति-१८×१०८०+४६= ११२६×६०=६७५६०+५२ =६७६१२) ६७६१२ भाजक बना।

भाज्य २१७०१६ को भाजक ६७६१२ से भाग दिया तो क्रम से तीन लब्ध अंक ३/१२/३५ प्राप्त हुए। यह दिनादि ध्रुव है। इससे शनि के पात्यांश ३/५४/३१ को गोमूत्रिका का रीति से गुणन किया। उपपत्ति दी जाती है।

१. ३१×३५=१०८५÷१८ लब्धि। शेष ५ त्याज्य।

२. ३१×१२=३७२+१८=३९०÷६०=६ लब्धि। ३० शेष त्याज्य।

३. ३१×३=९३+६=९९÷६०=१ लब्धि। ३० शेष त्याज्य।

४. ५४×३५=१८९०+१=१८९१÷६०=३१ लब्धि। ३० शेष त्याज्य।

५. ५४×१२=६४८+३१=६७९÷६०=११ लब्धि। १९ शेष त्याज्य।

६. ३×३५=१६२+११=१७३÷६०=२ लब्धि। ५३ शेष त्याज्य।

७. ३×३५=१०५+२=१०७ ÷६० =१ लब्धि। ४७ शेष ग्रह्य।

८. ३×१२=३६+१=३७ ÷६० =० लब्धि। ३७ शेष ग्राह्य।

९. ३×३=९÷६० =० लब्धि। ९ शेष ग्राह्य।

यहाँ फलित हुआ कि, शनि की दशा में शनि की अन्तर्दशा ९ दिन ३७ घड़ी ४७ पल की है। इस प्रकार यथा क्रम प्रत्येक ग्रह की अन्तर्दशा का मान निकाल कर चक्र

में लिखना । फिर सूर्य के स्पष्ट से पूर्वोक्त क्रम से जोड़ लगाना । चक्र का नमूना दिया जाता है । क्रम के आधार पर उदाहरण की सहायता से चक्र के खाली स्थान भरिये ।

अथ शनिपात्यांशदशान्तरचक्रम्

	श.	ल.	बु.	मं.	वृ.	चं.	शु.	सू.	ग्र.
	९								दिन
	३७								घड़ी
	४७								पल
२०२३	२०२३								संवत्
१	०२								राशि
२४	०३								अंश
५७	३५								घड़ी
२५	१२								पल

नोट - शनि की पात्यांश दशामें शनि की अन्तर्दशा संवत् २०२३ के मिथुन के सूर्य के तीन अंश, ३५ घड़ी १२ पल तक रहेगी । यह बात उक्त अन्तर्दशा चक्र से ज्ञात हो गयी ।

मुग्धा दशा का विवरण - मुग्धा या मुद्दा दशा का वर्षपत्र में विशेष उपयोग होता है । यह नौ ग्रहों की दशा है । यह दशा सूर्य से शुक्र तक है । प्रत्येक ग्रह की दशा का मान (समय) भिन्न-भिन्न है ।

ग्रह दशामान-सारिणी

दशा	सू.	चं.	मं.	रा.	वृ.	श.	बु.	के.	शु.
दिन	१८	३०	२१	५४	४८	५७	५१	२१	६०

जन्मर्क्षसङ्ख्यासंहितागताब्दा द्यूनिता नन्दहताश्च शेषैः ।
आचङ्कुराजीशवुकेशुपूर्वा भवन्ति मुग्धादशिकाः क्रमेण ।।

जिस नक्षत्र में जन्म हुआ है, उस तक अश्विनी नक्षत्र से गिनना । जो संख्या आये, उसमें २ कम करके ९ से भाग देना । १ शेष से सूर्य की दशा, २ से चंद्र की, ३ से मंगल की, ४ से राहु की, ५ से वृहस्पति की, ६ से शनि की, ७ से बुध की,

८ से केतुकी और ९ शेष बचने से शुक्र की दशा होती है । अर्थात् शेष बचने के अनुसार उस ग्रह की दशा में वर्ष का प्रवेश होता है ।

मुग्धा दशा के निकालने का उदाहरण - उत्तराषाढ़ नक्षत्र में जन्म हुआ है । अश्विनि नक्षत्र से उत्तराषाढ़ नक्षत्र तक गिना तो २१ संख्या हुई । इसमें २ कम किये तो १९ हुए । इनमें संवत् २०२३ में ६० गताब्द हैं, उन्हें युक्त किया तो ७९ हुए । इनमें ९ से भाग दिया तो ७ शेष बचे । ७ शेष बचने से वर्ष के आरंभ में बुध की दशा है ।

मुग्धादशा में आरंभ की दशा का भोग्यमान निकालने का क्रम- भगणोनजन्मेन्दुलिप्ता: खखाष्टशेषिता आद्यदशा दिनहता: खाभ्रे प्राप्ता दिनादिभोग्यदशा॥

अर्थात् जन्मकाल के चंद्र के स्पष्ट को भगण (१२ राशि यानी ११ राशि २९ अंश ५९ कला ६० विकला) में हीन करना । जो शेष बचे उसकी कला बनानी, यानी राशि की संख्या को ३० से गुणा करके अंश की संख्या को मिलाना । जो संख्या बने उसे ६० से गुणा करके कला की संख्या मिलानी । इस प्रकार जो संख्या बनती है, वह कला होती है ।

शोधित चन्द्र के स्पष्ट की कला में आठ सौ से भाग देना । जो शेष बचे उसे वर्ष प्रवेश में प्रारंभिक ग्रह की दशा के दिन से गुणा करना । गुणित संख्या को ८०० से भाग देना । चार लब्ध फल लेना । वे भोग्य दशा के दिनादि जानना ।

नोट - भुक्त और भोग्य का स्पष्टी करण - जिस समय जन्म होता है या वर्ष का प्रवेश होता है, उस समय नियमानुसार जिस ग्रह की दशा चालू है, वह कितनी वीत चुकी है ? इस समय के मान को भुक्त कहते हैं और आगे भोगे जानेवाले समय को भोग्य कहते हैं ।

भोग्य दशा के दिनादि निकालने का क्रम - वर्ष के प्रवेश काल में बुध की दशा चालू है । जन्म काल के चंद्र का स्पष्ट ८/२६/४५/४७ है । चन्द्र के स्पष्ट को १२ राशि में शोधित किया $\frac{११/२९/५९/६०}{८/२६/४५/४७}$ $\frac{}{३/०३/१४/१३}$ तो ३ राशि ३ अंश १४ कला १३ विकला शेष बची। इनकी कला बनाने के लिए ३ राशि को ३० से गुणा करके ३ अंश युक्त किये ९३ हुए । फिर ६० से गुणा करके १४ कला मिलायी तो ५५९४ हुए । इनको ८०० से भाग दिया तो ७९४ शेष बचे । वर्षकाल में बुध की दशा चालू है । बुध की दशा का मान ५१ दिन है । उससे ७९४ को गुणा किया तो ४०४९४ हुए । इनमें ८०० से भाग दिया तो ५० लब्धि आयी और ४९४ शेष बचे । लब्धि ५० को पृथक् रखाा । शेष ४९४ को ६० से गुणा दिया २९६४० हुए । ६०० से भाग दिया ३७ लब्धि आयी ४० शेष बचे । लब्धि ३७ को पृथक् रखा । शेष ४० को ६० से गुणा किया २४०० हुए। ८०० से भाग दिया तो ३ लब्धि आयी और शेष शून्य बचा । लब्धियों को अनुपात से रखा ५०/३७/३ हुईं । अर्थात् वर्ष प्रवेश काल में बुध की दशा का भोग्य ५० घड़ी ३७ पल और ३ विपल है । इसे मुद्दा दशा चक्र में लिख फिर आगे-

आगे क्रम से ग्रहों की दशाओं के मान, मास और दिनों के रूप में लिखने । फिर वर्ष कालिक सूर्य के स्पष्ट से जोड़ना । जो जोड़ आये, उसमें आगे के ग्रह की दशा के मान को क्रम से जोड़ते जाना। जहाँ जोड़ में मेष राशि के सूर्य में आये वहाँ वर्तमान संवत् से अगला संवत् लिखना । मुद्दा दशा के चक्र का नमूना दिया जाता है ।

अथ मुग्धा (मुद्दा) दशाचक्रम्

ग्रह	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	वृ.	श.
मास दिन	०० ००	०० २१	०२ ००	०० १८	०१ ००	०० २१	०१ २४	०१ १८	०१ २७
घड़ी पल	५० ३७	५० ३७							
विपल	०३	०३							
संवत्	२०२३								२०२४
१	०२	०३	०५	०५	०६	०७	०९	१०	००
२४	१५	०६	०६	२४	२४	१५	०९	२७	२४
५७	३४	३४							
२५	२८	२८							

मुग्धा दशा में अन्तर्दशा निकालने का क्रम - दशा दशाहता: षष्ट्यधिक-त्रिंशतेनाप्त अन्तर्दशादिनाद्या मुग्धादशायाम् ॥

अर्थात् ग्रह की दशा के दिन को दशा के दिन से गुणा करना । गुणनफल को ३६० से भाग देना । जो लब्धि आयें वे मुग्धा दशा में दिनादिक अन्तर्दशा होती है ।

मुद्दा दशा में अर्न्तदशा निकालने का उदाहरण - बुध की दशा में केतु की अन्तर्दशा का मान कितना है? यह जानना है । मुद्दा दशा में बुध की दशा ५१ दिन की है और केतुकी दशा २१ दिन की है । बुध की दशा ५१ दिन को केतु की दशा के २१ दिन से गुणा किया १०७१ हुए । इनमें ३६० से भाग दिया २ लब्धि आयीं, ये दिन हैं । शेष ३५१ को ६० से गुणा किया १९०६० हुए । इन्हें ३६० से भाग दिया तो ५२ लब्धि आयीं, ये घड़ी हैं । शेष ३४० को ६० से गुणा किया २०४०० हुए । इनमें ३६० से भाग दिया । ५६ लब्धि आयीं, ये पल हैं । शेष २४० को ६० से गुणा किया तो १४४०० हुए । इनमें ३६० से भाग दिया । ४० लब्धि आयीं । ये विपल हैं। यहाँ यह फलित हुआ कि, मुद्दादशा में बुध की ५१ दिन की दशा में केतु की अन्तर्दशा,

२ दिन ५२ घड़ी ५६ पल ४० विपल की है । इस प्रकार प्रत्येक ग्रह की दशा में प्रत्येक ग्रह की अन्तर्दशा निकाल-निकाल कर अन्तर्दशा चक्र में लिखनी, अन्तर्दशा चक्र बनाने का नमूना पूर्व दिया जा चुका है ।

मास-प्रवेश का विवरण - वर्षपत्र में सूक्ष्म विचार करने के लिए मास प्रवेश के समय की मास लग्न कुण्डली बनानी । मास प्रवेश के समय के ग्रह स्पष्ट, भाव स्पष्ट, चलित चक्र, बृहत्पंचवर्गी बल, द्वादश वर्गीबल, सहम, पात्यांश दशा तथा मास मुग्धा दशा बनानी ।

मास प्रवेश काल में षडीश (छः प्रकार के स्वामी) होते हैं । १. जन्मलग्नपति। २. वर्ष लग्नपति । ३. मासलग्नपति । ४. मुंथा पति । ५. त्रिराशिपति । ६. समय पति। इस प्रकार ये छः पति षड़ीश कहलाते हैं ।

मास प्रवेश के सूर्य का साधन - जन्म के सूर्य के स्पष्ट में जो राशि है, उसकी संख्या में १ युक्त करने से द्वितीय मास प्रवेश का सूर्य स्पष्ट होता है । इस प्रकार आगे-आगे क्रम से सूर्य स्पष्ट में १/१ राशि युक्त करने से क्रमशः बारह मासों के सूर्य के स्पष्ट बन जाते हैं ।

द्वितीय मास प्रवेश के सूर्य का उदाहरण - जन्मकाल के सूर्य स्पष्ट १/२५/२८/५२ है । स्पष्ट की १ राशि में १ मिलाया तो २/२५/२८/५२ हुआ । इसका अर्थ यह है कि, मिथुनराशि के २५ अंश पर २८ घड़ी ५२ पल पर द्वितीय मास का प्रवेश होगा । तदनंतर पूर्वोक्त रीति से ग्रह स्पष्ट, भाव स्पष्ट, चलित चक्र, ग्रहों के चय-क्षय-फल तथा विंशोपका, ग्रहों के ऊपर ग्रहों की कलात्मक दृष्टि, वृहत्पंचवर्गीबल, द्वादशवर्गी बल, मुख्य-मुख्य सहम (१. पुण्य । २. गुरु या ज्ञान । ३. इच्छा । ४. पुत्र। ५. राज्य । ६. धन । ७. लाभ । ८. शत्रु । ९. रोग । १०. जीवित । ये सहम प्रायः मुख्य हैं । इनमें तथा अन्य सहमों में जिसके जो सहम संभावित हैं, उन्हें लगाना), पात्यांश दशा तथा मुग्धा दशा और अन्तर्दशाएँ लगानी । मास प्रकरण के फलित से संबंधित फलित लिखना । द्वितीय मास के समान ही तृतीय मास आदि की गणित तथा फलित लिखना ।

मास प्रवेश के वार आदि निकालने का क्रम - पूर्वोक्त रीति से मास प्रवेश के सूर्य का स्पष्ट बनाना । पंचांग में मास प्रवेश के सूर्य के समीप जो पंक्ति या अवधि का सूर्य है उन दोनों के स्पष्ट का अंतर करना । जो अंतर आये, उसकी कला बनानी । अर्थात् अंतर में अंश की संख्या को ६० से गुणा करके कला की संख्या मिलानी फिर उसके आगे विकला की संख्या रखनी । यह भाज्य है । पंचाग में पंक्ति के सूर्य की जो गति है, वह भाजक है, उससे भाग देना ।

भाग देने के लिए भाज्य और भाजक को सवर्णित करके भाग की क्रिया करनी। भाग देकर तीन लब्धियाँ लेनीं। वे लब्ध फल क्रम से वार, घड़ी और पल होते हैं।

यदि पंचाग की पंक्ति का सूर्य, मास प्रवेश के सूर्य से आगे हो तो उक्त वार, घड़ी और पल को पंक्ति के वार, घड़ी और पल में युक्त करना, इससे जो योग फल बनेगा, वह मास प्रवेश के समय का वार तथा इष्ट काल के घड़ी-पल होंगे ।

यदि मास प्रवेश का सूर्य, पंचांग की पंक्ति के सूर्य से पहिले हो तो उक्त वार-घड़ी पंक्ति के वार-घड़ी-पल में हीन करना । इससे मास प्रवेश के समय का वार तथा इष्टकाल के घड़ी-पल बनेंगे ।

इष्टकाल पर पूर्वोक्त रीति से लग्न का साधन करना ।

द्वितीय मास प्रवेश का उदाहरण - जन्मकालिक सूर्य का स्पष्ट १/२५/२८/५२ है । द्वितीय मास का सूर्य बनाने के लिए जन्मकालिक सूर्य के स्पष्ट में १ राशि में १ युक्त किया तो २/२५/२८/५२ यह द्वितीय मास प्रवेश के सूर्य का स्पष्ट हुआ । अर्थात् मिथुन राशि के सूर्य के २५ अंश २८ कला और ५२ विकला हैं ।

संवत् २०२३ के पंचांग में देखा तो शुद्ध श्रावण कृष्णा अष्टमी सोमवार को मिथुन राशि के सूर्य के २५ अंश हैं । नवमी मंगलवार मिश्रमान ४७/४६ है । इस दिन के सूर्य का स्पष्ट २/२६/१५/२२ है । सूर्य की गति ५६/३० है ।

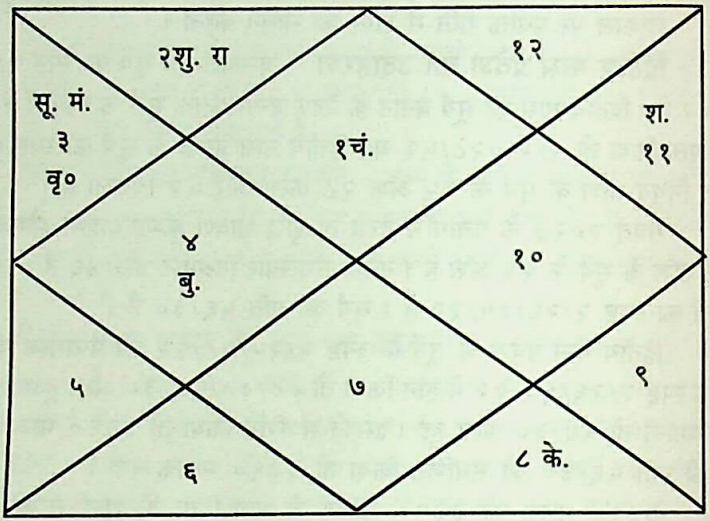
द्वितीय मास प्रवेश के सूर्य के स्पष्ट २/२५/२८/५२ को पंचांगस्थ पंक्ति के सूर्य के स्पष्ट २/२६/१५/२२ में हीन किया तो ००/००/५६/३० अंतर हुआ । इसकी कला बनायी तो ५६/३० कला हुई । इसको सवर्णित किया तो ३३९० भाज्य हुआ । सूर्य की गति ५६/३० को सवर्णित किया तो ३३९० भाजक बना ।

३३९० भाज्य को ३३९० भाजक से भाग दिया तो शून्य लब्धि आयी । लब्धि को पृथक् रखा । शेष ३३९० को ६० से गुणा किया तो २०३४०० हुए । इनमें पूर्वोक्त भाजक ३३९० से भाग दिया तो ५९ लब्धि आयी । लब्धि को पृथक् रखा । शेष ३३९० को ६० से गुणा किया २०३४०० हुए । इनमें ३३९० भाजक से भाग दिया तो ५९ लब्धि आयी । तीन लब्ध फल लेने हैं । तीनों लब्धियों को अनुपात से स्थापित किया तो ०/५९ हुए । यहाँ मास प्रवेश का सूर्य, पंचागस्थ पंक्ति के सूर्य से पहिले हैं। अत: पंक्ति के वार ३ तथा मिश्रमान ४७/४६ में उक्त लब्धफल के ० वार ५९ घड़ी ५९ पल में हीन किया तो २/४७/४७ शेष बचे । यहाँ यह फलित हुआ कि, सवंत् २०२३ शक १८८८ शुद्ध श्रावण कृष्ण अष्टमी सोमवार को इष्टकाल ४७ घड़ी ४७ पल पर द्वितीय मास का प्रवेश होगा । उक्त इष्टकाल पर लग्नसाधन करने के लिए लग्नसारिणी में मिथुन राशि के सामने २५ अंश के कोष्ठ से १६/२३/४५ सूर्यफल लेकर इष्टकाल ४७/४७ में युक्त किया तो ०४/१०/४५ हुए । लग्नसारिणी में देखा तो मेष राशि के सामने ११ अंश के नीचे के कोष्ठ में ४/१५/३९ हैं । यहाँ यह फलित हुआ कि, उक्त दिन तथा उक्त इष्टकाल पर मेष लग्न है तथा उसके ११ अंश गये हैं । फिर मास कुण्डली लिखनी । द्वितीय मास लग्न कुण्डली का नमूना दिया जाता है ।

श्रीराधाकृष्णचन्द्राभ्यां नमः

श्रीवैक्रमसंवत्सरे २०२३ शालिवाहनीयशके १८८८ शुद्धश्रावणमासे कृष्णपक्षे अष्टम्यां चन्द्रवासरेऽष्टम् ४७/४७ द्वितीयमासकालिकस्पष्टसूर्यः २/२५/२८/५२ । तात्कालिकस्पष्टलग्नम् ०/११/४/१०/४५ । अत्रावसरे अमुकमहोदयस्य अमुकविजयाद्यद्वितीयमासप्रवेशः । शुभं भूयात् ॥

अथ द्वितीयमासलग्नकुण्डली



नोट - इस प्रकार प्रत्येक मास के स्पष्ट सूर्य के अनुसार मास प्रवेश के वार तथा इष्ट काल का साधन कर कुण्डली बनानी । तदनन्तर वर्ष के समान ही ग्रहस्पष्ट, भावस्पष्ट, चलित, वृत्पंचवर्गी बल, द्वादशवर्गीबल, सहम, दशा आदि का साधन करना। इन सबके आधारपर फलादेश का वर्णन करना ।

सरलता से मास प्रवेश का साधन करने के लिए मास प्रवेश-सारिणी दी जाती है ।

मास-प्रवेश-सारिणी

	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५
	०	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२
मेष	२१	२२	२३	२४	२५	२७	२८	२९	३०	३१	३३	३४	३५	३६	३७	३९
००	२	१४	२७	३९	५०	०४	१४	२७	४०	५१	०२	१४	२८	३८	५१	४
	२	२	२	२	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३
वृष	५६	५७	५८	५९	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
०१	३९	४५	५१	५८	२	७	१३	१७	२७	२२	२२	२२	२२	२२	२३	२१
	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३
मिथुन	२४	२५	२६	२६	२७	२८	२८	२९	३०	३०	३१	३१	३२	३२	३३	३३
०२	५४	३६	१८	५९	३९	१८	५८	३५	१०	४५	१८	५१	२२	५१	२१	४९
	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३
कर्क	३८	३८	३८	३८	३८	३८	३७	३७	३७	३७	३७	३७	३६	३६	३६	३५
०३	०४	०७	०८	०७	४०	००	५४	४७	४०	३२	२२	८	५२	३२	१३	५१
	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३
सिंह	२८	२७	२६	२५	२५	२४	२३	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१८	१७	१६
०४	०	२२	४०	५८	१८	४१	४८	३	१३	२४.	३५	४६	५७	८	१९	२६
	३	३	३	३	३	३	२	२	२	२	२	२	२	२ .	२	२
कन्या	१	०	५९	५८	५७	५६	५५	५३	५२	५१	५०	४९	४८	४६	४५	४४
०५	४०	३८	३५	२८	२१	११	३	५३	४९	३७	२९	१९	८	५५	४४	३४

मास-प्रवेश-सारिणी

	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२
तुला	२६	२५	२४	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१५	१४	१३	१२	११	१०	८
०६	३२	१७	४	५२	४१	२९	२०	१०	०	५१	४२	३०	२४	१४	६	५८
	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
वृश्चिक	५३	५२	५१	५०	४९	४८	४७	४६	४५	४४	४३	४३	४२	४१	४०	३९
०७	४	६	७	१०	१४	१७	२३	२९	३६	४४	५४	४	१४	३४	३७	५०
	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
धन	२९	२९	२८	२८	२७	२७	२६	२६	२५	२५	२४	२४	२३	२३	२३	२२
०८	४४	११	३८	७	३७	७	३९	१०	४२	१५	४८	२२	५७	३२	११	४९
	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
मकर	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	२०	२०	२०	२०	२०	२१	२१
०९	३६	३१	३१	३१	३२	३४	४०	४६	५४	२	१२	२४	३६	४९	४	२०
	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
कुंभ	२७	२७	२८	२९	२९	३०	३०	३१	३१	३२	३३	३३	३४	३५	३५	३६
१०	२७	५८	३०	३	३७	१०	६	२१	५६	३३	१०	४९	३०	१०	५३	३६
	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	२	२	२	२
मीन	४८	४९	५०	५१	५२	५३	५४	५५	५६	५७	५८	५९	०	१	२	३
११	५१	४६	४२	३९	३६	३३	३३	३३	३४	३५	३७	३९	४१	४५	४९	५३

मास-प्रवेश-सारिणी

	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९
	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२
मेष	४०	४१	४२	४३	४५	४६	४७	४८	४९	५०	५२	५३	५४	५५
००	१६	२७	४०	५२	३	१४	२५	३६	४५	५४	३	११	२१	३१
	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३
वृष	१३	१४	१५	१६	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२१	२२	२३	२४
०१	२९	१५	१०	३	५६	४८	३८	२८	१७	५	५४	४१	४७	११
	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३
मिथुन	३४	३४	३५	३५	३५	३६	३६	३७	३७	३७	३७	३७	३७	३८
०२	११	४४	०९	३३	५५	१७	१३	०९	०९	२३	२४	४५	५४	०
	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३
कर्क	३५	३५	३४	३४	३३	३३	३२	३२	३१	३१	३०	२९	२९	२८
०३	२७	२	३४	६	८	८	३८	७	३६	२	२७	५१	१५	३८
	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३
सिंह	१५	१४	१३	१२	११	१०	९	८	७	६	५	४	३	२
०४	३३	३९	४४	४८	५२	५६	५७	५७	५०	५७	५६	५५	५३	४४
	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२
कन्या	४३	४२	४१	३९	३८	३७	३६	३५	३३	३२	३१	३०	२९	२७
०५	२३	१२	१	४९	३७	२३	१२	०	४७	३५	२१	७	५३	४१

मास-प्रवेश-सारिणी

तुला	२	२	२	२	२	२	२	२	१	१	१	१	१	१
	७	६	५	४	३	२	१	०	५९	५८	५७	५६	५५	५४
०६	५०	४३	३६	३०	२४	१९	५५	१२	९	७	६	५	४	४
वृश्चिक	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	
	३९	३८	३७	३६	३६	३५	३४	३४	३३	३२	३२	३१	३०	३०
०७	३	१८	३४	५०	६	२३	४१	१	२२	४३	५	२८	५१	१६
धनु	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
	२२	२२	२१	२१	२१	२०	२०	२०	२०	२०	१९	१९	१९	१९
०८	२८	८	४९	३१	१४	५८	४४	३०	१८	८	५९	५३	४५	३९
मकर	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
	२१	२१	२२	२२	२३	२३	२३	२४	२४	२५	२५	२५	२६	२६
०९	३८	५७	१७	३९	२	२६	५०	१५	४०	५	३२	५९	२७	५७
कुंभ	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
	३७	३८	३८	३९	४०	४१	४२	४३	४४	४५	४६	४६	४७	४७
१०	३९	२	४७	३३	२०	७	४४	३४	२५	१७	९	९	२	५६
मीन	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२
	४	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१५	१६	१७	१८	१९
११	५८	४	१०	१७	२४	३२	४०	४८	५७	७	१७	२८	३९	५०

मास-प्रवेश-सारिणी के द्वारा मास प्रवेश के साधन का क्रम - वर्ष प्रवेश के वार-घड़ी पल में वर्ष प्रवेश काल के सूर्य की राशि से अगली राशि के सामने के और अंश के नीचे के मास प्रवेश सारिणी के कोष्ठ से सूर्यफल लेकर युक्त करना। यह योगफल, इष्ट से युक्त कोष्ठक होगा। इसे मास प्रवेश सारिणी में देखना। जहाँ अल्प कोष्ठक (इष्ट से युक्त कोष्ठक से अंकों में कम) हो, उस का तथा अग्रिम कोष्ठक के अंकों का अन्तर करना। इस अंतर से सूर्य की कला-विकला को गुणा करना।

यदि यह गुणनफल, वर्ष प्रवेश काल के वार-घड़ी पल में मिलाये गये सूर्यफल के इष्टयुक्त कोष्ठक से आगे के कोष्ठ से अधिक हो तो युक्त करना और यदि अग्रिम कोष्ठ से अल्प हो तो गुणनफल को हीन करना।

उक्त क्रम से द्वितीय मास प्रवेश के वार तथा इष्ट के घड़ी-पल होते हैं। इष्ट के घड़ी-पल पर लग्नसाधन करना।

द्वितीय मास प्रवेश के वार तथा इष्टकाल के घड़ी पल में पूर्वोक्त सूर्य से आगे के सूर्य की राशि के सामने और अंश के नीचे मास प्रवेश सारिणी से सूर्य फल लेकर क्रमशः युक्त करना। इस क्रिया से तृतीय मास के वार तथा इष्ट के घड़ी-पल बनेगें। इसी क्रम से आगे-आगे के मास के वार तथा इष्ट के घड़ी-पल निकाल-निकाल कर लग्न साधन कर मासों की कुण्डलियाँ बनानी।

द्वितीय मास के वार तथा इष्ट के घड़ी-पल, मासप्रवेश सारिणी के द्वारा बनाने का उदाहरण - वर्षप्रवेश कालिक स्पष्ट सूर्य ०१/२४/५७/२५। सूर्य की राशि १ से अगली राशि २ है। मासप्रवेश सारिणी में २ राशि (मिथुन) के सामने और २४ अंश के नीचे के कोष्ठ में सूर्य पल ०३/३७/९ है। इसे लेकर वर्ष प्रवेश के वार तथा इष्टकाल में युक्त किया $\frac{\overset{६/४९/२९}{३/३६/९}}{९/२६/३८}$ तो ९/२६/३८ हुए। ९ वार में ७ से भाग देकर २ शेष बचे। इन्हे वार के स्थान में रखा। यहाँ २/२६/३८ इष्टयुक्त कोष्ठक हुआ।

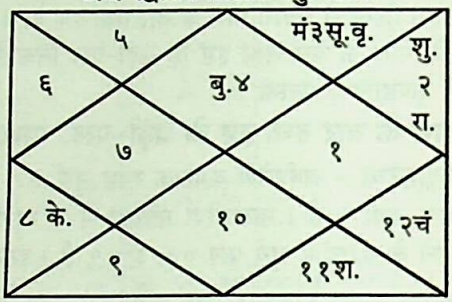
मास प्रवेश सरिणी में देखा तो मेष राशि के सामने ४ अंश के नीचे के कोष्ठ में इष्टयुक्त कोष्ठक २/२६/३८ से अल्प अंक २/२५/५० है। यह अल्प कोष्ठक है। इससे अगले यानी ५ अंश के नीचे के कोष्ठ में २/२७/४ है। यह अग्रिम (ऐष्य) कोष्ठक है। अल्पकोष्ठक तथा अग्रिम कोष्ठ का अन्तर $\frac{\overset{२/२६/४}{२/२५/५०}}{०/०१/१४}$ किया तो ०/१/१४ हुआ। इस अन्तर ०/१/१४ से वर्ष प्रवेश कालिक स्पष्ट सूर्य की कला ५७/२५ को गुणा किया। ५७×०=५७।२५×१=२५। १४।५७/२५/१४ गुणनफल हुआ। ५७ वार में ७ से भाग दिया तो १ शेष बचा। इसे ५७ के स्थान में रखा १/२५/१४ गुणनफल, इष्ट युक्त कोष्ठक से अग्रिम कोष्ठक से अल्प है। अतः उसमें हीन किया $\frac{\overset{२/२७/०४}{१/२५/१४}}{१/०२/५०}$ तो द्वितीय मास प्रवेश का १ वार (रविवार) आया और इष्टकाल ०२ घड़ी ५० पल आया। वर्ष प्रवेश कालिक स्पष्ट सूर्य १/२४/५७/२५ की १ राशि में १युक्त किया तो २/२४/५७/२५ हुए। मिथुन के सूर्य के २४ अंश पर संवत् २०२३ के पंचाग में देखा तो शुद्ध

श्रावण कृष्ण सप्तमी को रविवार मिल गया। अत: इसी दिन इष्टकाल २/५० पर द्वितीय मास प्रवेश हुआ। उक्त इष्टकाल पर लग्नसारिणी में मिथुनराशि के सामने २४ अंश के नीचे के कोष्ठ से सूर्यफल १६/१२/१७ लेकर इष्टकाल में युक्त किया $\frac{२/५०}{१६/१२/१७}$ तो १९/२/१७ हुए। इन्हें लग्नसारिणी में देखा तो कर्क राशि के सामने ९ अंश के नीचे के कोष्ठ में १९/५/११हैं। बस, फलित हुआ कि, उक्त इष्ट पर कर्क लग्न है। इसपर द्वितीय मास प्रवेश की लग्न कुण्डली बनानी। जिसका नमूना दिया जाता है।

श्रीराधाकृष्णाभ्यां नमः

श्रीसंवत् २०२३ शके १८८८ शुद्धश्रावणमासे कृष्णपक्षे सप्तम्यां रविवासरेऽष्टम् ०२/५०। द्वितीयमासप्रवेशकालिकस्पष्टलग्नम् ०३/०९/१९/२/१७। अत्रावसरे श्री० पं० सुदर्शनाचार्यशास्त्रिणो द्वितीयमासप्रवेशः। अंग्रेजीमतानुसारेण तिथ्यादिकम् १० जुलाई सन् १९६६ई०। शुभम्।

अथ द्वितीयमासलग्नकुण्डली



नोट - वर्ष के समान ही प्रत्येक मास में ग्रहस्पष्ट, भावस्पष्ट, चलित चक्र, ग्रहक्षय चय-फल-बोधक-विश्वा-चक्र, ग्रहोपरिग्रहदृष्टिचक्र, वृहत्पंचवर्गीबल, द्वादशवर्गीबल, सहम, पात्यांशदशा, मुग्धादशा आदि लगानी। तथा प्रस्तुत ग्रन्थ के मासफलित-प्रकरण से फलित लिखने।

द्वितीय मास के वार आदि से तृतीय मास के वार आदि बनाने का उदाहरण - द्वितीय मास प्रवेश कालिक स्पष्ट सूर्य २/२४/५७/२५ की २ राशि में १ युक्त किया तो ३/२४/५७/२५ हुए। मास प्रवेश सारिणी में कर्क राशि के सामने २४ अंश के नीचे के कोष्ठ में सूर्यफल ३/३१/३६ है। उसे लेकर द्वितीय मास प्रवेश के १ वार, इष्टकाल२/५० में युक्त किया $\frac{१/२/५०}{३/३१/३६}$ तो ४ वार (बुधवार) तथा इष्टकाल ४/३४/२६ आया। अत: संवत् २०२३ के अधिक श्रावण कृष्ण के नवमी बुधवार को २४ घड़ी ३६ पल पर तृतीय मास का प्रवेश हुआ।

इसी प्रकार आगे-आगे के मास प्रवेश के वार आदि का साधन करना तथा प्रत्येक मास में षडीश निकालना तथा पूर्वोक्त गणित एवं फलित लिखना।

मास-पात्यांश-दशा के साधन करने की रीति- मास के स्पष्ट ग्रहों में

(सूर्य से शनि तक) तथा स्पष्ट लग्न में, जिसके अंश, सबसे कम हो उसे हीनांश चक्र में पहिले लिखना । फिर बाद में उससे अधिक अंश का ग्रह, इसी क्रम से सब लिखने। फिर पूर्वोक्त क्रम से ग्रहों के पात्यांश बनाने । पात्यांशों का ऐक्य (योग) करना । इस योग में ३० से भाग देना । लब्धि को पृथक् रखना । शेष को ६० से गुणा करके ३० से भाग देना। इसी क्रम से ४ लब्ध फल लेने । ये ध्रुव होते हैं । हीनांश-पात्यांश के क्रम से प्रत्येक ग्रह के पात्यांश को दिनदिक ध्रुव से गोमूत्रिका रीति के द्वारा गुणा करना । इस प्रकार दिन-घड़ी पल आदि के रूप में प्रत्येक ग्रह की मास पात्यांश-दशा होती है।

नोट - वर्ष की पात्यांशदशा के प्रकरण में उदाहरण देखिये ।

मास मुग्धा दशा निकालने का क्रम - जिस नक्षत्र में मास प्रवेश हो, उस तक अश्विनी नक्षत्र से गिनना, जो संख्या आये उसमें ७ मिलाकर ९ से भाग देना । शेष के अनुसार ग्रह की दशा जाननी । १. सूर्य । २. चद्रमा । ३. भौम (मंगल) । ४. राहु। ५. गुरु (वृहस्पति) । ६. शनि । ७. बुध । ८. केतु । ९. शुक्र ।

मास मुग्धा दशा निकालने का उदाहरण - द्वितीय मास का प्रवेश उत्तरा भाद्रपद नक्षत्र में हुआ है । अश्विनी से उत्तराभाद्र पद नक्षत्र तक गिना तो २६ हुए । इनमें ७ मिलाये ३३ हुए । इनमें ९ से भाग देने पर ६ शेष बचे । ६ शेष से शनि की मास मुग्धा दशा हुई ।

मासमुग्धा दशा में ग्रहोंकी दिनादिदशा निकालनेका क्रम - वर्ष में मुग्धा दशा में ग्रह के जितने दिन हैं, उनको १२ से भाग देना । लब्धि दिन होते हैं । शेष को ६० से गुणा करके १२ से भाग देना । लब्धि घड़ी होती है ।

मास मुग्धा दशा के दिनादि निकालने का उदाहरण -जैसे वर्ष में सूर्य की मुग्धा दशा १८ दिन की है । १८ को १२ से भाग दिया १ लब्धि आयी । यह दिन है। शेष ६ को ६० से गुणा किया ३६० हुए । १२ से भाग दिया । ३० लब्धि आयी। ये घड़ी हैं । सरलता से जानने के लिए सारिणी दी जाती है ।

मासमुग्धादशादिनादिसारिणी

ग्र.	सू.	चं.	मं.	रा.	वृ.	श.	बु.	के	शु.
दिन	१	२	१	४	४	४	४	१	५
घड़ी	३०	३०	४५	३०	००	२५	१५	४५	००

द्वितीय मास की मुग्धादशा के चक्र का नमूना दिया जाता है ।

अथ द्वितीयमासमुग्धादशाचक्रम्

ग्र.	श.	बु.	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	वृ.
दिन	४	४	१	०५	१	२	१	४	४
घड़ी	२५	१५	४५	००	३०	३०	४५	३०	००

राशि २	२	३	३	३	३	३	३	३	३
अंश २४	२९	०३	०५	१०	११	१४	१६	२०	२४
कुला ५७	२२	३७	२२	२२	५२	२२	०७	३७	३७

दिनप्रवेश के साधन का क्रम - जिस मास में जितनी संख्या के दिन का प्रवेश निकालना हो, उसे गतदिन की जो संख्या हो, उसे उस मास के सूर्य के अंश में मिलाना। जो संख्या होगी, उसी के अनुसार उस मास के सूर्य के उतने अंशों पर ही दिन का प्रवेश होगा। यह भी मास प्रवेश के साधन के समान ही है।

दिन प्रवेश के साधन का उदाहरण- द्वितीय मास के ग्यारहवें दिन का प्रवेश निकालना है। द्वितीय मास का सूर्य २/२४/५७/२५ है। गतदिन १० है। २४ अंश में १० मिलाए तो ३/४/५७/२५ हुए। इसका अर्थ यह है कि, कर्क के सूर्य के ४ अंश ५७ कला २५ विकला पर द्वितीय मास के ग्यारहवें दिन का प्रवेश होगा।

दिन प्रवेश का वार तथा इष्टकाल निकालने का क्रम - पूर्वोक्त रीति से दिन प्रवेश का स्पष्ट सूर्य बनाना। इसके समीप की पंक्ति का स्पष्ट सूर्य, पंचांग से लेना। फिर दोनों स्पष्ट सूर्यों का अंतर करना। जो अंतर आवे उसकी कला बनानी। पंक्ति के सूर्य की गति की कला करके उससे अंतर की कला को भाग देना। लब्धि को पृथक् रखना। शेष को ६० से गुणा करके पूर्वोक्त भाजक से भाग देना। इस प्रकार तीन लब्ध फल लेने। ये क्रमशः वार तथा घड़ी-पल जानने।

यदि पंचागस्थ पंक्ति का सूर्य, दिन प्रवेश के सूर्य से आगे हो तो उक्त वार की संख्या तथा घड़ी-पल की संख्या को पंक्ति के बार की संख्या में तथा मिश्रमान के घड़ी-पल में युक्त करना। इस प्रकार दिन प्रवेश के बार तथा इष्ट काल के घड़ी-पल होंगे। यदि दिन प्रवेश के सूर्य से पंचांगस्थ पंक्ति का सूर्य पहिले हो तो उक्त वार तथा घड़ी-पल को पंचागस्थ पंक्ति के वार की संख्या तथा मिश्रमान के घड़ी-पल में हीन करना। इस प्रकार दिन प्रवेश का वार तथा इष्टकाल के घड़ी-पल होते हैं।

इष्टकाल के घड़ी, पल में दिन प्रवेश के सूर्य की राशि तथा अंश के अनुसार लग्न सारिणी से सूर्यफल को लेकर युक्त करना, योगफल के अनुसार लग्नसारिणी से लग्न का साधन कर मासमें दिन के अनुसार लग्नकुण्डली बनानी।

दिन प्रवेश में पूर्वोक्त रीति से ग्रहस्पष्ट, भाव स्पष्ट, चलित, चय-क्षय फल तथा विंशोपका, वृहत्पंचवर्गी, द्वादशवर्गी तथा उनके बल, सहम आदि तथा दशा लगानी।

दिन प्रवेश में सप्तेश होते हैं। १. जन्मलग्न का स्वामी। २. वर्ष लग्नका स्वामी। ३. मास लग्न का स्वामी। ४. दिन लग्न का स्वामी। ५. मुंथा का स्वामी। ६. त्रिराशि का स्वामी। ७. समय का स्वामी।

मुंथा का विचार - वर्षलग्न में जिस राशि की मुंथा होती है उससे अगली

राशि की मुंथा द्वितीय मास में होती है । इस प्रकार प्रत्येक मास कुण्डली में १/१राशि बढ़ाकर मुंथा लिखनी ।

द्वितीय मास कुण्डली में जिस राशि की मुंथा है, उससे अगली राशि की मुंथा, द्वितीय मास के द्वितीय दिन की कुण्डली में लिखनी । इस प्रकार क्रम से प्रत्येक दिन कुण्डली में १/१राशि बढ़ाकर मुंथा लिखनी ।

द्वितीय मास के एकादशवें (ग्यारहवें) दिन के दिनप्रवेश के वार तथा इष्टकाल के घड़ी-पल निकालने का उदाहरण -द्वितीय मास के ग्यारहवें दिन का सूर्य ३/४/५७/२५ है । यह सूर्य , संवत् २०२३ अधिक श्रावणशुक्ला चतुर्थी गुरु वार को है । इसके समीप की पंचांगस्थ पंक्ति, अधिक श्रावण शुक्ला अष्टमी सोमवार को है । इस दिन मिश्रमान ४७/३१ है । पंक्ति का सूर्य दिन प्रवेश के सूर्य से आगे है। पंक्ति के सूर्य स्पष्ट ०३/८/४५/४६ है । पंक्ति के सूर्य की गति ५७ कला २ विकला है । पंक्ति के सूर्य के स्पष्ट का तथा उक्त दिन प्रवेश के सूर्य के स्पष्ट का अन्तर किया $\frac{\overset{०३/०८/४५/४६}{३/०४/५७/२५}}{\underset{०/४/०८/२१}{}}$ तो ०/४/८/२१ अन्तर हुआ। इस अन्तर की कला बनायी (४×६०=२४०+८=२४८/२१) तो २४८/२१ हुई । इसे सवर्णित किया। (२४८×६०=१४८८०+२१ =१४९०१) तो १४९०१ हुए । यह भाज्य है । पंक्ति के सूर्य की गति को सवर्णित किया (५७×६०=३४२०+२=३४२२) तो ३४२२ हुए । यह भाजक है ।

भाज्य १४९०१ में भाजक ३४२२ से भाग दिया तो ४ लब्धि आई और १२१३ शेष बचे । शेष को ६० से गुणा किया तो ७२७८० हुए । इनमें भाजक ३४२२ से भाग दिया तो २१ लब्धि आयी और ९१८ शेष बचे । इनको ६० से गुणा किया तो ५५०८० हुए । इनमें पूर्वोक्त भाजक ३४२२ से भाग दिया तो १६ लब्धि आयी । इस प्रकार तीन लब्ध फल ४/२१/१६ लिये । इनमें ४ वार, २१ घड़ी १६ पल है । पंक्ति का सूर्य, दिन प्रवेश के सूर्य से आगे है । इस कारण उक्त लब्धफलों को पंक्ति के वार तथा मिश्रमान में ही न किया पंक्ति $\frac{\overset{२४६/३१}{४/२१/१६}}{\underset{५/२६/१५}{}}$ तो ५ (गुरु) वार को २६ घड़ी १५ पल इष्टकाल पर द्वितीय मास के ग्यारहवें दिन का दिन प्रवेश होगा ।

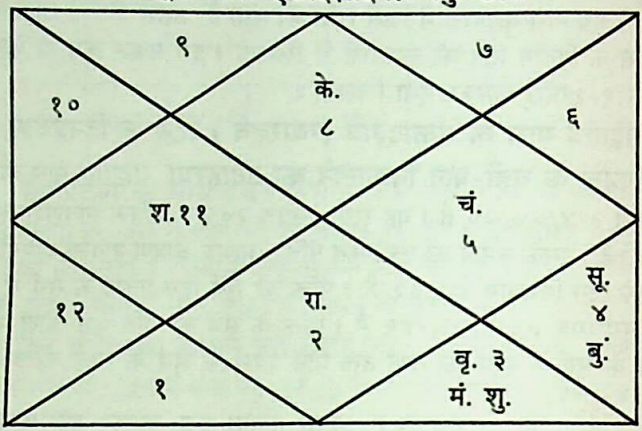
इष्टकाल पर लग्नसाधन करने के लिए दिन के सूर्य की कर्क राशि के सामने ४ अंश के नीचे के कोष्ठ से लग्नसारिणी के द्वारा सूर्यफल १८/७/२२ लेकर युक्त किये $\frac{\overset{२६/१५}{१८/६/२२}}{\underset{४४/२२/२२}{}}$ तो ४४/२२/२२ योग फल हुआ । इसे लग्नसारिणी में देखा तो वृश्चिक लग्न है । इस पर दिन प्रवेश की लग्न कुण्डली बनेगी, उसका नमूना दिया जाता है ।

श्रीसीतारामचन्द्राभ्यां नमः

श्रीसंवत्सरे २०२३ शाके १८८८ अधिकश्रावणमासे शुक्लपक्षे चतुर्थ्यां गुरुवासरेऽष्टम् २६/१५। दिनप्रवेशकालिकस्पष्टसूर्यः ३/४/५७/२५। दिनप्रवेशकालिकस्पष्टलग्नम् ७/२४/४४/२२/२२। अत्रावसरे श्री. पं. सुदर्शनाचार्यशास्त्रिणः द्वितीयमासे एकादशतमदिन-

प्रवेशः । शुभं भूयात् ।

अथद्वितीयमासे एकादशदिनलग्नकुण्डली



दिन प्रवेश में मुग्धा दशा निकालने का क्रम - दिनप्रवेशस्पष्टलग्न नक्षत्रे सप्तयुतैकहते एकादिशेषे प्रागुक्तनामाद्या दिनदशा ।

दिन प्रवेश के समय के नक्षत्र की संख्या तथा लग्न की संख्या का योग कर ७ युक्त करना । फिर योगफल में ९ से भाग देना । शेष से दशा जानना । १. सूर्य की दशा। २. चंद्र की दशा । ३. मंगल की दशा । ४. राहु की दशा । ५. गुरु की दशा । ६. शनि की दशा । ७. बुध की दशा । ८. केतु की दशा । ९. शुक्र की दशा ।

दशा का मान निकालने का क्रम - वर्ष में मुग्धा दशा का जो मान है, उस के दिनों का छठा भाग, घड़ियों के रूप में दिन की मुग्धा दशा का मान होता है ।

दिनमुग्धादशा-मानसारिणी

ग्रह	सू.	चं.	मं.	रा.	वृ.	श.	बु.	के	शु.
घड़ी	३	५	३	९	८	९	८	३	१०
पल	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	०

दिन प्रवेश में मुग्धा दशा निकालने का उदाहरण - द्वितीय मास के ग्यारहवें दिन के प्रवेश काल में पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र है, अश्विनी नक्षत्र से पूर्वा फाल्गुनी तक गिना तो ११ संख्या हुई । वृश्चिकलग्न की संख्या ८ है । दोनों संख्याओं का योग ११+८=१९ हुए । इनमें ७ युक्त किये तो २६ हुए । इनमें ९ से भाग दिया तो ८ शेष बचे । ८ शेष से केतु की दशा में दिनका प्रवेश हुआ है । केतु की दशा से बुध की दशा तक नौ ग्रहों की दशाएँ एक दिनरात (६० घड़ी या २४ घण्टे) में व्यतीत होगी । इसकी दशा का चक्र बनाना । चक्र का नमूना दिया जाता है ।

अथ द्वितीयमासे एकादशदिवसीयमुग्धादशाचक्रम्

ग्रह	के.	शु.	सू.	चं.	मं.	रा.	वृ.	श.	बु.
घड़ी	०३	१०	३	५	३	९	८	९	८
पल	३०	००	००	००	३०	००	००	३०	३०
राशि ३	०३	०३	०३	०३	०३	०३	०३	०३	०३
अंश ४	०५	०५	०५	०५	०५	०५	०५	०५	०५
कुला ५७	००	१०	१३	१८	२२	३१	३९	४८	५६
विकला २५	५५	५५	५५	५५	२५	२५	२५	५५	२५

नोट - उपर्युक्त मुग्धादशा चक्र में कर्क राशि के सूर्य के ४ अंश ५७ कला और २५ विकला से केतु की दशा आंरभ होकर कर्क राशि के सूर्य के ५ अंश की शून्य घड़ी ५५ पल तक रहेगी । इसके बाद प्रत्येक ग्रह की दशा क्रमशः अपने-अपने समय में रहेगी।

दिन दशा के संबंध में आचार्य बलभद्र तथा आचार्य यादव के भिन्न मत हैं । उन्हें भी क्रमशः प्रदर्शित किया जाता है ।

जन्मभाद् दिनभं गण्यं वेदघ्नं तिथिवारयुक् ।
नवाप्तभूरसाङ्काक्षि वेदाष्टद्रिगुणेषु भिन्ना ।।
शेषैः सूर्यादिखेटानां दशाज्ञेया दिनोद्भवा ।
सौख्यं सौम्यदशायां स्याद् दुःखं पापदशासु च ।।

जिस व्यक्ति के लिए दिनदशा लगानी हो, उसका जन्म नक्षत्र जानना । जन्मनक्षत्र से उस दिन के नक्षत्र तक गिनना । जो संख्या आये, उसे चार से गुणा करना फिर उसमें तिथि की संख्या (कृष्ण पक्ष में तिथि की संख्या में १५ और मिलाना) को और वार की संख्या को जोड़कर ९ से भाग देना । शेष की संख्या के अनुसार ग्रह की दशा जाननी । १. सूर्य । २. बुध । ३. राहु । ४. गुरु । ५. केतु । ६. चंद्रमा । ७. शनि। ८. शुक्र । ९. मंगल ।

शुभग्रह की दशावाले दिन में सुख होता है तथा पापग्रह की दशा के दिन में दुख होता है ।

दिनदशा निकालने का उदाहरण - दूसरे मास के ग्यारहवें दिन की दशा निकालनी है । उस दिन का नक्षत्र पूर्वाफाल्गुनी है । जन्म का नक्षत्र उत्तराषाढ़ है ।

उत्तराषाढ़ से पूर्वा फाल्गुनी तक गिना तो १८ संख्या हुई । उस दिन की तिथि शुक्लपक्ष की चतुर्थी है और वार गुरुवार है । तिथि की संख्या ४ और वार की संख्या ५ है । नक्षत्र की १८ संख्या को ४ से गुणा किया तो ७२ हुए । इनमें तिथि की संख्या ४ और वार की संख्या ५ मिलायी तो ८१ हुए । इनमें ९ से भाग दिया तो शून्य बचा । यहाँ शून्य से अर्थ ९ का है । ९ शेष बचे । ९ शेष से मंगल की दशा हुई । मंगल पापग्रह है अत: उसकी दशा होने से दिन दुख से बीतेगा ।

२. **आत्मर्क्षं च चतुर्गुण्यं तिथिवारेण मिश्रितम् ।**
सप्तीभिश्च हरेद् भागं शेषं दिनदशाफलम् ।।
व्यापारो गमनं सूर्ये चन्द्रे स्नानादिभोजनम् ।
भौमे कलिर्मनो वैरं बुधे विद्या सुखं धनम् ।।
धनं लाभः सुखं मैत्री गुरौ शुक्रे स्त्रियः सुखम् ।
शनौ न गमनं दुःखमुद्वेगादिफलं क्रमात् ।।

जिस व्यक्ति की दिन दशा जाननी हो, उसके नक्षत्र तक अश्विनी नक्षत्र से गिनना, जो संख्या आये उसे ४ से गुणा करना । फिर उसमें तिथि की संख्या (कृष्णपक्ष में तिथि की संख्या में १५ और मिलाने) को तथा वार की संख्या को मिलाना जो संख्या होवे, उसमें ७ से भाग देना । शेष के अनुसार क्रम से सूर्य आदि वार की दशा जाननी।

सूर्य की दशा में व्यापार तथा गमन होता है । चंद्रकी दशा में स्नान-भोजन आदि होता है । मंगल की दशा में झगड़ा, वैर और मानसिक क्लेश होता है । बुध की दशा में ज्ञान (विद्या), सुख तथा धन लाभ होता है । गुरु की दशा में धन का लाभ, अन्य लाभ,सुख तथा मित्रता होती है । शुक्र की दशा में स्त्रीसंबंधी सुख होता है । शनि की दशा में यात्रा में अड़चन, दुख तथा उद्वेग (घबराहट) आदि होता है ।

नोट - जन्म का नक्षत्र न मालून होने पर बोलते नाम का जो पहिला अक्षर है, वह जिस नक्षत्र का अक्षर हो, उसका वही नक्षत्र जानकर उससे विचार करना ।

प्रश्न के द्वारा वर्ष पत्र बनाने का क्रम -

पृच्छाद्यलग्नं किल वर्षलग्नं तल्लग्नतोऽब्ध्याधिपजन्मनाथः ।
विहाय राशिं शकलीकृता च खतिथ्यभागान् मुथहा स्थितिः स्यात् ।।

यदि किसी की जन्म पत्रिका न हो और वह व्यक्ति, अपना वर्ष पत्र बनवाना चाहता हो तो उसका वर्षपत्र, प्रश्न के द्वारा बनाना । प्रश्न करने के समय जो प्रश्न लग्न है, उसको वर्ष लग्न जाना । प्रश्न लग्न से चौथी राशि के पति को जन्म लग्नेश जानना। पंचाधिकारियों में जन्मलग्नपति के स्थान में प्रश्न लग्न से चतुर्थेश को लिखना ।

मुंथा की राशि निकालने का क्रम - प्रश्नलग्न के स्पष्ट में राशि को छोड़कर अंश आदि की कला बनानी अर्थात् अंश की संख्या को ६० से गुणा कर कला की संख्या मिलानी । यह भाज्य होगा । इसमें १५० से भाग देना । लब्धि को पृथक् रखना । शेष को ६० से गुणा करके डेढ़ सौ से भाग देना, इस प्रकार चार लब्धफल लेना। ये क्रमशः राशि, अंश, कला और विकला जानना । इन्हें प्रश्नलग्न के स्पष्ट में

युक्त करना । यह योगफल मुंथा का राश्यादि होता है अर्थात् इस राशि में मुंथा को लिखना ।

प्रश्नद्वारा वर्ष पत्र बनाने का कल्पित उदाहरण - प्रश्नकालिक इष्ट २६/१५। स्पष्ट सूर्य : ३/४/५७/२५। स्पष्ट लग्नम् ७/२४/४४/२२। प्रश्नकाल का इष्ट वर्ष काल का इष्ट है । प्रश्न लग्न वृश्चिक ही वर्ष लग्न है । वर्ष लग्न वृश्चिक से चौथी राशि कुंभ है, उसका स्वामी शनि, जन्म लग्नेश है ।

मुंथा के स्पष्ट करने के लिए प्रश्नलग्न के स्पष्ट की ७ राशि को छोड़कर कला बनाने के लिए अंश की संख्या २४ को ६० से गुणा किया १४४० हुए । इनमें कला की संख्या ४४ को युक्त किया तो १४८४ हुए । यह भाज्य है । इसमें डेढ़ सौ से भाग दिया तो ९ लब्धि आयी और १३४ शेष बचे । लब्धि को पृथक् रखा । शेष को ६० से गुणा किया ७४४० हुए । इनमें १५० से भाग दिया तो ४९ लब्धि आयी और ९० शेष बचे । शेष को ६० से गुणा किया ५४०० हुए । इनमें १५० से भाग दिया तो ३६ लब्धि आयी और शून्य शेष बचा । शून्य शेष बचने के कारण आगे का क्रिया समाप्त हो गयी । उक्त लब्ध फलों को प्रश्न लग्न के स्पष्ट राश्यादि में युक्त किया

७/२४/४४/२२
९/४९/३६/००
१७/१४/२०/२२

तो १७/१४/२०/२२ योगफल हुआ । राशि के स्थान में १७ बारह से अधिक हैं अतः १२ से भाग दिया ५ शेष बचे । मुंथा का स्पष्ट ५/१४/२०/२२ है। अतः मुंथा वर्ष कुण्डली में कन्या राशि में लिखी जायगी । इस प्रकार प्रश्न के द्वारा वर्ष पत्र बनाकर फलित बतलाना।

आयुः का स्पष्टीकरण - वर्ष में आयुः का विचार होता है । आयु का विचार ठीक तभी बैठता है जबकि, जन्मपत्र के अनुसार भी आयुः का विचार किया गया हो । समस्त विचारों में आयुः का विचार मुख्य है । ज्यौतिष शास्त्र में उल्लेख है -

पूर्वमायुः परीक्षेत पश्चाल्लक्षणमुत्तमम् ।
आयुर्हीननराणां च लक्षणैः किं प्रयोजनम् ।।

सबसे प्रथम आयुः का विचार करना, पीछे उत्तम लक्षणों का विचार करना । आयुर्हीन पुरुषों के लिए लक्षणों से कोई प्रयोजन नहीं है । आयुः का पूर्ण रूप से विचार तो लेखक ने 'जन्मपत्र-विज्ञान' में लिखा है किन्तु आवश्यक होने के कारण जितना अपेक्षित है, उतना यहाँ भी प्रस्तुत किया जाता है ।

आयुः का अर्थ - जीवन का जितना समय है, उसे आयु कहते हैं ।

अष्टौ बालारिष्टमादौ नराणां योगारिष्टं प्राहुराविंशतिः स्यात् ।
अल्पं च द्वात्रिंशतो मध्यमायुरासप्तत्या पूर्णमायुः शतान्तम् ।।

१. आठ वर्ष की अवस्था तक बालारिष्ट है । २. बीस वर्ष की अवस्था तक योगारिष्ट है । ३. बत्तीस वर्ष की अवस्था तक अल्पायुः होती है । ४. चौसठ या सत्तर वर्ष की अवस्था तक मध्यमायुः होती है । ५. सौ वर्ष की अवस्थातक पूर्णायुः होती है।

मरणं चापि तत्रास्ति यत्रारिष्टपुरःसरम् ।।

उपद्रव या बाधा को रिष्ट कहते हैं । रिष्ट के विना मृत्यु नहीं होती । रिष्ट या अरिष्ट दो प्रकार का होता है । १. नियत । २. अनियत । कालमृत्यु सूचक को नियत कहते हैं। अकालमृत्यु सूचक को अनियत कहते हैं । काल मृत्युका अर्थ- गणितागतायुःसमाप्त्यामरणं कालमृत्युस्तत्र प्रतीकाराभाव: =अर्थात् ज्यौतिष शास्त्र की गणित प्रक्रिया से निकाली गयी आयु: की समाप्ति में जो मृत्यु होती है, उसे कालमृत्यु कहते हैं । इस कालमृत्यु का कोई उपाय नहीं है ।

नोट- किसी-किसी का मत है कि, रसायन के सेवन से कालमृत्यु भी जीति जा सकती है एवं महात्मा योगीराज तथा विद्वान्, कालमृत्यु को भी जीत लेते हैं ।

अकालमृत्यु का अर्थ - क्रूरग्रह की दशा-अन्तर्दशा आदि में जो मरण होता है, उसे अकालमृत्यु कहते हैं । इसे जप, दान तथा स्वस्त्ययनादि शान्ति कर्मों द्वारा टाला जा सकता है ।

गणित द्वारा आयु: निकालने के १२ क्रम हैं, जिन्हें द्वादशायुर्दाय कहते हैं । महाराज विक्रमादित्य की सभा के प्रधान ज्योतिषि सत्याचार्य, अंशायुर्दाय को विशेष महत्व देते थे । यद्यपि महर्षि पराशर ने अपने प्रधान शिष्य जैमिनिऋषि को इस अंशायुर्दाय की शिक्षा दी थी किन्तु कालान्तर में यह क्रम धूमिल-सा हो गया था । सत्याचार ने अपने समय में उक्त क्रम को प्रगति दी, जिससे यह क्रम उन्हीं के नाम से प्रसिद्ध हो गया ।

जनता के लाभार्थ उक्त क्रम को बड़ी सरलता से प्रस्तुत किया जाता है । सबसे प्रथम जन्मकाल के शुद्ध इष्ट को बनाकर उस पर लग्नसाधन करना तथा ग्रहों को स्पष्ट करना । तदनन्तर जन्म लग्न कुण्डली बनानी । जन्मकाल का इष्ट शुद्ध है या नहीं? यदि शुद्ध नहीं है तो इष्ट काल में कितनी न्यूनाधिकता (कमी-वेशी) की जाय, जिससे कि, इष्ट शुद्ध बन जाय । यह जानना है तो लेखक का 'जन्मपत्र-विज्ञान' पढ़िये ।

आयुर्दाय लाने की रीति

कलीकृत्य ग्रहं तत्र द्विशताप्तेर्कशेषकाः ।
समाः शेषानुमासाद्याः द्वादशादिहतैः क्रमात् ।।

ग्रहस्पष्ट की कला बनाकर उसमें २०० से भाग देना । जो लब्धि आये, उसे १२ से भाग देना । जो शेष बचे वह वर्ष है । २०० से भाग देने पर जो शेष बचा है, उसे क्रम से १२/३०/६० से गुणा करके २०० से भाग देना । जो लब्धि आये उन्हें क्रम से मास, दिन और घड़ी जानना अर्थात् शेष को पहिले १२ से गुणा करके २०० से भाग देना जो लब्धि आये वह मास है । शेष को ३० से गुणा करके २०० से भाग देना, लब्धि दिन होंगे। शेष को ६० से गुणा करके २०० से भाग देना लब्धि घड़ी होंगी । शेष को फिर ६० से गुणा करके २०० से भाग देना लब्धि पल होंगे । लब्धियों को अनुपात से रखना । इस प्रकार ग्रह की वर्ष, मास, दिन, घड़ी और पल के रूप में मध्यायु: का साधन होता है । सूर्य से शनि तक सात ग्रहों की और लग्न की मध्यायु: का साधन करना ।

मध्यायुः में संस्कार करने पर स्पष्टायुः होती है ।

नोट -

कला बनाने का क्रम - स्पष्ट में राशि की संख्या को ३० से गुणा करके कला की संख्या मिलानी । जो संख्या बने उसे ६० से गुणा करके कला की संख्या मिलानी इस संख्या को कलीकृत संख्या कहते हैं ।

मध्यायुः से स्पष्टायुः साधन करने के लिए संस्कारों का विवरण -

स्थिरारिभे हरेत् त्र्यंशं वक्रचारं विना ग्रहः ।
शुक्रार्कजान्यस् त्वस्तस्य अर्द्धं नीचर्क्षगे दलम् ।।

१. जो ग्रह, वक्र तो न हो किन्तु नैसर्गिक मैत्री में यानी स्थिर मैत्री में अपने शत्रुग्रह की राशि का हो तो, उसकी दी हुई मध्यायुः में तृतीयांश को हीन करना ।

नोट -

तृतीयांश निकालने का क्रम - वर्ष को तीन से भाग देकर लब्धि को पृथक् रखना और शेष को १२ से गुणा करके मास की संख्या मिला ३ से भाग देना लधि को पृथक् रखना और शेष को ६० से गुणा कर घड़ी की संख्या मिला कर ३ से भाग देना । लब्धि को पृथक् रखना और शेष को ६० से गुणाकर पल की संख्या मिला इसे भाग देना । लब्धि को पृथक् रखना और इस वार शेष का त्याग करना । लब्धियों को अनुपात से रखना । इस प्रकार वर्ष-मास-दिन-घड़ी-पल के रूप में मध्यायुः का तृतीयांश (तीसरा हिस्सा) होगा ।

द्वितीयांश निकालने में पूर्वोक्त क्रम से २ से भाग देना । चतुर्थांश निकालने में ४ से, पंचमांश निकालने में ५ से और षष्ठांश निकालने में ६ से भाग देना ।

२. शुक्र और शनि के अतिरिक्त यदि और कोई ग्रह, अस्त का हो तो उस ग्रह की मध्यायुः का द्वितीयांश (दूसरा हिस्सा) हीन करना ।

३. नीचराशि के ग्रह की मध्यायुः में द्वितीयांश हीन होता है ।

वक्रोच्चगे तत् त्रिगुणं द्विनिघ्नं वर्गोत्तमस्वांशकभत्रिभागे ।
द्विनिघ्नतायां त्रिगुणं सकृद्वै द्वित्रिलवोने द्विलवोनमायुः ।।

४. जो ग्रह, वक्र हो या अपनी उच्च राशि में हो तो उसकी दी हुई मध्यायुः को त्रिगुणी (तिगुनी) करना ।

५. वर्गोत्तमी (जिस राशि में ग्रह है, उसी राशि के नवांश में भी हो तो उसे वर्गोत्तमी कहते हैं ।) ग्रह की दी हुई मध्यायुः को द्विगुणी (दुगुनी) करना ।

६. स्वराशि, स्वद्रेष्काण या स्वनवांश में स्थित ग्रह की दी हुई मध्यायुः को द्विगुणी करना ।

नोट - जिस ग्रह की मध्यमायुः को द्विगुणी और त्रिगुणी करने का योग बनता हो तो वहाँ केवल त्रिगुणी ही करनी ।

जहाँ ग्रह की मध्यायुः में द्वितीयांश और तृतीयांश, हीन करने का प्रसंग हो, वहाँ केवल द्वितीयांश (आधाभाग) ही हीन करना । पूर्वोक्त संस्कार एक ही वार होता है।

वामं व्ययात् सर्वदलत्रिपादं पञ्चाङ्गभागा न शुभा हरन्ति ।
सन्तोऽर्द्धमर्द्धं सबलं बहूनामेकर्क्षगानामिति सत्यवाक्यम् ।।

सत्याचार्य जी का कथन है कि, लग्नकुण्डली में बारहवें स्थान में बैठा पापग्रह, अपनी दी हुई मध्यायुः को पूर्ण रूप से हर लेता है । यानी उसकी कुछ भी मध्यायुः नहीं होती । ११वें स्थान में बैठा पापग्रह अपनी दी मध्यायु का आधा भाग हर लेता है । १० वें स्थान में बैठा पापग्रह, अपनी दी हुई मध्यायु का तृतीयांश हर लेता है । ९ वें स्थान में बैठा पापग्रह, अपने दी हुई मध्यायु का चतुर्थांश हर लेता है । ८ वें स्थान में बैठा पापग्रह, अपने दी हुई मध्यायु का पंचमांश हर लेता है । ७ वें स्थान में बैठा पापग्रह, अपने दी हुई मध्यायु का षष्ठांश (छठा भाग) हर लेता है । हरे हुए भाग को मध्यायुः में से कम कर दिया जाता है ।

१२ वें स्थान में बैठा शुभग्रह, अपनी दी हुई मध्यायुः में से द्वितीयांश (आधा भाग) हर लेता है । ११ वें स्थान में बैठा शुभ ग्रह, अपनी दी मध्यायुः का चतुर्थांश हर लेता है । १० वें स्थान में बैठा शुभ ग्रह, अपनी दी मध्यायुः का षष्ठांश हर लेता है । ९वें स्थान में बैठा शुभ ग्रह, अपनी दी मध्यायुः का अष्टमांश हर लेता है । ८वें स्थान में बैठा शुभ ग्रह, अपनी दी मध्यायुः का दशमांश हर लेता है । ७वें स्थान में बैठा शुभग्रह, अपनी दी मध्यायुः का द्वादशांश हर लेता है ।

पूर्वोक्त रीति से ग्रहों की तथा लग्न की मध्यायुः निकालनी । जो ग्रह, अपनी मध्यायुः का जितना अंश होता हो, पूर्वोक्त क्रम से उसकी मध्यायुः से उतना अंश निकालकर उस अंश को उसकी मध्यायुः में से हीन करना ।

यदि उक्त निर्दिष्ट स्थानों में से किसी स्थान में दो या कई ग्रह बैठें हों तो, उनमें जो भी ग्रह, सब ग्रहों से बलवान् हो उसी एक का पूर्वोक्त नियमानुसार मध्यायुः का अंश, मध्यायुः में हीन करना । शेष ग्रहों की मध्यायुः के अंश, उनकी मध्यायुः में हीन न करने।

ग्रहों की मध्यायुः में पूर्वोक्त नियमों के अनुसार संस्कार करने पर वह स्पष्टायुः हो जाती है ।

नोट - सरलता से जानने के लिए बली (बलवान्) ग्रह का लक्षण दिया जाता है-

स्वर्क्षकेन्द्रोत्तमांशस्थाः स्वांशमित्रांशकन्विताः ।
परिपूर्णबलैर्युक्ताः स्वोच्चमूलत्रिकोणगाः ।।

ग्रह सात प्रकार से बली या बलवान् माना जाता है । १. केन्द्र स्थान में स्थित ग्रह बली होता है । २. स्वराशि में स्थित ग्रह बली होता है । ३. मूर्ल-त्रिकोण राशि में स्थित ग्रह बली होता है । ४. उच्च राशि में स्थित ग्रह बली होता है । ५. वर्गोत्तमी ग्रह बली होता है । ६. अपने मित्र ग्रह के नवांश में स्थित ग्रह बली होता है । ७. शुभग्रह के नवांश में स्थित ग्रह बली होता है ।

नोट - महर्षि लोमश के मत में सप्तवर्ग में बलीग्रह, बलवान् होता है ।

बलवान् लग्न की परिभाषा- स्वामिज्ञगुरुवीक्षितयुता होरा बलोत्कटा भवति =अर्थात् अपने स्वामी से, बुध से अथवा गुरु से युक्त या दृष्ट लग्न बलवान् होती है।

लग्न की मध्यायुः तथा स्पष्टायुः साधन करने का क्रम -

लग्ने बलाढ्ये सहितं च वर्षैस्तुल्यैर्विलग्नस्थगृहैर्विधेयम् ।
भागादिना भास्करसङ्गुणेन युक्तं दिनाद्यं भवति स्फुटं तत् ।।

जिस क्रम से ग्रह की मध्यमायुः का साधन होता है, उसी पूर्वोक्त क्रम से लग्न की मध्यायुः का साधन करना । यदि लग्न निर्बल होती है तो उसकी दी हुई मध्यायुः ही स्पष्टायुः होती है ।

यदि लग्न बलवान् हो तो लग्न की स्पष्ट राशि की संख्या को मध्यायुः के वर्ष में युक्त करना । जैसे शून्य १,२,३, इत्यादि । लग्न के अंश आदि को १२ से गुणा करके मध्यायुः के दिन आदि में युक्त करने । यदि दिन ३० या ३० से अधिक हों तो उनको ३० से भाग देना । लब्धि को दिन के स्थान में रखना । शेष को ६०गुणा कर कला मिलाकर घड़ी में युक्त करना । यदि घड़ी ६० से अधिक हो तो ६० से भाग देकर लब्धि को कला के स्थान में रखना । शेष को ६० से गुणा करके विकला की संख्या मिलानी। यदि ६० से अधिक हो तो ६० देकर लब्धि को विकला के स्थान में रखना ।

आयुः स्पष्ट का निष्कर्ष - पहिले सूर्य से शनि तक सात ग्रहों की मध्यायुः निकालनी । तदनन्तर पूर्वोक्त क्रम से संस्कार के द्वारा मध्यायुः की स्पष्टायुः करनी। तत्पश्चात् लग्न की भी मध्यायुः तथा स्पष्टायुः करनी ।

तदनन्तर सातों ग्रहों की और लग्न की स्पष्टायुः का योग करना । जो योग आये उसमें से वर्ष को जन्म के संवत् में मास की संख्या को जन्म के और मास की संख्या में, दिन की संख्या को जन्म के सूर्य के अंश की संख्या में, घड़ी और पलों को जन्म के इष्ट की घड़ी पलों में युक्त करना । यह योग फल आयुः का अन्तिम समय होता है।

आयुः के मिलने के संबंध में विचार -

ये सत्यशौचनिरताः किल पुण्यभाजस्तेषां नृणां भवति आयुरधर्मिणां नो ।।

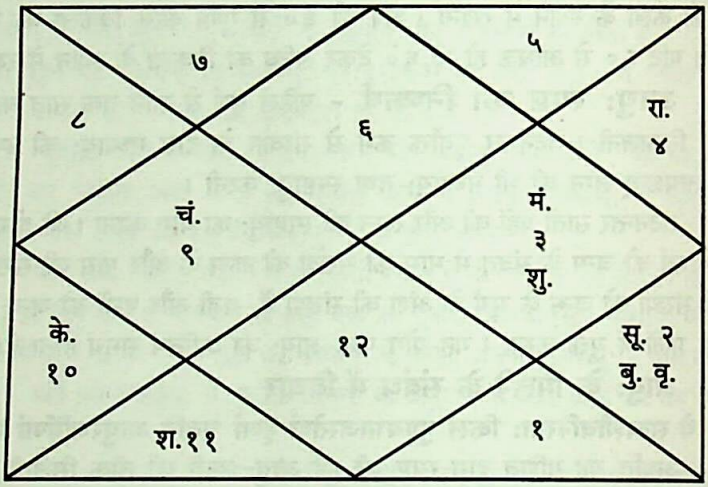
अर्थात् यह गणित द्वारा स्पष्ट की हुई आयुः उन्हीं की ठीक मिलती है, जो व्यक्ति, सत्य-शौच (पवित्रता) आदि से युक्त पुण्यात्मा होते हैं । इतर मनुष्यों की आयुः कम हो जाने के कारण ठीक नहीं मिलती है ।

पूर्वोक्त क्रम से आयुः स्पष्ट करने का उदाहरण - श्रीसंवत्सरे १९६३ श्री शाके १८२८ आषाढमासे कृष्णपक्षे शनिवासरे इष्टम् १७/५९ जन्मकालिकस्पष्ट ५/१०/४७/२७ अत्रावसरे जन्माभूत् । शुभं भूयात् ।

अथ स्पष्टग्रहचक्रम्

ग्रह	सू.	चं.	मं.	बु.	वृ.	शु.	श.	ल.
राशि	१	८	२	१	१	२	१०	५
अंश	२५	२६	५	२३	२६	२३	१९	१०
कला	२८	४५	४६	४३	२८	३७	१०	४७
विकला	५२	४७	४८	११	४५	३९	२१	२७
गतिः	५७	००	४०	१११	१३	७८	१	११
	१४	००	१४	५६	२८	८	५७	२६
	मार्गी	शीघ्र	मा.	मा.	मा.	मा.	मा.	मा.

अथ जन्मलग्नचक्रम्



आयुः के स्पष्टीकरण के लिए पहिले सूर्य की मध्यायुः निकालनी है। अतः स्पष्ट सूर्य की प्रथम कला करनी है। स्पष्ट में सूर्य की राशि १ है। इसे ३० से गुणा करके अंश की संख्या २५ को मिलाया तो ५५ हुए। इसे ६० से गुणा करके कला की संख्या २८ को युक्त किया तो ३५२८ संख्या हुई। इसके आगे विकला की ५२ संख्या रखी तो ३५२८/५२ हुई।

३५२८ में २०० से भाग दिया तो १७ लब्धि आयी। ये १२ से अधिक हैं। अतः १२ से भाग दिया शेष ५ बचे। ये वर्ष हैं। शेष १२८/५२ बचे, इनको १२ से

गुणा किया तो १५३६/६२४ हुए। ६२४ विकला में ६० से भाग दिया तो १० लब्धि आयी और २४ शेष बचे। २४ शेष को विकला के स्थान में रखा। १० लब्धि को १५३६ में युक्त किया तो १५४६ हुए। इनमें २०० से भाग दिया तो ७ लब्धि आयी, ये मास हैं। शेष १४६/२४ बचे। इनको ३० से गुणा किया तो ४३८०/७२० हुए। ७२० में ६० से भाग दिया तो १२ लब्धि आयी और शेष शून्य बचा। १२ लब्धि को ४३८० में युक्त किया तो ४३९२ हुए। इनमें २०० से भाग दिया तो २१ लब्धि आयीं, ये घड़ी हैं। ९२/० शेष बचे। शेष ९२ को ६० से गुणा किया तो ५५२० हुए। इनमें २०० से भाग दिया तो २७ लब्धि आयी। ये पल हैं। शेष १२० का त्याग दिया। यहाँ यह फलित हुआ कि, सूर्य की मध्यायुः ५ वर्ष ७ मास २१ दिन २७ घड़ी है। इसी प्रकार प्रत्येक ग्रह की तथा लग्न की मध्यायुः साधन करनी। मध्यायुः के साधन होने पर उससे स्पष्टायुः का साधन करना।

सूर्य की स्पष्टायुः साधन का क्रम - सूर्य वृष राशि का है। वृष का स्वामी शुक्र है। नैसर्गिक या स्थिर मैत्री में शुक्र, सूर्य का शत्रु है। सूर्य मकर राशि के द्रेष्काण में है। मकर का स्वामी शनि है। स्थिर मैत्री में शनि, सूर्य का शत्रु है। नवमांश में सूर्य सिंह राशि का होने से स्वराशि का है। नवमांश में सूर्य, स्वराशि का होने से बली है।

स्थिर मैत्री में शत्रु राशि के ग्रह की मध्यायुः का तृतीयांश हीन हो जाता है। नवमांश में स्वराशि में स्थित ग्रह की मध्यायुः द्विगुण होती है। यहाँ दो संस्कार प्राप्त हैं। एक ग्रह का एक ही संस्कार होता है। लग्नकुण्डली की अपेक्षा द्रेष्काण कुण्डली और द्रेष्काण कुण्डली की अपेक्षा नवमांश कुण्डली प्रधान है। अतः नवमांश कुण्डली में सूर्य स्वराशि में होने से सूर्य की मध्यायुः ५/७/२१/२७ को द्विगुण किया तो ११वर्ष ३ मास १२ दिन घड़ी ५४ सूर्य की स्पष्टायुः हुई। इस प्रकार प्रत्येक ग्रह की स्पष्टायु का साधन कर चक्र में लिखना। चक्र का नमूना दिया जाता है।

अथ ग्रहाणां स्पष्टायुश्चक्रम्

ग्रह	सू.	चं.	मं.	बु.	वृ.	शु.	श.	ल.	योग
वर्ष	०९	१६	१५	०८	०९	०२	०७	०१	६९
मास	३	१	०५	२	०५	२	०९	१३	८
दिन	१७	१८	२२	२३	०७	१०	०६	३१	१७
घड़ी	३१	१२	४	५१	३१	४४	४१	१३	५१
	१२	१२	४८	३६	५३	२४	२२	१२	४९

समस्त ग्रहों की तथा लग्न की दी हुई स्पष्टायु: का योग ६९ वर्ष ८ मास १७ दिन ५१ घड़ी ९ पल ४८ है। इसको जन्मसंवत् १९६३ सौर ज्येष्ठ मास ३५ शनिवार ७, जन्मेष्ट काल की घड़ी १७ पल ५९ में युक्त किया $\frac{१९६३/२५/७/१७/५९}{६९/८/१७/५१/४९}$ तो $\frac{}{२०२३/०३/२५/०९/४८}$ फलित हुआ कि, संवत् २०३३ के आषाढ़ मास यानी मिथुन के सूर्य के ३५ अंशके दिन ९ घड़ी ४८ पल पर जातक की आयु: की समाप्ति है।

नोट -

शास्त्रीय सिद्धान्त है कि - अनाचार, आलस्य, अन्नदोष आदि कारणों से आयु: कम होती जाती है। अत: गणितागत आयु: उसी की ठीक मिलती है, जो सत्य-शौच (शारीरिक तथा मानसिक शुद्धि) परायण तथा पुण्यकर्म करने वाला होता है। आयु के संबंध में विशेष जानना हो तो लेखक का " जन्मपत्र-विज्ञान' पढिये।

श्रीनिवासपरब्रह्मणे नमः।श्रीयतिराजाय नमः ।

तृतीय-प्रकाश

मंगलाचरण

यस्य प्रसादकलया वधिरः शृणोति पङ्गुः प्रधावति जवेन च वक्ति मूकः।
अन्धः प्रपश्यति सुतं लभते च बन्ध्या तं देवमेव वरदं शरणं गतोऽस्मि ।।१।।
श्रीरङ्गेशो वृषाद्रीशो वरदो यदुशैलराट् ।
पोष्यः शिष्यो गुरुः पुत्रो यस्य तं गुरुमाश्रये ।।२।।

सन्दर्भ - प्रस्तुत तृतीय प्रकाश में फलित का विवरण दिया जायगा । जिसका स्वरूप इस प्रकार है - १. वर्ष का सामन्यतः शुभागम फलित । २. मुंथा का भाव फलित । ३. मुंथा का विचार फलित । ४. राशिगत मुंथा फल । ५. सूर्य आदि ग्रह से युक्त मुंथा का फल । ६. सूर्य आदि ग्रह से दृष्ट मुंथा का फल । ७. मुंथेश का भाव फलित । ८. मुंथेश तथा मुंथा का फलित । ९. द्वादश भाव गत सूर्य का फलित । १०. द्वादश भावगत चंद्रमा का फलित । ११. द्वादश भावगत मंगल का फलित । १२. द्वादश भावगत बुध का फलित । १३. द्वादश भावगत गुरु का फलित । १४. द्वादश भावगत शुक्र का फलित । १५. द्वादश भावगत शनि का फलित । १६. द्वादश भावगत राहु का फलित । १७. द्वादश भावगत केतु का फलित । १८. लग्नेश का भावगत फलित । १९. धनेश का भावगत फलित । २०. तृतीयेश का भावगत फलित । २१. चतुर्थेश का भावगत फलित । २२. पंचमेश का भावगत फलित । २३. षष्ठेश का भावगत फलित । २४. सप्तमेश का भावगत फलित । २५. अष्टमेश का भावगत फलित । २६. नमवेश का भावगत फलित । २७. दशमेश का भावगत फलित । २८. लाभेश का भाव गत फलित । २९. व्ययेश का भावगत फलित । ३०. भावगत पुण्य सहम का फलित । ३१. द्वादश वर्गी फलित । ३२. वृहत् पंचवर्गी फलित । ३३. दृष्टि का फलित । ३४. वर्षेश सूर्य का फलित । ३५. वर्षेश चंद्र का फलित । ३६. वर्षेश मंगल का फलित । ३७. वर्षेश बुध का फलित । ३८. वर्षेश गुरु का फलित। ३९. वर्षेश शुक्र का फलित । ४०. वर्षेश शनि का फलित । ४१. वर्षेश का भावगत फल । ४२. बलानुसार वर्षेश फल । ४३. अरिष्ट विचार । ४४. अरिष्ट भंग विचार । ४५. राजयोग विचार । ४६. राजयोग भंग विचार । ४७. सहमफलित विचार । ४८. दलीलद ग्रह का निर्णय । ४९. लग्नदलीलद का भावगत फलित । ५०. धनदलीलद का भावगत फलित । ५१. तृतीय भाव दलीलद का फलित । ५२. चतुर्थ भाव दलीलद का फलित । ५३. पंचम भावदलीलद का फलित । षष्ठ भाव दलीलद का फलित ५४. सप्तम भाव दलीलद का फलित ५५. अष्टम भाव दलीलद का फलित । ५६. नवम

भाव दर्लालद का फलित। ५७. दशम भाव दर्लालद का फलित। ५८. एकादशभाव दर्लालद का फलित। ५९. द्वादश भाव दर्लालद का फलित। ६०. सामान्यतः भाव विचार। ६१. प्रथम भाव गत ग्रह फलित। ६२. प्रथम भाव संबंधी योगों का फलित। ६३. प्रथम भाव संबंधी सहमों के फलित। ६५. धनभाव संबंधी पूर्वोक्त विचारों का फलित। ६६. तृतीय भाव संबंधी विचारों का फलित। ६७. चतुर्थभाव संबंधी विचारों का फलित। ६८. पंचमभाव संबंधी विचारों का फलित। ६९. षष्ठ भाव संबंधी विचारों का फलित। ७०. सप्तम भाव संबंधी विचारों का फलित। ७१. अष्टमभाव संबंधी विचारों का फलित। ७२. नवमभाव संबंधी विचारों का फलित। ७३. दशम भाव संबंधी विचारों का फलित। ७४. एकादश भाव संबंधी विचारों का फलित। ७५. द्वादश भाव संबंधी विचारों का फलित। ७६. दशा के विचार में विशेष फलित। ७७. सूर्यादिग्रहों की दशाओं का फलित। ७८. सूर्यादि ग्रहों की अन्तर्दशाओं का फलित। ७९. अंगदशा का फलित। ८०. मुद्दादशा में सूर्य आदि ग्रहों की दशाओं के फलित। ८१. मुद्दादशा की अन्तर्दशाओं में सूर्य आदि की अन्तर्दशाओं के फलित। ८२. वर्षेश दशा फलित। ८३. दशा फलित का विशेष विचार इत्यादि।

वर्ष का सामान्यतः शुभाशुभ-फलित विचार

वर्ष प्रवेशकालिक तिथि का फलित

नन्दाभद्राजयापूर्णाः शुभदास्तिथयो मताः।
द्वादश्याद्याश्चरिक्ता च न शुभा वर्षवेशने।।

यदि नंदा (१/६/११) तिथि, भद्रा तिथि (२/७/१२) जया तिथि (३/८/१३) या पूर्णातिथि (५/१०/१५) में वर्ष का प्रवेश होता है तो शुभ है। रिक्तातिथि (४/९/१४) में, प्रतिपदा में या द्वादशी तिथि में वर्ष का प्रवेश होना शुभ नहीं है।

वर्ष प्रवेश कालिक वार का फलित -

सोमो बुधो गुरुः शुक्रो वाराश्चत्वार उत्तमाः।
भौमार्कशनिवाराश्च वर्षे हानिभयप्रदाः।।

सोमवार, बुधवार, गुरुवार और शुक्रवार, इन चार वारों में वर्ष का प्रवेश होना शुभ है। रविवार, मंगलवार और शनिवार इन तीन वारों में वर्ष का प्रवेश होना शुभ नहीं है यानि हानि और भयप्रद है।

वर्ष प्रवेश कालिक नक्षत्र का फलित - अश्विनी मृगशीर्षं च हस्तः पुष्यः पुनर्वसुः। स्वातिश्च रेवती चैव वर्षवेशे शुभावहाः।। कृत्तिका रोहिणी चैव ज्येष्ठामूलाख्य तारकाः। श्रवणं चानुराधा च मध्यं पूर्वोत्तरात्रयम्।। भरणी च मघा चित्रा विशाखा शततारका। घनिष्ठा श्लेषिका प्रोक्ता वर्षवेशेऽतिनिन्दिताः।।

अश्विनी, मृगशिर, पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, स्वाति तथा रेवती, इन नक्षत्रों में वर्ष

प्रवेश होना शुभ है । कृत्तिका, रोहिणी, आर्द्रा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, पूर्वाभाद्रपदा तथा उत्तरा भाद्रपदा, इन नक्षत्रों में वर्ष का प्रवेश होना मध्यम है । भरणी, आश्लेषा, मघा, चित्रा, विशाखा, धनिष्ठा तथा शतभिषा, इन नक्षत्रों में वर्ष का प्रवेश होना शुभ नहीं है ।

वर्ष प्रवेश कालिक योग तथा करण फलित

विरुद्धयोगे विष्ट्यां च वर्षवेशो न शोभनः ।।

अशुभ योग में तो विष्टि करण (भद्रा) में वर्ष का प्रवेश अशुभ होता है ।

वर्ष के शुभ-अशुभ का अन्य विचार- वयो राशिं स्वनक्षत्रमेकीकृत्य त्रिधा लिखेत् । द्वित्रिचतुर्भिर्गुणितं रससप्ताष्टभाजितम् ।। यस्मिन् वर्षे त्रिशून्यं स्यात् तत्र मृत्युर्न संशयः । आद्यन्तशून्ये दुःखं स्यान् मध्यशून्ये दरिद्रता ।। सर्वाङ्के च सुखं भवेत् ।।

वर्तमान अवस्था की संख्या, जन्मनक्षत्र की संख्या तथा जन्म राशि की संख्या, इन तीन संख्याओं का योग (जोड़) करके तीन जगह रखना । पहिली जगह २ से गुणा करके ६ से भाग देना, शेष को उस स्थान में रखना । इसी प्रकार दूसरी जगह ३ से गुणा कर ७ से भाग देकर शेष को रखना । जब तीनों स्थानों में शून्य आते हैं तो उस वर्ष में मृत्यु या मृत्यु तुल्य कष्ट होता है । पहिली या तीसरी जगह शून्य आने से उस वर्ष में दुःख होता है । दूसरी जगह शून्य आने से उस वर्ष में आर्थिक संकट रहता है । तीनों जगह अंक आने से वर्ष में सुख प्राप्त होता है ।

कल्पित उदाहरण- वर्तमान अवस्था ६१ वर्ष, जन्मनक्षत्र उत्तराषाढ़ की संख्या २१। जन्मराशि धन की संख्या ९ । तीनों का ६१+२१+९=९१ योग हुआ । इसे तीन स्थानों में रखा क्रम से २,३,४ से गुणा किया । ९१×२ = १८२ । ९१×३ = २७३। ९१×४=३६४। फिर क्रम से ६,७,८ से भाग दिया । १८२÷६=२शेष । २७३÷७=० शेष । ३६४÷८=४ शेष । यहाँ द्वितीय स्थान में शून्य आया, जिसका फलित आर्थिक क्लेश का होना है ।

समुद्र चक्र के द्वारा वर्ष का शुभाशुभ विचार -

समुद्र चक्र का विवरण - चार सीधी रेखाएँ खींचनी और चार रेखाएँ आड़ी (तिरछी) खींचनी । जिनसे चारों ओर पाँच-पाँच कोष्ठक (कोठे) बनें । इसमें बीच के कोष्ठक समुद्र हैं, उनके दोनों ओर के दो-दो कोष्ठक तीर (किनारे) हैं । तीरों के पास के कोष्ठक पर्वत हैं । इस प्रकार चार समुद्र, आठ तीर और चार पर्वतों का समुद्र चक्र बनता है । अवस्था के पहिले वर्ष में कृत्तिका नक्षत्र से आरंभ कर तीन नक्षत्र समुद्र में लिखने । एक-एक नक्षत्र तीर पर और दो-दो नक्षत्र कोणों में यानी पर्वतों पर लिखने । जिस जगह अपना जन्मनक्षत्र आये उसी के अनुसार फलित जानना । पहिले समुद्र चक्र का स्वरूप प्रस्तुत किया जाता है ।

पर्वत पुन० पु०	तीर आर्द्रा	समुद्र मृ० कृ० रो०	तीर च०	पर्वत अश्वि० रे०
तीर आश्ले०	समुद्रचक्रम्			तीर उ०
समुद्र म० पू० उ०				समुद्र ध० श० पू०
तीर ह०				तीर श्र०
पर्वत चि० स्वा०	तीर वि०	समुद्र अ० ज्ये० मू०	तीर पु०	पर्वत उ० अभि०

अवस्था के दूसरे वर्ष में कृत्तिका नक्षत्र के स्थान में रोहिणी नक्षत्र लिखकर शेष नक्षत्र यथा क्रम लिखने । इस प्रकार अवस्था के अनुसार एक-एक नक्षत्र बढ़ा-बढ़ा कर लिखना । अट्ठारह वर्ष के वाद फिर आवृत्ति करनी । फिर सत्तावनवें वर्ष में, फिर चौरासी के वर्ष में आवृत्ति करनी ।

अन्यमत - वर्षप्रवेश काल में जो नक्षत्र हो उसे कृत्तिका के स्थान में रखकर फिर यथाक्रम शेष नक्षत्र समुद्र चक्र में लिखने जहाँ अपना जन्मनक्षत्र आये, उसके अनुसार फलित जानना । इस क्रम को विशेषता दी गयी है ।

नोट - दोनों ही क्रमों से विचार करना अपेक्षित है । दोनों क्रमों से शुभफल होने पर शुभ, एक से शुभ और एक से अशुभ होने पर मध्यम, तथा दोनों से अशुभ होने पर पूर्ण अशुभ है ।

फलित - दुःखं समुद्रे सुखमेव तीरे शैले श्रियं संलभते मनुष्यः । जन्मर्क्षकं चेद् भवतीह वर्षे तत्रैव युक्तं किल विष्णुतन्त्रे ।।

जिस व्यक्ति का जन्मनक्षत्र समुद्र चक्र में समुद्र के स्थान में आता है, उसे उस वर्ष में दुख प्राप्त होता है । तीर के स्थान में आने से सुख मिलता है तथा पर्वत के स्थान में जन्मनक्षत्र आने पर धनलाभ होता है ।

जगल्लग्न के द्वारा वर्ष का शुभाशुभ विचार - मेष संक्रान्ति के प्रवेश काल के घड़ी-पलों को इष्टकालके घड़ी-पल मानकर उनपर लग्नस्पष्ट की क्रिया से लग्न साधन कर जगल्लग्न कुण्डली बनानी ।

जन्मलग्नाद् वर्षलग्नाज्जगल्लग्नं यदा भवेत् ।
अष्टमे द्वादशे वापि स वर्षो न शुभावहः ।।

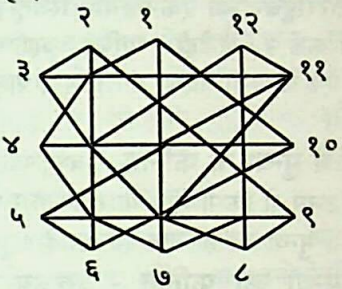
जिस वर्ष जिस व्यक्ति की जन्मलग्न या वर्ष लग्न से जगल्लग्न २,५,७,

९,१०,११ वें स्थान में होती है, वह वर्ष शुभ होता है । ६,८,१२ वें स्थान में जगल्लग्न होने से वर्ष अशुभ होता है । शेष स्थानों में होने से वर्ष मध्यम होता है ।

नोट -इसी प्रकार देश-नगर-ग्राम आदि की राशि से भी जगल्लग्न के द्वारा शुभाशुभफल विचार होता है ।

त्रिपताकी चक्र के द्वारा शुभाशुभ फल का विचार -

त्रिपताकी चक्र का विवरण - तीन रेखाएँ सीधी खींचनी और तीन रेखाएँ तिरछी खींचनी । रेखाओं के सिरे आपस में मिला देने । चारों ओर तीन-तीन पताकाएँ (झंडी) जैसे बन जाती हैं । इसी से इसका नाम त्रिपताकी चक्र है । त्रिपता की चक्र का स्वरूप प्रस्तुत किया जाता है ।



त्रिपताकी चक्र में १ अंक के स्थान में वर्ष लग्न की राशि लिखनी । फिर क्रम से सब राशियाँ लिखनी । वर्ष प्रवेश में अवस्था की संख्या में १ युक्त कर ९ से भाग देना। जो शेष बचे उतनी संख्या पर जन्मकालिक चंद्रमा की राशि से गिन कर उसी संख्या की राशि पर त्रिपताकी चक्र में चंद्रमा लिखना । फिर वर्ष प्रवेश की वर्तमान अवस्था की संख्या में १ युक्त कर ४ से भाग देकर शेष की संख्या पर सूर्य आदि ग्रहों की राशि से गिन कर जन्म कालिक ग्रह रखने । इस प्रकार त्रिपताकी चक्र तैयार हो जाता है । राहु और केतु को उल्टा गिनकर रखना ।

उदाहरण - वर्ष प्रवेश काल में वर्तमान अवस्था ६१ वर्ष १ वर्ष लग्न मीन१२। जन्म कालिक चंद्रराशि धन ९ । जन्मकालिक सूर्य राशि वृष २ । इत्यादि । त्रिपताकी चक्र में वर्ष लग्न मीन रखी । ६१ को ९ से भाग दिया, शेष ७ बचे । धन से ७ तक गिना मिथुनराशि आयी अत: त्रिपताकी चक्र में मिथुनराशि पर चंद्रमा को लिखा। वर्तमान अवस्था के वर्ष ६१ को ४ से भाग दिया १ शेष बचा । जन्मकालिक सूर्य की वृष राशि से १ तक गिनने पर वृष राशि ही आयी । अत: सूर्य आदि ग्रह, जन्मकालिक राशियों पर ही त्रिपताकी चक्र में लिखने ।

विचार का क्रम - त्रिपताकी चक्र के द्वारा अरिष्ट की विशेष विवेचना की जाती है । आमने-सामने जो ग्रह त्रिपताकी चक्र में पड़ते हैं । उन्हीं का परस्पर वेध माना जाता है। चंद्रमा पर वेध का विशेष विचार होता है ।

स्वर्भानुविद्धे हिमगौ तु कष्टं तापोऽर्कविद्धे रुगिनात्मजेन । महीजविद्धे तु शरीर-पीडा शुभैश्च विद्धे जयसौख्यलाभाः ।। शुभाशुभव्योमगवीर्यतोऽत्र फलं च वर्षस्य भवेन्नराणाम् ।।

फलित - त्रिपताकी चक्र में चंद्रमा पर राहु का वेध होने से उस वर्ष में व्यक्ति को कष्ट होता है । चंद्रमा को सूर्य के वेध से ज्वर पीड़ा होती है । शनि के वेध से रोग तथा मंगल के वेध से शरीर कष्ट होता है । शुभ ग्रहों के वेध से जय, सुख और लाभ होता है । ग्रहों के बल के अनुसार वेध का फल होता है ।

त्रिपताकी चक्र में पापग्रहों से युक्त चंद्रमा के होने पर भी उस वर्ष व्यक्ति को निःसंदेह कष्ट होता है ।

मन्दारराहुचन्द्रेज्या एकनाङ्यां स्थिता यदि ।
तदा कष्टं न सन्देहो भाषितं ब्रह्मयामले ।।

त्रिपताकी चक्र में एक जगह ही चंद्रमा, मंगल, गुरु, शनि और राहु होने से निःसन्देह कष्ट होता है ।

द्वादश भावों में मुन्था के फलित - वर्षकुण्डली में लग्न आदि द्वादश भाव या बारह स्थान होते हैं । उनमें से किसी भाव या स्थान में मुंथा बैठती है, तथा वह भाव के अनुसार फल देती है । मुन्था का ही नाम इन्तिहा है ।

लग्नभाव में मुन्था का फलित - शत्रुक्षयं मानसतुष्टिलाभं प्रतापवृद्धिं नृपतेः प्रसादम् । शरीरपुष्टिं विविधोद्यमांश्च ददाति सौख्यं मुथहा तनुस्था ।।

लग्नभाव में स्थित मुंथा, शत्रुका क्षय, मानसिकहर्ष, प्रताप की वृद्धि, राजा की प्रसन्नता, शरीर की पुष्टि, अनेक प्रकार के उद्योग तथा सौख्य करती है ।

धनभाव में मुन्था का फलित

उत्साहतोऽर्थागमनं यशश्च स्वबन्धुसन्मानृपयाश्रयश्च ।
मिष्ठान्नभोगो बलपुष्टिसौख्यं स्यादर्थभावे मुथहा धनस्था ।।

उद्योग के द्वारा धनलाभ, यश, स्वबन्धुओं से मान, राज का आश्रय, मिष्ठान्न भोजन, बल-पुष्टि और सौख्य होना, ये फल धन भाव में मुंथा के होने पर होते हैं ।

तृतीय भाव में मुन्था का फलित -

पराक्रमाद् वित्तयशः सुखानि सौन्दर्यसौख्यं द्विजदेवपूजा ।
सर्वोपकारस्तनुपुष्टिकान्ती नृपाश्रयश्चेन्मुथहा तृतीया ।।

उद्योग के द्वारा धन-यश सुख की प्राप्ति, शरीर में सौन्दर्य तथा सुख, देव-ब्राह्मण पूजा, सबका उपकार, शरीर में पुष्टि तथा कान्ति, राजा का आश्रय, ये फल मुंथा के तीसरे स्थान में होने पर होते हैं ।

चतुर्थभाव में मुंथा का फलित -

शरीरपीडा रिपुभीः स्ववर्गवैरं मनस्तापनिरुद्यमत्वम् ।
स्यान्मुन्थहायां सुखभावगायां जनापवादो भयवृद्धिदुःखम् ।।

मुंथा के चतुर्थ भाव में होने पर शरीरकष्ट, शत्रुभय, अपने वर्ग से वैर, मानसिक क्लेश, उद्योग की हानि, लोकापवाद, भयकी वृद्धि तथा दुख होता है ।

पंचम भाव में मुंथाका फलित -

यदीन्थिहा पञ्चमगाब्दवेदो सद्बुद्धिसौख्यात्मजवित्तलाभः ।
प्रतापवृद्धिर्विविधा विलासा देवद्विजार्चा नृपतेः प्रसादः ।।

वर्ष कुण्डली में मुंथा के पंचम भाव में होने पर, अच्छी बुद्धि, सौख्य, संतानसुख, धनलाभ, प्रताप की वृद्धि, अनेक प्रकार के सुख, देव-ब्राह्मण पूजा तथा राजा-की कृपा होती है ।

षष्ठभाव में मुंथा का फलित -

कृशत्वमङ्गेषु रिपूदयश्च भयं रुजस्तस्करतो नृपाद्वा ।
कार्यार्थनाशो मुथहारिगा चेद् दुर्बुद्धिवृद्धिः स्वकृतेऽनुतापः ।।

छठे स्थान में मुंथा के होने पर शत्रु की उत्पत्ति, रोग का या चोर का अथवा राजा का भय, काम में विगाड़, धन की हानि, दुर्बुद्धि की वृद्धि तथा अपने किये काम पर पछतावा होता है ।

सप्तमभाव में मुन्था का फलित -

कलत्रबन्धुव्यसनारिभीतिरुत्साहभङ्गो धनधर्मनाशः ।
द्यूनोपगा चेन्मुथहा च वर्षे रुजामनोमोहविरुद्धचेष्टा ।।

वर्ष में सप्तम स्थान में मुंथा के होने पर बंधु कष्ट, स्त्री को कष्ट, शत्रुभय, उत्साह भंग, धर्म में अरुचि, धनहानि, रोग, मानसिक क्लेश तथा विपरीत कार्य होते हैं ।

अष्टम भाव में मुंथा का फलित -

भयं रिपोस्तस्करतो विनाशो धर्मार्थयोर्दुर्व्यसनामयाश्च ।
मृत्युस्थिता चेन्मुथहा नराणां बलक्षयः स्याद् गमनं सुदूरे ।।

अष्टम स्थान में मुंथा के स्थित होने पर शत्रुभय, चौर-भय, धर्म में अरुचि, धन की हानि, दुर्व्यसन, रोग-दुर्बलता तथा दूर जाना होता है ।

नवम स्थान में मुंथा का फलित -

स्वामित्वमर्थोपगमो नृपेभ्यो धर्मोत्सवः पुत्रकलत्रसौक्ष्यम् ।
देवद्विजार्चा परमं यशश्च भाग्योदयो भाग्यगतेन्थिहायाम् ।।

राजपक्षसे लाभ, स्वामित्व (अधिकार), धर्म-संबंधी कार्य, स्त्री-पुत्र का सौख्य, देव-ब्राह्मण पूजा, यश तथा भाग्योदय, ये फल नवम स्थान की मुंथा के हैं ।

दशम भाव में मुन्था का फलित -

नृपप्रसादं स्वजनोपकारं सत्कर्मसिद्धिं द्विजदेवभक्तिम् ।
यशोऽभिवृद्धिं विविधार्थलाभं दत्तेश्वरस्था मुथहापदाप्तिम् ।।

दशम स्थान की मुंथा, राजा की प्रसन्नता, स्वजन का उपकार, सत्कर्म सिद्धि, देव-ब्राह्मण की भक्ति, यश की वृद्धि, अनेक प्रकार के लाभ तथा पद प्राप्त कराती है ।

एकादश भाव में मुंथा का फलित -

यदीन्थिहा लाभगतातिलाभः सौभाग्यनैरुज्यमनःप्रसादाः ।
भवन्ति राज्याश्रयतो धनाप्तिः सन्मित्रपुत्राभिमतापत्तयश्च ।।

लाभस्थान में मुंथा के होने पर अच्छा लाभ, सौभाग्य, आरोग्य, मन की प्रसन्नता, राजपक्षसे लाभ, मित्रसुख, पुत्रसुख तथा अभीष्ट की पूर्ति होती है ।

द्वादश भाव में मुंथा का फलित -

व्ययोऽधिको दुष्टजनैश्च सङ्गो रुजस्तनौ विक्रमतोऽप्यसिद्धिः ।
धर्मार्थहानिर्मुथहा तनुस्था यदा तदा सज्जनतोऽपि वैरम् ।।

द्वादश स्थान में मुंथा के होने पर खर्च की अधिकता, दुर्जन की संगति, शरीर में रोग, उद्योग में असफलता, धर्म में अरुचि, धन हानि तथा यदा-कदा विशिष्ट व्यक्ति से विरोध होता है ।

राशियों के अनुसार मुन्था के फलित -

५. सिंह राशि की मुंथा का फलित -

स्थानान्तरप्राप्तिगुणप्रकर्षं भूपालसङ्गाप्तसुखं सुराज्यम् ।
द्रव्यागमं सर्वसुखाभिवृद्धिं भास्वद्धसंस्था मुथहा करोति ।।

सिंह राशि की मुंथा, अन्य स्थान की प्राप्ति, गुण की उन्नति, राजा से तथा राजपक्ष से सुख, धन लाभ तथा समस्त मुखों को देती है ।

४. कर्क राशि की मुंथा का फलित -

धर्मप्रकर्षं यशसोऽभिवृद्धिं नैरुज्यसन्तोषमतिप्रवृद्धिम् ।
गोगेहकान्तातनयाभिवृद्धिं शशाङ्कगेहे मुथहा करोति ।।

कर्कराशि की मुंथा, धर्मकार्य, यशकी वृद्धि, आरोग्य, सन्तोष, उन्नति, पशु का सुख, स्त्री-पुत्र का सुख तथा घरका सुख करातीं है ।

१-८ मेष तथा वृश्चिक राशि की मुंथा का फलित -

पित्तं च यक्ष्मामयजातदुःखं रक्तप्रकोपं दृढशस्त्रघातम् ।
उच्चात् प्रपातं वसुधाप्रहारं करोति भौमालयगेन्थिहा चेत् ।।

मेष तथा वृश्चिक राशि की मुंथा, पित्त संबंधी रोग, जीर्णज्वर की संभावना, रुधिर का प्रकोप, किसी हथियार से चोट लगने की संभावना, ऊँचे से गिरने की संभावना तथा भूमि संबंधी हानि करती है ।

३-६ मिथुन तथा कन्या राशि की मुंथा का फलित -

कान्तामतिद्रव्यविलब्धिसौख्यं यशोऽभिवृद्धिं सुकृताभिवृद्धिम् ।
सिद्धिं समन्ताद् गृहजातसौख्यं करोति मुन्था शशिजालयस्था ।।

मिथुन तथा कन्या राशि की मुंथा, अच्छी बुद्धि, स्त्रीसुख, धनलाभ, सौख्य, यश की वृद्धि, धर्म की वृद्धि, कार्यों की सिद्धि तथा घरेलु सुख की वृद्धि करती है ।

९-१२ धन तथा मीन राशि की मुंथा का फलित -

कलत्रमित्रात्मजजातसौख्यं सुवर्णसद्रत्नभवं सुभोगम् ।
ख्यातिं धरण्यां बहुसाधुसङ्गं ददाति मुन्था सुरपूज्यभस्था ।।

धन तथा मीन राशि की मुंथा, मित्र-स्त्री-पुत्रसंबंधी सुख, सुर्वण-रत्न आदि का भोग, प्रसिद्धि तथा अनेक साधु महात्माओं का सत्संग कराती है ।

२-७ वृष तथा तुलाराशि की मुंथा का फलित -

पूर्वोक्त मिथुन तथा कन्या राशि के समान ही फलित है ।

१०-११ मकर तथा कुंभराशि की मुंथा का फलित -

वातोद्भवप्राप्तगदातिपीडां मानक्षयं पावकजं भयं च ।
धनस्य हानिं सकलक्षयं च मन्दालयस्था मुथहा करोति ।।

मकर-कुंभ राशि की मुंथा, वायुदोष से उत्पन्नपीड़ा, मानहानि, अग्निभय, धन की हानि तथा सभी बातों में विगाड़ करती है ।

सूर्यादि ग्रहों से युक्त मुंथा के फलित -

सूर्य से युक्त मुंथा का फलित -

विभवसौख्ययुतो नरपालकः सुकृतकृद् बहुवित्तसमुन्नतिः ।
नययुतो वियुतोऽरिगणैः सदा भवति हेलियुता मुथहा यदा ।।

सूर्य से युक्त मुंथा के होने पर व्यक्ति, सुख तथा ऐश्वर्य से युक्त, पुण्य कर्म करने वाला, धन की वृद्धि से युक्त, नीति युक्त तथा शत्रु रहित होता है ।

चंद्र से युक्त मुंथा का फलित -

सत्समागमयुतोऽधिकारवांश्चारुधीरुचिरधीसहायवान् ।
वैभवोद्भवसुखोऽविकारवानिन्दुना शरदि संयुतेन्थिहा ।।

वर्ष काल में मुन्था चंद्र से युक्त होने पर व्यक्ति को सत्संग, अधिकार, सुबुद्धि, अच्छे पुरुष की सहायता, ऐश्वर्य का सुख तथा स्वास्थ्य प्राप्त होता है ।

मंगल से युक्त मुन्था का फलित -

असृग्विकारं कुमतिप्रकाशनं यात्राप्रसिद्धिं विजयत्वहानिम् ।
स्वगेहसद्भोजनसौख्यहीनं मुन्था महीपुत्रयुता करोति ।।

वर्ष में मंगल से युक्त मुंथा, रुधिर का विकार, खोटी बुद्धि, यात्रा में असफलता, मुकदमे में पराजय तथा अपने घर पर भोजनसुख की हानि करती है ।

बुध से युक्त मुंथा का फलित -

धननिचयसमेतश्चारुमूर्तिः सुबुद्धिर्हितकृतजनयुक्तः सज्जनख्यातमातः ।
सुकृतरसकथानां कामिनीनां विनोदी शशधरतनयाढ्या संविधत्तेऽत्र मुन्था ।।

मुंथा के बुध से युक्त होने पर व्यक्ति, धन से युक्त, स्वस्थ, अच्छी बुद्धि से युक्त, हितैषी जनों से युक्त, सज्जनों से संमानित तथा स्त्री सौख्य से युक्त होता है ।

गुरु से युक्त मुंथा का फलित -

कान्ताविलासरमणीयसुखैकचित्तो भूनाथमानविभुता तनयाप्तसौख्यम् ।
धर्मात्मभिः कृतरतिर्विरतिर्विधर्मे गीर्वाणनाथगुरुणा सहितेन्थिहा चेत् ।।

मुंथा के गुरु से युक्त होने पर व्यक्ति को स्त्रीसौख्य, राजा से मान तथा लाभ, संतान सुख, सत्संग तथा धर्म में रुचि होती है ।

शुक्र से युक्त मुंथा का फलित - गुरु से युक्त मुंथा के समान ही फलित है।

शनि से युक्त मुंथा का फलित -

सदा वायुपीडां कलिप्राप्तिहानिं प्रभुत्वाधिकावाप्तसम्पद्विनाशम् ।
हतातिथ्यतामुख्यताहानिमब्दे युता मुन्थहा सूर्यपुत्रेण दत्ते ।।

मुंथा के शनि से युक्त होने पर व्यक्ति को वायुरोग, क्लेश, हानि, प्रभुता की हानि, संपत्ति की हानि, अधिकार की हानि तथा अभ्यागत (मेहमान) सत्कार की हानि होती है ।

कई ग्रहों से युक्त मुंथा का फलित -

द्वयादिखेगामियुक्ता यदा मुन्थहा तत्फलं द्वन्द्वमत्र स्मृतं सूरिभिः ।
तारतम्याद् बलस्य प्रयोज्यं फलं शत्रुयोगात्र सन्मित्रयुक् तत्परम् ।।

दो आदि ग्रहों से मुन्था के युक्त होने पर दो आदि ग्रहों से मिश्रित फल होता है । ग्रह के बल के तारतम्य (न्यूनाधिक या कमी-वेशी) से फल होता है। जिन ग्रहों से मुंथा युक्त है, यदि वे ग्रह परस्पर शत्रु हैं तो पूरा फल नहीं होगा और यदि वे ग्रह परस्पर मित्र हैं तो पूरा फल होगा । इस प्रकार औसत लगाकर फलित जानना उचित है ।

मुंथा पर ग्रहों की दृष्टियों के फलित -

मुंथा पर सूर्य की दृष्टि का फलित-

राज्यस्य सौख्यं नृपसङ्गमाप्तिं गुणोन्नतित्वं बहुमानसौख्यम् ।
स्थानान्तरप्राप्तिसुखं विचित्रं सूर्येण दृष्टा मुथहा विधत्ते ।।

राजपक्ष से सुख, राजपक्ष से लाभ, गुण की वृद्धि, सन्मान, सुख, अन्यस्थान की प्राप्ति से विचित्र सुख, ये फल मुन्था के सूर्य से देखे जाने पर होते हैं ।

मुन्था का चंद्रकी दृष्टि का फलित -

यशोऽभिवृद्धिं धनधर्मवृद्धिं सन्तोषनैरुज्यसुबुद्धिवृद्धिम् ।
वैरं विधर्मैः सुजनैः सुहृत्त्वं चन्द्रेण दृष्टा मुथहा करोति ।।

मुंथा पर चंद्र की दृष्टि होने से, यश, धन तथा धर्म की वृद्धि होती है । संतोष, स्वास्थ्य और बुद्धि की वृद्धि होती है । दृष्टों से विरोध तथा सज्जनों से मित्रता होती है।

मुंथा पर मंगल की दृष्टि का फलित -

तनोति पित्तोष्णरुजं शरीरे रक्तप्रकोपं दृढशस्त्रघातम् ।
पराक्रमेणोन्नतमार्यशत्रुं कुजेन दृष्टा मुथहा करोति ।।

मुन्था पर मंगल की दृष्टि होने से शरीर में गर्मी तथा पित्त संबंधी रोग,

रुधिरविकार, शस्त्रघात का भय, अपने उद्योग से उन्नति तथा अच्छे लोगों से विरोध होता है।

मुंथा पर बुध की दृष्टि का फलित -

नानाबलात् सौख्यमतीवलाभपतीववृद्धिं धनकीर्तिपुष्टिम् ।
धर्माप्तसौख्यं तनयाप्तसौख्यं बुधेन दृष्टा मुथहा करोति ।।

मुंथा पर बुध की दृष्टि होने से अनेक प्रकार का सुख, लाभ-उन्नति, धन तथा कीर्ति और पुष्टि, धर्म की प्राप्ति तथा संतान सुख की प्राप्ति होती है।

मुंथा पर गुरु की दृष्टि का फलित -

कलत्रमित्रात्मजसौख्यमुच्चैः सुवर्णनानाम्बररत्नसौख्यम् ।
महत्पदाप्तिं प्रभुताधिकत्वं जीवेन दृष्टा मुथहा करोति ।।

मुंथा पर गुरु की दृष्टि होने से मित्र-स्त्री-संतान संबंधी सुख की प्राप्ति, सुवर्ण-रत्न तथा अनेक प्रकार के वस्त्रों का सुख, उच्चपद की प्राप्ति, ऐश्वर्य तथा अधिकार की प्राप्ति होती है।

मुंथा पर शुक्र की दृष्टि का फलित - पूर्वोक्त बुध की दृष्टि का फलित है।

मुंथा पर शनि की दृष्टि का फलित -

नानाविधार्थक्षयमग्निभीतिं व्ययं महद्वातभवामयार्तिम् ।
स्वकीयवर्गातिरिपुत्वयोगं मन्देन दृष्टा मुथहा करोति ।।

मुंथा पर शनि की दृष्टि होने से अनेक प्रकार से धनहानि, अग्नि का भय, वायु के विशेष प्रकोप से रोगजनितपीड़ा तथा अपने वर्ग से विरोध होता है।

मुंथा के फल का विशेष विचार -

क्रूरान्विता क्रूरभागतथेन्था तद् धातुजं भावफलस्य नाशम् ।
पीडां शरीरेऽपि करोति नित्यं शुभैर्बलिष्ठैर्न युतेक्षिता चेत् ।।

यदि मुन्था क्रूरग्रह से युक्त है या क्रूर ग्रह की राशि में है और उस पर बलवान् शुभग्रहों की दृष्टि नहीं है या वह शुभग्रह से युक्त नहीं है तो शरीर में पीड़ा करती है और राशि स्वामी ग्रह की धातुसंबंधी कष्ट करती है एवं उस भाव से संबंधित फल की हानि करती है।

जन्माब्दाङ्गतेन्थिहा भवति यद्भावस्थिता तत्फलं षष्टाष्टान्त्यविवर्जमत्र तु मृतिं रोगद्विषात् पीडनम् । कुर्यात् स्वामिबला विहाय त्रितयं दुष्टं शुभानामिदं ज्ञात्वा राशिनभोगधातुवशतो ब्रूयाच्छुभं वाशुभम् ।।

जन्मकुण्डली और वर्ष कुण्डली में जिस भाव में मुंथा स्थित होती है, उसी भाव का फल करती है। ६-८-१२ स्थान में स्थित मुंथा, रोगजनित तथा शत्रुजनित पीड़ा करती है। मुंथा ६-८-१२ में स्थान में न हो उसकी राशि की स्वामी बलवान् हो तो शुभफल करती है। यह जानकर मुंथा की राशि और ग्रह के अनुसार ही शुभ या

अशुभ फल का निश्चय करना।

जन्माङ्गादशुभर्क्षगा शुभयुता दृष्टा बलाढ्याब्दके
प्रोक्ता प्रोक्तफलार्धदा त्वशुभगा रोगार्तिभीतिप्रदा ।
तुर्ये पापयुतेक्षिता तु पितरौ सम्पीडयेन् मुन्थहा
ह्येवं चान्यमिहेन्थिहा फलमिदं जन्माब्दभावोद्भवम् ।।

जन्म कुण्डली और वर्ष कुण्डली, दोनों के आधार पर ही मुंथा के फल का विचार होता है।

विचार का क्रम - जिस वर्ष जन्मकुण्डली में मुन्था क्रूर ग्रह की राशि में है किन्तु यदि उसी वर्ष की वर्ष कुण्डली में मुंथा, बलिष्ठ है, शुभ ग्रह से युक्त और दृष्ट है तो मुंथा का जो फल कहा गया है, उससे आधा फल देती है। जन्मकुण्डली और वर्ष कुण्डली में क्रूर राशि मुन्था होने से रोग, विपत्ति और भय की प्राप्ति होती है। चौथे स्थान में की मुंथा पापग्रह से युक्त और दृष्ट होने पर माता-पिता के शरीर में पीड़ा करती है। इस प्रकार से तथा बुद्धि द्वारा अन्य प्रकार से भी जन्मकुण्डली की एवं वर्ष की कुण्डली की मुंथा के फलित का निर्णय करना उचित है।

भावों की स्थिति के अनुसार मुंथेश के फलित -

मुंथेश का विवरण - जन्मकुण्डली या वर्ष कुण्डली में मुंथा जिस राशि की होती है, उस राशि का स्वामी जो ग्रह होता है, उसे मुन्थेश कहते हैं।

लग्न में स्थित मुंथेश का फल -

नाशो रिपूणां मनसः प्रसादः प्रतापबृद्धिर्नृपतेः प्रसादः ।
नानोद्यमादाप्तसुखाङ्गपुष्टिर्मुन्थाधिपे मूर्तिगते नराणाम् ।।

लग्न में मुंथेश के होने पर शत्रु परास्त, मन की प्रसन्नता, प्रताप की वृद्धि, राजपक्ष से प्रसन्नता, अनेक उद्योगों के द्वारा सुखप्राप्ति तथा देह की पुष्टि होती है।

द्वितीय भाव में स्थित मुंथेश का फलित -

शरीरपुष्टिर्बहुलोद्यमेन धनागमो बन्धुसमाश्रयश्च ।
मिष्टान्नसौख्यं यशसः प्रवृद्धिर्धने नराणां मुथहा प्रभुश्चेत् ।।

द्वितीय भाव में मुंथेश के होने पर शरीर में स्वस्थता, अनेक उद्योगों के द्वारा धन आगम, बंधुओं से मेल, मिष्ठान्न भोजन तथा कीर्ति की वृद्धि होती है।

तृतीय भाव में मुंथेश का फलित -

देवद्विजार्चा सहजादिसौख्यं पराक्रमेणार्थयशोऽभिवृद्धिः ।
नृपाश्रयाङ्गोपचयः सुकान्तिः सर्वोपकारः सहजेन्थिहेशे ।।

देव-ब्राह्मण सत्कार, बन्धु आदि का सुख, उद्योग के द्वारा धन लाभ, कीर्ति, राजपक्ष का आश्रय, शरीर सुख, कान्ति तथा सबका उपकार होता है।

चतुर्थ भाव में मुंथेश का फलित -

गृहस्य यानस्य सुबान्धवस्य सौख्यानि राजाश्रयजातसौख्यम् ।
धनागमोऽर्थव्यवहारयोगान्मुन्थाधिपो वेश्मकृतास्पदश्चेत् ।।

चतुर्थ भाव में मुंथेश के होने पर घर-सवारी तथा बंधुओं का सुख, राजपक्ष से प्रसन्नता तथा व्यापार में लाभ होता है ।

पंचमभाव में मुंथेश का फल -

सद्बुद्धिमत्त्वं सुतजातसौख्यं प्रतापवृद्धिर्बहुसद्विलासः ।
देवद्विजार्चाविनिपप्रसादो मुन्थेश्वरे सूनुगृहे नराणाम् ।।

पंचम भाव में मुंथेश के होने पर अच्छी बुद्धि, सन्तान-संबंधी सुख, उद्योग की वृद्धि, अनेक प्रकार के विलास, देव ब्राह्मण का सत्कार तथा राजपक्ष से प्रसन्नता होती है।

षष्ठ भाव में मुंथेश का फल -

रिपूदयः कार्श्ययुतं शरीरं भयं नृपालाद् गदतश्च चौरात् ।
कार्यार्थनाशः कुमतिप्रवृद्धिर्भवेन्नराणां मुथहेश्वरे च ।।

षष्ठ भाव में मुंथेश के होने पर शत्रु की उत्पत्ति, शरीर में कृशता, राजा-रोग तथा चोर से भय, धन का व्यय, कार्य की हानि तथा खोटी बुद्धि होती है ।

सप्तम भाव की मुंथेश का फल -

कलत्रसौख्यं व्यसनारिनाशः स्वोत्साहयोगाद् धनधर्मवृद्धिः ।
नैरुज्यता मानसमत्वसौख्यं स्यान्नायके द्यूनगतेन्थिहायाः ।।

सप्तम भाव में मुंथेश के होने पर स्त्रीसंबंध सुख, दुःख-की हानि, शत्रु परास्त, अपने उद्योग से धन लाभ, धर्म-संबंधी कार्य, आरोग्य तथा मानसिक प्रसन्नता होती है ।

अष्टम भाव में मुंथेश का फल -

सुदूरयानं नृपचौरभीतिरर्थव्ययो दुर्व्यसनं गदश्च ।
बलक्षयो दद्रुविकारता च मृत्यूपगे स्वामिनि मुन्थहायाः ।।

अष्टम स्थान में मुंथेश के होने पर परदेश गमन, राजा से तथा चोर से भय, धन का व्यय, विपत्ति, रोग, दुर्बलता तथा दाद आदि चर्म विकार होता है ।

नवम भाव में मुंथेश का फल -

भूपालतोऽर्थागमधर्मवृद्धिः स्वामित्वसन्तानकलत्रसौख्यम् ।
देवार्चनं भाग्ययशोऽभिवृद्धिर्मुन्थाधिपे भाग्यगते नराणाम् ।।

नवम स्थान में मुंथेश के होने पर राजपक्ष से लाभ,धर्मकार्य, अधिकार, स्त्रीसंतान सुख, देव पूजा, भाग्य तथा यश की वृद्धि होती है ।

दशम भाव में मुंथेश का फल -

यशोऽभिवृद्धिर्द्विजदेवभक्तिर्नृपाप्तसौख्यं स्वजनोपकारः ।
देवद्विजार्चा शुभकर्मसिद्धिः मुन्थाधिपे कर्मणि वर्तमाने ।।

मुंथेश के दशम स्थान में होने पर यश की वृद्धि, देव ब्राह्मण की भक्ति, राजपक्ष

से सौख्य, स्वजनों का उपकार, देव-ब्राह्मण सत्कार तथा शुभकार्य की सिद्धि होती है।

एकादशभाव में मुंथेश का फल -

विलासिता भाग्यचयो ह्यरोगो मनःप्रसादः सुतमित्रतोऽर्थः ।
नृपाश्रयाद्वा सकलं शुभं स्यान्मुन्थाधिपे लाभगते नरस्य ।।

मुंथेश के लाभ स्थान में होने पर आनन्द का उपभोग, भाग्य की वृद्धि, आरोग्य, मानसिक हर्ष, मित्र तथा संतान संबंधी लाभ तथा राजपक्षे से शुभ होता है।

द्वादश भाव में मुंथेश का फल -

व्ययोऽधिको विक्रमतोऽप्यसिद्धी रोगास्तनौ दुष्टजनैश्च सङ्गः ।
स्वलोकवैरं सुकृतार्थहानिर्व्ययस्थिते स्वामिनि मुन्थहायाः ।।

मुंथेश के द्वादश भाव में होने पर अधिक व्यय, उद्योग करने पर भी कार्य में असफलता, शरीर में रोग, दुष्टों की संगति, स्वजनों से विरोध, धर्म में अरुचि तथा धन की हानि होती है ।

मुंथेश का तथा मुंथा का विशेष फलित -

मुन्थाधिपे मित्रशुभग्रहेण समागते मित्रशुभप्रदृष्टे ।
भूपान्महागौरवसिद्धिरारात् गमोऽतिसीमः प्रविवादसिद्धिः ।।

मुंथेश, मित्रग्रह से या शुभग्रह से युक्त हो अथवा मित्रग्रह से या शुभ ग्रह से दृष्ट (देखा गया) हो तो राजपक्ष से मान तथा कार्य सिद्धि होती है, यात्रा तथा मुकदमे में सफलता होती है ।

वेदाष्टमेशेन भवेत् समेतो मुन्थाधिपो वा युतदृष्टिदृष्टः ।
न स्याच्छुभा यात्रारिपोर्भयं स्याद् रोगस्य वा सर्वविशेषहानिः ।।

वर्षकुण्डली में मुंथेश, चतुर्थस्थान के और अष्टमस्थान के स्वामियों से युक्त हो अथवा दृष्ट हो तो यह शुभयोग नहीं है । ऐसा होने पर शत्रु का या रोग का भय होता है । सभी बातों की विशेषता से हानि होती है ।

षडष्टरिष्फान्यागृहे समेतो मुन्थाधिपश्चेत्तनुनाथकेन ।
तदा शरीरे सुखमुत्तमं स्याद् धनागमः साधुसमागमश्च ।।

मुंथेश त्रिकस्थान (६-८-१२) के अतिरिक्त किसी अन्यस्थान में वर्ष लग्नेश के साथ होने पर शरीर में आरोग्यता, धनलाभ तथा अच्छे पुरुषों से संपर्क होता है ।

तुर्याष्टषष्ठान्त्यगतोऽथ वक्री वास्तङ्गतेनाधिपतिर्दशायाम् ।
स्वधातुजं रोगमसौम्यदृष्टो युक्तो विशेषण करोति पुंसाम् ।।

यदि मुंथेश, चौथे-छठे या आठवें स्थान में हो अथवा वक्री या अस्त हो तथा पापग्रह से दृष्ट हो तो अपनी दशा में अपनी धातु से संबधित रोग करता है और पाप ग्रह से युक्त होने पर तो विशेष रूप से करता है ।

षष्ठाष्टरिष्फगतवक्रगतोऽस्तगेन्थानाथः शुभायुतिविलोकनको न भव्यः।
रन्ध्रेशवीक्षितयुता व्ययगेन्थिहा कुर्याच्च मृत्युसमतां द्वितये तु मृत्युः ।।

मुंथेश त्रिकस्थान में स्थित हो, शुभग्रह से न तो युक्त हो और न दृष्ट हो तो वह

शुभ नहीं है । अष्टमेश से युक्त या दृष्ट मुंथा व्ययस्थान में हो । इन दो योगों में से कोई एक योग के होने पर मृत्यु तुल्य कष्ट होता है और दोनों योगों के होने पर तो मृत्यु होती है ।

प्रसूतिलग्नाद्यदि षष्टरन्ध्रव्ययाम्बुजायोपगता च मुन्था ।
वर्षाङ्गतोऽप्यत्र गता तु हन्यात् तद्भावजं क्रूरयुतेक्षितापि ।।

जन्मलग्न से चौथे, छठे, सातवें, आठवें या बारहवें स्थान में मुंथा हो तथा वर्ष लग्न से भी उक्त स्थान में मुंथा हो तथा वह क्रूरग्रह से युक्त या दृष्ट हो तो उस स्थान के फल को बिगाड़ देती है ।

स्याज्जन्मलग्नादिभगा तु मुन्था शुभाशुभं तत्र फलं तदीयम् ।
प्रभोर्बलेनापि बलाबलत्वं तस्या विचार्यं जनुरब्दकाले ।।

जन्मकुण्डली में अवस्था के वर्ष के अनुसार जिस भाव में मुंथा आती है, उस भाव के अनुसार शुभ-अशुभ फल देती है । मुंथेश के अनुसार उसके बल का तथा दुर्बलता का विचार करना । जन्म और वर्ष काल की मुंथा के विचार से ही शुभ-अशुभ फल का विचार होता है ।

यास्मिन् राशौ जनुषि सविता वर्षकालेऽपि तस्मिन्
मुन्था दृष्टा युताथ रविणा राजमानार्थदात्री ।
रोगघ्नी च स्थितिपदकरीत्येवमिन्द्वीक्षितायुक्
कान्तिं कीर्तिं निजजननीसौख्य-मिष्टं ददाति ।।
तद्वद्भौमास्पदगतयुतालोकितासृग्विकारं
चौराग्निद्विट्प्रहरणभयं चन्द्रदृष्ट्या विशेषात् ।
एवं ज्ञेक्षायुगतिविमलां बुद्धिमिज्येक्षिता वा
कुर्यात् क्रूरान्वितक्षितिसुते बुद्धिनाशं विवादम् ।।
आमन्दे चामरगुरुयुता वीक्षिता पापमर्थं
शुक्रेक्षायुग् युवतिजनसुखं राज्यलाभादि दद्यात् ।
मन्दाक्रान्तेक्षितविषयगता श्लेष्मजङ्घादिपीडां
कुर्याच्छीतज्वरभयमिलापुत्रदृष्ट्यातिदुष्टा ।।

जन्मकालमें सूर्य जिस राशि का हो उसी राशिका वर्ष में होकर मुन्था के पास बैठा हो या मुंथा को देखता हो तो मुंथा उसवर्ष में धन का लाभ तथा राजपक्षसे मान कराती है एवं रोग का नाश करती है और अधिकार प्राप्त कराती है । जन्मकाल में चंद्रमा जिस राशि का हो, उसी राशि का वर्ष में होकर मुंथा के पास बैठा हो या मुंथा को देखता हो तो उस वर्ष में कान्ति, कीर्ति, माता-पिता को सुख, तथा मनोरथ की पूर्ति होती है। जन्मकाल में मंगल जिसराशि का हो, उसी राशि का वर्ष में होकर मुंथा के पास बैठा हो या मुंथा को देखता हो तो शरीर में रुधिर विकार, चोर का भय, अग्नि लगने का भय, शत्रुका भय तथा चोट लगने का भय होता है । यदि पूर्वोक्त मुंथा पर चंद्र की दृष्टि भी होगी तो उक्त फल विशेषता के साथ होता है । जन्मकाल में जिस राशि का बुध या गुरु

हो, उसी राशि का बुध या गुरु वर्षकाल में हो, इस प्रकार के बुध या गुरु से युक्त अथवा दृष्ट मुंथा उस वर्ष में व्यक्ति को विमल बुद्धि प्रदान करती है। यदि उक्त प्रकार की मुंथा, किसी क्रूरग्रह से अथवा मंगल से युक्त या दृष्ट होती है तो व्यक्ति की बुद्धि का नाश करती है तथा विवाद कराती है। इसी प्रकार शनि के साथ गुरु से युक्त या दृष्ट मुंथा, पापकर्म कराती है। जन्मकाल में शुक्र जिस राशि का हो, वर्ष में उसी राशि के शुक्र से मुंथा युक्त या दृष्ट होती है तो स्त्री संबंधी सुख तथा राजपक्ष से लाभ आदि कराती है। जन्मकाल में जिस राशि का शनि हो, उसी राशि का वर्ष में शनि हो, यदि उससे मुंथा युक्त या दृष्ट है तो कफका प्रकोप, जांघ आदि में कष्ट तथा शीतज्वर का भय होता है। यदि उक्त प्रकार की मुंथा पर मंगल की दृष्टि होती है तो फल विशेष अशुभ है।

ये जन्माङ्गलवास्त एव मुथहा भागास्त्वकैष्या लवा
राहोर्वक्त्रमिहोपगा यदि शुभा मुन्थेज्यशुक्रान्विता।
दृष्टा वा सुतवित्तभूपमहिमानन्दाददिदाथोऽशुभा
भुक्तांशोपगता सुतार्थकृदरिभी दात्रीभृशं क्रूरयुक्।।

सूर्य के एक अंश के भोगने में मुंथा पाँचकला भोगती है अर्थात् मुंथा की प्रतिदिन की गति (चाल) ५ कला है। जन्मलग्न की राशि-अंश-कला-विकला में मुंथा की राशि-अंश-कला-विकला, समानता रखती है। एक-एक वर्ष आगे को जन्म लग्न से आगे-आगे एक-एक राशि बदलती चली जाती है। इसी क्रम से आवृत्तियाँ भी होती रहती हैं।

नोट-

राहु के मुख और पुच्छ (पूँछ) का निर्णय-

वर्षकालिक राहु के स्पष्ट में जितने अंश व्यतीत हुए हैं वे राहु की पुच्छ या पीठ हैं। जितने अंश भोगने के लिए शेष रह गये हैं वे राहु का मुख हैं। राहु से सातवीं राशि पर केतु होता है। आचार्य वामन का सिद्धान्त है, राहु की राशि से सारी सातवीं राशि पुच्छ है। भद्रा का राहु के मुख में होना शुभदायक है और पुच्छ होना अशुभ है।

यदि मुंथा राहु के मुख में हो तथा गुरु और शुक्र से युक्त या दृष्ट हो तो आनंद, धन लाभ, संतान संबंधी सुख तथा राजपक्ष से मान कराती है। यदि मुंथा राहु की पुच्छ में हो तथा क्रूरग्रह से युक्त या दृष्ट हो तो धन-संतान संबंधी हानि तथा शत्रु भय कराती है।

पुण्य सहम का विवरण-

वर्षे जन्मनि सर्वेषां पुण्यमादौ विचारयेत्।
पुण्ययुक्ते नरे सौख्यं पुण्यहीने सुखं न हि।।

सबसे प्रथम सभी के जन्म तथा वर्ष में पुण्य सहम का विचार करना अपेक्षित है। पुण्य सहम शुभ होने पर मनुष्य को सौख्य होता है तथा पुण्य सहम के अशुभ होने पर सौख्य नहीं होता।

पुण्य सहम की राशि वर्ष कुण्डली में जिस भाव में आती है उसी के अनुसार फलित होता है।

प्रथम भाव (लग्न) में पुण्य सहम का फल -

पुण्ये तनुस्थे तनुपुष्टिकान्तिविवर्धनं शौर्यपराक्रमौ च ।।

लग्नभाव में पुण्य सहम होने पर शरीर पुष्टि और कान्ति की वृद्धि तथा शौर्य और पराक्रम होता है ।

द्वितीय भाव में स्थित पुण्य सहम का फल -

धनस्थितं वाग्विभवैः समस्तैर्धनं ददाति प्रचुरं यशश्च ।।

द्वितीय स्थान में पुण्य सहम, वाणी के व्यवहारों द्वारा धनलाभ कराता है तथा अधिक यश दिलाता है ।

तृतीय भाव में स्थित पुण्य सहम का फल -

तृतीये पुण्यसहमे भ्रातृसौख्यं पराक्रमः ।
वित्तं धनानुमानेन चोत्तमं मध्यमाधमम् ।।

पुण्यसहम तृतीय स्थान में होने पर भ्रातृ संबंधी सुख, पराक्रम तथा व्यवसाय में लगाये गये धन के अनुरूप ही धन का लाभ होता है ।

चतुर्थभाव में पुण्य सहम का फल -

तुर्ये पुण्यस्य सहमे शुभे प्रसादनिर्मितिः ।
येन येनेत्थशाली स्यात् पतिस्तस्य सुखं बहु ।।

चतुर्थ स्थान में पुण्य सहम शुभराशि का होने पर भवन का निर्माण कराता है। जिस भाव के पति से इत्थशाल करता है, उस भाव का बहुत सुख कराता है ।

पंचमभाव के पुण्य सहम का फल -

पुण्ये शुभे पञ्चमगे धर्मशास्त्रानुयायिता ।
पठनं पाठनं मध्ये त्वधमे निष्फलं विदुः ।।

पंचम स्थान में शुभ होकर पुण्य सहम होने पर व्यक्ति, धर्मशास्त्र की मर्यादा का पालन करता है । मध्यम पुण्य सहम होने पर वर्ष में पढना-पढाना होता है । पंचम स्थान में अशुभ पुण्य सहम होने पर विद्या संबंधी असफलता होती है ।

षष्ठ स्थान में पुण्य सहम का फल -

षष्ठे पुण्याख्यसहमं धर्मभाग्ययशोहरम् ।
शुभस्वामीक्षितयुतं प्रान्ते किञ्चित् सुखप्रदम् ।।

षष्ठस्थान में पुण्य सहम होने से धर्म, भाग्य तथा यश की हानि होती है । यदि षष्ठ स्थान में पुण्य सहम अपने स्वामी से या शुभग्रह से युक्त अथवा दृष्ट होता है तो अपनी राशि के स्वामी की दशा के अंतिम भाग में कुछ सुख देता है ।

सप्तम स्थान में पुण्य सहम का फल -

जायास्थे पुण्यसहमे भार्या पुण्यविवर्द्धनी ।
अतीवगन्धसौख्यानि जयसम्पद्विवर्धनम् ।।

सप्तम स्थान में पुण्य सहम के होने पर पत्नी पुण्यकार्य करती है । सुगधित

द्रव्यों का उपयोग, जय, लाभ तथा संपत्ति की वृद्धि होती है ।

अष्टम स्थान में पुण्य सहम का फल -

रन्ध्रस्थे पुण्यसहमे धर्मभाग्ययशःक्षयः ।
तत्र शुभे मृतधनप्राप्तिः पित्रोर्धनादिकम् ।।

अष्टम भाव में पुण्य सहम के होने पर धर्म, भाग्य और यश की हानि होती है। शुभग्रह से युक्त या दृष्ट पुण्य सहम के होने पर उस वर्ष में व्यक्ति को किसी मरे मनुष्य की अथवा माता-पिता के धन की प्राप्ति होती है ।

नवम स्थान में पुण्य सहम का फल -

भाग्यस्थे पुण्यसहमे भाग्यवृद्धिर्द्विजार्चनम् ।
भाग्यपुण्यसहमयोरित्थशाले विशेषतः ।।

नवम भाव में पुण्यसहम के होने पर देव-द्विज का सत्कार आदि धर्म कार्य तथा भाग्य की वृद्धि होती है । यदि भाग्येश का तथा पुण्य सहम के स्वामी का इत्थशाल होता है तो उक्त फल विशेष रूपे से होता है ।

दशम भाव में पुण्य सहम का फल -

पुण्यं कर्मगतं यस्य कर्मतस्तु सुशोभनम् ।
तत्स्वामिकर्मलग्नेशयोगे राज्यं हि सत्तमम् ।।

वर्ष में जिस व्यक्ति का पुण्य सहम दशम स्थान में होता है, उसे उद्योग के द्वारा शुभफल की प्राप्ति होती है । दशमेश के योग से पुण्य सहम राजपक्ष से उत्तम लाभ कराता है ।

एकादश स्थान में पुण्य सहम का फल -

लाभगे पुण्यसहमे लाभकीर्तिर्विवर्धनम् ।
पितृवित्तादिसौख्यं स्याद् रविदृष्टे विशेषतः ।।

एकादश भाव में पुण्य सहम के होने पर लाभ और कीर्ति की वृद्धि तथा पिता के धन आदि का सौख्य होता है । पुण्य सहम पर सूर्य की दृष्टि होने से उक्त फल विशेषता से होती है ।

द्वादश भाव में पुण्यसहम का फल -

रिष्फस्थं पुण्यसहमं पुत्रधर्मयशोहरम् ।
पापयुक् शुभदृष्टं चेदशुभं प्राक् ततः शुभम् ।।

द्वादश स्थान में पुण्य सहम के होने पर धर्म-यश तथा सन्तान संबंधी हानि होती है । यदि पापग्रह से युक्त पुण्य सहम पर शुभग्रह की दृष्टि होती है तो पहिले अशुभ फल होता है फिर बाद में शुभफल होता है ।

पुण्य सहम का अन्य फलित-

यत्राब्दे पुण्यसहमं शुभं सोऽब्दः शुभावहः ।
अनिष्टेऽस्मिन् शुभं नेति पुण्य मादौ विचारयेत् ।।

सबले पुण्यसहमे धर्मवृद्धिर्धनागमः ।
शुभस्वामीक्षितयुते व्यत्यये व्यत्ययं विदुः ।।
सवीर्ये पुण्यसहमे द्रव्योपायस्तु नान्यथा ।
अन्यान्यपि सवीर्याणि स्वनामफलवन्ति हि ।।

जिस वर्ष में पुण्य सहम शुभ होता है, वह वर्ष व्यक्ति के लिए शुभदायक होता है। पुण्यसहम अशुभ होने पर वर्ष शुभ नहीं होता। अतः सबसे पहिले पुण्य सहम का विचार करना अनिवार्य है। पुण्यसहम के बलवान् होने पर धर्म की वृद्धि तथा धन की प्राप्ति होती है। अपने स्वामी से तथा शुभग्रह से युक्त और दृष्ट पुण्य सहम बलवान् होता है।

वर्ष में पुण्य सहम के बलवान् होने पर ही धन प्राप्ति का उपाय बनता है। प्रायः सभी बलवान् सहम अपने नामों के अनुसार फल देते हैं।

सहमान्यखिलान्येवं सूतौ वर्षे विचारयेत् ।
मान्द्यरिकलिमृत्यूनां व्यत्ययादादिशेत् फलम् ।।

इस प्रकार जन्मकाल में तथा वर्ष काल में सभी सहमों का विचार करना। जाड्य, कलह, शत्रु और मृत्यु, इन सहमों का निर्बल होना ही अच्छा होता है।

भावों में स्थित सूर्य आदि ग्रहों के फलित -

सूर्य के फलित -

लग्न में स्थित सूर्य के फलित के फल -

स्याच्छिरोवदनलोचनपीडा याति कान्तितनुतामपि कान्ता ।
चिन्तयातितनुतां तनुरुच्चैर्हायने दिनपतौ तनुसंस्थे ।।

वर्ष कुण्डली में लग्नस्थान में सूर्य के होने पर शिर, नेत्र और मुख में पीड़ा, स्त्री के शरीर में कष्ट तथा मानसिक क्लेश की अधिकता होती है।

द्वितीय भाव में स्थित सूर्य का फल -

चौरवैरिनिकराच्च नरेशादग्नितो भवति भीतिरतीव ।
स्यात् कुटुम्बकलहः किल नित्यं वत्सरे दिनकरे धनसंस्थे ।।

वर्ष में दूसरे स्थान में सूर्य के होने पर अग्नि, चोर, राजा, तथा शत्रुओं के समूह से अत्यंत भय होता है तथा परिवार में क्लेश की अधिकता होती है।

तृतीय भाव में सूर्य का फल -

राजमानकनकागमनाद्यैर्हृष्टता च परिपुष्टिरतीव ।
कार्यसाधनविधानमनूनं भानुमान् ननु यदानुजसंस्थः ।।

तृतीय स्थान में सूर्य के होने पर राजमान, स्वर्ण आदि की प्राप्ति से हर्ष, अत्यंत पुष्टि तथा कार्यसिद्धि के लिए उद्योगों की अधिकता होती है।

चतुर्थ भाव में सूर्य का फल -

भूमिपालकुलतोऽति कृशत्वं वैरिभावमुपयाति सुहृच्च ।
वाहनापचयता च नितान्तं भूतले कमलकाननकान्ते ।।

चतुर्थ स्थान में सूर्य के होने पर राजपक्ष से अधिक चिन्ता, परिवार से विरोध तथा वाहन संबंधी हानि होती है ।

पंचम भाव में सूर्य का फल -

पुत्रमित्रपरिवारकलत्रपङ्क्तिपीडनविहीनसुखः स्यात् ।
मानवो मतिधनैः परिशून्यः पद्मकाननपतौ सुतसंस्थे ।।

पंचम स्थान में सूर्य के होने पर स्त्री-पुत्र-मित्र-परिवार तथा जाति से पीड़ा, सुख की कमी, मस्तिष्क में परेशानी तथा आर्थिक कष्ट होता है ।

षष्ठ स्थान में सूर्य का फल -

वैभवं हि लभते क्षितिपालात् कामिनीविपुलकेलिविलासम् ।
शत्रुवर्गविजयं धनवृद्धिं वैरिमन्दिरगतः सविताब्दे ।।

छठे स्थान में सूर्य के होने पर राजपक्षसे लाभ, स्त्री संबंधी सौख्य, शत्रुवर्ग पर विजय तथा धन की वृद्धि होती है ।

सप्तमभाव में सूर्य का फल -

वसितलोचनशिरःपरिपीडा यानमागमनमत्र विचित्रम् ।
हायने दिनपतौ मदसंस्थे कामिनीजनमनःपरितप्तम् ।।

सातवें स्थान में सूर्य के होने पर वस्ति (सांथल) नेत्र और शिर में पीड़ा, विचित्र ढंग से जाना-आना तथा स्त्री को मानसिक क्लेश होता है ।

अष्टम स्थान में सूर्य का फल -

पित्तसम्भवविकारशरीरे नेत्ररुक्परिभवेन च दुःखम् ।
भूमिपालगरलज्वलनाद्यैर्व्यालतोऽपि भयमष्टभगेऽर्के ।।

अष्टमभाव में सूर्य के होने पर शरीर में पित्त संबंधी विकार, नेत्ररोग, अपमान से क्लेश, अग्नि-विष-राज्य तथा सर्प से भय होता है ।

नवम भाव में सूर्य का फल -

धर्मकर्मविगतात्मरुचित्वं चिन्तया च विमतित्वमतीव ।
संस्थिते नवमधाम्नि च मित्रे मित्रपुत्रककलत्रकलिः स्यात् ।।

नवम स्थान में सूर्य के होने पर धर्म-कर्म में अरुचि, चिन्ता के कारण बुद्धि में भ्रान्ति, मित्र-स्त्री तथा पुत्र संबंधी कलह होता है ।

दशम भाव में सूर्य का फल -

राजगौरवयशःसुखवित्तं नित्यमेव चयतामुपयाति ।
कार्यसिद्धिरपि बुद्धिविधानादम्बरेऽम्बरमणौ रमणीया ।।

दशवें स्थान में सूर्य के होने पर राजपक्ष से मान, यश, सुख तथा धन की वृद्धि होती है, बुद्धि के द्वारा कार्य की सिद्धि होती है ।

एकादश भाव में सूर्य का फल -

दद्यात् सम्यक् भाग्यमारोग्यपूर्वं हर्षोत्कर्षं पौरुषं शत्रुनाशम् ।
क्षोणीपालात् प्राप्तिमश्वागमं च प्राप्तिं प्राप्तः सप्तसप्तिर्धनं च ।।

ग्यारहवें स्थान का सूर्य, भाग्य, आरोग्य, प्रसन्नता, पराक्रम, शत्रुनाश, राजपक्ष से लाभ, सवारी का सुख तथा धन देता है ।

द्वादश भाव में सूर्य का फल -

वैरं मित्रैर्नेत्रपीडा च गाढा पित्तोत्पत्तिः स्याद्विपत्तिर्धनस्य ।
न प्राशस्त्या स्यादवाप्तिः कदाचिद् वर्षवेशे द्वादशे द्वादशात्मा ।।

बारहवें स्थान में सूर्य के होने पर मित्रों से विरोध, नेत्र पीड़ा, शरीर में पित्त की अधिक उत्पत्ति, आर्थिक संकट, अच्छा लाभ कभी ही होता है ।

चंद्र के फलित -

लग्नस्थान में चंद्रमा का फल -

श्वासादिवाधां बहुधा नराणां तथा विकारं नयनाननेषु ।
द्रव्यागमं चाल्पतरं कृशत्वं होरास्थितः शीतकरः करोति ।।

लग्न में चंद्रमा के होने पर प्रायः श्वास आदि कफसंबंधी रोगों की बाधा होती है। नेत्र और मुख में विकार होता है तथा शरीर में दुर्बलता आती है ।

द्वितीय स्थान में चंद्र का फल -

स्वजनगौरवतां विततां मतिं प्रतिदिनं सितवस्तुसमागमम् ।
धनगतः कुरुते धनसञ्चयं हिमकरो न करोति रिपूदयम् ।।

दूसरे स्थान में चंद्रमा के होने पर स्वजनों से प्रतिष्ठा, बुद्धि का विस्तार, श्वेत वस्तु की प्राप्ति, धन का लाभ होता है तथा शत्रु का उदय नहीं होता है ।

तृतीय भाव में चंद्र का फल -

द्रव्यलाभविविधोत्सवपूर्वं गर्वितारिपरिहारि विभुत्वम् ।
धर्मकर्मणि रतिं सहजस्थः सम्प्रयच्छति नृणां हरिणीकः ।।

तृतीय स्थान में चंद्रमा के होने पर घर में उत्सव, द्रव्यलाभ, गर्वीले शत्रु का दमन, ऐश्वर्य तथा धर्म-कर्म में रुचि होती है ।

चतुर्थ भाव में चन्द्र का फल -

तुरगयुवतिसौख्यं गोमहिष्यादितो वा निजजनधनलाभं क्षेत्रपुत्रोन्नतिं च ।
जनयति मनुजानां नूनमानन्दपूरं हरिणकिरणमाली भूतलस्थानशाली ।।

चौथे स्थान में चंद्रमा के होने पर स्त्री सुख, सवारी सुख, गाय-भैंस का सुख, अपने धन द्वारा लाभ, भूमि संबंधी उन्नति, संतान संबंधी उन्नति तथा आनंद की प्राप्ति होती है ।

पंचम भाव में चंद्र का फल -

भूमिपालकुलतो विपुलाप्तिं कामिनीविलसितानि नितान्तम् ।
वृद्धिगौरवविजयोत्सववृद्धिं सम्प्रयच्छति सुते हिमरश्मिः ।।

चंद्रमा के पंचम स्थान में होने पर राजपक्षसे अच्छा लाभ, स्त्रीसौख्य, बुद्धि के द्वारा प्रतिष्ठा, जय, उन्नति तथा घर में कोई उत्सव होता है ।

षष्ठ स्थान में चंद्र का फल -

श्लेष्मवातजनितामतिबाधां बान्धवैश्च विदधाति विवादम् ।
तस्कराच्च नृपतेरपि पीडां वैरिवेश्मनि निशापतिरेषः ।।

चंद्रमा के षष्ठ स्थान में होने पर वायु तथा कफ संबंधी विशेष बाधा होती है। बंधुओं से विवाद होता है । चोर से तथा राजपक्ष से त्रास होता है ।

सप्तम भाव में चंद्र का फल -

राजमानधनगौरवयुक्तं विक्रयक्रयकलत्रजसौख्यम् ।
द्रव्यलाभसुलभामपि लक्ष्मीमिन्दुरिन्दुवदनासदनस्थः ।।

सप्तम स्थान में चंद्रमा के होने पर राजमान, प्रतिष्ठा, स्त्री सौख्य, क्रय-विक्रय (खरीद-फरोख्त) में लाभ तथा संपत्ति का सुख होता है ।

अष्टम भाव में चंद्र का फल -

नानानर्थोऽर्थव्ययो व्यर्थ एव स्वल्पानन्दो मन्दबुद्धित्वमत्र ।
गात्रे कार्श्यं नेत्ररुक्श्लेष्मबाधा रन्ध्रे चन्द्रे प्रोक्तमेतन्मुनीन्द्रैः ।।

अष्टम स्थान में चंद्रमा के होने पर अनेक प्रकार के अनर्थ,व्यर्थ में धन का व्यय, थोड़ा सुख, वुद्धि की मंदता, शरीर में कृशता, नेत्र रोग तथा कफ संबंधी पीड़ा होती है।

नवम स्थान में चंद्र का फल -

सुकुबुद्धिसमृद्धिविवर्धनं ननु धनागमनादिकमादिशेत् ।
कुमुदकाननजीवनदानदे नवमधामसमागमनं गते ।।

चंद्रमा के नवम स्थान में होने पर धर्म में रुचि, अच्छी बुद्धि, संपत्ति की वृद्धि तथा धन लाभ होता है ।

दशम भाव में चंद्र का फल -

लाभो भवेद् भूमिपतेः सकाशात् कलत्रपुत्रान्वितमित्रसौख्यम् ।
विपक्षपक्षक्षयदक्ष एकवर्षे हिमांशुर्दशमाश्रितश्चेत् ।।

दशम स्थान में चंद्रमा के होने पर राजपक्ष से लाभ, मित्र-स्त्री-पुत्र संबंधी सौख्य तथा शत्रुपक्ष का दलन होता है ।

एकादश स्थान में चंद्र का फल -

श्वेतवस्तुकृतलब्धिमनूनां सन्मतिं वितनुते ननु नित्यम् ।
कुञ्जराम्बरतुरङ्गमलाभं लाभवेश्मनि निशाकर एषः ।।

ग्यारहवें भाव में चंद्रमा के होने पर श्वेतवस्तु से लाभ, अच्छी बुद्धि, सवारी का सुख तथा वस्त्र संबंधी सुख होता है ।

द्वादशभावों में चंद्र का फल -

नेत्ररुक् रिपुभयं धनव्ययं नित्यमेव कलहं निजालये ।
चञ्चलं किल मनः समादिशेत् द्वादशे शशिनि वेश्मनि संस्थे ।।

बारहवें स्थान में चंद्रमा के होने पर नेत्ररोग, शत्रुभय, धनका व्यय, मन का चलायमान होना तथा घर में कलह रहता है ।

मंगल के फलित -

लग्न स्थान में मंगल का फल -

मौलौ वक्त्रे नेत्रयोश्चापि बाधा हानिर्नूनं स्वालये वा कलिः स्यात् ।
रक्तात् पित्ताद् देहिनां देहकार्श्यं धात्रीपुत्रो मूर्तिवर्ती यदीह ।।

लग्न में मंगल के होने पर शिर, नेत्र और मुख में पीड़ा, धनकी हानि, घर में कलह, शरीर में रक्त तथा पित्त संबंधी रोग के कारण कृशता आती है ।

द्वितीय स्थान में मंगल का फल -

भूपालधाराजलभीतिरुग्रा व्यग्रा मनोवृत्तिरपीति कष्टम् ।
दृशोश्च बाधा विविधा नराणामुक्तं पुराणैर्धरणीसुतेऽर्थे ।।

द्वितीय भाव में मंगल के होने पर राजपक्ष से भय, नदी आदि के जल से भय, मानसिक क्लेश, शरीर कष्ट, नेत्ररोग तथा अनेक प्रकार के दुःख प्राप्त होते हैं ।

तृतीय स्थान में मंगल का फल -

मानं धनं शत्रुविनाशनं च महोत्सवारोग्यनृपप्रसादम् ।
वदेन् मनीषी विशदं विशेषात् पृथ्वीतनूजे सहजे नराणाम् ।।

तृतीय स्थान में मंगल के होने पर मान, धन, शत्रु का नाश, शरीर में आरोग्य, राजपक्ष से प्रसन्नता तथा घर में उत्सव होता है । यह फल मंगल के बली होने पर विशेषता से होते हैं ।

चतुर्थ भाव में मंगल का फल -

सकष्टदेशाटनकं कुटुम्बाद् वादं सुहृद्भ्यो हृदये विषादम् ।
चतुष्पदानां निधनं तथार्तिः क्षोणीसुते भूतलभावयाते ।।

चतुर्थ स्थान में मंगल के होने पर देशाटन में कष्ट, कुटुम्ब से क्लेश, सुहृदों से विरोध, मानसिक क्लेश, चौपायों की हानि तथा शरीर में कष्ट होता है ।

पंचम भाव में मंगल का फल -

क्रोडे पीडा दुर्मतिर्वैमनस्यं स्वैरं वैरं बन्धुवर्गेण सार्धम् ।
अर्धाङ्गादेर्मानसे चापि दुःखं पुत्रक्षेत्रे भूमिपुत्रे विचिन्त्यम् ।।

पंचमस्थान में मंगल के होने पर क्रोड (दोनों भुजाओं के बीच का स्थान) में पीड़ा, खोटी बुद्धि, मानसिक क्लेश, मन की स्वतंत्र वृत्ति, बन्धुवर्ग से वैर, फालिज आदि का विकार तथा मन में दुख होता है ।

षष्ठ भाव में मंगल का फल -

भूपात् प्रीतिं शत्रुवर्गे विपत्तिं बुद्धेर्वृद्धिं मित्रसद्वर्धनं च ।
हर्षोत्कर्षं वर्षकाले बलीयान् धात्रीपुत्रः शत्रुसंस्थः करोति ।।

छठे स्थान में बली मंगल के होने पर राजपक्ष से प्रसन्नता, शत्रुवर्ग में विपत्ति, बुद्धि की वृद्धि, मित्र की वृद्धि तथा अति प्रसन्नता होती है ।

सप्तम भाव में मंगल का फल -

देहे पीडा गेहिनां नैव सौख्यं हानिर्देशभ्रंशता स्यान्नितान्तम् ।
शत्रोर्भीतिर्नीतितो वैपरीत्यं द्यूनस्थाने नन्दने भूतधात्र्याः ।।

सातवें स्थान में मंगल के होने पर शरीर में पीड़ा, परविार में क्लेश, धन हानि, स्थान का छोड़ना, शत्रु से भय तथा नीति में विपरीतता होती है ।

अष्टम स्थान में मंगल का फल -

प्रजननपरिपीडा रक्तपित्तप्रकोपो निजधनजनमाने स्वल्पतानल्पचिन्ता ।
विकलतरशरीरं धीरता हीनता स्यान्निधनसदनसङ्गलोहिताङ्गे नराणाम् ।।

आठवें भावमें मंगल के होने पर संतान संबंधी पीडा, शरीर में रक्त-पित्त संबंधी प्रकोप, थोड़ा लाभ, अपने जनों से थोड़ा मान, अधिक चिन्ता, शरीर में व्याकुलता तथा धैर्य की कमी होती है ।

नवम भाव में मंगल का फल -

पापे मतिः स्यात् कलहः स्वकीये चोद्विग्नतावैभववैपरीत्यम् ।
कान्तिक्षयश्चापि भवेन्नराणां भूनन्दने धर्मनिकेतनस्थे ।।

नवम स्थान में मंगल के होने पर खोटी बुद्धि, परिवार में कलह, मन में उद्विग्नता, धन का व्यय तथा कान्तिहीनता होती है ।

दशम भाव में मंगल का फल -

प्रसन्नता भूमिपतेश्च लाभो व्यापारसौभाग्यसुखानि नित्यम् ।
आरोग्यतातीव यशःप्रवृद्धिर्धरात्मजे राजपदोपपन्ने ।।

दशवें स्थान में मंगल के होने पर राज पक्ष से प्रसन्नता, धन का लाभ, व्यापार ख, भाग्यसुख, आरोग्यता तथा कीर्ति की वृद्धि होती है ।

एकादश भाव में मंगल का फल -

प्रतापतेजो विजयाभिवृद्धिः शत्रुक्षयो भूमिपतेः प्रसादः ।
नित्यं सुहृत्पुत्रकलत्रसौख्यं लाभालये मङ्गलनामधेये ।।

ग्यारहवें स्थान में मंगल के होने पर तेज और प्रताप की वृद्धि, विजय, शत्रु ास्त, राजपक्ष से प्रसन्नता, मित्र-स्त्री तथा पुत्र संबंधी सौख्य होता है ।

द्वादश भाव में मंगल का फल -

धनक्षयः स्यात् क्षितिपालभीतिर्दृग्दोषयोषाद्यसुखैर्विषादः ।
वादः सदा मन्दजनेन नूनं भूनन्दने प्राप्त्यनिकेतनस्थे ।।

बारहवें स्थान में मंगल के होने पर राजपक्ष से भय, नेत्रों में कष्ट, स्त्री आदि के ष्ट से मानसिक क्लेश तथा नीच मनुष्य से विरोध होता है ।

बुध के फलित -

लग्नस्थान में बुध का फल -

शरीरसौख्यं नृपतेः प्रसादं बुद्धिप्रवृद्धिं द्रविणागमं च ।
गाम्भीर्यवीर्योपचयं विधत्ते शशाङ्कसूनुस्तनुभावसंस्थः ।।

लग्नभाव में बुध के होने पर शरीर सुख, धनलाभ, राजपक्ष से प्रसन्नता, बुद्धि की वृद्धि, गंभीरता तथा पराक्रम की वृद्धि होती है ।

द्वितीय स्थान में बुध का फल -

स्वमित्रपुत्रोन्नतिनीतिवृद्धिर्द्रव्यागमो भूमिपतेः प्रसादः ।
आरोग्यतातीव शरीरसौख्यं चेद् रौहिणेये द्रविणेऽधिसंस्थे ।।

द्वितीय स्थान में बुध के होने पर अपने मित्र तथा पुत्र की उन्नति, नीति की वृद्धि, धनलाभ, राजपक्ष से प्रसन्नता, शरीर में आरोग्यता तथा सौख्य होता है ।

तृतीय स्थान में बुध का फलित -

लाभोऽप्यलाभश्च सुखं च दुःखं मित्रममित्रं समतां प्रयाति ।
यथास्थितं स्यात् सकलं तृतीये द्विजाधिराजात्मजभाजि वर्षे ।।

वर्ष में बुध के तीसरे स्थान में होने पर सामान्यतः स्थिति होती है । यदि लाभ हो रहा है तो लाभ होता रहेगा, यदि सुख है तो सुख, दुख है तो दुःख, मित्र है तो मित्र और शत्रु है तो शत्रु, अर्थात् सभी बातों में जैसी भी स्थिति है वैसी ही रहती है ।

चतुर्थ स्थान में बुध का फल-

पृथ्वीपतेर्गौरवतां सुवृत्तिं धनागमं मित्रसमागमं च ।
कलत्रसौख्यं बहुधा विधत्ते कलानिधेः सूनुरिलातलस्थः ।।

चतुर्थ स्थान में बुध के होने पर राजपक्ष से मान, अच्छी वृत्ति, धनलाभ, मित्रसमागम तथा स्त्रीसंबंधी सौख्य होता है ।

पंचम भाव में बुध का फल -

सुहृज्जनात् पुत्रकलत्रतश्च सुखानि भूषा प्रभवेन्मनीषा ।
भाग्यं नेरन्द्राच्च यशश्च पुत्रात् पुत्रेऽत्र नक्षत्रपतिर्यदा स्यात् ।।

पंचम स्थान में बुध के होने पर स्त्री-पुत्र-सुख, पारिवारिक सुख, आभूषण प्राप्ति, अच्छी बुद्धि, राजपक्ष से लाभ तथा पुत्र संबंधी यशः प्राप्त होता है ।

षष्ठ स्थान में बुध का फल -

विपक्षपक्षप्रचयं प्रमादं वादं निजैः कान्तिपरिक्षयं च ।
शरीरपीडां च जडांशुपुत्रः शत्रुस्थितः सज्जनयेत् त्ववश्यम् ।।

छठे भाव में बुध के होने पर शत्रुपक्ष की वृद्धि, बुद्धि में असावधानता, स्वजनों से विवाद, कान्तिहीनता तथा शरीरकष्ट होता है ।

सप्तम भाव में बुध का फल -

अतियुवतिविलासं मार्गलाभं जनानां जनयति धनसौख्यं सद्वणिक् कर्ममार्गात् ।
प्रतिदिनमनुवृत्तिं धर्मकार्येषु नूनं मदनसदनसंस्थः शीतभानोस्तनूजः ।।

सातवें स्थान में बुध के होने पर स्त्रीसंबंधी सौख्य, यात्रा से लाभ, धनलाभ, व्यापार के द्वारा लाभ तथा धमकार्य में रुचि होती है ।

अष्टम स्थान में बुध का फल -

वैरिव्रातोन्मूलनं भूमिपालात् सौख्यं हर्षोत्कर्षता सन्मतित्वम् ।
नित्यं शास्त्राभ्यासतो गौरवं स्यादायुर्गेहे चन्द्रदेहोद्भवोऽयम् ।।

अष्टम भाव में बुध के होने पर शत्रुओं के समूह का दलन, राजपक्ष से सौख्य, अधिकहर्ष, अच्छी बुद्धि, अच्छे ग्रंथों का पठन तथा मान की प्राप्ति होती है ।

नवम भाव में बुध का फल -

धर्मे बुद्धिः कार्यसिद्धौ प्रलापश्चित्तोद्वेगः कामिनीवर्गपीडा ।
दैन्यं कान्तिक्षीणता प्राणिनां स्याद् भाग्यागारे चेत् तुषारांशुजन्मा ।।

नवम स्थान में बुध के होने पर धर्म में बुद्धि ,कार्य की सिद्धि में विघ्न, चित्त में उद्योग, स्त्री के शरीर में कष्ट, आर्थिक क्लेश तथा शरीर कष्ट के कारण कांतिहीनता होती है।

दशम स्थान में बुध का फल-

द्रव्यप्राप्तिर्भूमिपालाद्धराभ्यां सभ्यत्वं स्याद् देहसौख्यं स्वगेहात् ।
कान्तिः सारं याति विस्तारमुच्चैः कर्मस्थानं सोमसूनौ प्रपन्ने ।।

दशवें भाव में बुध के होने पर पृथ्वी संबंधी लाभ, राज पक्ष से लाभ, धनलाभ, मान, पारिवारकि सौख्य, शरीर सौख्य, कान्ति तथा व्यापार आदि में वृद्धि होती है ।

एकादश स्थान में बुधका फल -

नित्यारोग्यं भाग्यवृद्धिः सुवृद्धिः पृथ्वीपालाद् गौरवं सर्वथा स्यात् ।
स्वल्पायासैरुद्यमान् द्रव्यलाभो लाभस्थाने सिन्धुसूनोस्तनूजे ।।

ग्यारहवें स्थान में बुध के होने पर आरोग्य, भाग्यवृद्धि, अच्छी बुद्धि, राजपक्ष से मान, थोड़े से परिश्रम तथा उद्योग से धन का लाभ होता है ।

द्वादश भाव में बुध का फल -

लाभः स्वल्पोऽप्यल्पता स्याद् धनस्य क्षोणीपालात् साध्वसं दुर्व्ययश्च ।
बुद्धेर्जाड्यं विग्रहः स्वीयवर्गे प्रान्त्यस्थाने बोधने वर्तमाने ।।

बारहवें स्थान में बुध के होने पर थोड़ालाभ, धन की कमी, राजपक्ष से भय, व्यर्थ का व्यय, बुद्धि की मंदता तथा स्वजनों से विरोध होता है ।

गुरु के फलित -

लग्न स्थान में गुरु का फल -

सौख्यं पुत्रान्मित्रवर्गात् कलत्रात् आरोग्यं स्यात् साध्यभाग्योदयश्च ।
प्राप्तिर्भूपात् सन्मतिश्चाप्यवश्यं वागीशश्चेन्मूर्तिवर्ती विचिन्त्यम् ।।

लग्नभाव में गुरु के होने पर मित्र-स्त्री-पुत्र से सौख्य, कार्य की सिद्धि, भाग्य का उदय, राजपक्ष से लाभ तथा अच्छी बुद्धि होती है ।

द्वितीय भाव में गुरु का फल -

अर्थप्राप्तिं संयुतं मित्रवर्गैः नानावस्तुग्राहकत्वं नितान्तम् ।
सद्धिः सङ्गं पुष्टिमङ्गे प्रकुर्याद् वाचामीशः कोशसंस्थो यदीह ।।

दूसरे स्थान में गुरु के होने पर धनलाभ, मित्रवर्ग से समागम, अनेक वस्तुओं की

खरीदारी, धनलाभ, सत्संग तथा शरीर सुखं होता है ।

तृतीय भाव में गुरु का फल -

कार्यस्य वृद्धिः परिसेवनेन सकष्टमिष्टोन्नतिरर्थलब्धिः ।
श्रीधर्मपत्नीतनयादिसौख्यं चेद् विक्रमे शक्रपुरोहितः स्यात् ।।

तीसरे स्थान में गुरु के होने पर परिश्रम तथा उद्योग के द्वारा कार्य की वृद्धि होती है। धनलाभ, मनोरथ की पूर्ति, स्त्री-संतान आदि का सुख तथा संपत्ति का सुख होता है।

चतुर्थ भाव में गुरु का फल -

कामिनीतनयसौख्यसमेतो भूमिवाहनधनागमनाद्यैः ।
राजमानविनयैः सुखभावे देवदेवसचिवे मनुजः स्यात् ।।

चौथे स्थान में गुरु के होने पर स्त्री-संतान सुख, भूमि संबंधी लाभ, वाहन (सवारी) का सुख, धन का लाभ, राजपक्ष से मान तथा विनय भाव प्राप्त होता है ।

पंचम भाव में गुरु का फल -

सन्तानसौख्याभिमतप्रकाशयशांसि मित्रोन्नतिसंयुतानि ।
विचारविद्याभ्यसनानि दद्यात् पुत्रस्थितश्चित्रशिखण्डिजोऽत्र ।।

पंचम स्थान में गुरु के होने पर संतान सुख, अभीष्ट पूर्ति, यश, मित्र की उन्नति, विद्या का अभ्यास तथा विचारों की उत्तमता होती है ।

षष्ठ स्थान में गुरु का फल -

बलक्षयश्चापि विपक्षवृद्धिः सार्धं विरोधो बहुधा स्वकीयैः ।
व्ययोऽत्र चिन्ता प्रभवेन्नराणां चेद्दीप्यतिर्द्वेषिनिवेशनस्थः ।।

छठे स्थान में गुरु के होने पर बल की कमी, शत्रु की वृद्धि, अपने वर्ग से विरोध, धन का व्यय तथा चिन्ता होती है ।

सप्तम स्थान में गुरु का फल -

वणिग्विधानेन धनागमः स्यान् मार्गप्रसङ्गेन च मानवानाम् ।
स्त्रीवर्गसौख्यं नृपतेः प्रतिष्ठा शिखण्डिसूनौ मदनालयस्थे ।।

सातवें स्थान में गुरु के होने पर व्यापार के द्वारा धनलाभ, यात्रा में लाभ, स्त्री संबंधी सौख्य तथा राजपक्ष से मान होता है ।

अष्टमभाव में गुरु का फल -

मित्रैः सार्धं वैमनस्याभिवृद्धिर्बुद्धिभ्रंशो द्रव्यनाशः प्रवासः ।
विश्लेषः स्यात् स्वीयवर्गेण पुण्यं क्षीणं जीवे जीवनस्थानसंस्थे ।।

आठवें स्थान में गुरु के होने पर मित्रों के साथ वैमनस्य की वृद्धि, बुद्धि की क्षीणता, धन की हानि, परदेशगमन, अपने वर्ग में किसी से वियोग तथा धर्मकार्य की हानि होती है ।

नवम भाव में गुरु का फल -

बुद्धेर्विवृद्धिर्द्रविणोपलब्धिः कान्ताविलासो मनसः प्रसादः ।
प्रवीणतातीव भवेच्च पुण्यं पुण्ये निषण्णे धिषणे प्रणीतम् ।।

नवमस्थान में गुरु के होने पर बुद्धि की वृद्धि, धन की प्राप्ति, पत्नी से विलास, मन की प्रसन्नता, कार्य में निपुणता तथा पुण्य कार्य होता है ।

दशम भाव में गुरु का फल -

पृथ्वीपतेः प्राप्तिरतीव कीर्तिर्मानोन्नतिर्नीतिमतिप्रवृद्धिः ।
नित्योत्सवानन्दभरो नराणां राज्ये सुरेज्ये विजयोद्गमः स्यात् ।।

दशवें स्थान में गुरु के होने पर राजपक्ष से लाभ, कीति, मान, उन्नति, नीति युक्त बुद्धि की वृद्धि, आनन्दोत्सव तथा विजय की प्राप्ति होती है ।

एकादशभाव में गुरु का फल -

आरोग्यतावैभववाहनानि कलत्रपुत्रादिसुखैर्युतानि ।
नानाधनाप्तिं खलु लाभवर्ती बृहस्पतिर्यच्छति मानवानाम् ।।

ग्यारहवें स्थान में वृहस्पति के होने पर आरोग्यता, ऐश्वर्य, वाहन सुख, स्त्री-पुत्र आदि का सौख्य तथा अनेक प्रकार से धन लाभ होता है ।

द्वादशस्थान में गुरु का फल -

मित्रैर्वैरं भूपतेर्भीतिरुग्रा दुःखं चिन्ता नैकधार्थव्ययश्च ।
नूनं स्थानभ्रंशता स्यान्नराणां वाचामीशे द्वादशस्थानसंस्थे ।।

बारहवें स्थान में गुरु के होने पर मित्रों से विरोध, राजपक्ष से अधिक भय, दुःख, चिन्ता, अनेक प्रकार से धन का व्यय तथा स्थान से हटने की संभावना होती है।

शुक्र के फलित -

लग्न स्थान में शुक्र का फल -

अत्यर्थं स्यादर्थलाभः क्षितीशाद् वंशस्योच्चैः सञ्चयः सौख्यलब्धिः ।
हर्षोत्कर्षावेशपूर्वं सगर्वं दैत्यामात्यो मूर्तिवर्ती यदि स्यात् ।।

प्रथम स्थान में शुक्र के होने पर राजपक्ष से अच्छा लाभ, वंश की उन्नति, सौख्य, प्रसन्नता तथा गौरव प्राप्त होता है ।

द्वितीय भाव में शुक्र का फल -

सुहृद्विवृद्धिर्बहुधार्थलाभः शत्रुक्षयः सत्वरमेव कार्यम् ।
कान्तासु चित्तस्य भवेत् प्रवृत्तिर्दैत्यार्चिते वित्तगते नराणाम् ।।

द्वितीय स्थान में शुक्र के होने पर मित्रों की वृद्धि, प्रायः धन का लाभ, शत्रु परास्त, शीघ्र ही कार्य की सिद्धि तथा स्त्रीसौख्य प्राप्त होता है ।

तृतीय भाव में शुक्र का फल -

द्रव्यव्ययोपद्रवमित्रवैरं सौख्याल्पतानल्पविकल्पचिन्ता ।
पराक्रमो मध्यतमः प्रकामं भृगोस्तनूजेऽनुजभावसंस्थे ।।

तृतीय स्थान में शुक्र के होने पर धन का व्यय, उपद्रव, थोड़ा सुख, अधिक चिन्ता तथा साधारण पराक्रम होता है ।

चतुर्थ भाव में शुक्र का फल -

आरोग्यं स्याद् वैभवं भूमिपालान्मित्रक्षेत्रोद्यानसौख्यानि नूनम् ।
नानामानैर्वाहनैश्चापि योगो दैत्याचार्ये तुर्यभावोपपन्ने ।।

चतुर्थ स्थान में शुक्र के होने पर आरोग्य, राजपक्ष से लाभ, मित्र का सुख, खेत-वाग-बगीचे का सुख, अनेक प्रकार से सम्मान तथा सवारी का सुख प्राप्त होता है।

पंचम भाव में शुक्र का फल -

कलत्रपुत्रोद्भवसौख्यविद्याविज्ञानकौशल्यमतिप्रवृद्धिः ।
विचित्रमन्त्रागमसङ्गमः स्याद् भृगोस्तनूजे तनुजेऽधिसंस्थे ।।

पंचम स्थान में शुक्र के होने पर स्त्री-संतान संबंधी सौख्य, विद्या-विज्ञान-कौशल्य तथा बुद्धि की वृद्धि, विचित्र मंत्र तथा शास्त्र का विचार-विमर्श होता है ।

षष्ठ स्थान में शुक्र का फल -

अनिलभीतिरनीतिमतिर्ध्रुवं रिपुचयोऽपचयोऽपि धनस्य च ।
गृहसुखं न कदापि शरीरिणामुशनसि द्विषि सम्प्रविशत्यलम् ।।

छठे स्थान में शुक्र के होने पर अग्निका भय, अनीति में बुद्धि का लगना, शत्रु की वृद्धि, कभी भी पारिवारिक सुख का न होना तथा धन का खर्च होता है ।

सप्तम भाव में शुक्र का फल -

कामिनीतनयहर्षतो भवेद् वर्ष्मपुष्टिरपि लब्धिरुद्यमात् ।
मानवाहनधनानि भार्गवे पञ्चमार्गणगृहाङ्गणस्थिते ।।

सप्तम स्थान में शुक्र के होने पर स्त्री-संतान संबंधी सौख्य, शरीर की पुष्टि, उद्योग के द्वारा लाभ, मानप्राप्ति, सवारी का सुख तथा धन लाभ होता है ।

अष्टम भाव में शुक्र का फल -

आल्पारोग्यं कामिनीसूनुचिन्ता चित्तभ्रंशोऽशेषदोषः प्रवासः ।
शश्वत् काश्यं स्याच्छरीरे नराणां मृत्योर्भावे पूर्वदेवाधिदेवे ।।

अष्टम स्थान में शुक्र के होने पर थोड़ा आरोग्य, स्त्री-पुत्र संबंधी चिन्ता, मानसिक क्लेश, बहुत से अनर्थ, परदेशगमन तथा शरीर में कृशता होती है ।

नवम स्थान में शुक्र का फल -

आरोग्याप्तिर्धर्मकर्माभिवृद्धिर्बुद्धिः शस्ता विश्रुता चौन्नतिः स्यात् ।
पुत्रान्मित्राच्चापि सन्तोषलब्धिः पुण्यस्थाने दानवैर्वन्द्यमाने ।।

नवमभाव में शुक्र के होन पर आरोग्य, धर्म-कर्म की वृद्धि, अच्छी बुद्धि, उन्नति पुत्र तथा मित्र से हर्ष प्राप्त होता है ।

दशम भाव में शुक्र का फल -

भूमिभर्तुरपि गौरवलब्धिः शत्रुपक्षकपरिक्षययुक्ता ।
कार्यसिद्धिरपि चिन्तितकाले राज्यभाजि दनुजव्रजपूज्ये ।।

दशम स्थान में शुक्र के होने पर राजपक्ष से सम्मान, शत्रुपक्ष का क्षय तथा समय

पर कार्य की सिद्धि होती है ।

एकादश भाव में शुक्र का फल -

नीरसञ्चरणसद्द्रविणाप्तिर्विक्रयक्रयविधेरपि लाभः ।
वैभवोन्नतिरतीव विलासो लाभवेश्मनि भृगुर्यदि संस्थः ।।

ग्यारहवें स्थान में शुक्र के होने पर जल मार्ग द्वारा गमन, धन-लाभ, क्रय-विक्रय से लाभ, संपत्ति की वृद्धि तथा अत्यंत आनंद होता है ।

द्वादश भाव में शुक्र का फल -

साधुमार्गविभवक्षयमुच्चैः स्वीयवर्गकलहं किल याति ।
स्वालयाच्च चलनं फलहानिर्देववैरिसचिवेऽन्तिमभावे ।।

बारहवें स्थान में शुक्र के होने पर अच्छे कार्य में धन का व्यय, अपने वर्ग से कलह तथा अपने स्थान से चलना होता है ।

शनि के फलित -

लग्न स्थान में शनि का फल -

प्रजायेत वातकफप्रकोपशिरःस्थलोरःस्थलपीडनं च ।
स्वकीयमित्रैः कलहो नराणां पुत्रस्त्रिमूर्तेर्यदि मूर्तिवर्ती ।।

लग्नभाव में शनि के होने पर वायु तथा कफ संबंधी प्रकोप, शिर तथा छाती में पीड़ा तथा स्वजनों से और मित्रों से विरोध होता है ।

द्वितीय भाव में शनि का फल -

वक्त्राक्षिपीडा प्रभवेन्नराणां धनक्षयो भूमिपतेर्भयं च ।
चिन्ता प्रभूता रमणीसुतादेश्चेद् भानुसूनुर्धनधाम्नि संस्थः ।।

दूसरे स्थान में शनि के होने पर मुख तथा नेत्र में पीड़ा, धन का व्यय, राजपक्ष से भय, स्त्री तथा पुत्र की ओर से अधिक चिन्ता होती है ।

तृतीय भाव में शनि का फल -

समस्तचिन्ताविलयः खलु स्याद् वसुन्धरापालकमानसौख्यम् ।
धनस्य लाभोऽतितरां नराणां भानोस्तनूजेऽनुजभावसंस्थे ।।

तृतीय भाव में शनि के होने पर समस्त चिन्ताओं का नाश, राजमान, सौख्य तथा धन का लाभ होता है ।

चतुर्थ स्थान में शनि का फल -

प्रवासचिन्ताद्रविणव्ययः स्यात् कान्तातिचिन्ताकुलचित्तवृत्तिः ।
पक्षे जनन्याः परिपीडनं च रसातलस्थे नलिनीशसूनौ ।।

चौथे स्थान में शनि के होने पर प्रवास की चिन्ता, धन का व्यय, स्त्री के संबंध में अधिक चिन्ता, चित्तकी व्याकुलता तथा माता के पक्ष को पीड़ा होती है ।

पंचम भाव में शनि का फल -

कान्तासुहृत्सूनुजनेषु पीडा क्रोडेऽपि पीडा पवनप्रकोपात् ।
बुद्धिविरुद्धा धनसङ्क्षयः स्याद् भानुस्तनूजे तनयालयस्थे ।।

पाँचवें स्थान में शनि के होने पर मित्र-स्त्री-पुत्र तथा परिवार में पीड़ा, वायु के प्रकोप से क्रोड (भुजाओं के बीच का स्थान) स्थान में पीड़ा, बुद्धि में विपरीत तथा धन का व्यय होता है ।

षष्ठ स्थान में शनि का फल -

सामर्थ्यं स्याद् भूमिभर्तुः प्रसादः सद्भिः सङ्गो वीर्यवृद्धिः समृद्धिः ।
जायापुत्रप्रीतिसम्प्राप्तिरत्र शत्रुक्षेत्रे मित्रपुत्रो यदि स्यात् ।।

छठे स्थान में शनि के होने पर सामर्थ्य, राजा की प्रसन्नता, सज्जनों की संगति, पराक्रम की वृद्धि, समृद्धि, स्त्री तथा पुत्र पर प्रीति होती है ।

सप्तम भाव में शनि का फल -

मित्रकष्टमपि पुत्रहीनतां स्थानहानिधननाशनं दिशेत् ।
शत्रुभीतिमपि नीतिविच्युतिं मीनकेतननिकेतने शनिः ।।

सातवें स्थान में शनि के होने पर मित्र को कष्ट, पुत्र को हानि, स्थान की हानि, धन का नाश, शत्रु का भय तथा नीति संबंधी हानि होती है ।

अष्टम भाव में शनि का फल -

अनेकधा व्याधिसमुद्भवः स्याज्जायासुतानामपि वित्तनाशः ।
आन्ध्यञ्च बुद्धेर्व्यसनोपलब्धिः कामं यमश्चेद्यमधामसंस्थः ।।

आठवें स्थान में शनि के होने पर अनेक प्रकार के रोग, स्त्री-पुत्र संबंधी कष्ट, धन की हानि, नेत्रों में रोग तथा विपरीत बुद्धि होती है ।

नवम भाव में शनि का फल -

धनविनाशनरेशभयान्वितः सुतहितप्रमदापरिपीडनम् ।
मतिविपर्ययतां कुरुते यमो नवमधामसमागमतां गतः ।।

नवम स्थान में शनि के होने पर धन की हानि, राजा का भय, मित्र को कष्ट, स्त्री-पुत्र संबंधी कष्ट तथा बुद्धि की विपरीतता होती है ।

दशम भाव में शनि का फल -

पृथ्वीभर्तुर्भीतिरर्थच्युतिश्च स्वव्यापारे व्यग्रता स्थानहानिः ।
दुःखं दैन्यं जायते मानवानां माने भानोर्नन्दने वर्तमाने ।।

दशवें स्थान में शनि के होने पर राजपक्ष से भय, धन की हानि, अपने व्यापार में व्यग्रता, स्थान की हानि, शरीरकष्ट तथा आर्थिक संकट होता है ।

एकादश भाव में शनि का फल-

योषातोषं मानवेशाद् विदेशादाशापूर्तिः स्फूर्तिकीर्तिप्रसादान् ।
शौर्यं वीर्यं चापि धैर्यं प्रकुर्यात् प्राप्तौ प्राप्तः सप्तसप्तेस्तनूजः ।।

ग्यारहवें स्थान में शनि के होने पर शरीर में स्फूर्ति, कीर्ति, प्रसन्नता, शौर्य, पराक्रम, धैर्य, राजमान, यात्रा से लाभ तथा स्त्री को प्रसन्नता होती है ।

द्वादश भाव में शनि का फल -

विलोचनक्रोडपदेषु पीडा दृढा भवेन् मित्रजनैर्विवादः ।
भीतिर्नृपाद् द्रव्यहतिर्नितान्तं व्ययालये चेन्नलिनीश जन्मा ।।

बारहवें स्थान में शनि के होने पर नेत्र क्रोड स्थान तथा पैरों में पीड़ा, मित्रों से तथा स्वजनों से विवाद, राजपक्ष से भय तथा धन की हानि होती है ।

राहु के फलित -

लग्नस्थान में राहु का फल -

देहे पीडा जायते वातजन्या वित्तापत्तिर्वैभवे वैपरीत्यम् ।
वादः कैश्चित् कामिनीसूनुचिन्ता सिंहीसूनुश्चेत्तनुस्थानसंस्थः ।।

लग्नभाव में राहु के होने पर शरीर में वायु संबंधी पीड़ा, आर्थिकक्लेश, ऐश्वर्य की हानि, विवाद (झगड़ा) तथा स्त्री और पुत्र संबंधी चिन्ता होती है ।

द्वितीय भाव में राहु का फल -

वदनलोचनपीडनकं तथा कलहमपि प्रकरोति नीचतः ।
द्रविणालाभमनुत्सवमद्भुतं द्रविणधामसमागमकृत्तमः ।।

दूसरे स्थान में राहु के होने पर मुख और नेत्र में पीड़ा, निम्नश्रेणी के व्यक्ति से कलह, धन प्राप्ति में तथा उत्सव में बाधा होती है ।

तृतीय स्थान में राहु का फल -

सम्पत्सुखं भूमिपतेर्नितान्तं सुमन्नतिः कायसुखानि पुंसाम् ।
सुहृत्समाजोपचयो जयः स्यात् सिंहीतनूजेऽनुजधामसंस्थे ।।

तीसरे स्थान में राहु के होने पर संपत्ति का सुख, राजपक्ष से उन्नति, शरीर का सौख्य, पारिवारिक वर्ग में उन्नति तथा जय प्राप्त होती है ।

चतुर्थ स्थान में राहु का फल -

चिन्ता दुःखं वाग्विवादः स्वकीयैर्नूनं यानं वाहनादिक्षयः स्यात् ।
कार्श्यं शश्वज्जायते मानवानां तूर्यस्थाने नन्दने सिंहिकायाः ।।

चौथे भाव में राहु के होने पर चिन्ता, दुःख, स्वजनों से वाद-विवाद, यात्रा, सवारी सबंधी हानि तथा शरीर में कृशता होती है ।

पंचम भाव में राहु का फल -

बुद्धेर्मान्द्यं निन्द्यविद्वेषिवादं गाढां पीडां क्रोडदेशे विशेषात् ।
पुत्रात् सौख्यं यच्छति प्राप्तिवर्जं सिंहीसूनुर्नन्दनस्थानसंस्थः ।।

पाँचवें स्थान में बुद्धि की मंदता, निम्नश्रेणी के विरोधी से विवाद, शरीर में पीड़ा की अधिकता तथा विशेषकर भुजाओं के बीच के स्थान में होती है; पुत्र से सौख्य तथा लाभ में बाधा होती है ।

षष्ठ भाव में राहु का फल -

आरोग्यं स्याद् भाग्यवृद्धिर्नरेन्द्राद् वैरिध्वंसो मानसोत्पन्नसौख्यम् ।
जायापुत्रैः प्रीतिरत्यन्तमब्दे शत्रुक्षेत्रपुत्रकः सिंहिकायाः ।।

वर्ष में छठे स्थान में राहुके होने पर शरीर में आरोग्य, राजपक्ष से भाग्य की वृद्धि, शत्रुपरास्त, मानसिक सौख्य तथा स्त्री और पुत्र संबंधी प्रीति होती है ।

सप्तम भाव में राहु का फल -

स्थानाधानं पानसङ्गेति कार्श्यं कान्ताचिन्ता चञ्चला चित्तवृत्तिः ।
कट्यां वस्तौ वातसञ्जातबाधा स्वर्भानुश्चेत् कामिनीस्थानसंस्थः ।।

सातवें स्थान में राहु के होने पर स्थान परिवर्तन, खान-पान में असुविधा, शरीर में दुर्बलता, स्त्री-संबंधी चिन्ता, चित्त की चंचल वृत्ति, कमर में तथा वस्ति (सांथल) में वायु पीड़ा होती है ।

अष्टम भाव में राहु का फल -

जायाक्लेशो बान्धवा विद्विषः स्युर्द्रव्यस्यापि स्यात् क्षतिश्च प्रवासः ।
कान्तिहानिर्मानवानां हि वर्षे सिंहीसूनुर्नैधनस्थानवर्ती ।।

अष्टम स्थान में राहु के होने पर स्त्री को कष्ट-क्लेश, स्वजनों से विरोध, धन की हानि, परदेश गमन तथा शारीरिक दुःख के कारण कान्ति की हीनता होती है ।

नवम भाव में राहु का फल -

पीडनं हि वपुषोऽपि च रोषो योषयापि च कृशत्वविशेषाः ।
पुण्यकर्मणि नृणामनुबुद्धिः पुण्यधामसमवर्तीतमश्चेत् ।।

नवम स्थान में राहु के होने पर शरीर में पीड़ा, क्रोध, स्त्री के शरीर में भी विशेष दुर्बलता तथा धर्मकार्य में रुचि होती है ।

दशम भाव में राहु का फल -

अवनिनायकतो भयमद्भुतं निजजनैः सह देहनिपीडनम् ।
धनविनाशनमादिशते भृशं बत तमो दशमोदयसंस्थिते ।।

दशवें स्थान में राहु के होने पर राज पक्ष से भय, स्वजनों से क्लेश, शरीर को कष्ट तथा धन की हानि होती है ।

एकादश भाव में राहु का फल -

आरोग्यता वैभवबुद्धिवृद्धिर्नीचाज्जनाच्चापि भवेदवाप्तिः ।
सुखानि नित्यं खलु कामिनीनां सिंहीसुतो लाभगतनितान्तम् ।।

ग्यारहवें स्थान में राहु के होने पर आरोग्यता, ऐश्वर्य की वृद्धि, बुद्धि की वृद्धि, निम्न श्रेणी के मनुष्य से लाभ तथा स्त्री को सुख होता है ।

द्वादश भाव में राहु का फल -

धनव्ययः स्वीयजनेषु पीडा रिपूदयो भूमिभयोपलब्धिः ।
कान्ता सुचिन्ता विततानितान्तं व्ययेऽधिवासस्तमसो यदा स्यात् ।।

बारहवें स्थान में राहु के होने पर धन का खर्च, स्वजनों को पीडा, शत्रु की उत्पत्ति, राजपक्ष से भय तथा स्त्रीसंबंधी चिन्ता की अधिकता होती है ।

खेचारिणां भावफलानि यानि तानि प्रकल्प्यानि दशासु तेषाम् ।
राहोश्च यद्भावफलं निरुक्तां शनेर्दशायामपि परिकल्पनीयम् ।।

नोट - ग्रहों के जो भावों के अनुसार फल हैं वे उन ग्रहों की दशाओं में होते हैं। भाव में स्थिति के अनुसार जो राहु का फल है वह शनि की दशा में भी होना समझना चाहिए।

केतु के फलित -

लग्नभाव में केतु का फल -

यदा केतुको लग्नगो भग्नमात्रस्तदा रोगवृद्धिर्नरे हायने स्यात् ।
महेला सुहेला सुखासारहीनः स्वगोत्रैः स्वमित्रैर्विरोधोऽतिदीनः ।।

वर्ष कुंडली में लग्न में केतु के होने पर शरीर में चोट लगने का भय, शरीर में रोग की वृद्धि, स्त्री संबंधी कष्ट, आर्थिक क्लेश तथा स्वजनों से और मित्रों से विरोध होता है।

द्वितीय भाव में केतु का फल -

धनस्थोऽत्र केतुर्मतिभ्रंशहेतुर्यशःसौख्यहारी कृते विघ्नकारी ।
मनःस्वास्थ्यनाशी कलङ्कप्रकाशी नृपाद्भीतिदायी द्विषत्सन्निधानी ।।

दूसरे स्थान में केतु के होने पर बुद्धि की भ्रंशता, यशकी हानि, सौख्य की हानि, मानसिक क्लेश, कंलक का लगना, राजपक्ष से भय तथा शत्रु की उत्पत्ति होती है।

तृतीय भाव में केतु का फल -

तृतीयस्थितो यस्य मर्त्यस्य केतुः समानश्रियो राजमानभोगहेतुः ।
कुलाम्भोजवाटी विकाशैकाभानुर्भवेद्वैरिवृन्दस्य दाहे कृशानुः ।।

तीसरे स्थान में केतु के होने पर आदर-मान की प्राप्ति, भोगों की प्राप्ति, राजमान, कुलकी उन्नति तथा शत्रुपर जय होती है।

चतुर्थ भाव के केतु का फल -

सुखे केतुः सुक्षीणरायो भवेद्वै सुहृद्गेहदेहेषु काश्यं भजेत ।
सखिस्वामितश्चापमानं लभेत न किञ्चिन्महत्कर्मधर्मं करोति ।।

चौथे स्थान में केतु के होने पर धन की कमी, सुहृत्कष्ट, घर में क्लेश, शरीर में दुर्बलता, स्त्री को कष्ट, राजपक्ष से अपमान तथा कोई बड़ा धर्म-कर्म नहीं होता है।

पंचम भाव में केतु का फल -

कुले जायते जातु चिन्ता कलङ्कः सुहृद्वैर उग्रो रणेऽपि कलङ्कः ।
गृहे पुत्रजन्मोत्सवादीनि तेषां सुकर्माणि केतुस्तनूजेऽस्ति येषाम् ।।

पांचवे स्थान में केतु होने पर कुल में चिन्ता तथा कोई दोष होता है, स्वजनों से अधिक विरोध, मुकदमें में पराजय, घर में पुत्र के उत्सव आदि शुभ कार्य होते हैं।

षष्ठ भाव में केतु का फल -

मतिः स्याद् द्विषां मर्दने तस्य वामा भवेद्यस्य षष्ठगृहे केतुनामा ।
पुरे तत्र शालागृहे रम्यवासो गले पुष्पमाला कुले स्त्रीविशाला ।।

छठे स्थान में केतु के होने पर शत्रुओं को परास्त करने में बुद्धि की तीव्रता, सुदंर स्थान में निवास, गले में पुष्पमाला धारण करना आदि भोग तथा सुन्दर स्त्री का सुख होता है ।

सप्तम भाव में केतु का फल -

द्युनस्थे च केतौ सुखं नो रमण्या न धान्यादिलाभो न योषित्प्रतोषः ।
न मानः प्रभूणां कृपा नो प्रभूणां भयं वैरिवर्गाद्भवेन्मानवानाम् ।

सातवें स्थान में केतु के होने पर स्त्री को कष्ट, धान्य आदि का लाभ न होना, स्त्री से सुख न मिलना, राजपक्षसे मान तथा कृपा का न होना तथा शत्रुवर्ग से भय होता है ।

अष्टम भाव में केतु का फल -

सहोदारकर्मा सहोदारशर्मा सहोदारकेतुर्यदा मृत्युभावे ।
सहोदारशीलः सहोदारलीलः सहोदारभूषामणिर्मानवः स्यात् ।।

आठवें स्थान में केतु के होने पर उदार कर्मों का करना, उदारता से युक्त सुख का भोग, उदारता का स्वभाव, उदारता से युक्त विलास तथा रत्नजटित आभूषण संबंधी उदारता होती है ।

नवम भाव में केतु का फल -

ग्रहे केतुनाग्नि स्थिते धर्मधाम्नि श्रिया राजराजो धिया देवमन्त्री ।
नलः कान्तिकीर्त्या बलिर्दानमानैः कृतैधर्मसूनुर्नरो वर्षमध्ये ।।

नवम स्थान में केतु के होने पर धनका लाभ, अच्छी बुद्धि, कान्ति, कीर्ति, दान, मान तथा धर्म कार्य होता है ।

दशम भाव में केतु का फल -

नभस्थो भवेद्यस्य मर्त्यस्य केतुर्भवेन्नोपमेयप्रभावो भुवि स्यात् ।
मन्त्री डिण्डिमाडम्बरैः शत्रवोऽपि रणप्राङ्गणे तस्य गायन्ति कीर्तिम् ।।

दशवें स्थान में केतु के होने पर देवता के समान प्रभाव का व्यक्ति होता है । उसका शत्रुवर्ग भी उसकी कीर्ति का बखान करता है ।

एकादश भाव में केतु का फल -

यदैकादशे केतुकोऽतिप्रतिष्ठां नवं सुन्दरं मन्दिरं भूमिभोगम् ।
रथानम्बरं भूषणादीनुदारैः सदारैस्तदानेककेलिं करोति ।।

ग्यारहवें स्थान में केतु के होने पर अत्यन्त मान, नवीन सुंदर स्थान का सुख, भूमि संबंधी भोग, वाहन संबंधी सुख, वस्त्र-आभूषण आदि का सौख्य तथा उदार पत्नी से सौख्य प्राप्त होता है ।

द्वादश भाव में केतु का फल -

स्थितो द्वादशे यस्य नैवोग्रतेजाः पुमान्न किन्नायकस्यातितुल्यः ।
रसोदारवर्गैरशास्त्रप्रवीणो धुरन्धो धनुर्धारिणां केतुखेटः ।।

बारहवें स्थान में केतु के होने पर तेज - प्रताप में कमी, निम्न श्रेणी के नायक के समान तुल्यता का होना, शास्त्र के अभ्यास में कमी, रसिक तथा उदारवर्ग से मान का न होना तथा शास्त्र विद्या संबंधी निपुणता होती है ।

भावेश का विवरण - कुण्डली में बारह भाव या स्थान होते हैं । भाव में जो राशि होती है, उसकी स्वामी उस भाव का भावेश होता है । जिस भाव का स्वामी जिस भाव में बैठता है, उसी भाव की स्थिति के अनुसार फल देता है ।

लग्नभावेश का लग्नमें स्थिति का फल -

लग्नाधिपे लग्नगते फलानि सौभाग्यसौन्दर्यमनःप्रसादाः ।।

लग्नेश के लग्न में होने पर सौभाग्य, सौन्दर्य तथा मन की प्रसन्नता होती है।

द्वितीय भाव में लग्नेश का फल -

तनोति रत्नाम्बरवित्तस्थितो सौम्ययुतो विशेषात् ।।

लग्नेश के द्वितीय भाव में होने पर वस्त्र-आभूषण की प्राप्ति, धन लाभ तथा पराक्रम होता है । सौम्य ग्रह से युक्त होने पर फल विशेषता से होता है ।

तृतीय भाव में लग्नेश का फल -

सहजगते लग्नेशे भ्रातृभ्यः सेवकाच्च धनलब्धिः ।।

तृतीय स्थान में लग्नेश के होने पर भाईयों से तथा सेवक से धन लाभ होता है।

चतुर्थ भाव में लग्नेश का फल -

तुर्ये मित्रक्षेत्रजगृहसौख्यं भोज्यपरिलब्धिः ।।

चौथे स्थान में मित्र सुख, भूमि संबंधी सुख, गृह सुख तथा भोजन संबंधी सुख होता है ।

पंचम भाव में लग्नेश का फल -

सुतगे चाराधनतः पुत्रात् सौख्यं च मातृधनम् ।।

पाँचवें स्थान में लग्नेश के होने पर देवता की आराधना, पुत्र से सुख तथा माता से धन का लाभ होता है ।

षष्ठ भाव में लग्नेश का फल -

षष्ठे रोगप्राप्तिर्मातुलसौख्यं च शत्रुनाशश्च ।।

छठे स्थान में लग्नेश के होने पर रोग की प्राप्ति, मामा के पक्ष से सुख तथा शत्रु परास्त होता है ।

सप्तम भाव में लग्नेश का फल -

लग्नाधिपे द्यूनगते स्त्रियाप्तिर्वाणिज्यतोऽर्थागमनेष्टलब्धिः ।।

सातवें स्थान में लग्नेश के होने पर स्त्री के द्वारा लाभ, व्यापार के द्वारा धन लाभ

तथा आशा पूर्ण होती है ।

अष्टम भाव में लग्नेश का फल -

रन्ध्रस्थिते पीडनमेव देहे शुभेत्थशाले मृतवित्तलब्धिः ।।

आठवें स्थान में लग्नेश के होने पर शरीर में कष्ट होता है । यदि अष्टम स्थान में स्थित लग्नेश किसी शुभग्रह से इत्थशाल करता है तो किसी मृत व्यक्ति के धन का लाभ कराता है ।

नवम भाव में लग्नेश का फल-

धर्मस्थितो धर्मरतिर्धनाप्तिर्विदेशयात्रात्तु धनस्य लब्धिः ।।

नवम स्थान में लग्नेश के होने पर धर्म में रुचि, धन का लाभ तथा परदेशजाने में धन का लाभ होता है ।

दशम भाव में लग्नेश का फल -

तनोति सेवां सफलां नृपस्य नृपास्पदे कर्मपतीत्थशाले ।।

दशवें स्थान में लग्नेश बैठकर दशवें स्थान के स्वामी से इत्थशाल करता है तो राजपक्ष से सफलता होती है ।

एकादश भाव में लग्नेश का फल -

लाभे स्थिते स्याद् विविधश्च लाभो निधेः सुखं तातधनस्य लब्धिः ।।

ग्यारहवें स्थान में वर्ष लग्न में होने पर अनेक प्रकार का लाभ, संपत्ति का सुख तथा पिता से संबंधित लाभ होता है ।

द्वादश भाव में लग्नेश का फल -

पितृव्यसौख्यं च शरीरमान्द्यं व्योमे भवेद्राशिखगानुसारात् ।।

बारहवें स्थान में वर्ष लग्नेश के होने पर शरीर का सुख अल्प होता है तथा ताऊ-चाचा से संबंधित सुख होता है ।

द्वितीय भावेश के स्थानगत फल -

लग्नमें द्वितीय भावेश का फल -

धनाधिपे लग्नगते धनाप्तिः शरीरपुष्टिर्विविधाश्च भोगाः ।।

धन लाभ, शरीर की पुष्टि तथा अनेक प्रकार के भोग प्राप्त होते हैं ।

द्वितीय भाव में द्वितीय भावेश का फल -

धने सुवर्णाम्बरभूमिरत्नलाभो भवेद् राशिखगानुसारात् ।।

वस्त्र-स्वर्ण-रत्न तथा भूमि संबंधी लाभ होता है, शुभ ग्रह की राशिमें स्थिति के अनुसार फल होता है ।

तृतीय स्थान में द्वितीय भावेश का फल-

तृतीये सुखं बन्धुतो मानलाभो भवेच्छौर्यतो वित्तलाभः समग्रः ।।

बंधुओं से सुख, मान, लाभ तथा पराक्रम द्वारा धन लाभ होता है ।

चतुर्थ स्थान में द्वितीय भावेश का फल -

चतुर्थे तु मित्राद् धनं गेहसौख्य कृषेर्वाटिकायास्तथा भाटकस्य ।

मित्र द्वारा लाभ, घर-खेती बाग से तथा भाड़े से लाभ होता है ।

पंचम स्थान में द्वितीय भावेश का फल -

सुते पुत्रतो विद्यया मन्त्रतो वा धनं स्यात् समग्रं तथा लेखनेन ।।

पुत्र द्वारा, विद्या द्वारा, मंत्र द्वारा तथा लेखन कला से लाभ होता है ।

षष्ठ स्थान में द्वितीय भावेश का फल -

रिपौ मातुलाच्छत्रुतश्चाश्वतो वा धनं रोगकार्ये व्ययस्तत्र किञ्चित् ।।

मामा के पक्ष से लाभ, घोड़े आदि के द्वारा लाभ तथा रोग के संबंध में कुछ व्यय होता है ।

सप्तम स्थान में द्वितीय स्थानेश का फल -

जायास्थिते धनेशे वाणिज्यात् स्त्रीजनाच्च धनलब्धिः ।।

व्यापार द्वारा तथा स्त्री द्वारा धन का लाभ होता है ।

अष्टम भाव में द्वितीय भावेश का फल -

रन्ध्रगते मृतवित्तं ऋणवित्तं पुनर्विस्मृतं वापि ।।

किसी मृत व्यक्ति के धन की प्राप्ति, ऋण (कर्ज) के द्वारा धन प्राप्ति अथवा भूले हुए धन की प्राप्ति होती है ।

नवम स्थान में द्वितीय भावेश का फल -

नवमे वित्तविनाशो ऋणबाहुल्याद् विदेशयानं वा ।।

धन का व्यय, ऋण की अधिकता तथा परदेश जाना होता है ।

दशम भाव में द्वितीयेश का फल -

दशमे पदलाभः स्यात् स्थलोत्तरात् सेवया वा स्यात् ।।

प्रदप्राप्ति के द्वारा, अन्यस्थान में जाने से अथवा सेवा या नौकरी से लाभ होता है ।

एकादश भाव में द्वितीयेश का फल -

लाभे धनलाभकरः फलधान्यक्षारविक्रयादेव ।।

फल, धान्य (अन्न) तथा खारी-नमक आदि के विक्रय से लाभ होता है ।

द्वादश भाव में द्वितीयेश का फल -

व्ययगे धनव्ययः स्यात् पापयुते राजदण्डेन ।।

धनका व्यय होता है । यदि पापग्रह से युक्त होकर द्वितीयेश बारहवें स्थान में बैठता है तो राजदण्ड के द्वारा धन का व्यय होता है ।

तृतीयेश के भावगत फलित -

लग्नभाव में तृतीयेश का फल -

तृतीये लग्नगते सुखानि सन्तोषलाभः सहजाच्च ।।

सुख प्राप्ति तथा भ्रातृपक्ष से संतोष का लाभ होता है ।

द्वितीय भाव में तृतीयेश का फल -

वित्ते भ्रातुर्भवेन्मान्द्यं विदेशयानात् ।।

भ्रातृ संबंधी कष्ट तथा यात्रा में कष्ट होता है ।

तृतीय भाव में तृतीयेश का फल -

तृतीयगे भ्रातृशरीरपुष्टिं कान्तासुखं गानसुखं विधत्ते ।।

भ्राता के शरीर को सुख, स्त्रीसंबंधी सुख तथा संगीत संबंधी सुख होता है।

चतुर्थ स्थान में तृतीयेश का फल -

चतुर्थगे भ्रातृधनस्य लाभः पदस्य लाभो गृहवाटिकासुखम् ।।

भ्रातृपक्ष से धन लाभ, पद का लाभ तथा घर-वाग-वगीचे आदि से संबंधति सुख होता है ।

पंचम भाव में तृतीयेश का फल -

पुत्रस्थिते वित्तसुखं च तस्माद् भ्रातुर्विशेषादिति यावनोक्तिः ।।

धन संबंधी सुख तथा भ्रातृपक्ष से विशेष सौख्य होता है । ऐसा यवनाचार्य का कथन है ।

षष्ठ भाव में तृतीयेश का फल -

षष्ठस्थिते स्याद्गृहवाटिकासुखं भ्रातुः स्वचित्ते कलिविग्रहौ च ।।

घर-बाग-बगीचे का सुख तथा भ्रातृपक्ष से क्लेश और विवाद होता है ।

सप्तम भाव में तृतीयेश का फल -

मदगे तृतीयनाथे विद्यामन्त्रात् सुखं भ्रातुः ।।

मंत्र द्वारा तथा विद्या द्वारा एवं भ्रातृ पक्ष से सुख होता है ।

अष्टम भाव में तृतीयेश का फल -

रन्ध्रस्थे रोगभयं राशिग्रहधातुजं तथा चाङ्गे ।।

राशि तथा ग्रह से संबंधित धातु के अनुसार शरीर में रोग का भय होता है ।

नवम भाव में तृतीयेश का फल -

रमणीसौख्यं भाग्ये मन्त्रे तीर्थे द्विजे भक्तिः ।।

तीर्थ में, मंत्र में तथा देव-ब्राह्मण में भक्ति तथा स्त्री संबंधी सुख होता है ।

दशम भाव में तृतीयेश का फल -

दशमस्थे रोगभयं चन्द्रयुते हृद्गतं विद्यात् ।।

रोग का भय होता है । चन्द्रमा से युक्त होने पर हृदय रोग होता है ।

एकादश भाव में तृतीयेश का फल-

लाभे भाग्यविवृद्धिः शुभयुतदृष्टेऽन्यथा वामम् ।।

शुभग्रह की दृष्टि होने पर लाभ होता है अन्यथा हानि होती है ।

द्वादश भाव में तृतीयेश का फल -

व्ययगे कर्मविवृद्धिस्तेजोदः खेटोत्थसंसर्गात् ।।

कार्य की वृद्धि तथा तेज की वृद्धि होती है यह फल शुभग्रह के योग से होता है किन्तु पापग्रह के योग से विपरीत फल होता है ।

चतुर्थेश के भावगत फलित -

लग्न में चतुर्थेश का फल-

तुर्येश्वरे लग्नगते गृहादिनिर्मापणं सौहृदतो सुखानि ।।

गृह आदि का बनवाना तथा सुहृद संबंधी क्लेश होता है ।

द्वितीय भाव में चतुर्थेश का फल -

धनस्थितो लाभमतीव भूमितः क्षेत्रात् सुखं मित्रजनात् सुखानि ।।

अच्छा लाभ, जमीन-खेत आदि से सुख तथा मित्रजनों से सुख होता है ।

तृतीय भाव में चतुर्थेश का फल -

तृतीयगे भूमिकृते व्ययः स्यात् पापेक्षिते स्यात् परहस्तगा सा ।।

भूमि के संबंध में व्यय होता है । पापग्रह की दृष्टि होने पर भूमि दूसरे के हाथ में चली जाती है ।

चतुर्थ भाव में चतुर्थेश का फल -

चतुर्थगे भोज्यसुखानि शश्वत् खयेक्षिते राजसुहृत्त्वमादिशेत् ।।

भोजन संबंधी सुख होता है । चतुर्थेश की दृष्टि होने पर राजपक्ष से सुहृदता होती है ।

पंचम भाव में चतुर्थेश का फल -

सुतस्थिते स्याद् गृहवाटिकासुखं पुत्रादिमाङ्गल्यविधाभुजिश्च ।।

घर-बाग आदि से संबधित सुख तथा पुत्र आदि के मंगल में भोजन संबंधी सुख होता है ।

षष्ठ भाव में चतुर्थेश का फल -

षष्ठस्थिते बन्धुजनस्य वादो भूमेर्निमित्तो बहुधा व्ययः स्यात् ।।

बंधुजनों से विवाद तथा भूमि के संबंध में प्रायः खर्च होता है ।

सप्तम भाव में चतुर्थेश का फल -

मदस्थिते स्त्रीजनतः सुहृत्त्वं शुभं भुजि स्यात् कृषिवाटिकासुखम् ।।

स्त्री संबधी सौख्य, उत्तमभोजन, खेती-वाग संबंधी सुख होता है ।

अष्टम भाव में चतुर्थेश का फल -

रन्ध्रस्थिते पुत्रजनैः सुहृत्त्वं वादो भवेद् भूमिकृते च मान्द्यम् ।।

पुत्र आदि से संबन्धित सुख, भूमिसंबंधी झगड़ा तथा शरीरकष्ट होता है ।

नवम भाव में चतुर्थेश का फल -

भाग्यस्थिते भूमिविवर्धनं स्यान् मित्रेषु रोगा विविधा व्रणानि ।।

भूमिसंबंधी उन्नति, मित्रों को अनेक प्रकार के रोग तथा अपने शरीर में व्रण संबंधी शिकायत होती है ।

दशम भाव में चतुर्थेश का फल-

कर्मस्थिते कर्ममयुक्तदृष्टे राज्ञः सकाशादिह भूमिलाभः ।।

दशम भाव में चतुर्थेश, कर्मेश (दशम स्थान के स्वामी) से युक्त या दृष्ट होता है तो उस वर्ष में राजा से भूमि का लाभ होता है ।

एकादश स्थान में चतुर्थेश का फल-

लाभस्थिते मित्रजनैर्विरोधो भूपानुबन्धादिह भूमिनाशः ।।

मित्रजनों से विरोध तथा राजपक्ष से संबंधित भूमि की हानि होती है ।

द्वादश स्थान में चतुर्थेश का फल -

व्ययस्थिते भूमिविवर्धनं स्याद् व्ययोऽधिकः स्यादिह गेहकृत्ये ।।

भूमि संबंधी वृद्धि तथा घरेलू कार्यों में खर्च अधिक होता है ।

पंचमेश की भावों में स्थिति के फलित -

लग्नमें पंचमेश का फल -

सुतेशे तनुस्थे सुतायाप्तिवित्तं ददातीह वर्षे सुबुद्धेर्विवृद्धिम् ।।

सन्तान संबंधी सुख तथा लाभ, धन लाभ तथा अच्छी बुद्धि की वृद्धि होती है।

द्वितीय स्थान में पंचमेश का फल-

धनस्थे च विद्याविवादाद् धनं लेखनात् पाठनाच्चान्द्रिदृष्टे ।।

विद्या से तथा वाद (वहस) से धनलाभ होता है । बुध की दृष्टि होने पर पढ़ने-लिखने के कार्य से लाभ होता है ।

तृतीय स्थान में पंचमेश का फल -

तृतीयोपगे पुत्रसौख्याद् धनप्राप्तिर्भवेद् बन्धुसौख्यं च बुद्धेर्विवृद्धिः ।।

पुत्र के सौख्य से संबंधित लाभ, बंधुओं का सौख्य तथा बुद्धि की वृद्धि होती है।

चतुर्थ स्थान में पंचमेश का फल -

चतुर्थस्थिते पुत्रकार्ये व्यथा स्यात् तथा पीडनं विग्रहः पुत्रमित्रे ।।

पुत्र के कार्य में विपत्ति, झगड़ा, पुत्र तथा मित्र को कष्ट होता है ।

पंचम स्थान में पंचमेश का फल-

सुतस्थे सुतात् सौख्यलाभः स्वबुद्ध्या तथा पापयुक्तेक्षिते क्लेशमाहुः ।।

पुत्रसंबंधी सौख्य का लाभ, अपनी बुद्धि के द्वारा लाभ, पाप ग्रह से युक्त या दृष्ट होने पर क्लेश होता है ।

षष्ठ स्थान में पंचमेश का फल -

रिपुस्थे सुतस्यैव लाभो धनस्य स्वचित्ते विरोधो भवेत् तत्कृतस्तु ।।

पुत्र को लाभ, अपने को लाभ, अपने चित्त में संतान संबंधी विरोध होता है ।

सप्तम स्थान में पंचमेश का फल -

कलत्रस्थिते पुत्रमित्रात् सुखं स्याद् रिपुक्षेत्रगे मानहानिर्निरुक्ता ।।

पुत्र संबंधी सुख, मित्र संबंधी सुख, शत्रुराशि का होने से मानहानि होती है।

अष्टम स्थान में पंचमेश का फल -

मृतिस्थे कृतेर्लाभगेहादिसौख्यं शुभैर्युक्तदृष्टे सुतस्याभिधानात् ।।

उद्योग के द्वारा लाभ, घर आदि से संबंधित सौख्य, शुभ-ग्रहों से युक्त या दृष्ट होने पर पुत्र संबंधी सौख्य तथा लाभ होता है।

नवम स्थान में पंचमेश का फल -

नवमगते पुत्रेशे पौत्रसुखं वृद्धिः पुत्रस्य ।।

पौत्र संबंधी सौख्य तथा पुत्र की उन्नति होती है।

दशम स्थान में पंचमेश का फल -

दशमस्थे व्रणपीडा पुत्राङ्गे पापसंयुते दृष्टे ।।

पापग्रह से युक्त या दृष्ट होने पर पुत्र के शरीर में व्रण (घाव या जख्म) की पीड़ा होती है।

एकादश स्थान में पंचमेश का फल -

लाभस्थे पुत्रवधूजनितं सौख्यं भवेल्लाभः ।।

पुत्र की वधू (पतोहू) से संबंधति सौख्य तथा लाभ होता है।

द्वादश स्थान में पंचमेश का फल -

व्ययगे पुत्रार्तिः स्यात् क्लेशा विविधाश्च पुत्रसम्बन्धात् ।।

पुत्र के शरीर में कष्ट तथा पुत्रसंबंधी अनेक प्रकार के क्लेश होते हैं।

षष्ठेश के भावों में स्थिति के अनुसार फलित -

लग्न में षष्ठेश का फलित -

षष्ठाधिपे लग्नसंस्थे रोगो धरणकं भयम्।
निर्बलेऽस्तमिते वापि स्वप्ने वा मानसे भवेत् ।।

लग्न में षष्ठेश के निर्बल या अस्त होने पर शरीर में रोग, स्वप्न में धर-पकड़ का होना तथा मन में भय होता है।

द्वितीय भाव में षष्ठेश का फल -

षष्ठाधिपे धनं याते रिपुकार्ये धनव्ययः ।।

शत्रु के संबंध में धन का व्यय होता है।

तृतीय भाव में षष्ठेश का फल -

तृतीये रिपुतो लाभः शुभयुक्ते क्षणाद् बहुः ।।

शुभग्रह से युक्त या दृष्ट होने पर शत्रु से बहुत लाभ होता है।

चतुर्थ भाव में षष्ठेश का फल -

चतुर्थे वाहनसुखं लाभोऽल्पः कृषितो भवेत् ।।

सवारी संबंधी सुख तथा खेती आदि से थोड़ा लाभ होता है।

पंचम भाव मे षष्ठेश का फल -

पञ्चमे शत्रुनाशः स्यान्नैरोग्यं तनुते तनौ ।।

शत्रुका नाश तथा शरीर में आरोग्य भाव होता है ।

षष्ठ भाव में षष्ठेश का फल-

षष्ठस्थिते शत्रुवृद्धिस्तनुतेऽब्दे विशेषतः ।।

वर्ष में शत्रु की वृद्धि विशेषता से होती है ।

सप्तम भाव में षष्ठेश का फल -

सप्तमे लाभदः शत्रोमीर्नसे स्वे महद्भयम् ।।

शत्रु से लाभ तथा अपने को मानसिक भय अधिक होता है ।

अष्टम भाव में षष्ठेश का फल -

अष्टमस्थे शत्रुनाशश्चित्तचाञ्चल्यता भवेत् ।।

शत्रु का नाश होता है तथा चित्त चलायमान रहता है ।

नवम भाव में षष्ठेश का फल -

नवमे शत्रुविषयाद्यानं भवति निश्चितम् ।।

शत्रु के निमित्त से यात्रा होती है ।

दशम स्थान में षष्ठेश का फल -

दशमस्थे पुत्रसुखं शत्रोः स्वे समता मता ।।

पुत्र संबंधी सुख होता है, शरीर में व्रण की संभावना तथा शत्रु से तथा धन में समानभाव रहता है ।

एकादशभाव में षष्ठेश का फल -

एकादशे भवेत् पीडा शस्त्राङ्गे व्रणसम्भवा ।।

शरीर में पीड़ा, शरीर में व्रण की संभावना तथा शस्त्र द्वारा पीड़ा की संभावना होती है ।

द्वादश भाव में षष्ठेश का फल -

द्वादशस्थे विपत्तिः स्याच्छत्रोः स्त्रीजनितं सुखम् ।
पापयोगे क्षणात् सर्वं विपरीतं फलं भवेत् ।।

शत्रु से विपत्ति तथा स्त्री संबंधी सुख होता है । पाप-ग्रह से युक्त या दृष्ट होने पर पूर्वोक्त फल से विपरीत फल होता है ।

भावों में स्थिति के अनुसार सप्तमेश के फलित -

लग्न में सप्तमेश का फल -

द्यूनाधिपे लग्नगते स्त्रीसुखं धनवृद्धयः ।।

स्त्रीसंबंधी सुख तथा धन आदि की वृद्धि होती है ।

द्वितीय भाव में सप्तमेश का फल -

धनगे चित्तचाञ्चल्यं कान्ताक्लेशमवाप्नुयात् ।

चित्त चलायमान रहता है तथा स्त्री को क्लेश होता है ।

तृतीय स्थान में सप्तमेश का फल -

तृतीये यानमारोग्यं धनधान्यादिजं सुखम् ।।

शरीर में आरोग्य, सवारी संबंधी सुख तथा धन-धान्य आदि से संबंधित सुख होता है।

चतुर्थ स्थान में सप्तमेश का फल -

चतुर्थे स्त्रीजनात् सौख्यं कर्मसिद्धिर्धनागमः ।।

स्त्रीसंबंधी सौख्य, कार्य की सफलता तथा धन लाभ होता है ।

पंचम भाव में सप्तमेश का फल -

पञ्चमस्थे धनसुखं सुहृत्तोषो रिपुक्षयः ।।

धनका सुख, सुहृद् को संतोष तथा शत्रु परास्त होता है ।

षष्ठ स्थान में सप्तमेश का फल -

षष्ठस्थिते कामपीडा कान्तायाः कलहो गदः ।।

काम संबंधी पीडा तथा स्त्रीसंबंधी कलह तथा रोग होता है ।

सप्तम भाव में सप्तमेश का फल -

सप्तमे कामिनीसौख्यं व्यापाराद् धनसम्पदः ।।

स्त्री संबंधी सुख तथा व्यापर द्वारा धन-संपत्ति का लाभ होता है ।

अष्टम भाव में सप्तमेश का फल -

अष्टमे स्त्रीभवं क्लेशं मानसं च विनिर्दिशेत् ।।

स्त्रीसंबंधी क्लेश तथा मानसिक क्लेश होता है ।

नवम भाव में सप्तमेश का फल -

नवमे भाग्यवृद्धिः स्याच्छालकात्तोषसम्पदः ।।

भाग्य की वृद्धि, साले के द्वारा संतोष तथा लाभ होता है

दशम भाव में सप्तमेश का फल -

दशमे राजमहिषी सन्तोषाद् धनवृद्धयः ।।

रानी की प्रसन्नता से धन की वृद्धि होती है ।

एकादश भाव में सप्तमेश का फल -

लाभस्थो लाभमाचष्टे कान्तायाः सुखवृद्धयः ।।

धन का लाभ, स्त्रीपक्ष से सुख तथा उन्नति होती है ।

द्वादश भाव में सप्तमेश का फल -

व्ययगे व्रण आदेश्यः कान्तादेहे विचक्षणः ।।

स्त्री के शरीर में व्रण आदि कष्ट होता है ।

भावों में स्थिति के अनुसार अष्टमेश के फलित -

लग्न में अष्टमेश का फलित -

अष्टमेशे लग्नगते पापयुक्तेक्षिते मृतिः ।।

अष्टमेश का लग्न में होना अशुभ है, यदि पापग्रह से युक्त या दृष्ट होता है तो मृत्युतुल्य कष्ट देता है ।

द्वितीय भाव में अष्टमेश का फल -

द्वितीय स्त्रीभवं दुःखं पापयुक्तेऽर्थनाशनम् ।।

स्त्रीसंबंधी कष्ट, पापग्रह से युक्त होने पर धनहानि होती है ।

तृतीय भाव में अष्टमेश का फल -

तृतीये सहजाद् रोधः शुभयुक्तेक्षणाच्छुभम् ।।

भ्रातृपक्ष से विरोध शुभग्रह से युक्त या दृष्ट होने पर शुभ होता है ।

चतुर्थ भाव में अष्टमेश का फल -

चतुर्थे मातृपीडा वित्तलाभः शुभान्विते ।।

माता को पीड़ा । शुभग्रह से युक्त होने पर धन लाभ होता है ।

पंचम भाव में अष्टमेश का फल -

पञ्चमे दासतो दुःखं पापयुक्ते चतुष्पदात् ।।

सेवक से दुख, पापग्रह से युक्त होने पर चौपाये से दुख होता है ।

षष्ठ भाव में अष्टमेश का फल -

षष्ठे रिपोर्विनाशः स्यात् पापयुक्तेक्षिते ततः ।।

पापग्रह से युक्त या दृष्ट होने पर शत्रु का नाश होता है ।

सप्तम भाव में अष्टमेश का फल -

सप्तमे स्त्रीभगिन्या च दोषः पापयुतेक्षणात् ।।

पापग्रह से युक्त या दृष्ट होने पर साली दोष लगता है ।

अष्टम भाव में अष्टमेश का फल -

अष्टमे चायुषो वृद्धिः शुभयोगेक्षणाच्छुभम् ।।

आयु की वृद्धि होती है । शुभग्रहसे युक्त या दृष्ट होने पर शुभ होता है ।

नवम भाव में अष्टमेश का फल -

नवमे मृतवित्तापि: पापयोगाद् विषादकृत् ।।

मृतव्यक्ति के धन की प्राप्ति होती है और पापग्रह से युक्त या दृष्ट होने पर विषाद होता है ।

दशम भाव में अष्टमेश का फल -

दशमे कार्यविभ्रंशः पापयोगाद् विघातकृत् ।।

कार्य की हानि, पापग्रह से युक्त या दृष्ट होने से शरीर में घात होता है ।

एकादश स्थान में अष्टमेश का फल -

एकादशे मृतद्रव्यस्याप्तिर्ज्ञेया विचक्षणैः ।।

मृत व्यक्ति के द्रव्य का लाभ होता है ।

द्वादश भाव में अष्टमेश का फल -

द्वादशे रोगकृद् बन्धुदेहे कान्तिक्षयो भवेत् ।।

अपने शरीर में रोग तथा बंधु के शरीर में कांति की कमी होती है ।

भावों में स्थिति के अनुसार नवमेश के फलित

लग्न में नवमेश का फल -

भाग्याधिपे लग्नगते शुभेक्षिते भाग्यस्य वृद्धिर्बहुधा विशेषात् ।।

शुभग्रह से दृष्ट होने पर बहुधा भाग्य की वृद्धि विशेषता से होती है ।

द्वितीय भाव में नवमेश का फल -

द्वितीयके शत्रुविनाशनं च भाग्यस्य वृद्धिः कथिता पुराणैः ।।

शत्रुपरास्त तथा भाग्य की वृद्धि होती है ।

तृतीय स्थान में नवमेश का फल -

तृतीयगे राजसहायतः स्याद् भाग्यस्य वृद्धिस्त्वथ बन्धुसौख्यम् ।।

राजा की सहायता से भाग्य की वृद्धि तथा बंधु को सुख होता है ।

चतुर्थ स्थान में नवमेश का फल -

चतुर्थसंस्थे मृतद्रव्यलब्धिर्भूभाटकात् सौख्यमुदाहरन्ति ।।

मृतव्यक्ति के द्रव्य का लाभ तथा किराये-भाड़े की प्राप्ति होती है ।

पंचम स्थान में नवमेश का फल -

सुतस्थिते पुत्रसुखं विरोधः स्ववंशजः पुत्रवशेन भाग्यम् ।।

पुत्रसंबंधी सुख, परिवार से विरोध तथा पुत्र के द्वारा लाभ होता है ।

षष्ठ भाव में नवमेश का फल -

षष्ठस्थिते भाग्यविवृद्धिरोधः स्ववंशजस्त्रीषु विरोधवादः ।।

भाग्यकी वृद्धि में रुकावट, परिवार से तथा स्त्रीजन से विरोध-विवाद ।

सप्तम भाव में नवमेश का फल -

कामस्थिते भाग्यविवृद्धितोषौ पापार्दिते भाग्यविवृद्धिनाशः ।

भाग्य की वृद्धि तथा संतोष, पापग्रह से युक्त या दृष्ट होने पर भाग्य की हानि होती है ।

अष्टम भाव में नवमेश का फल -

रन्ध्रस्थिते भाग्यविनाशनं स्यात् व्ययोऽधिकः स्याद् गुरुयुक्तदृष्टे ।।

भाग्य की हानि, गुरु से युक्त या दृष्ट होने पर खर्च अधिक होता है ।

नवम स्थान में नवमेश का फल -

भाग्यस्थिते भाग्यविवृद्धियाने शुभेक्षिते शत्रुपराभवः स्यात् ।।

भाग्य की वृद्धि, सवारी संबंधी सुख, शुभग्रह की दृष्टि होने से शत्रु परास्त ।

दशम भाव में नवमेश का फल -

कर्मस्थिते राजसुहृज्जनात् सुखं भाग्योदयः स्यादधिकारतश्च ।।

राजपक्ष से तथा सुहृदों से सुख और अधिकार के द्वारा भाग्योदय होता है ।

एकादश भाव में नवमेश का फल -

लाभस्थिते दैवतपूजानाच्च विवादतो वा बहुधा विवृद्धिः ।।

देवता की पूजा से तथा मुकदमें आदि से प्रायः वृद्धि होती है ।

द्वादश स्थान में नवमेश का फल-

व्ययस्थिते व्याकुलता शरीरे व्ययोऽधिकः पापयुते च दण्ड्यः ।।

खर्च अधिक, शरीर में व्याकुलता, पापग्रह से युक्त होने पर दण्डित होना पड़ता है ।

भावों की स्थिति के अनुसार दशमेश के फलित -

लग्न में दशमेश का फल -

कर्माधिपे लग्नसंस्थे राज्यं पितृसुखं धनम् ।।

राजपक्ष से लाभ, पिता से संबंधित सुख तथा धनलाभ होता है ।

द्वितीय भाव में दशमेश का फल -

धनगः स्वार्जितधनात्सौख्यं दत्ते सुभोजनम् ।।

अपने कमाये धन से सुख तथा उत्तम भोजन का सुख होता है ।

तृतीय स्थान में दशमेश का फल -

सहजे सहजद्वारा कर्मसिद्धिर्धनागमः ।।

भाई के द्वारा कार्य की सिद्धि तथा धनलाभ होता है ।

चतुर्थ स्थान में दशमेश का फल -

पाताले भाटकस्याप्तिर्भूमेर्वित्तस्य सङ्ग्रहः ।।

किराये-भाड़े की प्राप्ति, भूमि संबंधी लाभ तथा धन का संग्रह होता है ।

पंचम स्थान में दशमेश का फल -

पञ्चमे मातृवित्तस्य लाभः सुतसुखं महत् ।।

माता के धन का लाभ तथा पुत्र संबंधी अच्छा सुख होता है ।

षष्ठभाव में दशमेश का फल -

रिपुस्थे मातुलात् सौख्यं स्याद् देहार्तियुतं धनम् ।।

मामा के पक्ष से सौख्य तथा शरीरकष्ट के साथ लाभ होता है ।

सप्तम स्थान में दशमेश का फल -

सप्तमे श्यालकात् सौख्यं स्त्रीविरोधमनस्तपा ।।

साले से सौख्य तथा मन में शिथिलता तथा मानसिक क्लेश होता है ।

अष्टम भाव में दशमेश का फल -

रन्ध्रस्थे कर्महानिः स्यान्मनोजाड्यं मनोव्यथा ।।

कार्य की हानि, मन में शिथिलता तथा मनासिक क्लेश होता है ।

नवम भाव में दशमेश का फल -

धर्मस्थे धर्मवित्ताप्तिर्विदेशगमनं भवेत् ।।

धर्म सबंधी कार्य, धन प्राप्ति तथा परदेश जाना पड़ता है ।

दशम भाव में दशमेश का फल -

कर्मस्थे राजमुद्राङ्गपदप्राप्तिर्महद्धनम् ।।

राजपक्ष से लाभ, पद की प्राप्ति तथा अच्छा लाभ होता है ।

एकादश स्थान में दशमेश का फल -

आये सर्वार्थभोज्यादिकन्यासौख्यमवाप्नुयात् ।।

सब वस्तुओं का तथा भोजन आदि का सुख एवं कन्या संबंधी सुख होता है।

द्वादश भाव में दशमेश का फल -

व्यये वृथा व्ययं कुर्युर्विषशस्त्रविधौ धनम् ।।

व्यर्थ का व्यय तथा विष-शस्त्र आदि से विपत्ति में धन का खर्च होता है ।

भावों में स्थिति के अनुसार एकादशेश के फलित -

लग्न में एकादशेश का फल-

लाभाधिपे लग्नगते सुखानि चतुष्पदाल्लाभमुशन्ति वर्षे ।।

सुख तथा चौपाये से संबंधित लाभ होता है ।

द्वितीय भाव में एकादशेश का फल -

धनस्थिते मित्रजनात् सुखं स्यात् पापेक्षिते पापयुतेऽर्थनाशः ।।

मित्रसंबंधी सुख, पापग्रह से युक्त या दृष्ट होने पर धन की हानि हाती है ।

तृतीय भाव में एकादशेश का फल -

तृतीयसंस्थे नृपवाटिकासुखं पापे सराफेऽत्र विवाद एव ।।

राजपक्ष से सुख, बाग-बगीचा संबधी सुख, पापग्रह से दृष्ट होने पर या पापग्रह से ईसराफ होने पर विवाद होता है ।

चतुर्थ भाव में एकादशेश का फल -

तुर्यस्थिते क्षेत्रकृषेश्च लाभः पापेसराफे क्षणतोऽति कष्टम् ।।

भूमि-खेती आदि से लाभ, पाप ग्रह से दृष्ट या ईसराफ होने पर अधिक कष्ट होता है ।

पंचम स्थान में एकादशेश का फल -

सुतस्थिते स्त्रीजनतो धनागमः सुतस्थसौख्यं च विभूतिरुग्रा ।।

स्त्रीके द्वारा धन लाभ, पुत्र का सौख्य तथा अच्छी संपत्ति होती है ।

षष्ठ स्थान में एकादशेश का फल -

षष्ठस्थिते लाभनिरोधनं स्याच्छुभेत्थशाले त्विह मातुलाख्यम् ।।

लाभ में अड़चन, शुभग्रह से इत्थशाल होने पर मामा से लाभ ।

सप्तम भाव में एकादशेश का फल -

कामस्थिते शोभनकामिनीनां संसर्गतो लाभमुशन्ति धीराः ।।

सुंदर स्त्रियों के द्वारा लाभ होता है ।

अष्टम भाव में एकादशेश का फल -

रन्ध्रे विवादोद्यमनाशनं स्यात् पापेसराफे तनुपीडनं स्यात् ।।

विवाद, उद्योग की हानि, पापग्रह से ईसराफ होने पर देहकष्ट होता है ।

नवम भाव में एकादशेश का फल -

भाग्यस्थिते लाभविदेशयाने जनोपकारः स्वजनस्य सौख्यम् ।।

लाभ, यात्रा, मनुष्यों का उपकार तथा स्वजनों को सुख होता है ।

दशम भाव में एकादशेश का फल -

कर्मस्थिते कर्मशिलादिशिल्पसौगन्ध्यविद्यादिसुभोजनानि ।।

शिल्प-सुगंधितद्रव्य-विद्या आदि के द्वारा लाभ, सुंदर भोजन ।

एकादशस्थान में एकादशेश का फल -

लाभस्थिते लाभविवृद्धितोषौ कान्तासुखं पण्डितमित्रता च ।

लाभ में वृद्धि, प्रसन्नता, स्त्री संबंधी सौख्य तथा विद्वानों से मित्रता होती है।

द्वादश स्थान में एकादशेश का फल -

व्ययस्थिते दासजनाच्च लाभो रिपोर्विनाशो व्ययमेति वित्तम् ।।

सेवक के द्वारा लाभ, शत्रुपरास्त तथा धन का खर्च होता है ।

भावों में स्थिति के अनुसार द्वादशेश के फलित -

लग्न में द्वादशेश का फल -

व्ययाधिपे लग्नगते देहपीडा रिपोर्भयम् ।।

शरीर में पीड़ा तथा शत्रु का भय होता है ।

द्वितीय भाव में द्वादशेश का फल -

द्वितीये चाश्वजो लाभो ग्रहदृष्टिवशेन च ।।

शुभ ग्रह की दृष्टि होने पर घोड़े आदि से संबंधित लाभ होता है ।

तृतीय भाव में द्वादशेश का फल -

तृतीयगे मित्रलाभोऽश्वस्तथा सौख्यविवर्धनम् ।।

मित्र द्वारा लाभ, सवारी संबंधी सुख तथा सुख की वृद्धि होती है ।

चतुर्थ भाव में द्वादशेश का फल -

चतुर्थगे व्ययो लाभः कर्षणाज्जायते भृशम् ।।

धन का खर्च तथा खेती आदि से लाभ होता है ।

पंचम भाव में द्वादशेश का फल -

पञ्चमस्थे व्ययः पुत्राच्छुभयोगेक्षणाच्छुभम् ।।

पुत्र के संबंध में व्यय, शुभग्रह से युक्त या दृष्ट होने पर शुभफल ।

षष्ठ भाव में द्वादशेश का फल -

षष्ठस्थे रिपुनाशः स्याद् व्ययोऽल्पोऽत्र धनागमः ।।

शत्रु परास्त, कम खर्च तथा धन का लाभ होता है ।

सप्तम भाव में द्वादशेश का फल -

जायास्थिते राजदण्डः शुभयुक्तेक्षणाच्छुभम् ।।

राजदण्ड, शुभग्रह से युक्त या दृष्ट होने पर शुभफल होता है ।

अष्टम भाव में द्वादशेश का फल -

रन्ध्रस्थिते रिपोर्भीतिः सङ्कटाच्च धनव्ययः ।।

शत्रु का भय तथा संकट के कारण धन का खर्च होता है ।

नवम भाव में द्वादशेश का फल -

भाग्यस्थिते भाग्यवृद्धिर्व्ययाल्लाभोऽधिको भवेत् ।।

भाग्य की वृद्धि तथा व्यय से लाभ अधिक होता है ।

दशम भाव में द्वादशेश का फल -

दशमस्थे राज्ञतोऽश्वलाभो द्रव्यव्ययेन च ।।

राजपक्ष से लाभ तथा द्रव्य के व्यय से सवारी का सुख होता है ।

एकादश स्थान में द्वादशेश का फल -

एकादशगतेऽप्येवं व्ययो लाभः पितृव्यतः ।।

खर्च होता है तथा ताऊ या चचा के द्वारा लाभ भी होता है ।

द्वादश स्थान में द्वादशेश का फल-

द्वादशस्थेऽश्वसौख्यं स्यात् कन्यासौख्यं व्ययोऽधिकः ।।

सवारी का सुख, कन्या संबंधी सौख्य तथा व्यय अधिक होता है ।

द्वादशवर्गी का फलित -

बारह वर्गों के समुदाय को द्वादश वर्गी कहते हैं । वर्गों के नाम :-

१. ग्रह (लग्नकुण्डली) । २. होरा । ३. द्रेष्काण । ४. चतुर्थांश । ५. पंचमांश। ६. षष्ठांश । ७. सप्तमांश । ८. अष्टमांश । ९. नवमांश । १०. दशमांश । ११. एकादशांश । १२. द्वादशांश ।

योगसुधानिधि ग्रंथ में द्वादशवर्गी के संबंध में वर्णन है -

अथ ब्रुवे द्वादशवर्गिकां च बलाबलज्ञानकारीं ग्रहाणाम् ।।

अर्थात् द्वादशवर्ग से ग्रहों के बल का तथा निर्बलता का ज्ञान होता है ।

आर्चाय रोमक का सिद्धान्त है कि जन्मकुण्डली का तथा वर्ष कुण्डली का निर्माण

कर द्वादशवर्गीबल लगाना । एक पंक्ति में शुभग्रहों के बलों का ऐक्य (एकता) लिखकर उनका योग (जोड़) लिखना । दूसरी पंक्ति में द्वादशवर्गी के अनुसार अशुभ ग्रहों के बलों का ऐक्य लिखकर उनका योग लिखना । यदि शुभग्रहो के बल का योग अधिक होगा तो वह वर्ष शुभ होगा और यदि अशुभ ग्रहों के बल के योग से अधिक होगा तो अशुभफल होगा । इस प्रकार द्वादश वर्गी बल के अनुसार ग्रह का भाव जनित फल तथा दशा जनित फल कहना उचित है ।

शुभ अशुभ ग्रह के निर्णय में वर्ष तंत्र में उल्लेख है -

स्वोच्चमित्रशुभाः श्रेष्ठा नीचारिक्रूरतोऽशुभाः ।।

जो ग्रह, अपनी स्वराशि के या उच्चराशि के अथवा मित्र के हैं और शुभग्रह से युक्त या दृष्ट हैं तो वे ग्रह शुभ हैं । इसी प्रकार जो ग्रह, नीच राशि के या शत्रु राशि के हैं और क्रूर (पाप) ग्रह से युक्त या दृष्ट हैं तो वे ग्रह अशुभ हैं ।

क्रूरोऽपि सौम्याधिकवर्गशाली शुभोऽतिसौम्यः शुभखेचरश्चेत् ।
सौम्योऽतिपापाधिकवर्गयोगान्नेष्टोऽतिनिन्द्यः खलु पापखेटः ।।
राशीशमित्रोच्चरिपुक्रमेण चिन्त्यं तनोरप्यनयैव युक्तया ।
भावेषु सर्वेष्वपि वर्गचक्रं विलोक्य तत्तत्फलमूहनीयम् ।।

१. क्रूरग्रह यदि अधिक सौम्य (शुभ) ग्रहों के वर्ग में है तो वह शुभ है । २. सौम्य ग्रह यदि अधिक सौम्य ग्रहों के वर्ग में है तो वह अतिशुभ है । ३. सौम्य ग्रह यदि अधिक क्रूरग्रहों के वर्ग में है तो नेष्ट है । ४. क्रूर ग्रह यदि अधिक क्रूर ग्रहों के वर्ग में है तो अतिनेष्ट है ।

ग्रह की स्वराशि, उच्चराशि, मित्र राशि, शत्रुराशि तथा नीचराशि का भी विचार प्रधानता रखता है । सभी भावों के विषय में द्वादशवर्गी चक्र से फल की तर्कना करनी उचित है । वर्षकाल के समान ही जन्मकाल में भी द्वादशवर्गी चक्र के आधार पर ग्रह के बल के अनुसार शुभ-अशुभ फल का निर्णय करना चाहिए ।

नोट - कोई विद्वान् वृहत्पंचवर्गी बल की अपेक्षा द्वादशवर्गी बल को गौण (सामान्य) मानते हैं । उनकी यह धारणा एकतंत्रीय होने के कारण अमान्य है ।

फल के संबंध में सिद्धान्त - फल जानने के लिए एक पंक्ति में शुभग्रहों के बलों का योग करना तथा दूसरी पंक्ति में अशुभग्रहों के बलों का योग करना । शुभबल अधिक होने पर पूर्ण फल होता है । शुभफल की अधिकता से ही संपत्ति की तथा सौख्य की प्राप्ति होती है किन्तु अशुभ फल की अधिकता नहीं होती है ।

१. लग्न कुण्डली में शुभफल अधिक होने पर फल पूर्ण होता है तथा मनोरथ की सिद्धि होती है । अशुभफल अधिक होने पर अशुभफल, सुख की हानि तथा भय होता है ।

२. होरा लग्न कुण्डली में शुभफल अधिक होने पर शरीर सुख, राजमान तथा धन का लाभ होता है । अशुभफल अधिक होने पर मानसिक क्लेश तथा राजपक्ष से हानि होती है ।

३. द्रेष्काण लग्न कुण्डली में शुभग्रहों के फल की अधिकता होने पर धन-सम्पत्ति का लाभ तथा भाग्य की वृद्धि होती है । अशुभ ग्रहों का फल अधिक होने पर विशेष कष्ट, मन में उद्योग तथा व्यर्थ के कामों में खर्च होता है ।

४. चतुर्थांश कुण्डली में शुभग्रहों के फल की अधिकता से माता-पिता से संबंधित धन का लाभ होता है । अशुभ-ग्रहों की फल की अधिकता से माता-पिता को उद्वेग तथा अपने को विशेष रूप से मानसिक चिन्ता होती है ।

५. पंचमांश कुण्डली में शुभग्रहों के फल की अधिकता से पुत्र तथा सेवक आदि के द्वारा सौख्य प्राप्त होता है । अशुभग्रहों के फल की अधिकता असज्जन के साथ प्रेम होता है तथा पुत्र और सेवक आदि के द्वारा सौख्य नहीं होता है ।

६. षष्ठांश कुण्डली में शुभग्रहों के फल की अधिकता से शत्रु पर जय तथा सौख्य होता है । अशुभ ग्रहों के फल की अधिकता से गोधन संबंधी भय होता है ।

७. सप्तमांश कुण्डली में शुभग्रहों के फल की अधिकता से स्त्री पक्ष से सौख्य तथा लाभ होता है । अशुभ ग्रहों के फल की अधिकता से मार्ग में विपत्ति का प्रसंग होता है ।

८. अष्टमांश कुण्डली में शुभग्रहों के फल की अधिकता से शरीर में आरोग्य तथा संपत्ति का लाभ होता है । अशुभ ग्रहों के फल की अधिकता से शरीर में वायु तथा पित्त से संबंधित रोगों की विशेषता होती है ।

९. नवमांश कुण्डली में शुभग्रहों के फल की अधिकता से प्राय: लाभ तथा पराक्रम की वृद्धि होती है । अशुभ ग्रहों के फल की अधिकता से खोटी बुद्धि तथा शारीरिक क्लेश होता है ।

१०. दशमांश कुण्डली में शुभग्रहों के फल की अधिकता से राजपक्ष से जय होती है । अशुभग्रहों के फल की अधिकता से कार्यों की सफलता में बाधा पड़ती है ।

११. एकादशांश कुण्डली में शुभग्रहों के फल की अधिकता से आयु: यश तथा बल की वृद्धि होती है । अशुभ ग्रहों के फल की अधिकता से हानि, अधिक दुख, खोटी बुद्धि तथा शत्रु की उत्पत्ति होती है ।

१२. द्वादशांश कुण्डली में शुभग्रहों के फल (बलों का योग) की अधिकता से लाभ और व्यय ठीक तरह होता है । अशुभ ग्रहों के फल की अधिकता से हानि, विरोध, अनुचित व्यय तथा शत्रु से भय होता है ।

वृहत्पंचवर्गी बल का विवरण - १. गृह । २. उच्च । ३. हद्दा । ४. द्रेष्काण । ५. नवमांश । इन पांचों के समुदाय को पंचवर्गी कहते हैं । इनके द्वारा ग्रहों को जो बल प्राप्त होता है, उसे पंचवर्गीबल कहते हैं । आचार्य यादव का सिद्धान्त है -

बलं विंशोपकाज्ञानं पञ्चवर्गबलं विना ।
न स्यादतो लिखेच्चक्रं पाञ्चवर्गं च तद्बलम् ।।

पंचवर्गी चक्र के विना ग्रह का बल तथा उसके विंशोपका (विश्वे) का ज्ञान नहीं हो सकता अत: पंचवर्गी चक्र का वर्ष में लिखना अपेक्षित है ।

वृहत् पंचवर्गी का फलित - तीन प्रकार का फल है । १. शुभ । २. मध्यम । ३. अशुभ । स्वराशि आदि में स्थित ग्रह का फल शुभ है । मित्र राशि आदि में स्थित ग्रह का फल मध्यम है । पापग्रह की राशि में तथा शत्रु राशि में स्थित ग्रह का फल अशुभ है ।

हर्षस्थान का विवरण -ताजकरत्न ग्रंथ में उल्लेख है -

विना हर्षस्थचक्रेण वृथोक्तं हर्षजं फलम् ।
तस्मादत्र लिखेच्चक्रं हर्षस्थानबलाह्वयम् ।।

वर्ष में हर्षस्थान चक्र लगाना अपेक्षित है; क्योंकि उसके विना ग्रह के हर्षस्थबल ज्ञान नहीं हो सकता का है ।

हर्षपद में स्थित ग्रहों के फलित - चत्वारो यदि वत्सरे समुदिताः स्युः खेचरा हर्षिता राज्यप्राप्तिविधिर्विधेरनुनयात् सम्भावना स्यात्तदा । आद्ये हर्षपदे तु पूर्णफलदो मध्ये द्वितीयो मतः स्वल्पास्ते हि तृतीयहर्षभवने तुर्ये निकृष्टाः फले ।।

हर्षपद चार प्रकार के हैं । यदि चारों हर्षपदों में चारग्रह बली होते हैं तो वर्ष में दैव की कृपा से राज्यसुख की प्राप्ति का योग होता है । प्रथम हर्षपद में ग्रह पूर्ण फल देता है, द्वितीय हर्षपद में मध्यम फल देता है, तीसरे हर्षपद में बहुत थोड़ा फल और चौथे हर्ष पद में निकृष्ट फल देता है ।

१. हर्षपद में स्थित सूर्यग्रह का फल - राजपक्ष से प्रसन्नता, शौर्य-पराक्रम की वृद्धि तथा शत्रु पर विजय होती है ।

२. हर्षपद में स्थित चंद्र का फल - सवारी का सुख, श्वेत वस्त्र तथा मोती आदि रत्नों का सौख्य, स्त्री संबंधी सौख्य, यशोलाभ, धन लाभ तथा राजपक्ष का विश्वास प्राप्त होता है ।

३. हर्षस्थान में स्थित मंगल का फल - व्यापार की उन्नति, अच्छी बुद्धि, मित्र के द्वारा सुख, स्त्री संबंधी सुख तथा अपने शरीर में भी सौख्य होता है ।

४. हर्षपद में स्थित बुध का फल - व्यापार की उन्नति, अच्छी बुद्धि, मित्र के द्वारा सुख, स्त्री संबंधी सुख तथा अपने शरीर में भी सौख्य होता है ।

५. हर्षस्थान में स्थित गुरु का फल - उच्चजाति के द्वारा मनोरथ की पूर्ति, राजपक्ष से लाभ, वस्त्र-आभूषण आदि का सौख्य, विद्या द्वारा लाभ, सवारी का सुख तथा प्रसन्नता होती है ।

६. हर्षपद में स्थित शुक्र का फल - ग्रह आदि का सुख, कान्ता से विलास संबंधी सुख, अच्छी बुद्धि, समाज में गौरव, अपने वंश में श्रेष्ठता तथा प्रसन्नता की प्राप्ति होती है ।

७. हर्ष स्थान में स्थित शनि का फल - निम्न जाति के द्वारा लाभ, निम्न जाति के व्यक्ति से मेल, शत्रु परास्त, कार-वार में उन्नति, शरीर को सुख तथा प्रसन्नता होती है ।

दृष्टि का विवरण - जन्मकाल में तथा वर्षकाल में दृष्टि का विचार करना अनिवार्य है। दृष्टि का विचार दो प्रकार का है। १. ग्रह के ऊपर ग्रह की दृष्टि। २. भाव के ऊपर ग्रह की दृष्टि। ३. दृष्टि के संबंध में ताजकालंकार ग्रंथ में वर्णन है -

नभश्चराणां न प्रोक्तं यावद्वीक्षणलक्षणम्।
तावन्न शक्यते वक्तुं फलं वर्षे शुभाशुभम्॥
फलदृष्टिप्रमाणेन स्वयं यच्छन्ति खेचराः।
तत्फलबलमानेन ज्ञात्वादेश्यं शुभाशुभम्॥

वर्ष में जब तक ग्रहों की दृष्टि नहीं देख ली जाती तब तक उनका शुभ या अशुभ फल नहीं कहा जा सकता। ग्रह स्वयं अपने फल को जितनी दृष्टि होती है उसी के अनुरूप देते हैं। अत: एव ग्रह के बल को जानकर उसकी दृष्टि के प्रमाण से शुभ तथा अशुभ फल कहना उचित है। भाव यह है कि, ग्रह के फल के संबंध में ग्रह का बल तथा दृष्टि का विचार करना अनिवार्य है।

दृष्टि का भेद - जातक (जन्म के सबंध में शास्त्रीय विचार) से ताजक (वर्ष के संबंध में शास्त्रीय विचार) में दृष्टि भिन्न है।

त्रिपञ्चनवमायेषु स्थितो मित्रग्रहो भवेत्।
केन्द्रेषु शत्रुर्विज्ञयो ह्यन्यस्थाने समो भवेत्॥

वर्ष में तीन प्रकार की दृष्टि है। १. मित्र दृष्टि। २. समदृष्टि। ३. शत्रुदृष्टि। ग्रह की अपनी स्थिति के भाव से अर्थात् जिस स्थान में बैठा है, उससे तीसरे-पाँचवे-नौवें और ग्यारहवें स्थान को मित्र दृष्टि से देखता है। अतएव उक्त स्थानों में बैठे ग्रह, उस ग्रह के तात्कालिक मित्र होते हैं। दूसरे-छठे-आठवें और बारहवें भाव पर समदृष्टि होती है। पहिले-चौथे-सातवें और दशवें स्थानों पर शत्रुदृष्टि होती है। समदृष्टि से देखा गया ग्रह सम होता है तथा शत्रुदृष्टि से देखा गया ग्रह शत्रु होता है। दृष्टि के फलित के संबंध में यहाँ आचार्य वामन का सिद्धान्त ग्रहण किया गया है।

दृष्टि का फलित - पाँचवें तथा नौवें स्थान पर ग्रह की दृष्टि से सब प्रकार सौख्य, मित्र सुख तथा स्वजन सुख होता है। तीसरे तथा ग्यारहवें स्थान पर ग्रह की दृष्टि से स्नेह की वृद्धि, संतान संबंधी संतोष, आयुवृद्धि तथा धन की प्राप्ति होती है। चौथे तथा दशवें स्थान पर ग्रह की गुप्त दृष्टि होती है। इससे शोक-सन्ताप तथा मित्र से विरोध होता है। सातवें स्थान पर ग्रह की दृष्टि से विवाद, लड़ाई, झगड़ा तथा संकट प्राप्त होता है। एक स्थान में बैठे ग्रहों की दृष्टि बलवती होती है, जिससे कार्य की सिद्धि तथा मित्र सौख्य होता एवं अपने भाव के अनुसार फल होते हैं।

दृष्टि के चार विभाग - $\frac{1}{4}$पाद दृष्टि। $\frac{1}{2}$पाद दृष्टि। $\frac{3}{4}$पाद दृष्टि। पूर्ण दृष्टि। तीसरे और ग्यारहवें स्थान पर ग्रह की एक पाद यानी चौथाई दृष्टि (१५) होती है। चौथे और दशवें स्थान पर ग्रह की त्रिपाद यानी आधी दृष्टि (३०) होती है। पाँचवे और नौवें स्थान पर ग्रह की त्रिपाद यानी पौन दृष्टि (४५) होती है। एक भाव में बैठे ग्रहों की परस्पर में पूर्ण दृष्टि होती है।

दृष्टि का विशेष विचार - पूर्वोक्त दृष्टि के सभी स्थानों में बैठा हुआ मंदगति (देर में राशि बदलने वाला) ग्रह द्वादशवर्गी में बली हो तथा उसे शीघ्रगति (जल्दी राशि बदलने वाला) ग्रह देखता हो तो, ऐसी दृष्टि शुभ होती है ।

क्रूरग्रहों पर दुष्ट दृष्टि हो तथा सौम्य ग्रहों पर शुभदृष्टि हो तो ऐसे ग्रह दृष्टि का पूर्ण फल देते हैं । उक्त स्थिति से विपरीति स्थिति होने से अर्थात् क्रूरग्रहों पर शुभदृष्टि तथा शुभग्रहों पर क्रूरदृष्टि होने से आधा फल होता है । शुभ ग्रहों की सौम्य दृष्टि तथा क्रूर दृष्टि होने से पादोन (पौन) फल होता है ।

नोट - स्वर शास्त्र में दृष्टि तीन प्रकार की मानी गयी है । १. वाम दृष्टि । २. दक्षिण दृष्टि । ३. संमुख दृष्टि । सूर्य-चंद्र-राहु केतु, इन चारों ग्रहों की सदैव तीनों प्रकार की होती है । मंगल-बुध-गुरु-शुक्र-शनि, इन पाँचों ग्रहों में से कोई ग्रह वक्री होगा तो उसकी दक्षिण दृष्टि होगी, शीघ्र गामी होने पर वामदृष्टि तथा मध्यगामी होने पर संमुख दृष्टि होगी ।यह सब विचार लेखक के 'सर्वतोभद्रचक्र-विज्ञान' नामक पुस्तक में देखिये।

यहाँ वर्ष में दो दलों की दृष्टि से ही विचार किया जा सकता है । लग्न से सप्तम भाव तक अन्तर्दल है तथा अष्टभाव से द्वादश भावतक बाह्य दल होता है । अन्तर्दल में दृष्टि वामदृष्टि तथा बाह्यदल में दक्षिण दृष्टि होती है । दक्षिण दृष्टि से वाम दृष्टि बलवती होती है ।

वर्षेश का विवरण - वर्षेश के निर्णय में पंचाधिकारी जानने अनिवार्य हैं। पंचाधिकारी ही लघुपंचेश कहलाते हैं ।

पंचाधिकारी - १. जन्मलग्नपति । २. मुंथा की राशि का पति । ३. दिन में वर्ष प्रवेश होने पर सूर्य राशि का पति तथा रात्रि में वर्ष प्रवेश होने पर चन्द्र राशि का पति । ४. त्रिराशिपति । ५. वर्षलग्नपति।

वर्षेश कौन हो सकता है ? इस विषय में वर्ष तंत्र का सिद्धान्त प्रस्तुत किया जाता है ।

बलीय एषां तनुमीक्षमाणः स वर्षपो लग्नमनीक्षमाणः । नैवाब्दयो दृष्ट्यतिरेकतः स्याद् बलस्य साम्ये विदुरेवमाद्याः ।। दृगादिसाम्येऽप्यथ निर्बलत्वे वर्षाधिपः स्यान् मुथहेश्वरस्तु। पञ्चापि चेन्नो तनुमीक्षमाणा वीर्याधिकोऽब्दस्य विभुर्विचिन्त्यः ।। बलादिसाम्ये रविराशिपोऽह्नि निशीन्दुराशेरिति केचिदाहुः ।। येनेत्थशालोऽब्दविभुः शशी स वर्षाधिपेश्चन्द्रभयऽन्यथात्वे ।। अल्पवीर्ये दृगाधिक्यो बलाधिक्ये दृगल्पकः । ज्ञेयस्तत्र बलाधिक्यो वर्षेशो देववेदिभिः ।।

१. पंच-अधिकारियों में जो ग्रह बलवान् है और लग्न पर दृष्टि रखता है, वही वर्षेश है । यदि बलवान् पंचाधिकारी ग्रह की लग्न पर दृष्टि नहीं है तो वह वर्षेश नहीं हो सकता है । २. पंचाधिकारियों में कई ग्रह बल में समान हैं और लग्न पर दृष्टि भी रखते हैं तो उनमें से दृष्टि साधन चक्र में जिस की कलात्मक दृष्टि अधिक है, वह वर्षेश होगा । ३. पंचाधिकारी ग्रहों में दृष्टि की समानता होने पर भी यदि निर्बलता है तो मुंथेश वर्षेश होगा। ४. यदि पंचाधिकारियों में पाँचों की ही लग्नपर दृष्टि नहीं है तो उनमें जो

षड्बल में अथवा द्वादशवर्गी बल में किं वा वृहत् पंचवर्गीवल में जो सबसे अधिक बल रखता होगा, वही वर्षेश होगा। ५. यदि सभी पंचाधिकारी लग्न पर तो दृष्टि न रखते हों किन्तु बल में समानता रखते हों तो उनमें से त्रिराशि पति ही वर्षेश होता है। ६. एक आचार्य का सिद्धान्त है कि, जो पंचाधिकरी ग्रह, चंद्रमा के साथ इत्थशाल योग करता है, वही वर्षेश होता है। यदि किसी भी पंचाधिकारी ग्रह का चंद्रमा से इत्थशाल नहीं है तो चन्द्र की राशि का पति, वर्षेश होता है। ७. ग्रह का बल तो कम है किन्तु दृष्टि अधिक है अथवा बल अधिक है किन्तु दृष्टि कम है, ऐसी स्थिति में अधिक बल वाले को ही वर्षेश मानना चाहिए।

निष्कर्ष - पंचाधिकारियों में से जो ग्रह सबसे अधिक बलवान् है किन्तु लग्न पर उसकी कलात्मक दृष्टि, अन्य ग्रह की अपेक्षा कम भी है तो वही वर्षेश होता है।

वर्षेश का प्रयोजन - आचार्य यादव का सिद्धान्त है कि

विविधभाव-विभूषणविग्रहा सुनयना नयनां चितमन्यथा।
युवतिर्न विभाति पतिं विना शरदतः शरदां पतिरुच्यते।।

जो स्त्री सुन्दर शरीरवाली, सुंदर नेत्रोंवाली, सुंदर वस्त्राभूषण धारण करने वाली, अनेक प्रकार के भावों वाली, कामोन्मत्त स्त्री, पति से रहित है तो वह व्यर्थ जैसी ही होती है। उसी प्रकार वर्षेश के विचार के विना वर्ष भी व्यर्थ ही जैसा होता है।

वर्षेश का फलित - अब्दाधिपो व्ययषडष्टमभिन्नसंस्थो लब्ध्योदयोऽब्दजनुषोः सदृशो बलेन। निःशेषमुत्तमफलं विदधाति काये नैरुज्यराज्यबललब्धिरतीव सौख्यम्।।

वर्षेश, वर्ष कुण्डली में त्रिक (६-८-१२) स्थान में न हो, बलवान् हो, वर्षेश ग्रह, जैसा बलवान् वर्षकाल में है वैसा ही बली जन्मकाल में भी है तो वर्ष में पूर्ण उत्तम-फल देता है। शरीर में आरोग्य तथा बल देता है, राजपक्ष से लाभ कराता है तथा अत्यन्त सौख्य प्रदान करता है।

वर्षेश के बल का विचार - तीन प्रकार का बल होता है। १. पूर्ण बल। २. मध्यमबल। ३. अधम बल। वर्ष दीपक ग्रंथ में उल्लेख है कि - ६ विश्वो से कम बलवाला ग्रह अल्पबली है और १२ विश्वों से अधिक बलवाला ग्रह पूर्णबली होता है। अतः ७ विश्वों से १२ विश्वों तक का बलवाला ग्रह मध्यम बली ठहरता है। यही नियम वर्षेश के संबंध में भी लागू है।

वर्षेश के बल का फलित - बलपूर्णेऽब्दे पूर्णं मध्ये च मध्यमम्। अधमे दुःखरोगारिभयानि विविधाशुभम्।। वर्षेशे पूर्णवीर्याढ्ये शुभे क्रेन्द्रायकोणगे। शुभविश्वाधिके पूर्णो वर्षे शुभफलोदयः।। मध्यवीर्ये समार्धन्तु हीने किञ्चित् त्रिमासिकम्। विज्ञेयमशुभेऽप्येव-मशुभं तु विशेषतः।। तृतीयैकादशे वर्षे शुभं यच्छन्ति मानतः। विपरीतं तु शेषेषु प्रयच्छन्ति शुभाशुभम्।।

वर्षेश के पूर्ण बलवान होने पर पूर्ण शुभ फल होता है, वर्षेश के मध्यम बली होने पर मध्यम फल होता है तथा वर्षेश का अधम बल होने पर दुख, रोग, शत्रुभय तथा अशुभ फल होते हैं। वर्षेश पूर्ण बलवान होकर केन्द्र (१-४-७-१०) स्थान या त्रिकोण

(५-९) स्थान अथवा लाभ (११) स्थान में स्थित हो, शुभ ग्रह से युक्त तथा दृष्ट हो, अधिक विश्वे बल हो तो पूरे वर्ष भर शुभ फल होते हैं। वर्षेश मध्यबली होकर पूर्वोक्त स्थानों में से किसी स्थान में बैठा हो तथा शुभग्रह से युक्त या दृष्ट होता है तो वर्ष में ६ महीने शुभफल होता है। वर्षेश अधम बली होकर पूर्वोक्त स्थानों में से किसी स्थान में बैठा हो तथा शुभ ग्रह से युक्त या दृष्ट हो तो वर्ष में तीन महीने शुभ फल होता है।

इसी प्रकार अशुभ फल का विचार होता है। वर्षेश त्रिक (६-८-१२) स्थान में बैठा हो, अधम बली (६विश्वे से कम बलका) हो तथा क्रूर ग्रह से युक्त और दृष्ट हो तो पूरे वर्ष भर अशुभ फल होता है। इसी प्रकार का मध्यबली वर्षेश हो तो छः मास अशुभफल होता है। तीसरे तथा ग्यारहवें स्थान में स्थित वर्षेश शुभफल देता है। अशुभ स्थान में बैठकर वर्षेश अशुभ फल देता है।

वर्षेश के सम्बन्ध में अन्य विचार - अब्देशस्तमसायुक्तः सोऽपि वर्षेश्वरो भवेत्। कश्चिन् मन्दखगोऽब्देशादित्थशालं करोति चेत्॥ स्तेऽप्यब्दपः स्यादुभयोस्तारतम्येन वा वदेत्। फलानि विविधानीह यच्चोक्तानि पुरातनैः॥

१. वर्ष लग्न का पति, राहु से युक्त होने पर वर्षेश होता है।

२. कोई मंदगति (देर में राशि बदलने वाला) ग्रह यदि वर्षलग्न के स्वामी से इत्थशाल करता है तो वह वर्षेश होता है। उक्त दोनों प्रकार के विचारों में बल के तारतम्य (न्यूनाधिकता या कमी-वेशी) से विचार करके वर्षेश का निर्णय करना। प्राचीन आचार्यों ने वर्षेश के अनेक प्रकार के फल कहे हैं।

नोट - वर्षेश निर्णय के संबंध में यहाँ ९ प्रकार के सिद्धान्त प्रस्तुत किये गये हैं। उनपर ध्यान देने से वर्षेश का निर्भ्रान्त निर्णय हो सकता है। वर्षेश के विशेष फलित प्रस्तुत किये जाते हैं।

भावों में स्थिति के अनुसार वर्षेश के फलित -

लग्न में स्थित वर्षेश का फल -

सभापतिर्लग्नगतो नराणां करोति अर्थं च सुखाभिवृद्धिम्।
कलत्रपुत्रात्मसुहृत्सुखानि पुष्टिं च नानागुणशालितां च॥

शरीर में पुष्टि, स्त्री-पुत्र तथा सुहृदसंबंधी सुख, अनेक गुण, लाभ तथा सुख की वृद्धि होती है।

द्वितीय भाव में स्थित वर्षेश का फल -

सत्कान्तिशोभं बहुभोगयुक्तं कृतज्ञवर्यं धनधान्यपूर्णम्।
गुणैः प्रपूर्णं महिषीसुखाढ्यं शरत्पतिर्वित्तगतः करोति॥

कान्ति से शोभित, अनेक भोगों से युक्त, धन-धान्य से पूर्ण, गुणों से पूर्ण तथा पत्नी संबंधी सौख्य से युक्त व्यक्ति होता है।

तृतीय स्थान में स्थित वर्षेश का फल -

सत्तीर्थवार्ताश्रवणानुरक्तं जितेन्द्रियं मित्रजनाप्तसौख्यम्।
सद्धर्मदक्षं प्रभया समेतं करोति दुश्चिक्यगतः समेशः॥

अच्छे तीर्थ की वार्ता का सुनने, संयम, मित्रजनों से सौख्य, धर्म में अनुराग तथा कान्ति की प्राप्ति होती है ।

चतुर्थ भाव में वर्षेश का फल -

भूपालमान्यं सुभगं विनीतं जितारिपक्षं सुखिनं सुमित्रम् ।
भक्तं गुरूणां स्वकुलप्रवर्यं करोति वर्षाधिपतिः सुखस्थः ।।

राजपक्ष से मान, सौभाग्य, विजय, शत्रुपरास्त, सुख, मित्रसौख्य, गुरुभक्ति तथा परिवार में गौरव प्राप्त होता है ।

पंचम भाव में वर्षेश का फल -

प्रज्ञाविशेषान्वितमात्मजातिदयापरं शुद्धमतिं विनीतम् ।
धर्मान्वितं पण्डितमित्रवर्यं स्वामी करोत्यात्मजगः समायाः ।।

अच्छी बुद्धि, स्वजनों के प्रति दया, बुद्धि की वृद्धि, विनय, धर्म में रुचि तथा विद्वानों से मित्रता होती है ।

षष्ठ स्थान में वर्षेश का फल -

नानाविधैर्विघ्नगदैः समेतमरातियुक्तं भृशनिष्ठुरं च ।
उद्वेगवन्तं ननु कामुकं च करोति वर्षाधिपती रिपुस्थः ।।

अनेक प्रकार के विघ्न तथा रोगों की उत्पत्ति, अधिक निष्ठुरता, चित्त में उद्वेग (घबराहट) और कामुकता होती है ।

सप्तम भाव में वर्षेश का फल -

विदेशतः स्वालयसौख्यमुच्चैर्जायासुखात्यन्तमनःप्रसादम् ।
करोति नूनं नृपगौरवं च वर्षेश्वरः सप्तमभावयातः ।।

गृह संबंधी सुख, यात्रा द्वारा लाभ, स्त्रीसंबंधी सौख्य, मानसिक प्रसन्नता तथा राजपक्ष से मान होता है ।

अष्टम भाव में वर्षेश का फल -

शोकाकुलं वा बहुशत्रुयुक्तं कार्पण्ययुक्तं गदपीडितं च ।
कुकर्मसक्तं प्रभया विहीनं वर्षाधिराजोऽष्टमगः करोति ।।

शोक से व्याकुलता, अनेक शत्रुओं का होना, दीनता, रोग की पीड़ा, अकार्य में प्रवृत्ति तथा कान्ति की हीनता होती है ।

नवम स्थान में वर्षेश का फल -

सद्धर्मकर्तारमसिद्धिहीनं सत्सङ्गिनं तीर्थपरायणं च ।
तेजोयुतं शास्त्रविदं हितज्ञं चेद्धायनेशः प्रकरोति धर्मे ।।

धर्मकार्य, उद्योग में सफलता, अच्छे पुरुषों की संगति, तीर्थयात्रा, शास्त्रका ज्ञान, तेजस्विता तथा परोपकार होता है ।

दशम भाव में वर्षेश का फल -

दयापरं मानवनाथतुल्यं रूपान्वितं पुण्ययशःसमेतम् ।
स्त्रीपुत्रमित्रादिसुखैः समेतं शरत्पतिः कर्मगतः करोति ।।

दयाभाव, राजभोग, सुरूपता, धर्मकार्य, कीर्तिलाभ, स्त्री-पुत्र तथा मित्र आदि का सुख होता है ।

एकादशभाव में वर्षेश का फल -

अलोलुपं रूपयुतं गुणाढ्यं हिरण्यहस्त्यश्वसुचैलयुक्तम् ।
विवेकवन्तं धनधान्यपूर्णं समापतिर्लाभगतः करोति ।।

निर्लोभता, विचारशीलता, सुरूपता, गुणवत्ता, वस्त्र-आभूषण आदि का सौख्य, वाहनसुख, धन-धान्य लाभ होता है ।

द्वादश भाव में वर्षेश का फल -

रोगान्वितं वा परकार्यसक्तं सद्वृद्धवैरं व्यसनाकुलं च ।
सेवाकरं नीचजनस्य नाथः करोति वर्षस्य विकारमन्त्ये ।।

शरीर में रोगादि विकार, विवशता से दूसरे के कार्य में लगना, विरोधका बढ़ना, व्यसन से व्याकुलता तथा नीच व्यक्ति की सेवा का प्रसंग होता है ।

वर्षेश के फलकी विशेषता -

अस्तङ्गतः पापयुतेक्षितो वा वर्षाधिपः अल्पफलं ददाति ।
चञ्चत्प्रभश्चात्मशुभग्रहाणां वर्गोपगो यच्छति सत्फलानि ।।

यदि वर्षेश अस्त का या पापग्रह से युक्त अथवा दृष्ट होता है तो थोड़ा फल देता है। यदि वर्षेश दीप्तांश का होकर वर्गोत्तमी हो अथवा शुभग्रहों के वर्ग में हो तो शुभफल देता है ।

यदाब्दनाथो जनिजं विलग्नं पूर्णं प्रपदश्येदथवाब्दलग्नम् ।
सुखं शरीरे सुतरां प्रशस्तं नैरुज्यता पुत्रकलत्रसौख्यम् ।।

यदि वर्षेश जन्मलग्न को अथवा वर्षलग्न को पूर्ण दृष्टि से देखता है तो उस वर्ष में शरीर में आरोग्य, उत्तम सुख तथा स्त्री और पुत्र संबंधी सौख्य होता है ।

नोट - व्यक्ति का प्रत्येक वर्ष, राज्य माना गया है । राज्य के अधिकारी इस प्रकार हैं । १. राजा-वर्षेश । २. पुरोहित-जन्मलग्नेश । ३. मंत्री-मुंथेश । ४. सेनापति-वर्षकाल की होरा लग्न का पति । ५. युवराज- वर्ष लग्न से पंचम स्थान में नवांश का पति । ६. रानी- वर्ष काल के सप्तमांश का पति ।

इन सब में जो बलवान् तथा सौम्य हो उसके द्वारा सुख आदि का विचार करना चाहिए ।

सूर्य आदि ग्रह के वर्षेश होने का तथा उसके ग्रह से युक्त या दृष्ट होने के संबंध में फलित का विचार होता है । अतः क्रम से उक्त विचार प्रस्तुत किया जाता है । श्लोकों के लिखने से पुस्तक के कलेवर का विस्तार होगा, इस कारण भाषा में फलित प्रस्तुत किये जाते हैं । वर्षेश का फल बल के अनुसार होता है ।

वर्षेश सूर्य का फल

१. वर्षेश सूर्य बली हो तो मान-यश तथा धन की प्राप्ति होती है , पारिवारिक

सौख्य होता है तथा शत्रु परास्त होता है ।

२. वर्षेश सूर्य मध्यबली होने पर स्वजनों से, पुत्र से तथा राजपक्ष से सुख मध्यम (दर्म्यानी) होता है, शत्रु से भय, लोगों से झगड़ा तथा थोड़ा लाभ होता है ।

३. वर्षेश सूर्य के अल्पबली होने पर पारिवारिक विरोध, रोग, शत्रु से भय, राजपक्ष से भय तथा धन की हानि होती है ।

यदि वर्षेश सूर्य वर्षलग्न में बैठता है या वर्ष लग्न को पूर्णदृष्टि से देखता है तो उस वर्ष में राजपक्ष से भय, ज्वर तथा पित्त संबंधी विकार, भ्रम, धातु के व्यापार में हानि, पूर्व दिशा से हानि, मित्र तथा बधुंओं से विरोध होता है ।

चंद्र से युक्त या दृष्ट वर्षेश सूर्य का फल - चंद्र से वर्षेश सूर्य के युक्त होने पर परदेशगमन तथा वियोग होता है ।

पूर्ण चन्द्र की वर्षेश सूर्य पर पूर्ण दृष्टि होने पर सौख्य, तोजोवृद्धि, स्त्रीसौख्य, मित्रसौख्य, भोजन-वस्त्र आदि का सुख, श्वेत वस्तु के व्यापार में लाभ, वायव्य (पश्चिम और उत्तर की कोण) तथा उत्तर दिशा से लाभ, कभी-कभी कफ विकार-वमन तथा शीत-वायु संबंधी पीड़ा होती है ।

मंगल सु युक्त या दृष्ट वर्षेश सूर्य का फल - सुवर्ण-प्रवाल आदि का लाभ, यश, शत्रु परास्त, राजपक्ष से मान, पित्त का विकार, दक्षिण दिशा से लाभ, अग्नि तथा चोर द्वारा भय होता है ।

बुध से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश सूर्य का फल - शरीर में कुछ कष्ट, शत्रु भय, कभी अपनी वाणी के द्वारा द्रव्य की हानि, काव्य-शास्त्र आदि की चर्चा, क्लीबता (पुरुषार्थ की कमी) तथा स्त्रियों के बीच में प्राय: रहना होता है ।

गुरु से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश सूर्य का फल - धर्ममार्ग में प्रवृत्ति, गुरु भक्ति, भगवद् भक्ति, तीर्थ यात्रा, कोई मंगल कार्य, स्त्री-पुत्र सौख्य, कीर्ति, धन लाभ, जनमान, राजपक्ष से मान, लालवस्त्र आदि लालरंग की वस्तु के व्यापार में लाभ अथवा प्रतिभू (जामिन) आदि बनने से लाभ होता है ।

शुक्र से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश सूर्य का फल - स्त्रीसंबंधी कष्ट, राजसंबंधी क्लेश, नौकरी संबंधी क्लेश, पेट तथा शिर में पीड़ा, ज्वर-खांसी-वमन-कफ-पित्त-अतिसार (दस्त), शत्रु से पीड़ा, स्थान भ्रंश (जगह का छूटना), चिन्ता की अधिकता, स्त्री के शरीर में कष्ट, मानसिक क्लेश, मित्र संबंधी कष्ट, दाद, कमल वाय, अग्निकोण (पूर्व और दक्षिण की कोण) से लाभ की संभावना होती है ।

शनि से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश सूर्य का फल - शरीर कष्ट, शत्रु से मान हानि, धन हानि, उद्योग में शिथिलता, कार्य में असफलता, विपत्ति का सामना, परिवार में किसी का वियोग, कार्य के करने में भय, चौपाये जन्तु से हानि, काले मनुष्य के द्वारा हानि, पश्चिम दिशा से क्लेश, हानि तथा मनुष्यों से कलह होता है ।

राहु तथा केतु से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश सूर्य का फल - कीर्ति की हानि,

राजदण्ड, बंधन का भय, अपमान, शोक, कलह, भय तथा धन की हानि होती है ।

नोट - वर्षेश सूर्य, यदि दो-तीन आदि ग्रहों से युक्त होता है तो उन ग्रहों का मिश्रित फल होता है ।

वर्षेश चन्द्र के फलित

१. वर्षेश चंद्र के पूर्णबली होने पर अनेक प्रकार के सुख, स्त्री-पुत्र संबंधी सौख्य, मित्र सुख, गृह संबंधी सुख, वस्त्र-माला-गंध आदि द्रव्यों का भोग, मोती आदि का लाभ, तथा धर्म कार्य में रुचि होती है ।

२. वर्षेश चंद्र के मध्यवली होने पर धन की हानि, शरीर में कृशता तथा स्थान परिवर्तन होता है ।

३. वर्षेश चंद्र के हीनबली होने पर कफ संबंधी रोग, धन की हानि, चोर आदि का भय, शत्रु से क्लेश तथा यात्रा होती है ।

वर्षेश पूर्ण चंद्रमा यदि वर्षलग्न को पूर्ण दृष्टि से देखता है तो संबंधी सौख्य, कन्या का जन्म, गुण की उन्नति, स्वप्न में स्त्री संगम, श्वेतवस्तु के व्यापर में लाभ, उत्तर दिशा तथा वायव्य कोण से लाभ, मिष्ठान्न भोजन, वस्त्र-आभूषण आदि का सुख तथा परिवार से कुछ क्लेश होता है ।

सूर्य से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश चंद्र का फल - राजपक्ष से मिलन, शरीर में कष्ट, ज्वर की पीड़ा, फोड़े फुंसी का कष्ट, दुर्बलता तथा शूल की पीड़ा होती है ।

मंगल से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश चंद्र का फल - अग्नि से भय, चौपाये से भय, दक्षिण दिशा से हानि, ज्वर की पीडा, पृथ्वी पर फिसलने का भय, शस्त्र लगने से रुधिर का गिरना, फोड़े-फुंसी का विकार, भय, थोड़ी हानि, शरीर में कृशता, राजदण्ड का भय, शिर के बालों का गिरना तथा कोई मांगलिक कार्य भी होता है ।

बुध से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश चन्द्र का फल - सोने आदि धातु से संबंधित लाभ, वाहन सुख, बुद्धि की वृद्धि, आनन्द, मान, सुख, लिखने-पढ़ने में रुचि, उत्तर दिशा से लाभ, स्वजनों से सौख्य होता है । बुध से युक्त चंद्रमा सदैव शुभफल देता है ।

गुरु से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश चंद्र का फल- लाभ, यश, राजपक्ष से मान तथा यश, सुवर्ण आदि धन का लाभ तथा भगवान में भक्ति होती है ।

शुक्र से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश चंद्र का फल - श्वेत वस्तु के व्यापार में लाभ, मोती के आभूषण का लाभ, स्त्री संबंधी सुख, कन्या का जन्म, जल से उत्पन्न वस्तुओं द्वारा लाभ, अग्निकोण (पूर्व और दक्षिण की कोण) से लाभ, भोजन-शयन आदि का सौख्य, वस्त्र-माला आदि सुगन्धित द्रव्यों का भोग, सत्संग तथा भगवद् भक्ति होती है ।

शनि से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश चंद्र का फल - उद्वेग, भय, राजपक्ष से शोक, शत्रुद्वारा संताप, पश्चिम दिशा से हानि, किसी अंग में विकार, थोड़ा लाभ, धन की हानि, रुधिर के विकार से दाद-खाज आदि, कुटुम्ब से कलह, खोटी बुद्धि, व्यसन,

शरीर में कृशता, अंगों में टूटन, दुर्वचन आदि के द्वारा अपवाद होता है ।

राहु से युक्त दृष्ट वर्षेश चंद्र का फल - भय, उद्वेग, रोग, शत्रु से पीड़ा शरीर में वातरक्त का प्रकोप, मित्रों से तथा बन्धुजनों से क्लेश, नैर्ऋत्य कोण (दक्षिण और पश्चिम की कोण) से हानि, वातज्वर की पीड़ा, जल से भय, सर्प से भय, मूर्छा-भ्रम आदि की बाधा, दुर्जनों का संग, धर्म विरुद्ध कार्य, वायुविकार, सभी कामों की चिन्ता तथा पैशाचिक क्रिया से वध तक भी हो जाता है ।

केतु से युक्त दृष्ट वर्षेश चंद्र का फल - शरीर में वायु-कफ संबंधी पीड़ा, वातरक्त का प्रकोप, मित्र तथा बन्धुओं को पीडा, मूर्धा, ज्वर पीड़ा, जल से भय, सर्प से भय, बार-बार कलह, स्त्रियों द्वारा भर्त्सना तथा नैर्ऋत्य कोण से हानि होती है ।

वर्षेश मंगल के फलित

१. पूर्णबली मंगल के वर्षेश होने पर विजय, कीर्ति, महत्त्व, शत्रु परास्त, पदकी प्राप्ति तथा धन का लाभ होता है । २. वर्षेश मंगल के मध्यम बली होने पर शरीर से खून का निकलना, लाभ में अड़चन, शस्त्र लगने का भय, मान हानि, थोडा लाभ तथा थोड़ी प्रतिष्ठा होती है । ३. वर्षेश मंगल के हीनबली होने पर शत्रु से भय, चोर से भय, लोकापवाद, भय, कार्य में विगाड़ तथा धन की हानि होती है ।

यदि वर्षेश मंगल वर्षलग्न में बैठे या उसे पूर्ण दृष्टि से देखे तो पित्त और रक्त संबंधी प्रकोप, अन्य स्त्री से संपर्क, खोटी नीति में प्रवृत्ति, मित्र तथा बंधु से विरोध, चोर से भय तथा अग्नि से भय होता है ।

सूर्य से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश मंगल का फल - सत्पुरुष द्वारा मान, साहस, जय, पूर्व दिशा से सुख तथा लाभ, शरीर में ज्वर की बाधा, पश्चिम दिशा से हानि, थोड़ा भय तथा थोड़ा लाभ होता है ।

चंद्र से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश मंगल का फल - अनेक प्रकार से लाभ, पारिवारिक सौख्य, उत्साह, मोती आदि का लाभ, भाई तथा पुत्र आदि की उन्नति, स्त्री संबंधी सौख्य, उत्तम भोजन, वस्त्र-आभूषण आदि की प्राप्ति, वायव्य दिशा से लाभ, रक्तपित्त संबंधी पीड़ा तथा आर्थिक चिन्ता होती है ।

बुध से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश मंगल का फल - शुभफल प्राप्त होता है।

गुरु से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश मंगल का फल - देवता की आराधना, तीर्थयात्रा, कुछ भय तथा ईशान (पूर्व और उत्तर की कोण) दिशा से लाभ तथा सुख होता है ।

शुक्र से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश मंगल का फल - शरीर में कष्ट, शत्रु से भय, उपद्रव, हानि, कलह तथा लोकापवाद होता है ।

शनि से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश मंगल का फल - दुर्व्यसन में प्रवृत्ति , पश्चिम दिशा से हानि तथा नीच पुरुष के संसर्ग से भय की संभावना होती है ।

राहु से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश मंगल का फल - चोर-शत्रु-अग्नि तथा राजा

से भय, सुख की हानि, शरीर में वायु का प्रकोप, उद्वेग, धर्म में अरुचि, नीच पुरुष के द्वारा हानि तथा नैर्ऋत्य दिशा से आर्थिक हानि होती है ।

केतु से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश मंगल का फल - वर्षा-बादल-बिजली से भय, जल से भय, अग्नि से भय, शत्रु से भय, शरीर में पित्त का प्रकोप, क्लेश, चोर से भय, सर्प से भय, घरमें कलह, शोक तथा चिन्ता होती है ।

वर्षेश बुध के फलित

१. वर्षेश बुध के पूर्ण बली होने पर अच्छी बुद्धि, धर्म में रुचि, स्त्री संबंधी सौख्य, पुत्र-कन्या आदि की वृद्धि, कुटुम्बकी वृद्धि, सन्तान संबंधी सौख्य, धन का संचय, उत्तरदिशा से लाभ, आनंद, शास्त्र की चर्चा, कभी-कभी शरीर में पीड़ा भी होती है ।

२. वर्षेश बुध के मध्यबली होने पर पुत्रसौख्य, मित्र सौख्य, धनलाभ, धर्मसंबंधी कार्य, प्रतिष्ठा, मानसिक चिन्ता, कभी-कभी शरीर पीड़ा, धन का व्यय तथा मानसिक क्लेश होता है ।

३. वर्षेश बुध के हीनबली होने पर शास्त्र के विषय में रुचि, सत्संग, धर्मकार्य, धनलाभ होता है ।

सूर्य से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश बुध का फल - शरीर में ज्वर की बाधा, शत्रुद्वारा कुछ भय, राजपक्ष से प्रसन्नता, स्त्री-सन्तान सौख्य, परिवार में उत्सव, लाभ, पूर्वदिशा से फलकी प्राप्ति, तीर्थयात्रा, सुवर्ण-प्रवाल आदि का संचय, चौपाये आदि की प्राप्ति, अकस्मात् (अचानक) भी लाभ होता है ।

चंद्र से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश बुध का फल - दाद-खाज-खुजली-कुष्ठ आदि की संभावना, हाथी आदि से भय, पशु की हानि, रंग में भंग, शत्रु से भय तथा हानि, वायव्य दिशा से चिन्ता होती है ।

मंगल से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश बुध का फल - शरीर में दीर्घरोग (लम्बी बीमारी), सुहृदों से विरोध, भैंस आदि पशु से भय, लड़ाई झगड़े का भय, स्थानभ्रंश (जगह का छूटना), कुल में कलंक लगने की संभावना, भ्रम, मानसिक क्लेश, चोर-डाकू द्वारा भय तथा शत्रु से भय होता है ।

गुरु से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश बुध का फल - भय तथा रोग की निवृत्ति, राजपक्ष से मान, प्रतिष्ठा, सत्यभाषण, धर्मकार्य, तीर्थयात्रा, प्रेम, धनलाभ, ईशान कोण से लाभ, शिर में पीड़ा, सुवर्ण के कार्यकर्ता से अथवा दक्षिण दिशा से हानि की संभावना रहती है ।

शुक्र से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश बुध का फल - ज्ञान की वृद्धि, स्त्री संबंधी सौख्य, रति में प्रमोद, श्वेतवस्तु के व्यापर से लाभ, देवगुरु भक्ति, नाटक आदि दृश्यों में रुचि, सुख, उत्साह, मंगल कार्य, मित्र से मिलन, राजपक्ष से मान, पद प्राप्ति,

शत्रुपरास्त, आग्नेय दिशा से लाभ होता है ।

शनि से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश बुध का फल - धर्म में अरुचि, संभोग काल में रतिशक्ति की शिथिलता, प्रमेह आदि विकार, घर में क्लेश, दासी से या वेश्या से रति की संभावना, नीच पुरुष के द्वारा हानि होती है ।

राहु से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश बुध का फल - साहस, सब कामों में उत्साह, चित्त में कुछ भ्रम, शरीर में वायु संबंधी पीड़ा, मित्रजनों से कुछ सौख्य तथा नैर्ऋत्य दिशा से लाभ की संभावना होती है ।

केतु से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश बुध का फल - हानि, शोक तथा नीच व्यक्ति के संग से क्लेश होता है ।

वर्षेश गुरु के फलित

१. गुरु (वृहस्पति) वर्षेश के पूर्ण बली होने पर सुख, लाभ, जनता का विश्वास, अच्छी बुद्धि, धर्म में रुचि, राजपक्ष से मान, शास्त्र में रुचि होती है ।

२. वर्षेश गुरु के मध्यबली होने पर थोड़ा लाभ तथा मानसिक क्लेश होता है।

३. वर्षेश गुरु के हीनबली होने पर राजपक्ष से मान तथा धन की हानि, स्त्री-पुरुष तथा मित्र से कलह, बंधु क्लेश, शरीर में रोग, तीर्थस्नान, उत्तर दिशा से लाभ की संभावना, वस्त्र-आभूषण आदि की प्राप्ति तथा चौपाये से हानि होती है ।

सूर्य से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश गुरु का फल - ज्वर आदि की बाधा, शिर में पीड़ा, वायु संबंधी विकार, राजपक्ष से कुछ भय, शत्रु परास्त राजपक्ष में प्रसिद्धि, तेज की वृद्धि, साहस, क्लेश तथा पूर्व दिशा से थोड़े लाभ की संभावना होती है ।

चंद्र से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश गुरु का फल- स्त्री-पुत्र-मित्र आदि से सुख, मिष्टान्न भोजन, धर्मकार्य में रुचि, श्वेत वस्तु के व्यापार से लाभ, वायव्य दिशा से लाभ की संभावना, कुछ खांसी आदि की शिकायत होती है ।

मंगल से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश गुरु का फल- सुख, लाभ, जय, यश, आरोग्य, दक्षिण दिशा से लाभ की संभावना, लालवस्तु के व्यापार से लाभ, राजपक्ष से कुछ भय, ज्वर तथा वमन, पशु से भय होता है ।

बुध से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश गुरु का फल - अच्छी बुद्धि, देव-गुरु भक्ति, लाभ और व्यय समान, शत्रु और मित्र से भी समानता, सुख-दुख भी समान, धनलाभ, पद प्राप्ति, उत्तर दिशा से कुछ लाभ, शिर में पीड़ा होती है ।

शुक्र से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश गुरु का फल - शत्रु से भय, धनहानि, ईशान दिशा से अधिक चिन्ता, स्त्री को मृत्युतुल्य कष्ट तथा बुद्धि की हानि होती है ।

शनि से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश गुरु का फल - म्लेच्छ द्वारा भय, स्थान हानि, मानहानि, स्त्री तथा द्यूत (जुआ) आदि के प्रसंग से हानि, नीच जनों की संगति, व्रण (जख्म)-फोड़ा-फुंसी आदि का भय, वायु संबंधी कष्ट, काले रंग की वस्तु के व्यापार

में हानि, क्लेश, पश्चिम दिशा से चिन्ता, उपदंश (गर्मी-सुजाक) का भय, शस्त्र-विष तथा सर्प आदि का भय होता है ।

राहु से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश गुरु का फल - बंधन-वध आदि कष्ट, बन्धु-बांधव को पीड़ा, पत्नी को राजयक्ष्मा आदि होने का भय, किसी सुहृद् का वियोग, मानसिक संताप, मृत्यु भय, कुल में शोक, पद की हानि तथा दक्षिण दिशा से चिन्ता होती है ।

केतु से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश गुरु का फल - पुत्र तथा भ्राता आदि के संबंध से स्थान संबंधी हानि, भ्रमण करने की इच्छा, अभक्ष्य भक्षण, अगम्या गमन, अज्ञान की वृद्धि, नीच जन की संगति से चिन्ता होती है ।

वर्षेश शुक्र के फलित

१. वर्षेश शुक्र के पूणबली होने पर आरोग्य, राजपक्ष से विजय, उत्तम वस्त्र तथा भोग आदि की प्राप्ति तथा स्त्री संबंधी सौख्य होता है ।

२. वर्षेश शुक्र के मध्यबली होने पर थोड़ा लाभ, गुप्त चिन्ता, कुटुम्बियों को दुख, कफ संबंधी विकार होता है ।

३. वर्षेश शुक्र के हीन बली होने पर शक्ति हीनता, विपत्ति का सामना, मृत्यु तुल्य कष्ट तथा मानसिक सन्ताप होता है ।

सूर्य से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश शुक्र का फल - शत्रु भय, ज्वर की बाधा, शिर तथा नेत्र में पीड़ा, द्रव्य की हानि, पूर्व दिशा से हानि, अग्नि तथा चोर से भय, मान हानि, उत्साह हीनता तथा कुटुम्ब में कलह होता है ।

चंद्र से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश शुक्र का फल - पशुहानि, शिर-दाँत-नाखून आदि में कष्ट, कामला (यरकान) की बाधा, कभी-कभी वायु संबंधी विकार, ईशान दिशा से लाभ, जल से उत्पन्न वस्तु के तथा श्वेत-वस्तु के व्यापार में लाभ होता है ।

मंगल से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश शुक्र का फल- शरीर में पित्त का प्रकोप, राजपक्ष से लाभ, दक्षिण दिशा से लाभ तथा रत्नसंबंधी लाभ होता है ।

बुध से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश शुक्र का फल- अच्छी बुद्धि, शास्त्रचर्चा द्विज-देव भक्ति, चतुरता, बालकों से प्रेम, पुत्र-मित्र आदि में उत्साह, संमान, धनलाभ तथा उत्तर दिशा से लाभ होता है ।

गुरु से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश शुक्र का फल- सुशीलता, धर्म में रुचि, पुण्यकार्य, पद प्राप्ति, बंधु-बान्धव सौख्य, तीर्थस्नान, परिवार में सुख, मित्रसुख, कृषि आदि का सौख्य, दक्षिण दिशा से लाभ, सम्मान, श्वेतवस्तु के द्वारा लाभ होता है ।

शनि से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश शुक्र का फल- शरीर में वायुसंबंधी पीड़ा, दुर्बलता, शीतज्वर (सर्दी का बुखार), जल से भय, भैंसा या घोड़े आदि से भय, अधिक अवस्था की स्त्री से संभोग का प्रसंग, लाभ, अधिकार की प्राप्ति, मित्र से प्रीति,

पारिवारिक सौख्य, काले रंग की वस्तु के व्यापार में लाभ, पश्चिम दिशा से लाभ की संभावना होती है ।

राहु से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश शुक्र का फल - शिर-दाँत-नाखून आदि की पीड़ा, पित्त कामला रोग, शरीर में दुर्बलता, क्लेश, नीच पुरुष के संबंध से हानि, नैर्ऋत्य दिशा से हानि, जल से तथा सर्प से भय होता है ।

केतु से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश शुक्र का फल - बंधु तथा स्वजनों से कलह, पुत्र आदि को कष्ट, शत्रु से तथा नीच व्यक्ति से लड़ाई-झगड़ा, नैर्ऋत्य दिशा से भय तथा हानि, शरीर में वायु के प्रकोप से रूखापन, फोड़े-फुंसी का भय, भ्रम, मूर्छा, सर्प से भय, काले मनुष्य से या काले रंग की वस्तु के व्यापार से हानि, नीच स्त्री के संग से उपदंश आदि का भय होता है ।

वर्षेश शनि के फलित

१. वर्षेश शनि के पूर्णबली होने पर घर-खेत तथा जमीन के द्वारा लाभ, निम्न जाति के संपन्न व्यक्ति द्वारा लाभ, उद्योग में सफलता, सुख, कुल के अनुरूप पद की प्राप्ति, भैंस आदि पशु संबंधी लाभ, काले रंग की वस्तु के तथा ऊनी वस्त्र आदि के व्यापर में लाभ होता है।

२. वर्षेश शनि के मध्यबली होने पर अन्न का कष्ट से उपभोग, कुधान्य द्वारा लाभ, दीनता, नीच व्यापार के द्वारा लाभ होता है ।

३. वर्षेश शनि के हीनबली होने पर विपत्ति का सामना, चोर या शत्रु के द्वारा धन की हानि, स्त्री-पुत्र-मित्र आदि से विरोध, कुत्सित अन्न का भोजन, चिन्ता या हानि, काले रंग की वस्तु के लेन-देन में कुछ लाभ होता है ।

सूर्य से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश शनि का फल - ज्वर की बाधा, शिर में पीड़ा, अग्नि से भय, स्त्री के शरीर में कष्ट तथा प्रवास (परदेश जाना) होता है ।

चंद्र से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश शनि का फल - कुक्षि (कोख) में पीड़ा, विवाद, धन हानि तथा स्त्री के शरीर में कष्ट होता है ।

मंगल से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश शनि का फल - अग्नि भय, चोरभय, स्थान भ्रंश, बंधुओं से विरोध, लाभ में अड़चन तथा दक्षिण दिशा से हानि की संभावना होती है ।

बुध से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश शनि का फल - सौभाग्य,जय, सुवर्ण-रत्न आदि का लाभ, स्त्रीसंबंधी सौख्य तथा सज्जन से संपर्क होता है ।

गुरु से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश शनि का फल - सब प्रकार का सुख, गुरु-देव-द्विज की भक्ति, ईशान दिशा से लाभ, मान, यश, भूमि संबंधी लाभ, स्त्री संबंधी सौख्य, स्त्री से प्रीति होती है ।

शुक्र से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश शनि का फल - धन का लाभ, राजपक्ष से मैत्री, बंधु-बांधव तथा मित्र संबंधी सौख्य, अग्निकोण से लाभ, मान, स्त्री-पुत्र संबंधी सौख्य, स्त्री से प्रीति होती है ।

राहु से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश शनि का फल - सन्निपात (सरसाम) की पीड़ा, फोड़े-फुंसी का उपद्रव, पित्त का प्रकोप, अंगों में पीड़ा, मूर्छा, भ्रम (चक्कर आना), अतिसार (दस्त), जल से भय, सर्प से भय, संबंधियों के निमित्त धन का व्यय, नैर्ऋत्य दिशा से धन हानि की संभावना होती है ।

केतु से युक्त तथा दृष्ट वर्षेश शनि का फल -शरीर में वायु का प्रकोप, पुत्र-मित्र आदि से विवाद, धर्म में अरुचि, अकार्य में प्रवृत्ति, क्लेश, उद्वेग, नीच के संग से दुख की प्राप्ति, अग्नि से भय, राजपक्ष से भय, नैर्ऋत्य कोण से भय, कभी राजा से संबंधित धन हानि होती है ।

नोट - जिस प्रकार वर्ष लग्न कुण्डली में वर्षेश की स्थिति के, ग्रह से युक्त होने के तथा ग्रह से दृष्ट होने के फल हैं, उसी प्रकार मासलग्न कुण्डली में मासेश के तथा दिन लग्न कुण्डली में दिनेश के फलों को जान लेना चाहिए ।

वर्षेश के फल के संबंध में निष्कर्ष - वर्ष का वर्षेश ग्रह व्यक्ति की जन्मकुण्डली में त्रिकस्थान (६-८-१२) को छोड़कर अन्य किसी स्थान में बैठा हो तथा वह शुभ ग्रह से युक्त अथवा दृष्ट हो, इसी प्रकार वर्षेश वर्ष कुण्डली में भी हो तो वह पूर्ण शुभफल देता है ।

यदि वर्षेश ग्रह, जन्म कुण्डली में त्रिकस्थान में बैठा हो पापग्रह से युक्त अथवा दृष्ट हो, इसी प्रकार वर्षेश वर्षकुण्डली में भी हो तो वह पूर्ण अशुभ फल देता है।

वर्षेश, जन्मकुण्डली में तथा वर्ष कुण्डली में शुभग्रह तथा पापग्रह, अर्थात् दोनों प्रकार के ग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट होता है तो मिश्रित (शुभ -अशुभ से मिला) फल देता है ।

यदि वर्षेश, वर्षलग्न के पति से मुथशिल योग करता है अथवा वर्ष लग्न का पति बलवान् होता है व्यक्ति को वर्ष में बहुत सुख होता है ।

यदि वर्षेश, वर्षलग्न के पति से ईसराफ योग करता है अथवा वर्षलग्न का पति बलहीन होता है तो व्यक्ति को वर्ष में बहुत दुख होता है ।

यदि क्रूरग्रह, वर्षेश के साथ इत्थशाल योग करता है तो वर्षेश का शुभ फल होता है किन्तु अशुभ फल कम होता है ।

यदि कोई क्रूरग्रह, वर्षेश के साथ ईसाराफ योग करता है तो वर्षेश का अशुभ फल तो पूर्ण होता है किन्तु शुभफल कम होता है ।

नोट - इस प्रकार योग-अयोग-बल तथा अबल का विवेक रखकर ही फल का कथन उचित होता है ।

अरिष्ट योग विचार - संस्कृत में रिष्ट तथा अरिष्ट, दोनों शब्द हैं । जिनके

यहाँ अर्थ, अशुभ-संकट-मृत्यु तथा मृत्यु के चिह्न हैं । ज्यौतिष शास्त्र में रिष्ट या अरिष्ट के संबंध में वर्णन है -

वृथाफलं हायनजं च यस्मान्न जीवनं हायनरिष्टयोगात् ।।

अरिष्ट योग के विचार के विना वर्ष का फल व्यर्थ है । वर्ष में रिष्टयोग होने से व्यक्ति का जीवन नहीं रहता है ।

यों तो अरिष्ट योग अनेक हैं किन्तु जिन योगों का होना संभावित हैं तथा जो योग, प्रामाणिक एवं परीक्षित हैं उन्हीं को यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है ।

लग्नाधिनाथे मृतिभावसंस्थे भौमेक्षिते तस्य च भावसंस्थे ।
अस्तङ्गते वा भृगुजे बुधे वा शस्त्राभिघातो बहुधापदश्च ।।

वर्षलग्न का पति वर्ष कुण्डली में मेष या वृश्चिक राशि में अष्टम स्थान में बैठा हो तथा उस पर मंगल की दृष्टि हो, एवं बुध या शुक्र अस्त हो, इस योग के होने पर व्यक्ति को शस्त्र से आघात होता है तथा प्राय: विपत्तियाँ आती रहती हैं ।

रात्रीश्वरो भास्करमण्डलस्थः षष्ठे व्यये वा मृतिभावसंस्थः ।
त्रिदोषतोऽसौ बहुभिः प्रकारैः करोति कष्टं विविधं दशायाम् ।।

वर्ष कुण्डली में सिंहराशि का चंद्रमा, छठे, आठवें या बारहवें भाव में स्थित होने पर अपनी दशा में अनेक प्रकार के कष्ट देता है तथा त्रिदोष (सन्निपात) का प्रकोप करता है ।

वर्षलग्नपरन्ध्रेशौ चतुर्थनिधनान्त्यगौ ।
मुन्थहासंयुतौ यत्र तद्वर्षे मरणप्रदौ ।।

वर्ष लग्नकुण्डली में वर्ष लग्नेश तथा अष्टमेश और मुंथा, ये तीनों ही चौथे, आठवें या बारहवें स्थान में बैठें तो व्यक्ति की मृत्यु होती है ।

चेज्जन्मनाथे विवलो मृतीशो लग्नं गतो भास्करदृष्टमूर्तिः ।
शस्त्राभिघातो बहुधा च कष्टं कष्टं शरीरे मरणेन तुल्यम् ।।

जन्मलग्न का पति, वर्ष में निर्बल हो, अष्टमस्थान का पति लग्न में बैठे तथा उस पर शनि की दृष्टि हो, इस योग से व्यक्ति पर शस्त्र का आघात होता है, अपने प्रकार के कष्ट तथा मृत्यु के तुल्य कष्ट होता है ।

मुन्थहालग्ननाथौ चेत् सूर्यमण्डलमागतौ ।
दृष्टौ चेत् सूर्यपुत्रेण सर्वनाशकरौ मतौ ।।

वर्ष लग्न का पति तथा मुंथा, ये दोनों सिंह राशि में हों अथवा सूर्य के पास हों तथा इन पर शनि की दृष्टि हो, इस योग से सब प्रकार का नाश होता है ।

योगो यदा मूसरिफो ग्रहेन्द्रैर्दुष्टैः कृतः सौम्यकृतः कबूलः ।
जन्माधिपः क्रूरयुतस्तदानीं महार्थनाशो मरणेन तुल्यः।।

वर्षकुण्डली में जन्मलग्न का स्वामी क्रूर ग्रह से युक्त हो तथा पापग्रहों का मूसरिफ योग हो एवं सौम्य ग्रहों का कबूल योग हो, इस योग से धन की हानि तथा मृत्युतुल्य कष्ट होता है ।

बलोत्कटाः क्रूरखगाबलेन हीना यदा सोम्यखगास्तदानीम् ।
दुःखं महाव्याधिकृतं च वैरं परस्परं शत्रुविमर्दनं च ।।

जिस वर्ष में पापग्रह बलवान हों तथा शुभग्रह बलहीन हों तो उस वर्ष महाव्याधि के द्वारा कष्ट तथा पारस्परिक विरोध मचता है ।

दैत्येन्द्रपूज्यो यदि नीचसंस्थः सुरेशपूज्यते रिपुभागवर्ती ।
स्वप्नेऽपि सौख्यं न हि वर्षमध्ये वृथाफलं हायनजं तदानीम् ।।

वर्षकुण्डली में शुक्र कन्याराशि का हो तथा वृहस्पति शत्रुराशि का हो तो उसवर्ष व्यक्ति को स्वप्न में भी सुख नहीं मिलता तथा वह वर्ष विल्कुल वेकार जाता है।

शुक्रेज्यो यदि चास्तगौ हिमरुचिर्नीचानुगश्चेत्तदा ।
कुर्याद् व्याधिभयं वियोगमशिवं कष्टं महारुहणम् ।।

वर्षकाल में गुरु और शुक्र अस्त हों तथा चंद्र वृश्चिक राशि में हो तो इस योग से व्यक्ति को रोग भय, वियोग, अशुभ तथा महादारुण कष्ट होता है ।

छिद्रेशो यदि लग्नगस्ननुपतिश्छिद्रानुगश्चेत्तदा ।
दृष्टौ तौ खलखेचरैर्निधनदौ शस्त्राद् भयं स्यात् ततः ।।

वर्षकुण्डली में अष्टमेश लग्न में बैठे तथा लग्नेश अष्टम स्थान में बैठे, उन दोनों पर क्रूर ग्रहों की दृष्टि हो, इस योग से व्यक्ति को शस्त्र का भय तथा मृत्यु भय होता है ।

अस्तङ्गतौ भार्गवसोमपुत्रौ नीचस्थितौ रात्रिपतिर्यदि स्यात् ।
तदा वियोगं मरणं च कष्टं शरीरपीडामतुलां करोति ।।

वर्ष प्रवेश काल में बुध और शुक्र अस्त हों, चंद्रमा वृश्चिक राशि में हो, इस योग से व्यक्ति को अतुलशरीरकष्ट, वियोग तथा मृत्यु की भी संभावना होती है ।

हद्देश्वरो हायनलग्ननाथः सप्तान्त्यगः क्रूरयुतः करोति ।
मृतिं दशायां शुभयुक्तदृष्टः फलं तदर्द्धप्रतिमं करोति ।।

हद्दा लग्न का स्वामी तथा वर्षलग्न का स्वामी, क्रुरग्रह से युक्त होकर सातवें व बारहवें स्थान में बैठे तो अपनी दशा में मृत्यु करता है । यदि उक्त ग्रह, शुभग्रह से युक्त या दृष्ट होते हैं तो आधाफल देते हैं अर्थात् मृत्यु न देकर महाकष्ट देते हैं ।

नीचे त्रिराश्याधिपतिः परस्य गेहेऽथ पापेन विलोकितश्च ।
कार्यस्य नाशं कुरुते त्वकस्माद् वैरं च कष्टं परतः सदैव ।।

त्रिराशिपति नीच राशि का अथवा शत्रुराशि में हो तथा उस पर पापग्रह की दृष्टि हो तो अकस्मात् ही कार्य की हानि होती है तथा दूसरों से वैर होता है ।

पुरेन्थिहेशो रविमण्डलस्थो यदा तदैवं प्रवदन्ति सन्तः ।
षष्ठाष्टमस्थे ननु वर्षनाथे महाभयं भूपकृतं च कष्टम् ।।

वर्ष कुण्डली में मुन्थेश, सूर्य के साथ हो तथा वर्षेश, छठें या आठवें स्थान में बैठे तो व्यक्ति को कष्ट तथा राजपक्ष से अधिक भय होता है ।

यदाशुभाङ्गे शशिजे कबूले मन्देन सार्धं न सुखं कदाचित् ।

कलत्रहानिं मरणं च दुःखं करोति वैरं बहुधा नराणाम् ।।

वर्षकुण्डली में चंद्रमा पापग्रह की राशि में बैठकर शनि के साथ कबूल योग करता है तो व्यक्ति को उस वर्ष कभी सुख ही नहीं मिलता, स्त्री की हानि, दुःख, मृत्यु तथा प्रायः वैर होता है ।

क्रूरः खगो योऽस्तमितोऽथ वक्रः क्रूरस्य वर्गे यदि लग्ननाथः ।
क्रूरस्तदा भङ्गमुशन्ति तज्ज्ञाः पुरस्य वैरं पुरतो विनाशः ।।

कोई भी क्रूरग्रह अस्त हो या वक्री हो तथा क्रूर राशि में हो इसी प्रकार वर्ष लग्नपति भी क्रूर हो तो उस वर्ष भंग योग होता है, पुरमें वैर तथा हानि होती है ।

लग्नेशेऽष्टमगेष्टेशे तनुस्थे वा कुजे स्थिते ।
ज्ञजीवयोरस्तगयोः शस्त्राघातो विपन्मृतिः ।।

वर्ष कुण्डली में वर्ष लग्नेश अष्टम स्थान में बैठे, अष्टमेश लग्न में बैठे अथवा लग्न में मंगल बैठे एवं बुध और गुरु अस्त हों तो इस योग से व्यक्ति के लिए विपत्ति, शस्त्र से आघात तथा मृत्यु तक हो सकती है ।

क्रूरमूसरिफोऽब्देशो जन्मेशः क्रूरितः शुभैः ।
कंबूलेऽपि भवेन्मृत्युरित्थमन्याधिकारतः ।।

वर्षप्रवेश काल में वर्षेश का क्रूरग्रह से मुसरिफ योग हो, क्रूरग्रह से युक्त या दृष्ट, जन्मलग्नेश का शुभ ग्रहों से कंबूल योग हो तो इस योग से व्यक्ति की अन्य के द्वारा मृत्यु होती है ।

लग्नेशेऽष्टमगेष्टेशे तनौ च मृतिमादिशेत् ।।

वर्ष कुण्डली में लग्नेश अष्टमस्थान में हो तथा अष्टमेश लग्न में हो तो यह मृत्युयोग है ।

इत्थिहेशेऽब्दपे वारिभेऽस्तं याते रुजा विपत् ।।

मुंथेश या वर्षेश, शत्रुराशि का हो या अस्त हो तो व्यक्ति को रोग तथा विपत्ति प्राप्त होती है ।

जन्मन्यष्टमगः पापो वर्षलग्ने रुगाधिदः ।।

वर्ष कुण्डली में लग्न में तथा अष्टम स्थान में पापग्रह होने से व्यक्ति को रोग तथा मानसिक क्लेश होता है ।

चन्द्राब्दलग्नपौ नष्टबलौ चेत् स्यात् तदा मृतिः ।।

वर्षलग्न का स्वामी तथा चंद्रमा, दोनों ही नष्ट बली होते हैं तो मृत्युयोग है ।

व्ययाम्बुनिधनारिस्था जन्मेशाब्दपमुन्थहाः ।
एकर्क्षगास्तदा मृत्युः पापयुक्तदृशा ध्रुवम् ।।

जन्मलग्नेश, वर्ष लग्नेश और मुंथा, ये तीनों एक साथ ही वर्ष कुण्डली में चौथे-छठें या बारहवें स्थान में बैठें तो मृत्यु योग है । यदि ये पापग्रह से युक्त या दृष्ट हों, तब तो निश्चय ही मृत्यु योग है ।

जन्माब्दलग्नपौ पापयुक्तौ पतितभस्थितौ ।

रोगाधिदौ मृत्युकरावस्तगौ नेक्षितौ शुभैः ।।

वर्ष कुण्डली में जन्मलग्नेश और वर्ष लग्नेश, पापग्रह से युक्त होकर पापग्रह की राशि में बैठें हो तो, व्यक्ति को रोग तथा मानसिक क्लेश होता है, और यदि उक्त ग्रहों पर शुभग्रहों की दृष्टि न हो तो मृत्यु योग होता है ।

अब्दलग्नादृज्वनृजौ व्ययार्थस्थौ रुजा खगौ ।
एवं वर्षाब्दलग्नेशजन्मेशैरपि बन्धनम् ।।

वर्ष लग्न से दूसरे स्थान में पापग्रह बैठे तथा बारहवें स्थान में शुभग्रह बैठे तो व्यक्ति को रोग होता है । इसी प्रकार जन्मलग्नेश से तथा वर्षलग्नेश से पूर्वोक्त ग्रह बैठें तो व्यक्ति को बन्धन (जेल) होता है ।

लग्नं पापखगान्तरे यदि गतं द्यूनं तथा मृत्युकृत् ।।

वर्ष कुण्डली में दूसरे-छठे-आठवें और बाहरवें स्थानों में पापग्रहों के होने पर मृत्यु योग होता है ।

लग्नास्तान्त्यषडष्टगो हिमरुचिर्दृष्टः खलैः संयुतः
स्याद् रिष्टं प्रकरोत्यसौ च गुरुणा नो वीक्षितः सद्दृशा ।
कष्टं स्याच्छनिना कुजेन दहनाच्छस्त्राद् भयं वा विदुः
सन्दृष्टः प्रकरोति सौम्यखचरैः सौख्यप्रदः शोभनम् ।।

वर्ष कुण्डली में पापग्रहों से युक्त तथा दृष्ट होकर चन्द्रमा, लग्न-छठें-सातवें-आठवें या बारहवें स्थान में बैठे तथा उसपर वृहस्पति की दृष्टि न हो तो यह अरिष्ट योग है ।

यदि उक्त स्थान में बैठा चंद्रमा, शनि से युक्त या दृष्ट हो तो शरीर में कष्ट होता है । मंगल से युक्त या दृष्ट होने पर अग्नि से या शस्त्र से भय होता है । शुभग्रहों से युक्त या दृष्ट हो तो शुभफल होता है ।

रन्ध्रेशोऽथ विलग्नपो यदि विधोर्लग्नाद् व्ययारिष्टगौ ।
नो सौम्यैरवलोकितो निधनकृन्मुन्थाधिपो वा तथा ।।

वर्षकुण्डली में लग्नेश और अष्टमेश, लग्न से या चंद्रमा से आठवें या बारहवें स्थान में बैठे हों तथा उनपर शुभग्रहों की दृष्टि न हो तो यह मृत्युयोग है । इसी प्रकार लग्न से या चंद्र से आठवें या बारहवें स्थान में मुंथेश बैठा हो तथा उसपर शुभग्रहों की दृष्टि न हो तो मृत्युयोग होता है ।

चन्द्रेशलग्नेशमृतीश्वराश्चेद् व्ययारिमृत्यूपगता विलग्नात् ।
मृत्युप्रदा जन्मपमुन्थहेशौ मृत्युस्थितौ क्रूरनिरीक्षितौ तथा ।।

वर्ष कुण्डली में वर्षलग्नेश, अष्टमेश तथा चंद्र की राशि का स्वामी, ये तीनों ही छठे-आठवें तथा बारहवें स्थान में बैठें तो मृत्यु योग है ।

वर्ष कुण्डली में मुंथेश तथा जन्मलग्नेश, दोनों ही आठवें स्थान में बैठें तथा उनपर क्रूरग्रहों की दृष्टि हो तो मृत्यु योग है ।

स्यात् क्रूरकर्तरियुतो लग्नेशो राजरोगभयकारी ।।

वर्ष लग्नेश से दूसरे तथा बारहवें स्थान में क्रूरग्रह होने पर व्यक्ति को राजरोग (तपेदिक आदि) का भय होता है ।

जननसमयलग्नाधृमं वर्षलग्ने युतमथ मुन्थेहेशे नेक्षितं रिष्टहेतुः ।।

जन्म की लग्न से वर्ष की लग्न आठवीं हो तथा वह मुंथेश से युक्त या दृष्ट हो तो यह अरिष्ट योग है ।

क्ष्मासुतेक्षितयुतस्तनुभर्ता स्यान्मृतिस्थितिकरो मृतिकर्ता ।।

वर्ष कुण्डली में जन्मलग्नेश आठवें स्थान में बैठे तथा उसपर मंगल की दृष्टि हो तो मृत्यु योग है ।

सूर्यलुप्तकिरणौ धिषणज्ञौ शस्त्रपीडनकरौ च नराणाम् ।।

वर्षकुण्डली में बुध और गुरु, सूर्य के साथ बैठें तो शस्त्र से पीड़ा होती है ।

चेदिन्थिहा पापयुता षडष्टव्ययोपगा येति हुताशभीतिम् ।
करोति वर्षे रविनन्दनेन युतेक्षिता वा पवनप्रकोपम् ।।

वर्षकुण्डली में मुंथा पापग्रह से युक्त होकर छठे, आठवें या बारहवें स्थान में हो तो अग्निभय होता है ।

यदि मुंथा शनि से युक्त या दृष्ट होती है तो वायु का विकार होता है ।

मदननिधनबन्धुप्राप्तिशत्रुस्थिता चेज्जननसमयलग्नादिन्थिहाब्देऽष्टमस्था ।
खलगगनचरैश्चेद्युक्तदृष्टातिरिष्टं जनयति शुभदृष्टात्यन्तरिष्टाल्पता स्यात् ।।

वर्षकुण्डली में चौथे-छठे-सातवें-आठवें या ग्यारहवें स्थान में मुंथा हो तथा वह जन्मलग्न की राशि से आठवीं राशि में हो एवं उसे क्रूर ग्रह देखते हों या कूरग्रहों से युक्त हो, इस योग से अरिष्ट होता है । यदि उक्त प्रकार की मुंथा शुभग्रहों से दृष्ट होती है तो थोड़ा अरिष्ट होता है ।

कामिनीभवनगस्तु हिमांशुर्लग्नपो मृतपतिर्यदि संस्थः ।
द्वादशे द्विषि तथायुषि रिष्टं स्यान्मृतौ च तनुपो मुथहेशः ।।

वर्षकुण्डली में सप्तम स्थान में चंद्रमा हो, वर्ष लग्नेश तथा अष्टमेश, छठे-आठवें या बारहवें स्थान में हों, एवं लग्नेश तथा मुंथेश अष्टम भाव में हों तो यह अरिष्ट योग है ।

कूरस्य हद्दा सितगुः सपापः केन्द्रे न दृष्टश्च शुभैर्मृतिः स्यात् ।।

वर्षकाल में क्रूर ग्रह की हद्दा हो, केन्द्र में पापग्रह से युक्त होकर चंद्रमा बैठा हो और उसे शुभग्रह देखते न हों तो मृत्युयोग है ।

समन्दलग्ने द्युनगे महीजे वर्षे नरोऽसौ यमसद्म याति ।।

वर्ष लग्न में शनि हो तथा सप्तम स्थान में मंगल हो तो यह मृत्यु योग है ।

कुजतमोऽर्कसुताः सुखमाश्रिता यमकरं स नरः परिगच्छति ।।

वर्षकुण्डली में चौथे स्थान में मंगल-शनि-राहु, ये तीनों ग्रह एक साथ बैठे हों तो मृत्यु योग है ।

मृतिगतस्त्वशुभोऽशुभदृष्टियुग् विगत ईज्यदृशाब्दगतो मृतिः ।।

वर्ष कुण्डली में अष्टम स्थान में पापग्रह बैठा हो, उस पर गुरु की दृष्टि न होकर

पापग्रह की दृष्टि हो तो यह मृत्यु योग है ।

जन्मलग्नाधिपः सौरी रन्ध्रस्थः पापसंयुतः ।
चन्द्रयोगगतो नूनं रिष्टयोगो भवेत् तदा ।।

जन्म लग्न का स्वामी शनि हो, वह वर्ष कुण्डली में अष्टम स्थान में पापग्रह के साथ तथा चंद्रमा के साथ बैठे तो यह निश्चय ही अरिष्ट योग है ।

छिद्राधिपे केन्द्रगते बलिष्ठे लग्नाधिपे चास्तगते त्रिके वा ।
शूलं विरेचं वमनं च दाहं प्रलापतन्द्रादि करोति कष्टम् ।।

वर्ष कुण्डली में अष्टमेश बलवान् होकर क्रेन्द्र में बैठा हो, वर्ष लग्न का पति अस्त हो अथवा त्रिक (६-८-१२) स्थान में बैठा हो तो व्यक्ति को वमन-विरेचन (कय-दस्त), शूल, दाह, (जलन), प्रलाप, तंद्रा आदि कष्ट होते हैं ।

लग्नस्थितौ रन्ध्रविपक्षनाथो पापेक्षितौ तस्य खगस्य तुल्यम् ।
करोति नूनं विविधाङ्गकष्टं लग्नाधिपे मृत्युगते मृतिः स्यात् ।।

वर्षकुण्डली में छठे स्थान का तथा आठवें स्थान का स्वामी, दोनों ही लग्न में बैठे तथा इनपर पापग्रह की दृष्टि हो तो ग्रह के अनुसार ही व्यक्ति के शरीर में अनेक प्रकार का कष्ट होता है ।

यदि इस योग में वर्ष लग्नेश आठवें स्थान में होता है तो मृत्युयोग होता है ।

चन्द्रान्वितो रन्ध्रगतोऽर्कपुत्रो लग्नाधिपो भास्करमण्डलस्थः ।
करोति कष्टं वमनं च शूलं कासादिरोगे न नरस्य मृत्युम् ।।

वर्षकुण्डली में वर्ष लग्नेश सूर्य के साथ हो तथा शनि और चंद्र, अष्टम स्थान में बैठें हों तो इस योग से शूल तथा वमन का कष्ट होता है एवं खाँसी आदि रोग से व्यक्ति की मृत्यु तक हो सकती है ।

जन्मे यदा रन्ध्रगतोऽर्कपुत्रो वर्षे सराशिर्यदि मृत्युभावे ।
सौरेण युक्तः कुरुते नराणां भुजङ्गमं संस्पृशते च मृत्युः ।।

जन्मकुण्डली में आठवें स्थान में शनि हो, वर्षकुण्डली में भी आठवें स्थान में वही राशि हो तथा शनि से युक्त हो, इस योग से व्यक्ति की सर्प से काटने पर मृत्यु की संभावना होती है ।

जनौ यदा भूमिसुतेऽष्टमस्थे वर्षेऽष्टमे वाप्यधिकारयुक्ते ।
पापान्विते वक्रगते नराणां घातस्तथा चाग्निवशाच्च मृत्युः ।।

जन्मकुण्डली में मंगल आठवें स्थान में हो, वर्ष कुण्डली में मंगल अधिकारी (पाँच अधिकारियों में कोई सा अधिकारी) होकर आठवें स्थान में बैठा हो तथा मंगल वक्री हो तथा पाप ग्रह से युक्त हो तो, इस योग से व्यक्ति की शस्त्रघात से तथा अग्नि से जलजाने पर मृत्यु की संभावना होती है ।

शूलं विरेचं वमनं च कष्टं दाहं तथा शीतलकादिरोगम् ।
घातस्तथा धातुक्षयो नराणामारार्कजौ चन्द्रयुतौ त्रिकस्थौ ।।

वर्ष कुण्डली में त्रिकस्थान में चंद्र-मंगल तथा शनि हो तो, इस योग से शूल,

वमन-विरेचन, दाह, शीतला (चेचक या माता), धातुक्षय आदि रोग तथा घात होता है।

रन्ध्रारिगौ जन्मसमाङ्गनाथो पापेक्षितौ सङ्ग्रहणीविकारात् ।
जायेत कष्टं च तथा ज्वरश्च शूलोद्भवं चापि विचिन्तनीयम् ।।

वर्षकुण्डली में जन्मलग्नेश तथा वर्षलग्नेश, दोनों एक साथ ही छठें, आठवें स्थान में हों, तथा इन पर पापग्रह की दृष्टि हो तो, इस योग से व्यक्ति को ज्वर-शूल तथा संग्रहणी रोग होने की संभावना होती है ।

अरिष्ट भंग योग विचार -

वर्षकुण्डली में यदि कोई अरिष्ट योग होता है तो व्यक्ति के लिए अरिष्ट योग होता है । बलवान् अरिष्ट योग में भयंकर कष्ट से लेकर मृत्यु तक हो सकती है । वर्षकुण्डली में यदि कोई अरिष्ट भंग योग होता है तो वह अरिष्ट योग को भंग (नष्ट) कर देता है । अत: अरिष्ट भंग योग होने पर अरिष्ट योग का फल होता है तो बहुत ही हल्के-पतले रूप में होता है । यदि कई अरिष्ट योग हों तो उन्हीं के अनुरूप अरिष्ट भंग योग भी उतने ही होने चाहिए । बलवान् अरिष्ट योग का नाशक बलवान् अरिष्ट भंग योग ही हो सकता है। यहाँ पर प्रामाणिक अरिष्टभंग योग प्रस्तुत किये जाते हैं ।

गुरुः केन्द्रे त्रिकोणे वा पापादृष्टः शुभेक्षितः ।
लग्नचन्द्रेन्थिहारिष्टं विनश्यार्थसुखं दिशेत् ।।

वर्षकुण्डली में गुरु, केन्द्र (१-४-७-१०) या त्रिकोण (५-९) स्थान में बैठा हो, उस पर पापग्रह की दृष्टि न होकर शुभग्रह की दृष्टि हो, तो लग्न-चंद्रमा तथा मुंथा के द्वारा होने वाला अनिष्ट दूर होता है तथा सुख और लाभ होता है ।

लग्नाधिपो बलयुतः शुभेक्षितयुतो यदा ।
केन्द्रत्रिकोणगोऽरिष्टं नाशयेत् सुखवित्तदः।।

वर्ष कुण्डली में वर्षलग्नेश बलवान् हो तथा शुभग्रह से युक्त और दृष्ट होकर केन्द्र या त्रिकोण में बैठे, इस योग से अरिष्ट का नाश होता है तथा धन और सुख की प्राप्ति होती है ।

लग्ने द्युनेशस्तनुगः सुरेज्यः क्रूरैरदृष्टः शुभमित्रदृष्टः ।
रिष्टं निहन्त्यर्थयशःसुखाप्तिं दिशत्ते स्वपाके नृपतेः प्रसादम् ।।

वर्षकुण्डली में गुरु तथा सप्तमेश, दोनों लग्नमें हों, इनपर पापग्रह की दृष्टि न होकर शुभग्रह की तथा मित्र ग्रह की दृष्टि हो, इस योग से अरिष्ट भंग होता है, धन-यश तथा सुख की प्राप्ति होती है और उक्त ग्रह (सप्तमेश तथा गुरु) अपनी दशा में राजपक्ष से प्रसन्नता कराते हैं ।

बलान्वितौ धर्मधनाधिनाथौ क्रूरैरदृष्टौ तनुगौ तदा स्यात् ।
राज्यं गजाश्वांवरत्नपूर्णं रिष्टस्य नाशोऽप्यतुलं यशश्च ।।

वर्षलग्न में बलवान् होकर द्वितीय तथा नवम स्थान के स्वामी बैठे हों और इनपर क्रूरग्रहों की दृष्टि न हो तो, अरिष्ट का नाश होता है, राजपक्ष से लाभ, वाहन सुख, वस्त्र-आभूषण आदि का सौख्य तथा यश की प्राप्ति होती है ।

यदा सवीर्यो मुथहाधिनाथे लग्नाधिपो जन्मविलग्नपो वा ।
केन्द्रत्रिकोणायधनस्थितास्ते सुखार्थहिमाम्बरलाभदाः स्युः ।।

वर्ष कुण्डली में बलवान् मुंथेश, वर्षलग्नेश तथा जन्मलग्नेश, १, २, ४, ५, ७, ९,१०,११ स्थानों में से किसी स्थान में बैठें तो, सुख, धन, वस्त्र, आभुषण आदि का लाभ कराते हैं ।

. त्रिषष्ठलाभोपगतैरसौम्यैः केन्द्रत्रिकोणोपगतैश्च सौम्यैः ।
रत्नाम्बरस्वर्णयशःसुखाप्तिर्नाशोऽप्यरिष्टस्य तनोश्च पुष्टिः ।।

वर्षकुण्डली में उपचय (३-६-१०-११) स्थान में पापग्रह बैठे हों और केन्द्र तथा त्रिकोण में शुभग्रह बैठे हों, तो, वस्त्र-सुवर्ण-रत्न, यश तथा सुख की प्राप्ति, अरिष्ट का नाश तथा शरीर की पुष्टि होती है ।

तुङ्गे शनिर्वा भृगुजो गुरुर्वा शुभेत्थशालाद्यवनाद् धनाप्तिम् ।।

वर्षकाल में गुरु या शुक्र अथवा शनि, अपनी उच्चराशि का होकर शुभग्रह से इत्थशाल करता है तो यवन के द्वारा धनलाभ होता है ।

बलीकुजो वित्तगतो यशोऽर्थतेजांस्यकस्माच्च सुखानि दद्यात् ।।

वर्षकुण्डली में मंगल बलवान् होकर दूसरे स्थान में बैठे तो अचानक यश, धन, तेज तथा सुख प्राप्त होता है ।

सुखं स्वामियुतं सद्धिर्दृष्टं सौख्ययशोऽर्थदम् ।।

वर्ष कुण्डली में चतुर्थेश चौथे स्थान में बैठे तथा उसपर शुभग्रहों की दृष्टि होने से यश-सौख्य तथा धन की प्राप्ति होती है ।

लग्ने तृतीयेऽथ गुरुर्जन्मेट् सौख्यार्थदः सुखे ।।

वर्षकुण्डली में गुरु, लग्न में या तीसरे स्थान में बैठा हो तथा जन्म लग्नेश चौथे स्थान में बैठा हो तो उसवर्ष व्यक्ति को धन तथा सुख प्राप्त होता है ।

सूर्येज्यशुक्रा मिथ इत्थशालं कुर्युस्तदा राज्ययशःसुखार्थान् ।।

वर्षकाल में सूर्य, गुरु और शुक्र, आपस में इत्थशाल करते हैं तो राजपक्ष से लाभ, यश, सुख और धन प्राप्त होता है ।

सूर्यः कुजो वोपचये ददाति भद्रं यशो मङ्गलमिन्थिहायाः ।।

मुंथा से उपचय स्थान में सूर्य या मंगल के होने पर यश, कल्याण तथा मंगल होता है ।

होरायाश्च निशाकराद् दिविचरः क्रूरस्त्रिलाभारिगो
नूनं पापमपाकरोति सकलं वा लग्नपालो बली ।
सौम्यैः सम्मिलितः करोति दलनं रिष्टस्य दृष्टस्तथा
सौम्यैर्जन्मनि देवदेवसचिवो वा भागर्वः केन्द्रगः ।।

१. वर्षकाल में होरालग्न से या वर्ष कुण्डली में चंद्रमा से कोई क्रूरग्रह, तीसरे-छठे या ग्यारहवें होता है तो सब अरिष्ट दूर होता है ।

२. बलवान् वर्ष लग्नेश, सौम्य ग्रहों से युक्त या दृष्ट हो तो अरिष्ट का नाश होता है ।

३. जन्मकुण्डली में केन्द्र में गुरु या शुक्र हो, वर्ष कुण्डली में भी गुरु या शुक्र केन्द्र में हो तथा उसे शुभग्रह देखते हों तो अरिष्ट का भंग हो जाता है ।

तनुपतिर्यदि वाब्दपतिः शुभः शुभविलोकितयुग् यदि केन्द्रगः ।
भृगुसुतोऽथ हरेदशुभं बहुकुलमशीलमिवार्यजनैः स्तुतम् ।।

वर्षलग्न का स्वामी अथवा वर्षेश, शुभग्रह हो तथा शुभग्रह से युक्त या दृष्ट हो एवं केन्द्र में स्थित हो तो वह अरिष्ट को भंग कर देता है । इसी प्रकार केन्द्र में स्थित शुक्र भी शुभ ग्रह से युक्त तथा दृष्ट होकर बहुत अशुभ दूर करता है । जिस प्रकार शील रहित कुल का आर्यजनों के संपर्क में आकर अशील दूर हो जाता है ।

बलिनि सौम्यखगेऽप्यबलेऽशुभे भवति सर्वं शुभं तनुधारिणाम् ।।

वर्षकाल में शुभग्रह बलवान् हो और अशुभग्रह निर्बल हो तो सभी शुभ होता है ।

विलसदमलतेजश्चन्द्रमा केन्द्रवर्ती स्फुरदमलकसङ्गैः सौम्यखेटैश्च युग्दृक् ।
मृतिसहममवीर्यं वीर्ययुक्तं जीवं हरति मरणकालं योगिवत् सिद्धवन्द्यः ।।

वर्षकुण्डली में पूर्ण तथा बलवान् चंद्रमा केन्द्र में बैठा हो, उसे अस्त तथा वक्र आदि दोषों से रहित, बलवान् शुभग्रह देखते हों तथा उनसे युक्त हो, मृत्यु सहम दुर्बल हो और जीवित सहम बलवान् हो तो इस योगवाला व्यक्ति, सिद्ध राज योगी के समान अपने मरण काल को भी टाल देता है ।

जीवे विलग्ने तनुपः स एव त्रैराशेकेशो न भवत्यरिष्टम् ।।

वर्षलग्न में वर्ष लग्नका पति होकर अथवा त्रैराशिकेश होकर गुरु बैठता है तो अरिष्ट नहीं होता है।

मन्दस्तनौ केन्द्रगतः स एव मुशल्लहेशस्त्वशुभं विनश्येत् ।।

मुशल्लह का पति होकर शनि, वर्ष लग्न में या केन्द्र में बैठे तो अशुभ का नाश होता है ।

त्रैराशिपोऽस्तखलवक्रवियुग् बलाढ्यः
सत्स्थानगः खलवियुक् सितगुश्च जीवेत् ।
शुक्रस्तु केन्द्ररहितो यदि पश्यतीज्यं
केन्द्रानुगं सकलमेति लयन्त्वरिष्टम् ।।

१. त्रैराशिपति बलवान् हो तथा अस्तग्रह, वक्रीग्रह या पापग्रह से युक्त न हो तथा वर्ष कुण्डली में अच्छे स्थान में हो तो यह जीवन योग है ।

२. वर्षकुण्डली में चंद्रमा शुभस्थान में हो, तथा पापग्रह से युक्त या दृष्ट न हो तो, जीवन योग है ।

३. वर्ष कुण्डली में वृहस्पति केन्द्र स्थान में हो तथा उसे केन्द्र से अतिरिक्त स्थान में बैठा शुक्र देखता हो तो समस्त अरिष्ट का नाश होता है ।

चन्द्रराशीश्वरो लग्नपश्च खलैर्वियुक् ।
रिष्टं तदा लयं याति यथा व्याधिः सदौषधैः ।।

वर्षलग्न का पति तथा वर्ष कालिक चंद्र की राशि का पति, ये दोनों पापग्रहों

से युक्त तथा दृष्ट न हों तो अरिष्ट, इस प्रकार नष्ट हो जाता है, जिस प्रकार कि उत्तम औषधियों के सेवन से रोग नष्ट हो जाता है ।

अरिष्ट के तथा अरिष्ट भंग के निर्णय का सरलमार्ग - दो पंक्तियाँ करनीं । एक पंक्ति में जितने भी अरिष्ट कारक ग्रह हैं, उन सब का बल लिखना । दूसरी पंक्ति में जितने भी अरिष्ट भंग करने वाले ग्रह हैं, उन सबका बल लिखना । अरिष्टकारकग्रहों के बलकी पंक्ति में मृत्यु सहम का बल, रोग सहम का बल तथा कष्टबल लिखना, फिर सबका योग (जोड़) करना । अरिष्ट भंग कारक ग्रहों के बल की पंक्ति में देह सहम का बल, पुण्य सहम का बल, जीवित सहम का बल तथा इष्ट बल, लिखना, फिर सबका योग करना ।

यदि अरिष्ट बल की पंक्ति का योग अधिक है तो अरिष्ट की अधिकता जाननी, जिससे जीवन में संदेह रहेगा । यदि अरिष्ट भंगबल की पंक्ति का योग अधिक है तो, कष्ट भले ही होवे किन्तु जीवन में कोई संदेह नहीं होता है। यदि दोनों पंक्तियों के बलों के योग में समानता होती है तो कष्ट और कष्ट नाश समान अवस्था में होता है ।

ज्यौतिष शास्त्र का सिद्धान्त है - "धर्मादरिष्टंलयं व्रजेत्' = अर्थात् जप-हवन-दान आदि पुण्य क्रियाओं के द्वारा अरिष्ट दूर हो जाता है । अत: वर्ष में अरिष्ट योग होने पर उसकी शान्ति के लिए प्रबल दैविक उपाय नितान्त अपेक्षित होता है ।

रिष्टकृद् ग्रहदशान्तरे यदा तद्दशाधिरिपुपापिनो भवेत् ।
तत्र मृत्युमपि निश्चितं वदेज्जातकायुर्वशात्तु एव हि ।।

मृत्यु कब होगी? इसके विचार के लिए पहिले जन्मकाल के ग्रहस्पष्ट करने तथा जन्मलग्न स्पष्ट करनी । अंशायुर्दाय के क्रम से प्रत्येक ग्रह की तथा लग्न की मध्यमायु: निकालनी, फिर स्पष्टायु: लानी । सबकी स्पष्टायु: का योग करना । यही जातक की पूर्णायु: होती है। जिस वर्ष में अरिष्ट योग हों तथा आयु: भी पूर्ण होने जा रही हो, उस वर्ष में अरिष्ट करने वाले ग्रह की दशा में या उसकी अन्तदर्शा में अथवा अरिष्ट कारक ग्रह का जो भी क्रूरग्रह अधिक शुत्रु है, उसकी दशा-अन्तदर्शा में मृत्यु होती है । उपर्युक्त विचार करके ही मृत्युकाल बतलाना उचित है ।

राजयोगों का विचार -

नृपास्पदं सर्वजनाभिमृग्यं लभ्यं च तद्भाग्यवशेन पुंभिः ।
तल्लभ्यते खेटकृतैस्तु योगैस्तानत्र योगान् कथयामि कांश्चित् ।।

प्राय: सभी जन, राजसन्मान चाहते हैं किन्तु वह भाग्य से ही प्राप्त होता है। जब ग्रहों के द्वारा राजयोग बनता है तभी राजपक्ष से मान होता है ।

नीतिशास्त्र ने भी राजसन्मान को अमृत प्राप्त होना माना है ।

अमृतं शिशिरे वह्निरमृतं प्रियदर्शनम् ।
अमृतं राजसन्मानममृतं क्षीरभोजनम् ।।

शीतकाल में अग्निका सेवन अमृततुल्य है । अपने प्रियका देखना ,राजसम्मान तथा क्षीर (दूध) का भोजन, ये सब अमृत तुल्य माने गये हैं ।

व्यक्ति के वर्षकाल में जब अभंग राजयोग आता है तो वह वर्ष उसके लिए बड़े महत्व का होता है। यहाँ प्रामाणिक राजयोग प्रस्तुत किये जाते हैं।

तुर्येशोऽम्बुगतो बली बलिशुभैर्युक्तेक्षितो राज्यदः ।।

वर्ष कुण्डली में चतुर्थ स्थान का पति चौथे स्थान में हो तथा बलवान् शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट हो तो यह राजयोग है।

केन्द्राप्तित्रिसुताङ्कगः सुरगुरुर्जन्माङ्कयोर्वेश्मगः ।
योगेऽस्मिन् द्वितयेऽपि वाजिविल-सत्कुम्भीन्द्रसेनं नृपं
तत्कुर्याद् समदद्विषड् गजगणे शार्दूलविक्रीडितम् ।।

जन्मकुण्डली में तथा वर्ष कुण्डली में स्वराशि का वृहस्पति, १-३-४-५-७-९-१०-११ स्थानों में से किसी स्थान में बैठे तो राजयोग होता है।

युवति धामपतिस्तनुगो बली गुरुयुतेक्षितमूर्तिरिहोद्भवम् ।
विविधभोगयुतां नृपसम्पदं परिददाति ददाति मनोरथम् ।।

वर्षकुण्डली में सप्तम स्थान का पति लग्न में हो तथा गुरु से युक्त या दृष्ट हो तो यह राजयोग है। अनेक प्रकार की भोगयुक्त संपत्ति देने वाला है।

मेषूरणे स्वोच्चतः श्रीसूर्ये कर्कोदये वाक्पतिरिन्दुरर्थे ।
सूर्येत्थशालस्तु भयोर्नृपालः समुद्रमुद्राङ्कितभूमिपालः ।।

वर्षकुण्डली में दशमस्थान में मेष का सूर्य हो, कर्क राशिमें गुरु हो, चंद्रमा दूसरे स्थान में तथा सूर्य से चंद्र का और गुरु का इत्थशाल हो तो यह राज योग है।

कर्कोदये वाक्पतिरिन्दुराज्ये स्वमुत्थशाली नृपतिः स्वभेऽर्कः ।
यस्य प्रसादादरिसुन्दरीणां समुद्रसन्दर्शनकौतुकं स्यात् ।।

वर्ष कुण्डली में सूर्य, सिंह राशि में हो, कर्कराशि में चंद्रमा तथा गुरु हो एवं दोनों का मुथशिल योग हो तो यह राजयोग है।

निशेशसूर्यौ सितवाक्पती च कृतेत्थशालौ पतितान्यभस्थौ ।
वीर्यान्वितौ तौ यदि भूप उर्व्यां प्रशास्ति नक्षत्रयशोऽवतंसः ।।

वर्ष कुण्डली में सूर्य और चंद्र, एक-दूसरे की राशि में बैठे हों तथा इत्थशाल करते हों और बलवान् हों, उसी प्रकार गुरु और शुक्र, एक-दूसरे की राशि में हों तथा इत्थशाल करते हों और बलवान् हों तो यह राजयोग है।

वर्षेश्वरो लाभगतोऽर्कजोऽर्को भेषूरणे चन्द्रकृतेत्थशालः ।
समुद्रसीमानमिलां पुरीवत् सम्पालयेत् पालितशत्रुवालः ।।

वर्षेश शनि, ग्यारहवें स्थान में हो, दशवें स्थान में सूर्य हो तथा वह चंद्रमा से इत्थशाल करता है तो यह राजयोग है।

वीर्यशिलभृगुजेत्थशालिनि साधिकारिपदलाभ अर्कजे ।
म्लेच्छमण्डलविमर्दनक्षमा भूपतिर्गजरथोद्धतो रणे ।।

वर्ष कुण्डली में अधिकारी शनि, ग्यारहवें स्थान में हो तथा शुक्र बलवान् हो एवं दोनों का इत्थशाल योग हो तो यह राज योग है।

सर्वे शुभाः केन्द्रगतास्त्रिलाभारिस्थाः खला वीर्ययुता नृपः स्यात् ।

वातोच्छलद् गाङ्गतरङ्गशोभाहरत् स्फुरच्चामरवीज्यमानः ।।

सभी शुभग्रह बलवान् होकर केन्द्र में बैठें तथा पापग्रह वर्षकुण्डली में तीसरे-छठे-ग्यारहवें स्थानों में बैठें, यह राजयोग है ।

पञ्चाधिकारिपतिभिर्मिथ इत्थशाले केन्द्रस्थितैर्बलयुतैर्नृपतिं विधत्ते ।।

वर्षकाल में पंचाधिकारियों का आपस में इत्थशाल हो वे बलवान् होकर केन्द्र में बैठें तो यह राजयोग है ।

लग्नेऽम्बरेशः शुभखेचरश्चेच्छशाङ्कलग्नाधिपती नभस्थौ ।
स्ववीर्ययुक्तौ शुभवीक्षितौ स्तो वर्षे तदा स्यात् खलु राज्यलाभः ।।

वर्षकुण्डली में शुभग्रह दशमेश, लग्न में बैठे, वर्षलग्न का पति और चंद्रमा दोनों ही बलवान् होकर तथा शुभग्रह से दृष्ट होकर दशमास्थान में बैठे तो यह राजयोग है ।

हिमांशुकर्माधिपलग्ननाथा भेषूरणस्थाः शुभवीक्षिताश्च ।
स्वोच्चादिभस्थाः शुभखेचराश्चेत् तदा प्रकुर्युर्ध्रुवराज्यलाभम् ।।

वर्षकुण्डली में लग्नेश, दशमेश और चंद्रमा, ये तीनों ग्रह शुभ ग्रहों से दृष्ट होकर दशमस्थान में बैठें तथा शुभग्रह अपनी उच्च आदि राशियों में बैठे तो यह राज योग है ।

हर्षस्थिते कर्मपतौ शुभग्रहे स्वतुङ्गराश्यादिगते तथोदिते ।
शुभेक्षिते केन्द्रधनत्रिकोणगे राज्यस्य लाभोऽस्ति शुभैर्विलग्नगैः ।।

वर्ष कुण्डली में हर्षबल से युक्त दशमेश, शुभग्रह हो और उदित हो, वह शुभग्रह से दृष्ट होकर अपनी उच्च आदि राशिका होकर केन्द्र, त्रिकोण या धनस्थान में बैठे तथा लग्न में शुभग्रह बैठे तो यह राज योग है ।

लग्नेश्वरे स्वर्क्षगते विलग्ने स्वतुङ्गनाथेन निजोच्चगेन ।
दृष्टस्तदा तत्र अभीष्टराज्यलाभो भवेद् भूमिपतेः क्रमेण ।।

वर्ष कुण्डली में लग्नेश स्वराशि का होकर लग्न में बैठे तथा उसे कोई उच्च का शुभग्रह देखता है तो यह राजयोग है ।

स्वोच्चस्थितो लग्नगतः शुभग्रहः शैषेस्त्रिकोणायगतैर्बलान्वितैः ।
अचिन्तिता राज्यपदस्य उन्नतिः स्यादल्पिका स्वर्क्षगृहादिसंस्थैः ।।

वर्षकुण्डली में लग्नेश स्वराशि का होकर लग्न में बैठे, शेष बलवान् ग्रह, पंचम-नवम तथा एकादश स्थान में बैठें, इस योग से राजपद की अचिन्तित की उन्नति होती है । यदि ग्रह उच्च राशि के न होकर स्वराशि आदि के होते हैं तो राजपद की थोड़ी उन्नति होती है ।

मीनोदये भार्गवजीवसंयुते लाभे कुजे राज्यपदाप्तिमादिशेत् ।।

लग्न में मीनराशि के गुरु तथा शुक्र हों और ग्यारहवें स्थान में हों तो यह राजयोग है ।

वृषोदये सौम्यहिमांशुभार्गवा केन्द्रे गुरुः स्युः खलु राज्यसम्पदः ।।

लग्नमें वृषराशि के चंद्र, गुरु तथा शुक्र हो और केंद्र में गुरु हो तो यह

राजयोग है ।

शुभेत्थशालोऽम्बरपो विलग्ने राज्यप्दः स्वोच्चगृहादिसंस्थ· ।।

वर्ष कुण्डली दशमेश लग्न उच्च आदि राशि में बैठे तथा शुभग्रह से इत्थशाल करे तो राजयोग होता है ।

लग्नेश्वरे स्वर्क्षगते विलग्ने स्वोच्चे कुजे स्यात् खलु राज्यलाभः ।।

वर्षलग्नेश अपनी राशि का होकर लग्न में बैठे तथा उच्च राशि का मंगल हो तो राजयोग होता है ।

केन्द्रे हिमांशुः स्वगृहे स्वतुङ्गे वीर्येत्थशालं कुरुते खपेन ।
लग्नाधिपेनाथ चतुष्टयस्थे वर्षे तदा स्यात् खलु राज्यलाभः ।।

वर्ष कुण्डली में चंद्रमा वृषराशि का या कर्क राशि का हो, वह दशमेश के साथ पूर्ण इत्थशाल करता हो तथा वर्ष लग्नेश केन्द्र में हो तो यह राज योग है ।

केन्द्रस्थिते शीतकरे बलाढ्ये शुभैर्युते क्रूरविवर्जिते च ।
शुद्ध्येऽपि वा स्यात् खलु राज्यलाभश्चन्द्रेऽबले नीचगते न राज्यम् ।।

वर्षकुण्डली में बलवान् चंद्रमा केन्द्र में बैठे, वह शुभग्रहों से युक्त हो किन्तु वह चंद्रमा क्रूरग्रहों से युक्त तथा दृष्ट न हो अथवा केवल बलवान् चंद्रमा ही केन्द्र में बैठे तो यह राजयोग है ।

यदि चंद्रमा नीचराशि का या निर्बल होगा तो राजयोग नहीं होगा ।

स्यादिक्कवाले खलु राजयोगः स्यादिन्दुवारे नृपराज्यविच्युतिः ।
नृपात्मजानादिह राज्यलाभोऽन्येषां प्रतिष्ठा वसुलब्धयः स्युः ।।

वर्षकाल में इक्कवाल होने पर राजयोग होता है । इन्दु वार योग के होने पर राजयोग भंग हो जाता है । राजकुमारों को ही राजयोग से राज्यलाभ होता है । अन्य व्यक्तियों को तो प्रतिष्ठा की प्राप्ति, पदकी प्राप्ति तथा धन लाभ होता है ।

राजयोग भंग का विचार - यदि वर्ष काल में कोई राजयोग होता है और राजयोग भंग भी होता है तो राजयोग निष्फल हो जाता है । जब कोई राजभंग योग नहीं होता है तभी राजयोग का फल होता है । अभंग राजयोग के परिज्ञानार्थ राजयोग भंग प्रस्तुत किये जाते हैं ।

व्यये शशाङ्को यदि तत्र सौरिः षष्ठे भृगुर्हानिकरः समन्तात् ।
धनाश्वरत्नादिमहाद्भुतानां स्वचित्तवैकल्यकरोत्यकस्मात् ।।

वर्षकुण्डली में छठे स्थान में शुक्र तथा बारहवें स्थान में चंद्रमा तथा शनि बैठें हों तो यह राजयोग भंग है । इस योग से धन आदि की हानि, तथा चित्त में व्याकुलता होती है ।

धर्माधिपे वा विवले च वित्तनाथे विलग्ने शुभदृष्टिहीने ।
क्रूरैर्युते नाशमुपैति लक्ष्मीः सुसञ्चिता शुक्रसुरक्षितापि ।।

वर्षकुण्डली में द्वितीय स्थान का स्वामी लग्नभाव में बैठा हो और उसपर किसी शुभग्रह की दृष्टि न हो तथा क्रूरग्रहों से युक्त हो एवं नवम स्थान स्वामी निर्बल हो तो यह

राजयोग भंग है । इससे संचित और सुरक्षित संपत्ति नष्ट हो जाती है ।

नीचस्थिताश्चास्तमिताश्च पापा नृपालयोगं दलयन्त्यलं ते ।
खलाः कुवर्गे विवलाश्च सौम्याः कृतार्गलाः स्युर्नरपालयोगाः ।।

१. वर्षकाल में पापग्रह नीचराशि के हों या अस्त हों तो राजयोग भंग हो जाता है ।

२. पापग्रह, अशुभ वर्गों में हो तथा शुभग्रह निर्बल हो तो राजयोग भंग हो जाता है।

नीचोपगा वैरिग्रहोपजाताः पापैर्युता वास्तगता गृहेन्द्राः ।
हरन्ति राज्ये विपुलं नराणां तदा सुखं नाल्पतरं हि वर्षे ।।

वर्षकाल में ग्रह नीचराशि या शत्रुराशि के हों या अस्त हों तथा पापग्रहों से युक्त हों तो यह राजयोग भंग है । इस योग से वर्ष में थोड़ा सुख भी नहीं मिलता है।

दुष्टवर्गोपगाः पापाः सौम्याश्चेद् बलवर्जिताः ।
अपाकुर्वन्ति ते राज्यं कष्टं कुर्वन्ति देहिनाम् ।।

वर्षकाल में शुभग्रह निर्बल हों तथा पापग्रह अशुभ वर्गों में हों तो राजयोग भंग हो जाता है और शरीर में कष्ट होता है ।

अस्तङ्गतौ नीचमुपागतौ वा क्रूरारिसम्पीडितमूर्तिकौ वा ।
देवेज्यशुक्रौ मनुजाधिपत्यं सुखार्थलाभं हरतो नराणाम् ।।

वर्षकाल में गुरु और शुक्र अस्त हों या नीचराशि के हों तथा क्रूरग्रहों से युक्त हों तो राजयोग भंग हो जाता है तथा धन लाभ और सौख्य होता है ।

जनौ व्ययेशो दशमे च वर्षे स्वस्वामिसौम्येक्षणयोगहीनाः ।
खेशोऽरिदुष्टर्क्षश्रियं हरेत तृष्णेव धैर्यं पुरुषस्य पूज्यम् ।।

जन्म लग्नकुण्डली का द्वादशेश वर्ष कुण्डली में दशम स्थान में हो, उसपर उसके पति की तथा शुभग्रह की दृष्टि न हो एवं दशम स्थान का स्वामी शत्रुराशि का हो या पापग्रह की राशि का हो तो राजयोग भंग होता है । जिस प्रकार तृष्णा धैर्य को नष्ट कर देती है, उसी प्रकार यह योग भी संपत्ति को नष्ट कर देता है ।

अब्देशः पदपोऽथवास्तमपगो नीचारिगो वा भवेल्लग्नेशेन कृतेशराफयुतिकः खेशोऽथ रात्रीश्वरः । क्षीणो नीचयुतो शुभेक्षितयुतः सूर्योऽपि दुष्टाश्रयी राज्यं नीतिबलेन विस्तृतमिव क्षीणोति देहं रुजः ।।

१. वर्षेश या कोई भी पदाधिकारिग्रह, अस्त हो, नीच राशि का हो या क्रूर ग्रह की राशि का हो तथा लग्नेश से ईशराफ करता हो ।

२. दशमेश या चंद्रमा, क्षीण या निर्बल हो, किसी नीचराशि के ग्रह से युक्त हो अथवा कूर ग्रह से युक्त तथा दृष्ट हो ।

३. सूर्य, निर्बल हो, किसी नीच राशि के ग्रह से युक्त हो अथवा क्रूरग्रह से युक्त तथा दृष्ट हो ।

उक्त राजयोग भंग करने वाले योगों में से कोई सा भी योग होने पर नीति तथा बल मे युक्त राज्य भी नष्ट हो जाता है, जिस प्रकार कि रोग शरीर को नष्ट कर देते हैं।

अब्देन्थिहेशादिखगाः खलैश्च युतेक्षिता अस्तगनीचगा वा ।
सौम्या बलोना नृपयोगभङ्गं तदा वदेद् वित्तसुखक्षयं च ।।

मुंथा, वर्ष लग्नेश आदि ग्रह, अस्त हों, नीचराशि के हों तथा पापग्रहों से युक्त और दृष्ट हों एवं शुभग्रह निर्बल हों तो यह राजयोग भंग है । इस योग से धन और सुख की हानि होती है ।

इत्थं जन्मनि वर्षे च योगकर्तुर्बलाबलम् ।
विमृश्य कथयेद् राजयोगं तद्भङ्गमेव च ।।

जन्मकाल में तथा वर्ष काल में योग कारक ग्रह के बल का तथा दुर्बलता का विचार कर के ही राजयोग का और राजयोग का भंग बतलाना उचित है ।

सहम विचार

सकलभावफलस्य सहायतां विदधते सहमं हि सदा यतः ।
विधिरिवोद्यमनस्य नृणामतः सहमसन्नयनं विदधेऽधुना ।।

सहम, समस्त भावों के फलों में इस प्रकार सहायता देते हैं जिस प्रकार कि मनुष्यों के उद्योग में उनका भाग्य सहायक होता है । अतः सहम विचार भी अत्यावश्यक है ।

आदौ जन्मनि सर्वेषां सहमानां बलाबलम् ।
विमृश्य सम्भवो येषां तानि वर्षे विचारयेत् ।।

यों तो सहम अनेक हैं किन्तु जिस के लिए जितने सहम अपेक्षित हैं, उतने ही सहम लगाने तथा उन सहमों की कुण्डलियाँ लिखनी ।

उदाहरणार्थ : एक वृद्ध व्यक्ति है, उसके न स्त्री है और न कोई पुत्र है, उसे अपना वर्ष पत्र बनवाना है तो वर्षपत्र बनाने वाले विद्वान को उचित है कि, उस व्यक्ति के वर्षपत्र में भार्यासहम तथा पुत्रसहम न लगावे । व्यापारी व्यक्ति के वर्षपत्र में व्यापार सहम लगाना अनिवार्य होगा । इसी प्रकार सर्वत्र समझना ।

प्रायः सभी सहम भावों से संबंधित होते हैं । प्रत्येक भाव के उपयोगी सहमों के फलित, भावों के फलित-प्रकरण में प्रस्तुत किये जावेंगें । यहाँ सहम के फल का सर्वोपयोगी विचार प्रस्तुत किया जाता है ।

सौम्यैर्वा बलिभिर्निजाधिपतिना युक्तेक्षितं हायने,
वृद्धिस्तत्सहमस्य तत्पतिरथो लग्नाधिराजेन वा ।
वर्षेशेन समं सदा मुथशिलं कुर्यात् तदाप्तिस्तदा,
लुप्ते सत्त्वविवर्जिते खलयुते स्यात् तस्य हानिर्ध्रुवम् ।।

१. वर्ष में जो सहम, बलवान् शुभग्रहों से युक्त या दृष्ट होता है उस सहम की वृद्धि होती है ।

२. जिस सहम का पति, वर्ष लग्नेश से या वर्षेश के साथ मुथशिल योग करता है तो उस सह से संबंधित लाभ होता है ।

३. जो सहम निर्बल तथा पापग्रह से युक्त होता है उसकी हानि निश्चित है ।

१. जो सहम, अपने स्वामी से तथा शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट तथा बलवान् होता है, अथवा जिस सहम का स्वामी बलवान् होता है, उस सहम की वृद्धि होती है ।

२. जो सहम, निर्बल है, अष्टमेश से युक्त है तथा उसका क्रूरग्रह से इत्थशाल है तो उस सहम का फल वर्ष में नहीं होता है ।

ग्रह के बलाबल के संबंध में निर्णय - १. जो ग्रह, बहुत अधिकारों से युक्त होने पर भी लग्न पर दृष्टि नहीं रखता है, वह ग्रह बलवान् नहीं होता है ।

२. जो ग्रह, थोड़े ही अधिकारों से युक्त है किन्तु लग्न पर दृष्टि रखता है, वह ग्रह बलवान् होता है । भाव यह है कि, अधिकारी होकर लग्नपर दृष्टि रखने वाला ग्रह बलवान् होता है ।

जटिल समस्या का स्पष्टीकरण - प्राय: यह देखने में आता है कि, बहुत से व्यक्तियों के वर्षकाल में पुण्यसहम, अश्वसहम, राजसहम आदि सहम बलवान् होते हैं तथा उन सहमों के पति भी बलवान् होते है परन्तु फिर भी उन सहमों के फल प्राप्त नहीं होते । यह एक जटिल समस्या है, इसके संबंध में सूक्ष्म विचार करने पर निष्कर्ष यह निकलता है कि - प्रथम जन्मकालिक उपयोगी सहमों का साधन करना तदनन्तर सहमों के बल-अबलका स्वामियों के बल-अबल का विचार करना । इसी प्रकार वर्ष में भी उपयोगी सहमों का साधन करना । सहमों के तथा उनके स्वामियों के बल-अबल का विचार करना । जो सहम, जन्म में भी तथा वर्ष में भी निर्बल हैं ऐसे सहम सब प्रकार से निर्बल होते हैं, अत: वे सहम वर्ष में फल दे ही नहीं सकते, इस कारण उनपर विचार करना भी व्यर्थ है । जो सहम, जन्मकाल में तथा वर्षकाल में बलवान् हैं तथा उनके स्वामी भी बलवान् हैं, ऐसे ही सहम वर्षकाल में फल देते हैं । अत: उन्हीं पर विचार करना उचित है ।

सहमों के शुभ-अशुभफल की व्यवस्था - जो सहम, पापग्रह से युक्त हैं तथा शुभग्रह से दृष्ट हैं उनका पहिले अशुभ फल होता है फिर बाद में शुभफल होता है । जो सहम, शुभग्रह से युक्त हैं तथा पापग्रह से दृष्ट हैं, उनका पहिले शुभफल होता है फिर बाद में अशुभ फल होता है ।

वर्षलग्न से छठे-आठवें या बारहवें स्थान में सहम के होने पर धर्म, यश और भाग्य की हानि होती है । जो पूर्वोक्त सहम, अपने स्वामी से तथा शुभग्रह से दृष्ट होता है, वह पहिले पूर्वोक्त फल करके फिर बाद में धर्म, यश तथा भाग्य की वृद्धि करता है।

जो सहम, जन्मलग्न से त्रिक स्थान में है और वर्षकाल में भी पापग्रह से युक्त तथा दृष्ट है और उस सहम का पति भी दग्ध है तो वर्ष में पुण्य, धर्म, धन तथा सौख्य की हानि होती है ।

प्राय: सभी उपयोगी सहमों का विचार जन्ममें तथा वर्ष में होता है । शुभग्रहों से युक्त तथा दृष्ट होनेपर एवं सहम के स्वामी के बलके अनुसार सहमों के फल जाने जाते हैं ।

दरिद्र सहम, मृत्यु सहम, मंदता सहम, कलहसहम तथा वैरिसहम, इनमें विपरीतभाव होना अच्छा है अर्थात् ये सहम निर्बल हों तथा इनके स्वामी भी निर्बल हों, एवं ये सहम, पापग्रह से युक्त तथा दृष्ट हों तो शुभ हैं ।

उदाहरणार्थ जैसे कि, मृत्यु सहम निर्बल होने पर व्यक्ति की मृत्यु नहीं होती है । मृत्युसहम के बलवान् होने पर मृत्यु होती है ।

भावफलित विचार -

अथ द्वादशभावानां विचारः क्रियतेऽधुना ।
सर्वभावाश्रयं यस्मात्तस्माद् भावविनिर्णयः ।।

वर्ष कुण्डली में द्वादश (बारह) भाव होते हैं । सभी फल, भावों पर आश्रित होते हैं । अतः अब भावों के विचार प्रस्तुत किये जाते हैं ।

प्रथम भावों का सामान्य विचार प्रस्तुत किया जाता है जो कि प्रत्येक भाव के विचार में लागू होता है । इसके अनन्तर प्रत्येक भाव का विशेष विचार क्रमशः प्रस्तुत किया जायेगा ।

अपेक्षित सहमों का जन्मकाल में साधन कर उन्हीं का वर्ष काल में भी साधन करना । भावों के आश्रित सहमों के बलाबल का विचार करके भावों के फल का निश्चय करना ।

शुभवर्गाधिको भावः स्वामिसौम्ययुतेक्षितः ।
स्वामी कुत्थगतो यस्य स भावो बलवान् भवेत् ।।

जो भाव, अधिक शुभग्रहों के वर्ग में है, अपने स्वामी से तथा ग्रहों से युक्त और दृष्ट है, यदि भाव अपने स्वामी से युक्त न हो तो उसका स्वामी केन्द्र में हो, इस प्रकार का भाव बलवान् होता है । इसके विपरीत होने से भाव बलहीन होता है ।

जन्मभावाधिपः खेटः समारम्भे तु तद्गतः ।
बलवानब्दपो वापि दत्ते तद्भावजं सुखम् ।।

जन्मकुण्डली में जिस भाव का स्वामी जो ग्रह है, वह यदि वर्ष कुण्डली में उसी भाव में बैठता है तो, उस भाव का सुख वर्ष में देता है । इस योग में वर्षेश का बलवान् होना अपेक्षित है ।

जन्मभावाधिपः प्राणी उभयत्र निरीक्षकः ।
तद्भावोत्थफलं पूर्णं जायते नात्र संशयः ।।

जन्मकुण्डली में जिस भाव का स्वामी अपने भाव को देखता है तथा वर्ष कुण्डली में उसी भाव का स्वामी होकर दृष्टि रखता हो तो, उसी भाव का फल निःसन्देह होता है ।

सूतौ यद्भावगः खेटो वर्षे तद्भावगो यदि ।
यदि बलवानस्तरहितो दत्ते चात्मसदृक् फलम् ।।

जन्मकुण्डली में जिस भाव में जो ग्रह बैठा हो, वर्ष कुण्डली में भी वह ग्रह उसी भाव में बैठा हो तथा वह अस्त न हो और बलवान् हो तो अपने अनुरूप फल

देता है ।

एकत्र दृष्टिरहितो बलहीनोऽथ सूर्यगः ।
तदा तद्भावजं सौख्यं स्वप्ने वा मानसेऽथवा ।।

लग्नकुण्डली में या वर्ष कुण्डली में एक ही जगह ग्रह की भाव पर दृष्टि न हो तथा वह ग्रह बलहीन हो तथा सूर्य के पास हो तो उस भाव का फल व्यक्ति को स्वप्न में या मन में होता है ।

जन्मलग्नाधिपो वर्षे स्वामी यत्र तु संस्थितः ।
लग्नेशेनेत्थशाली चेत्तद्भावजसुखं भवेत् ।।

वर्षकुण्डली में जन्मलग्नेश, जिस भाव में बैठकर वर्षलग्नेश के साथ इत्थशाल करता है तथा उस भाव का स्वामी भी हो तो उस भाव का सुख होता है ।

यद् भावपो लग्नपेन वर्षेशेनेत्थशालवान् ।
तत्तद् भावोद्भवं सौख्यमीसराफे ततोऽन्यथा ।।

वर्ष कुण्डली में जिस-जिस भाव का स्वामी वर्ष लग्नेश से तथा वर्षेश से इत्थशाल योग करता है तो उस-उस भाव से संबंधित सौख्य प्राप्त होता है ।

यदि भाव के स्वामी का वर्षलग्नेश तथा वर्षेश के साथ ईसराफ योग होता है तो उस भाव का सुख नहीं होता है ।

भावपात्तेज आदाय लग्नपे च प्रयच्छति ।
तदा तद्भावजं सौख्यं विपरीतं ततोऽन्यथा ।।

वर्ष में इत्थशाल योग के द्वारा जिस भावेश का तेज वर्ष लग्नेश को प्राप्त होता है, उस के भावसे संबंधित सुख होता है । विपरीत होने पर भाव से संबंधित सुख नहीं होता है ।

जन्माब्दाङ्गपरन्ध्रपाब्दमुथहानाथा बलाढ्यास्तदा
रम्यं वर्षमुशन्ति सर्वमतुलं सौख्यं यशोऽर्थागमः ।
षष्ठाष्टान्त्यगता न चेदिह पुनस्ते दुःखभीतिप्रदा
निर्वीर्या यदि वर्षमेतदशुभं वाच्यं शुभेक्षां विना ।।

वर्षकाल में जन्मलग्नेश, वर्ष, अष्टमेश, मुंथेश तथा वर्षेश इनके बलवान् होने पर पूरा वर्ष शुभ रहता है, सुख, यश तथा धनलाभ होता है । यदि उक्तग्रह, त्रिक (६-८-१२) स्थान में होते हैं तो दुख और भय प्राप्त होता है । यदि उक्त ग्रह, निर्बल हों तथा उनपर शुभग्रह की दृष्टि न हो तो वर्ष अशुभ रहता है ।

एवं समस्तभावानां सूतौ नाथाश्च पोषकाः ।
अब्दे नष्टबलास्तेषां नाशायोह्या विचक्षणैः ।।

जन्मकुण्डली में जिन भावों के स्वामी, वर्षकाल में बलवान् होते हैं, उन भावों से संबंधित सौख्य प्राप्त होते हैं । जन्म के जिन भावों के स्वामी, वर्ष में बलहीन होते हैं उन भावों से संबंधित सौख्य की हानि होती है ।

अन्य विचारः - वर्ष में यदि, कोई ग्रह, जन्मलग्नेश-वर्ष लग्नेश-मुंथेश-

वर्षेश आदि अधिकार से युक्त होकर निर्बल होता हैं तो उसके क्रम से निम्न फलित होते हैं ।

१. सूर्य का फल - उत्साहहीनता, मातृ-पितृ क्लेश, नेत्ररोग, त्वचासंबंधी रोग तथा पराभव होता है । **२. चंद्र का फल** - कार्य की हानि, दरिद्रता, अपमान, पारिवारिक क्लेश तथा रोग आदि का भय होता है । **३. मंगल का फल** -शरीर में निर्बलता तथा भय होता है । **४. बुध का फल** - अपमान तथा मोह होता है । **५. गुरु का फल** - धर्म की हानि, शरीर कष्ट तथा वृत्ति में शिथिलता होती है । **६. शुक्र का फल**- सौख्य तथा आनंद की हानि, स्त्री संबंधी क्लेश तथा कलह होता है । **७. शनि का फल** - पारिवारिक दुख, नौकर-चाकर संबंधी दुख तथा वायु संबंधी प्रकोप होता है।

भाव में स्थिति के अनुसार ग्रह का विचार - जन्मकुण्डली, वर्षकुण्डली अथवा प्रश्नकुण्डली में १,४,५,७,९,१०,११, स्थानों में बैठा ग्रह बलवान होता है। १,२,३,४,५,७,९,१०,११, स्थानों में बैठा चंद्रमा बली होता है । १,३,४,५,७, ९,१०,११ स्थानों में से किसी स्थान में बैठा मंगल बली होता है । त्रिक स्थान में, नीच राशि तथा शत्रु राशि में ग्रह निर्बल होता है ।

तिथ्यर्काष्टनगाङ्काद्रिनवदीप्तांशका रवेः ।
दीप्तांशातिक्रमे शस्ता इमेऽपीति विचिन्तयेत् ।।

प्रत्येक ग्रह के दीप्त-अंश होते हैं । दीप्त अंश निकल जाने पर ग्रह शुभ हो जाता है । दीप्त अंश का भी विचार आवश्यक है । ग्रहों के दीप्तांशः १. सूर्य- १५ अंश। २. चंद्र-१२ । ३. मंगल - ८ । ४. बुध- ७ । ५. गुरु -९ । ६. शुक्र -७ । शनि -९।

दलीलक ग्रह का निर्णय - आचार्य हिल्लाज के सिद्धान्तानुसार प्रत्येक भाव का दलील या दलीलक अथवा दलीलद ग्रह होता है । वह भी वर्ष में अपना स्वतंत्र महत्त्व रखता है ।

गृहं तथोच्चं परतस्तु हद्दा त्रैराशिको नन्दलवः क्रमेण ।
पञ्चाधिकारेषु बलान्वितो यः संवीक्षते यः दलीलकः स्यात् ।।

१. वर्ष लग्नेश । २. उच्चराशि का ग्रह । ३. हद्दा का पति । ४. त्रैराशिकपति। ५. नवांशपति । ये पांच अधिकारी हैं । इनमें जो बलवान् ग्रह, जिस भाव को देखता है, वह उस भाव का दलीलक ग्रह होता है । जैसे- लग्नभाव दलीलक, इत्यादि ।

दलीलदे पूर्णबलेऽतिसौख्यं तेजस्विता कान्तिबलाभिवृद्धिः ।
मध्यं भवेन् मध्यबलेऽथ नष्टे कष्टं व्ययाष्टारिगते विशेषात् ।।

दलीलद का बलानुसार फलित- दलीलद पूर्णबली होता है तो तेज-कान्ति और बल की वृद्धि तथा सौख्य होता है । दलीलद के मध्यबली होने पर वर्ष का फल मध्यम होता है । दलील के बलहीन होने पर कष्ट होता है और यदि दलीलद त्रिकस्थान में होता है तो विशेष कष्ट होता है ।

भावों में स्थिति के अनुसार दलीलदों के फलित

लग्नभाव दलीलद के फल - १. लग्नभाव में दलीलद के होने पर शरीर पुष्टि, कांति तथा बल की वृद्धि होती है । २. द्वितीय भाव में दलीलद के होने पर पराक्रम तथा धनलाभ होता है । ३. तृतीय स्थान में दलीलक के होने पर भ्रातृपक्ष से सौख्य होता है । ४. चतुर्थ स्थान में दलील हो तो मित्रसुख, गृह-भूमि संबंधी लाभ तथा किराये-भाड़े की प्राप्ति होती है । ५. पंचम स्थान में दलील हो तो पुत्र संबंधी तथा मंत्र (सलाह) आदि से लाभ होता है । ६. षष्ठ स्थान में दलील हो तो माता को कष्ट, आर्थिक कष्ट तथा शत्रुभय होता है । ७. सप्तम स्थान में दलील हो तो स्त्री संबंधी सुख तथा यात्रा संबंधी सुख होता है । ८. अष्टम में दलील होने से पीड़ा होती है । ९. नवम में दलील होने से धर्म कार्य, पति से सौख्य तथा भाग्य वृद्धि होती है । १०. दशम में दलील होने से पद की प्राप्ति होती है और यदि दलील का दशमेश से योग होता है तो राजयोग होता है। ११. ग्यारहवें स्थान में दलील होने से अनेक प्रकार से लाभ होता है । १२. द्वादश स्थान में दलील होने से रोग, भय होता है ।

भावे दलीलहीने फलाल्पता स्यात् ।
अब्दके प्रश्ने जन्मनि तथा विवाहेत्युभयत्र विहीनेतिनाशः ।।

नोट - जिस भाव में दलील नहीं होता है, उस भाव के फल में कमी होती है । जन्मकुण्डली तथा वर्ष कुण्डली, दोनों में उसी भाव या स्थान में दलील न होने से उसभाव से संबंधित अधिक हानि होती है । प्रश्नलग्न कुण्डली तथा विवाह लग्न कुण्डली में भी दलील के फल का विचार होता है ।

वित्त दलील (द्वितीय भाव दलीलक) के फलित -

वित्तदलीलो बलवान् शुभयुतदृष्टश्च वर्गस्थः ।
लग्नपकृतेत्थशालस्तदातिलाभो भवेद् वर्षे ।।

द्वितीय भाव का दलीलक, बलवान् हो, शुभग्रह से युक्त और दृष्ट हो, शुभग्रह के वर्ग में हो तथा वर्ष लग्नेश के साथ इत्थशाल करता हो तो वर्ष में अच्छा लाभ होता है ।

१. द्वितीय भाव (वित्त) दलीलक के लग्न में होने पर लाभ तथा प्रताप संबंधी कार्य में व्यय होता है । २. वित्त दलील द्वितीय स्थान में हो तो पराक्रम से लाभ होता है । यदि वित्त दलील पर सूर्य की दृष्टि होती है तो राजपक्ष से लाभ होता है । ३. वित्त दलील तृतीय भाव में हो तो भ्रातृपक्ष संबंधी लाभ होता है । वित्तदलील पर मंगल और बुध की दृष्टि होने से कुमारों द्वारा लाभ होता है । ४. वित्त दलील चतुर्थ भाव में हो तो खेत-जमीन-घर संबंधी तथा माता से सम्बंधित लाभ होता है । ५. वित्त दलील पंचम भाव में हो तो मंत्र द्वारा तथा पुत्र संबंधी लाभ होता है । ६. वित्त दलील षष्ठ भाव में हो तो माता के संबंध में खर्च शत्रु संबंधी आर्थिक हानि तथा दुख होता है । ७. वित्त दलील सप्तम स्थान में हो तो स्त्रीसंबंधी सौख्य तथा रोग के संबंध में व्यय होता है । ८. वित्त

दलील अष्टम भाव में हो तो स्त्री के प्रसंग से लाभ, सुख तथा मृतव्यक्ति के धन का लाभ होता है । ९. वित्त दलील नवम भाव में हो तो भाग्य की वृद्धि होती है तथा युद्ध आदि के प्रसंग से लाभ होता है । १०. वित्त दलील दशम स्थान में हो तो जैसी राशि में दलील हो, उस राशि के अनुसार तथा जिस ग्रह की दृष्टि हो उस ग्रह के अनुसार लाभ होता है। ११. वित्त दलील ग्यारहवें स्थान में हो तो लाभ होता है । यदि सूर्य और गुरु की दृष्टि होती है तो पद की प्राप्ति होती है । १२. वित्त दलील बारहवें स्थान में हो तो थोड़ा लाभ, क्रोध की अधिकता तथा लोकापवाद होता है ।

तृतीय भाव दलीलद के फलित - १. तृतीय भाव दलील लग्न में हो और शुभग्रह से दृष्ट हो तो सुख, लाभ तथा बंधुसंबंधी सौख्य होता है । २. तृतीय भाव दलील द्वितीय स्थान में हो तो भ्राता को वहाँ की राशि तथा ग्रह के अनुसार कार्य से धन लाभ होता है । ३. तृतीय भाव दलील तीसरे स्थान में हो तो शरीर सौख्य, छोटे भ्राता के धन की वृद्धि तथा उसको सौख्य होता है । ४. तृतीय भाव दलील चौथे स्थान में हो तो बन्धु का पराक्रम हो, यश हो तथा सुवर्ण आदि का लाभ हो । ५. तृतीय भाव दलील पंचम स्थान में हो तो मान, सुख तथा पुत्र को लाभ होता है । ६. तृतीयभाव दलील षष्ठ स्थान में हो तो घर-वाग आदि का सुख होता है तथा बंधु के द्वारा हार्दिक कष्ट होता है । ७. तृतीय भाव दलील सप्तम स्थान में हो तो पुत्र से सौख्य होता है तथा अनुज के लिए पराक्रम और धन वृद्धि होती है । ८. तृतीय भाव दलील आठवें स्थान में हो तो भ्रातृपक्ष से विरोध तथा अनुज आदि को रोगभय होता है । ९. तृतीय भाव दलील नवम भाव में हो तो भाग्यवृद्धि, स्त्रीसंबंधी सौख्य तथा बंधुप्रेम होता है । १०. तृतीय भाव दलील दशम स्थान में हो तो पशुलाभ, अच्छा लाभ तथा अनुज को थोड़ा लाभ होता है । ११. तृतीय भाव दलील ग्यारहवें स्थान में हो तो लाभ, सुख, कांति वृद्धि तथा बंधुओं को राज पक्ष से लाभ होता है । १२. तृतीय भाव दलील, बारहवें स्थान में हो तो कलह, ऐश्वर्य की हानि तथा बंधुजनों को थोड़ा लाभ होता है ।

चतुर्थ भाव दलील के फलित - १. चतुर्थ भाव दलील लग्न में हो तो सुख, मित्रादि सौख्य तथा अनेक प्रकार के भोजन का सुख होता है । २. चतुर्थ भाव दलील दूसरे स्थान में हो तो शरीर सुख, मित्रसुख, कांतिवृद्धि तथा पैतृक संपत्ति का लाभ होता है । ३. चतुर्थ भाव दलीलक तृतीय भाव में हो तो माता-पिता को मृत्यु समान कष्ट तथा मित्र संबंधी क्लेश होता है । ४. चतुर्थ भाव दलीलद चाथे स्थान में हो तो घर-परिवार संबंधी अनेक प्रकार का सुख होता है । ५. चतुर्थभाव दलीलक पंचम स्थान में हो तो ताऊ-चचा से सुख, खेती, संबंधी लाभ, खजाने से या खान से संबंधित लाभ होता है। ६. चतुर्थ भाव दलीलक षष्ठ भाव में हो तो पिता के शरीर में रोग, मामा से तथा मित्र से सुख होता है । ७. चतुर्थभाव दलीलक सप्तमस्थानमें हो तो घर-वाग संबंधी सुख, मित्र तथा पिता से संबंधित सुख होता है । ८. चतुर्थ भाव दलीलक अष्टम भाव में हो तो मित्रों को क्लेश-कष्ट, वाग तथा घर से संबंधित उद्विग्नता होती है । ९. चतुर्थ भाव दलीलक नवम स्थान में हो तो मनचाहे सुखों की प्राप्ति तथा माता-पिता के शरीर

में व्रण संबंधी कष्ट होता है । १०. चतुर्थ भाव दलीलक दशम स्थान में हो तो राजपक्ष से पृथ्वी संबंधी सौख्य, पदप्राप्ति तथा शरीर कष्ट होता है । ११. चतुर्थ भाव दलीलक एकादश स्थान में हो तो पिता तथा मित्र से संबंधित दुख तथा निधि संबंधी लाभ होता है । १२. चतुर्थ भाव दलीलद द्वादश स्थान में हो तो खेत घर आदि में व्यय, सुख तथा ताऊ-चचा आदि को सुख होता है ।

पुत्र (पंचम भाव) दलीलद के फलित - १. पुत्रदलीलद, पुरुष ग्रह होकर, पुरुष राशि में, पुरुष ग्रह के वर्ग में तथा पुरुष ग्रह से दृष्ट होकर लग्न में बैठे तो पुत्र से सौख्य होता है । यदि पंचम भाव दलीलक स्त्री ग्रह होकर, स्त्री राशि में, स्त्रीग्रह के वर्ग में तथा स्त्रीग्रह से दृष्ट होकर लग्न में बैठे तो कन्या से सौख्य होता है ।

१. पंचम भाव दलीलद शत्रुराशि में हो तथा पापग्रह से पीड़ित होकर लग्न में बैठे तो विरोध तथा कलह होता है । यदि पुत्रदलील पापग्रहों के अंतर (पुत्र दलीलद से दूसरे तथा बारहवें पापग्रह हों) में हो तथा अस्त हो तो नाशकारक है । २. पुत्र दलीलद द्वितीय स्थान में हो तो पुत्र से तथा पढ़ने-लिखने आदि के द्वारा लाभ होता है । ३. पुत्रदलीलद तृतीय स्थान में हो तो पुत्र लाभ, यश लाभ तथा पुत्र के द्वारा लाभ होता है। ४. पुत्र दलीलद चतुर्थभाव में हो तो बाल-बच्चों को कष्ट होता है । पापग्रह से दृष्ट होने से तो विशेष रूप से पीड़ा होती है । ५. पुत्रदलीलद पंचमभाव में हो तो पुत्र सौख्य, राजपक्ष से तथा राजसंबंधी लेखसे लाभ होता है । ६. पुत्रदलीलद षष्ठ भाव में हो तो पुत्रसंबधी लाभ तथा पुत्र के संबंध से चित्त में चंचलता होती है । ७. पुत्र दलीलद सप्तम भाव में होने पर पुत्र तथा मित्र की प्राप्ति होती है । पापग्रह से पीड़ित होने पर पुत्र तथा मित्र को कष्ट होता है । ८. पुत्र दलीलद अष्टम भाव में हो तो भूमि संबंधी सुख, मन में पुत्रसंबंधी पीड़ा होती है । ९. पुत्रदलील नवमभाव में हो तो बुद्धि की वृद्धि तथा पुत्र को विद्या से संबंधित अधिकार की प्राप्ति से मन में संतोष होता है । १०. पुत्रदलील दशमस्थान में हो तो सन्तान के शरीर में व्रण आदि की बाधा तथा अपने शरीर में ग्रह के अनुसार रोग होता है । ११. पुत्रदलील ग्यारहवें स्थान में हो तो चौपाया संबंधी सुख, विद्या (ज्ञान) संबंधी लाभ तथा बहू संबंधी सुख होता है । १२. पुत्र दलील द्वादश स्थान में हो तो पुत्र को कष्ट होता है । यदि उसका द्वादशेश के साथ मुथशिल योग होता है तो नाश कारक है । राशि, ग्रह तथा द्रेष्काण के अनुसार पीड़ा होती है ।

षष्ठभाव (शत्रु) दलीलद के फलित - १. शत्रुदलील लग्न में हो तो रोग की अधिकता होती है तथा शत्रु परास्त होता है । २. शत्रुदलील द्वितीय स्थान में हो तो धन लाभ, शत्रु से तथा बन्धु से द्वेष होता है । ३. शत्रु दलील तृतीय भाव में हो तो बंधु पक्ष से लाभ, सुख तथा शत्रुओं की अधिकता होती है । ४. शत्रु दलील चतुर्थ स्थान में हो तो घर तथा जमीन के विषय में शत्रु की उत्पत्ति होती है तथा उससे अनर्थ होता है । ५. शत्रु दलील पंचम भाव में हो तो शत्रुपरास्त, पुत्रसुख तथा कान्तिवृद्धि होती है। ६. शत्रुदलील षष्ठस्थान में हो तो नौकर-चाकर का सुख, मामा से लाभ तथा शत्रुवृद्धि होती है । ७. शत्रु दलील सप्तम भाव में हो तो स्त्री के संबंध से शत्रु की वृद्धि तथा इस

कारण यात्रा भी होती है । ८. शत्रु दलील अष्टम स्थान में हो तो रोग का नाश, शरीर में पुष्टता तथा शत्रुभय होता है । ९. शत्रु दलीलद नवम स्थान में हो तो शत्रु के प्रसंग से एक स्थान से दूसरे स्थान को आना-जाना पड़ता है । १०. शत्रुदलील दशम भाव में हो तो पद प्राप्ति, विरोधी से मेल तथा शिथिलता होती है । ११. शत्रु दलील एकादश स्थान में हो तो शत्रु से पीड़ा, बंधन का भय तथा अपने शरीर में व्रण संबंधी पीड़ा होती है तथा कामजनित बाधा होती है ।

जाया (सप्तम भाव) दलीलद के फलित - १. जाया दलील लग्न में हो तो स्त्री संबंधी सौख्य, संतोष वृद्धि तथा धनलाभ होता है । २. जाया दलीलद द्वितीय स्थान में हो तो अनेक रोगों की पीड़ा, पत्नी से संतोष तथा बंधु संबंधी सौख्य होता है। ४. जाया दलीलद चतुर्थ स्थान में हो तो लोकापवाद तथा यात्रा संबंधी सौख्य होता है। ५. जाया दलील पंचम भाव में हो तो धन लाभ तथा पत्नी से संबंधित मानसिक सौख्य होता है । ६. जाया दलील षष्ठ स्थान में हो तो रोग के कारण कान्ति हीनता, पत्नी के शरीर में मृत्युतुल्य कष्ट तथा शत्रुभय होता है । ७. जायादलील सप्तम भाव में हो तो पत्नीसंबंधी चंचलता रहती है । ८. जाया दलील नवम स्थान में हो और शुभग्रह से युक्त या दृष्ट हो तो शाले के संयोग से भाग्य की वृद्धि होती है । १०. जाया दलील पापग्रह से पीड़ित हो तो पत्नी के कोख भाग में विकार होता है । ११. जाया दलील एकादशस्थान में हो तो पुत्र-स्त्री संबंधी सौख्य तथा धन लाभ होता है । १२. जाया दलील अधिक पापग्रहों के वर्ग में होकर तथा पापग्रहों से युक्त या दृष्ट होकर द्वादश स्थान में बैठे तो भार्या की हानि होती है ।

रंध्र (अष्टम भाव) दलीलद के फलित - १. रंध्र दलीलद शुभग्रह से दृष्ट होकर लग्न में बैठे तो रोगभय होता है और यदि पापग्रह से युक्त या दृष्ट होता है तो मृत्यु का भय होता है । २. रंध्र दलील द्वितीय स्थान में हो तो नेत्र विकार होता है और यदि पापग्रह से युक्त या दृष्ट होता है तो यह अंध योग है । इसमें नेत्रों की हानि होती है । ३. रंध्रदलील तृतीय स्थान में शुभग्रह से युक्त या दृष्ट हो तो संतोष होता है और यदि पापग्रह से युक्त या दृष्ट हो तो भ्रातृ संबंधी विकार होता है । ४. रंध्र दलीलद शुभग्रहों के वर्ग में होकर चतुर्थ स्थान में बैठे तो भूमिसंबंधी लाभ होता है । यदि अशुभ ग्रहों के वर्ग में हो तो भूमि संबंधी हानि होती है । ५. रंध्र दलीलद पंचम स्थान में हो तो मानसिक सौख्य होता है और यदि पापग्रह से दृष्ट होता है तो बुद्धि की हानि होती है । ६. रंध्र दलीलद षष्ठ स्थान में शुभग्रह से युक्त या दृष्ट होकर बैठे तो शत्रु परास्त होता है । यदि पापग्रह से युक्त या दृष्ट होता है तो शत्रु की वृद्धि होती है । ७. रंध्र दलीलक सप्तम भाव में हो तो शरीर में अधिक कष्ट होता है । यदि शुभग्रह के वर्ग में हो तथा शुभगह से युक्त या दृष्ट हो तो शरीर सौख्य होता है । ८. रंध्र दलीलद शुभग्रह के वर्ग में हो तथा शुभग्रह से युक्त या दृष्ट अष्टम भाव में हो तो रोग का नाश होता है । ९. रंध्र दलीलक शुभग्रह से युक्त तथा दृष्ट होकर नवम स्थान में हो तो शरीर सौख्य तथा मृतव्यक्ति के धन की लब्धि होती है । १०. रंध्र दलीलक दशम स्थान में पापग्रह से युक्त

या दृष्ट हो तो पद की हानि होती है । यदि शुभग्रह से युक्त या दृष्ट हो तो पद की प्राप्ति होती है । ११. रंध्र दलीलक एकादशभाव में हो तो ताऊ-चचा तथा स्वजनों से सौख्य होता है । यदि पापग्रह के वर्ग में तथा पापग्रह से युक्त या दुष्ट हो तो हानि होती है। १२. रंध्र दलीलक द्वादश भाव में हो तो नेत्रविकार होता है । यदि शुभग्रह से युक्त तथा दृष्ट हो अथवा शुभग्रह से इत्थशाल करता हो तो शुभ होता है ।

भाग्य (नवम भाव) दलीलद के फलित - १. भाग्य दलील लग्न में बैठे तथा वर्ष लग्नेश के साथ मुथशिल करता हो तो भाग्य वृद्धि होती है । २. भाग्य दलील द्वितीय स्थान में हो तो स्त्रीसंबंधी सौख्य, धनलाभ तथा भाग्य वृद्धि होती है । ३. भाग्य दलील तृतीय स्थान में हो तो वैवाहिक कार्यक्रम, यात्रा तथा बंधुओं से विरोध होता है। ४. भाग्यदलील चतुर्थ स्थान में हो तो वाहन संबंधी सुख तथा मित्र संबंधी वियोग की सम्भावना होती है । ५. भाग्य दलील पंचम स्थान में हो तो पुत्र संबंधी सौख्य, पद प्राप्ति तथा चित्त में चंचलता होती है । ६. भाग्य दलील षष्ठ स्थान में हो तो भाग से लाभ, शरीर पीड़ा तथा लड़ाई-झगड़ा होता है । ७. भाग्य दलील सप्तमभाव में हो तो स्वजनों से सौख्य, स्त्रीसंबंधी संतोष तथा काम की वृद्धि होती है । ८. भाग्य दलील अष्टम भाव में हो तो चित्त की चंचलता, देहपीड़ा तथा उद्वेग होता है । ९. भाग्य दलील नवम स्थान में हो तो जन संबंधी लाभ, धर्म में रुचि तथा भाग्य की वृद्धि होती है । १०. भाग्य दलील दशम भाव में हो तो चित्त में उत्साह, राजपक्ष से सौख्य तथा पदवृद्धि होती है । ११. भाग्य दलील एकादशस्थान में हो तो स्वजन सौख्य, मित्रसौख्य तथा अच्छा लाभ होता है । १२. लाभ दलील द्वादश स्थान में हो तो वर्ष में व्यय अधिक होता है और यदि शुभग्रह से युक्त तथा दृष्ट हो तो मन को संतोष प्राप्त होता है ।

राज्य (दशम भाव) दलीलक के फलित - १. राज्यदलीलक लग्न में हो तो कान्ति, सौख्य तथा मानसिक प्रसन्नता होती है । २. राज्य दलील द्वितीय स्थान में हो तो सुन्दर वाणी का प्रयोग, भोजन संबंधी सौख्य, यश, मानसिक प्रसन्नता का लाभ होता है । ३. राज्य दलील तृतीय भाव में हो तो बंधुओं के सुख में रुकावट तथा मानसिक परितोष होता है । ४. राज्यदलील चतुर्थ स्थान में हो तो मकान-जलाशय आदि का बनवाना तथा घर-जमीन संबंधी सौख्य होता है । ५. राज्यदलीलक पंचम स्थान में हो तो पुत्रसंबंधी वृद्धि होती है । यदि राज्य दलीलक पापग्रह के या शत्रु ग्रह के वर्ग में होता है तो धन हानि तथा आपत्ति आती है । ६. राज्य दलीलक षष्ठ स्थान में हो तो शरीर कष्ट होता है। यदि शुभग्रह के या मित्र ग्रह के वर्ग में है तो शारीरिक सौख्य होता है । ७. राज्य दलीलक सप्तम भाव में हो तो स्त्रीसौख्य, मंत्र द्वारा या अच्छी सलाह द्वारा लाभ होता है । पापग्रह या शत्रु ग्रह के वर्ग में होने पर अपने द्वारा आपत्ति आती है । ८. राज्यदलील अष्टम स्थान में हो तो देह में रोग का भय होता है । यदि शुभग्रह या मित्रग्रह के वर्ग में हो तो रोग का भय नहीं होता है । ९. राज्य दलीलक नवम भाव में हो तो भाग्य की वृद्धि होती है। यदि पापग्रह या शत्रु ग्रह के वर्ग में हो तो मानसिक दुःख अधिक होता है । १०. राज्य दलील दशम स्थान में हो तो पद की प्राप्ति तथा कीर्ति होती

है । ११. राज्य दलील एकादश स्थान में हो तो पशु संबंधी सौख्य होता है । यदि पापग्रह या शत्रुग्रह के वर्ग में होता है तो पशु संबंधी हानि होती है । १२. राज्य दलील द्वादशभाव में हो तो नौकर-चाकर संबंधी सुख तथा यश होता है । यदि पापग्रह या शत्रुग्रह के वर्ग में हो तो शत्रु की प्रबलता होती है ।

लाभ (एकादशभाव) दलीलद के फलित- १. लाभदलीलद लग्नभाव में हो तो शरीर में कान्ति, पुष्टि तथा सौख्य होता है । २. लाभ दलील द्वितीय स्थान में हो तो धनलाभ होता है । यदि लाभ दलील का पापग्रह से इत्थशाल होता है तो धर्म तथा धन संबंधी हानि होती है । ३. लाभदलील तृतीय स्थान में हो तो बंधु सौख्य, प्रसन्नता, मिष्टान्न भोजन तथा वस्त्रादि का सौख्य होता है । ४. लाभदलील चतुर्थ स्थान में हो तो घर-जमीन संबंधी सौख्य, वाग-जलाशय (कुँआ आदि) तथा खेती से संबंधित लाभ होता है । ५. लाभ दलील पंचम भाव में हो तो पुत्र संबंधी सौख्य, विद्या-मंत्र आदि की सफलता तथा भक्ति प्राप्त होती है । ६. लाभ दलील षष्ठ भाव में हो तो शत्रु द्वारा लाभ होता है । उसका पापग्रह से इत्थशाल होने पर स्त्री संबंधी सुख अधिक होता है । ७. लाभ दलील सप्तम स्थान में हो तो स्त्रीजन के द्वारा लाभ होता है । शुभ ग्रह से इत्थशाल हाने पर स्त्रीसंबंधी सुख अधिक होता है । ८. लाभ दलील अष्टम स्थान में हो तो प्राप्त हुए पद के द्वारा लाभ, घर में कलह तथा सुजन से वैर होता है । ९. लाभ दलील नवम स्थान में हो तो देव-ब्राह्मण सत्कार, धर्म में रुचि तथा यात्रा द्वारा लाभ होता है । १०. लाभ दलील दशम भाव में स्थित हो तो लाभ में अड़चन होती है । यदि शुभ ग्रह या मित्र ग्रह से दृष्ट हो तो खर्च करने से पद की प्राप्ति होती है । ११. लाभ दलील एकादशस्थान में स्थित हो तो धन लाभ, मनुष्यों से प्रीति तथा संपत्ति की वृद्धि होती है। १२. लाभ दलील द्वादश स्थान में हो तो श्रेष्ठ पुरुषों से लाभ, पशु संबंधी लाभ तथा धन लाभ होता है । यदि पापग्रह से युक्त होता है तो हानि होती है ।

व्यय (द्वादश भाव) दलील के फलित - १. व्यय दलील लग्न में हो तो देहकष्ट तथा शुत्रभय होता है । २. व्यय दलील द्वितीय स्थान में हो तो पशुसंबंधी सौख्य तथा जिस ग्रह की दृष्टि होती है, उसके अनुसार लाभ होता है । ३. व्यय दलील तृतीय स्थान में हो तो पशु संबंधी लाभ, मित्र द्वारा लाभ तथा सौख्य की वृद्धि होती है। ४. व्यय दलील चतुर्थ स्थान में हो तो जमीन-खेती आदि के द्वारा लाभ होता है । ५. व्यय दलील पंचम भाव में हो तो पुत्र से संबंधित व्यय होता है । यदि शुभग्रह से युक्त तथा दृष्ट हो तो शुभफल होता है । ६. व्यय दलील षष्ठ स्थान में हो तो शत्रु परास्त तथा लाभ कम और खर्च ज्यादा होता है । ७. व्यय दलील सप्तम स्थान में हो तो राजदण्ड का भय होता है । शुभग्रह से युक्त या दृष्ट होने पर शुभफल होता है । ८. व्यय दलील अष्टम भाव में हो तो शत्रु से भय तथा संकट के कारण धनव्यय होता है । ९. व्यय दलील नवम स्थान में हो तो भाग्यवृद्धि तथा खर्च से लाभ अधिक होता है । १०. व्यय दलील दशम स्थान में हो तो राजपक्ष से लाभ द्रव्यव्यय के द्वारा वाहन का लाभ होता है।

११. व्यय दलील एकादश स्थान में हो तो पितृव्य (ताऊ-चचा) से संबंधित व्यय तथा लाभ होता है। १२. व्यय दलील द्वादश स्थान में हो तो पशु संबंधी सौख्य, कन्या संबंधी सौख्य तथा व्यय अधिक होता है।

तनुभाव (कुण्डली में प्रथम स्थान) में विचार योग्य बातें -

कुण्डली में बारह भाव या बारह स्थान होते हैं। प्रत्येक भाव से भिन्न-भिन्न बातों का विचार किया जाता है। किस स्थान से क्या विचार करना चाहिए, इस विषय में महाराज चण्डेश्वर का मन्तव्य प्रस्तुत किया जाता है -

आरोग्यपूजागुणमानवृत्तमायुर्वयोजातिजदोषसौख्यम् ।
क्लेशाकृती लक्षणवर्णरक्षा तद्भागिनेयस्य वधूस्तनौ स्यात् ।।

आरोग्यता, सत्कार, गुण, मान, आचरण, आयुः, ज्ञाति (जाति या कुटुम्ब) से होने वाला दोष या सुख, क्लेश, आकृति (कान्ति) लक्षण, वर्ण, जाति, रक्षा तथा भानजे की बहू, इन सब बातों का विचार लग्न भाव से होता है।

विचार के सम्बन्ध में सर्वमान्य सिद्धान्त-

यो भावः स्वामिसौम्याभ्यां दृष्टो युक्तः समेधते ।
पापदृष्टयुतो नाशो मिश्रैर्मिश्रफलं वदेत् ।।

कुण्डली में जो भी भाव या स्थान, अपने पति से तथा शुभ ग्रह से युक्त या दृष्ट होगा, उस स्थान की संबंधित वृद्धि होगी। जिस स्थान पर पापग्रह बैठा हो तथा उस पर पापग्रह की दृष्टि हो एवं वह स्थान अपने स्वामी ग्रह से युक्त या दृष्ट न हो तो उस स्थान से संबंधित फलों का नाश होता है। यदि कोई भाव शुभग्रह तथा पापग्रहों से युक्त या दृष्ट होता है तो उस भाव संबंधी फल मिश्रित (अच्छे और बुरे दोनों प्रकार के) होते हैं। यह नियम जन्म-वर्ष तथा प्रश्न में सर्वत्र लागू है।

तनु भाव संबंधी फलित के विचार का एक उदाहरण -

मान लिजिये कि एक व्यक्ति की वर्षकुण्डली में तनुभाव अपने स्वामी से तथा शुभग्रह से युक्त और दृष्ट है तो उसके शरीर में आरोग्य रहेगा, लोगों से पूजा (सत्कार) प्राप्त होगी, गुणों का उदय होगा, मान की अधिकता होगी, आचरण शुभ रहेंगे, आयु में निर्विघ्नता (खटकान न होना) रहेगी, लग्नेश की जो अवस्था है, उसी के अनुरूप अवस्था वाले पुरुष से अधिक सुख मिलेगा, अपनी ज्ञाति से सौख्य होगा, क्लेश का नाश होगा, शुभाकृति (कान्ति की वृद्धि) होगी, देहे में शुभ लक्षणों का उद्गम होगा, लग्नेश ग्रह की जो जाति है उस जाति के मनुष्य द्वारा सुख तथा रक्षा रहेगी और भानजे की पत्नी संबंधी या विवाहोत्सव संबंधी सौख्य होगा।

यदि लग्न भाव पापग्रह से युक्त या दृष्ट है तो पूर्वोक्त सभी बातों में विपरीतता होगी। शुभ तथा अशुभग्रहों से तनुभाव युक्त या दृष्ट है तो मिश्रित फल होगा। यही विचार करने की सरल पद्धति है। इससे प्रत्येक भाव संबंधी शुभ-अशुभ फलित का ज्ञान हो जाता है।

लग्न में स्थित ग्रहों के फल -

सूर्यारमन्दास्तनुगा ज्वरगार्तिर्धनक्षयः पापयुगिन्दुरित्थम् ।
शुभान्वितः पुष्टतनुश्च सौख्यं जीवज्ञशुक्रा धनराज्यलाभः ।।

लग्नभाव में सूर्य, मंगल तथा शनि के होने पर शरीरपीड़ा, ज्वर आदि, मानसिक क्लेश तथा धन हानि होती है । यदि चंद्रमा पापग्रह से युक्त होकर बैठता है तब भी पूर्वोक्त फल होता है । यदि लग्न में बुध, गुरु तथा शुक्र हों तो धन लाभ तथा राजपक्ष से लाभ होता है ।

तनुभाव संबंधी विशेष योग-उपयोग -

लग्नाधिपे पूर्णे बलेति सौख्यमारोग्यता कान्तिविवर्धनं च ।
अल्पं सुखं मध्यबले विनष्टे कष्टं व्ययाष्टारिगतेऽल्पसौख्यम् ।।

लग्न का स्वामी पूर्णबली होने पर शरीर का सुख, आरोग्यता तथा कान्ति की वृद्धि होती है । लग्नेश के मध्यबली होने पर थोड़ा सुख होता है । लग्नेश नष्टबली हो तो कष्ट होता है । यदि लग्नेश त्रिकस्थान में हो तो थोड़ा सुख होता है ।

नवमपञ्चमकेन्द्रगामितनुभर्ता जयसम्पदादिकर्ता ।
विधुरत्र बली कबूलशाली फलमत्यन्तशुभं तनोस्तनोति ।।

लग्नेश, केन्द्र-त्रिकोण स्थान में हो तो जय-संपत्ति आदि प्राप्त होती है । यदि बलवान् चंद्रमा, केन्द्र-त्रिकोण में बैठकर कबूल योग करता है तो तनु भाव संबंधी शुभफल होते हैं ।

लग्नं यदा पापखगैः समेतं सौम्यग्रहैर्नो सहितं च दृष्टम् ।
ददाति मान्द्यं बहुलं समान्ते तथा विवादं कुजनैर्नराणाम् ।।

वर्ष लग्न में पापग्रह हों तथा लग्न शुभग्रह से युक्त और दृष्ट न हो तो सभी बातों में शिथिलता होती है और खोटे लोगों से विवाद होता है ।

लग्नांशाधिपतिः कुत्थे लग्नेशेनेत्थशालवान् ।
बलवान् शुभवर्गाढ्यो देहपुष्टिफलप्रदः ।।

यदि लग्न के नवांश का स्वामी त्रिकस्थान में है, बलवान् है, शुभग्रह के वर्ग में है तथा लग्नेश से इत्थशाल करता है तो इस योग से देह की पृष्टि होती है ।

नवांशराशौ तु यथायथं ग्रहाः क्षिपन्ति तेजस्तदनु स्वभावतः ।
सुगन्धदुर्गन्धविगन्धता वा देहे वदेत् स्वाम्यनुसारतो वा ।।

नवांश राशि में गये हुए ग्रह, अपने स्वभाव के अनुसार तेज को देते हैं । नवांशग्रह की राशि के स्वामी के अनुसार व्यक्ति के सुगंध, दुर्गन्ध या निर्गन्धता कहनी चाहिए ।

वर्णस्य सद्मे तदधीश्वरे वा तथाविधे वर्णविकारमाहुः ।
विधोर्नवांशाधिपतेर्बलाढ्यो राशिस्तदा वर्णसुखं विधत्ते ।।

लग्न और लग्नेश के बलहीन तथा पापाक्रान्त होने पर शरीर में कान्तिहीनता

होती है । चन्द्रमा की नवांशराशि और नवांशपति बलवान् हो तो उसी के वर्ण (जाति) के व्यक्ति से सुख प्राप्त होता है ।

शुद्धः शुभवर्गयुतः शुभसंस्थः सौम्यवीक्षितश्चेन्दुः ।
मानससौख्यं विविधं विपरीते मानसानि दुःखानि ।।

वर्ष कुण्डली में चंद्रमा शुद्ध हो, शुभग्रहों के वर्ग में हो, शुभग्रह से युक्त तथा दृष्ट हो तो अनेक प्रकार के मानसिक सौख्य होते हैं । चंद्रमा के उक्त प्रकार से विपरीत होने पर व्यक्ति को मानसिक दुख होते हैं ।

यद्यद्भावाधीशः कुमुदाकरबान्धवं निपीडयति ।
तत्तद्भावसमुत्थान् क्लेशान्मानसोद्भवानाहुः ।।

कुण्डली में जिस-जिस भाव का पति चंद्रमा को पीड़ित करता है, उसी-उसी भाव से संबंधित मानसिक क्लेश होते हैं ।

तनुभाव से संबंधित सहमों के फलित -

नोट -विस्तार भय से सहमों के फल हिन्दी भाषा में ही लिखे जा रहे हैं ।

१. ज्ञान सहम का फल - ज्ञान सहम और उसका पति बलवान् हो और वह अपनी उच्चराशि या मित्र ग्रह की राशि अथवा शुभग्रह की राशि में हो तो उत्तम ज्ञान होता है । विपरीत होने पर ज्ञान अधम होता है । नीच राशि में होने पर नीच की सेवा तथा नीच का संग होता है ।

ज्ञान सहम, अपने स्वामी से तथा शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट हो तो विद्या की अच्छी प्राप्ति होती है । विपरीत (पूर्वोक्त के विरुद्ध) होने पर विद्या का अभाव होता है।

२. गुरु सहम का फल - गुरुसहम, शुभ ग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो एवं अपने स्वामी से भी युक्त तथा दृष्ट हो तो उस वर्ष व्यक्ति के मंत्रोपदेष्टा गुरुजी सुखी रहते हैं। विपरीत होने पर गुरुजी सुखी नहीं रहते हैं ।

गुरुसहम का स्वामी पापग्रह से युक्त हो तथा उस पर पापग्रह की शत्रुदृष्टि हो, एवं क्रूरग्रह से उसका मुसरिफ योग हो या द्वादशेश के साथ उसका उत्थशाल योग हो तो गुरुजी के शाप से व्यक्ति के संतान संबंधी सौख्य की हानि होती है ।

गुरु सहम बलवान् हो तो गुरुजी की कृपा या गुरुजी की संगति होती है । विपरीत होने पर गुरुजी से विवाद तथा रोष-विषाद होता है ।

३. मान सहम का फल - मान सहम बलवान् हो तथा इक्कवाल योग में हो, शुभग्रहों से युक्त या दृष्ट हो, मानसहम के पति का नवमेश के साथ इत्थशाल हो तो मान-धन की प्राप्ति होती है । मानसहम का स्वामी, जिस भाव का स्वामी होता है, उसी भाव से संबंधित मान की प्राप्ति होती है ।

४. माहात्म्यसहम का फल - माहात्म्यसहम अपने स्वामी से तथा लग्नेश से युक्त और दृष्ट हो, शुभग्रह की राशि का हो तथा शुभग्रह से युक्त हो एवं माहात्म्य सहम का पति, शुभग्रह के साथ इत्थशाल योग करता हो तो माहात्म्य की वृद्धि होती है।

माहात्म्यसहम का पति, लग्नेश के साथ इत्थशाल योग करता हो तथा जिस-जिस भाव से संबंध रखता हो उसी भाव से संबंधित महत्त्व की वृद्धि होती है।

मंत्रसंबंधी विचार - मंत्र (पंचम) स्थान के स्वामी के साथ माहात्म्य सहम के पति का इत्थशाल योग होने पर मंत्र के अनुष्ठान द्वारा महत्त्व प्राप्त होता है।

यदि उक्त योग में अष्टमेश का भी योग होता है तो मारण प्रयोग (वैरी के मृत्युके लिए अनुष्ठान) सिद्ध होता है।

नोट - पंचम भाव के स्पष्ट को पंचमेश के स्पष्ट में घटाना, शेष में गुरु के स्पष्ट को युक्त करना, यह मंत्र सहम होता है।

मंत्र सहम का फलित - मंत्र सहम यदि अपने स्वामी से तथा लग्नेश से युक्त और दृष्ट होता है तो मंत्रसिद्धि होती है अन्यथा नहीं।

माहात्म्य संबंध का अन्य विचार - माहात्म्य सहम, लग्न कुण्डली में त्रिकस्थान में हो, पापग्रह से युक्त तथा दृष्ट हो, अपने स्वामी से तथा लग्नेश से युक्त या दृष्ट न हो तथा माहत्म्य सहम का स्वामी निर्बल हो तो इस योग से व्यक्ति माहात्म्य से विहीन तथा धनहीन हो जाता है, वह यदि राजकुल का भी है तो भी निरादर पाता है।

नोट -

माहात्म्य के अर्थ - गंभीरता, धैर्य, उन्नत बुद्धि, ज्ञान, चित्त की प्रसन्नता, उज्ज्वलता, विलास, उदारता तथा सज्जन से मान, ये सब बातें माहात्म्य कहलाती हैं।

५. आशा सहम का फल - आशा सहम तथा उसका स्वामी, त्रिकस्थान में न हो, एवं सौम्य ग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो तो व्यक्ति को मनोरथ लाभ, वस्त्रलाभ तथा वाहन सुख होता है।

यदि आशा सहम तथा उसका स्वामी पापग्रह से युक्त तथा दृष्ट होता है तो व्यक्ति को दुख प्राप्त होता है।

६. सामर्थ्य सहम का फल - सामर्थ्य सहम, शुभ ग्रह से युक्त या दृष्ट हो तो स्वामी के द्वारा प्रभुता प्राप्त होती है। यदि सामर्थ्य सहम बलवान् होता है तो शरीर सुख होता है। सामर्थ्य सहम, पापग्रह से युक्त तथा दृष्ट अथवा निर्बल होने पर शरीर संबंधी सौख्य नहीं होता है। सामर्थ्य सहम के बलवान् होन पर ही सामर्थ्य, बल, शक्ति, साहस, धैर्य तथा कान्ति होती है।

७. गौरव सहम का फल - गौरव सहम, अपने स्वामी से तथा शुभ ग्रहों से युक्त और दृष्ट हो तो सौख्य, राजपक्ष से गौरव, यश तथा वस्त्रलाभ होता है। यदि गौरव सहम पापग्रह से युक्त या दृष्ट होता है तो पद की हानि होती है।

यदि गौरव सहम, शुभ तथा अशुभ, दोनों प्रकार के ग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो, उस के स्वामी का पापग्रह से इत्थशाल हो तो धन तथा मान का नाश होता है। यदि शुभग्रह के साथ इत्थशाल होता है तो पहिले पूर्वोक्त फल होकर फिर बाद में सुख तथा

वाहन और वस्त्र का लाभ होता है ।

८. जीवित सहम का फल - जीवित सहम पर क्रूरग्रह की दृष्टि हो तथा उसका स्वामी निर्बल हो तो व्यक्ति को मूर्धा से पीडित होना पड़ता है । यदि जीवित सहम पर शुभग्रह की दृष्टि हो तथा उसका स्वामी बलवान् हो तो व्यक्ति को बहुत सुख होता है ।

लग्न कुण्डली में जीवित सहम त्रिकस्थान में न हो, उस पर उसके स्वामी की तथा शुभग्रह की दृष्टि हो और उनसे युक्त हो एवं चंद्रमा पूर्ण हो तथा शुभग्रहों से युक्त हो और गुरु से युक्त अथवा दृष्ट हो, इस योग से व्यक्ति, स्त्री-पुत्र संबंधी सौख्य, कीर्ति तथा दीर्घ-आयु को प्राप्त करता है ।

यदि उक्त योग में जीवित सहम के स्वामी का शुभग्रह के साथ इत्थशाल होता है तो व्यक्ति को अधिकार, राजमान तथा स्त्री जाति से सत्कार प्राप्त होता है ।

९. जलसहम का फल - जल सहम अपने स्वामी से तथा शुभग्रह से युक्त हो, लग्नेश से और चतुर्थेश से युक्त अथवा दृष्ट हो तो व्यक्ति की मनोरथसिद्धि तथा कांतिवृद्धि होती है । विपरीत होने पर कान्ति की हानि होती है ।

१०. क्षमा सहम का फल - लग्नकुण्डली में क्षमा सहम शुभस्थान में हो, अपने स्वामी से और शुभग्रहों से युक्त हो तथा शुभग्रहों से दृष्ट हो तो व्यक्ति क्षमावान्, विद्वानों में अग्रणी, शीलवान् तथा दयावान् होता है ।

११. कलि (झकटक या झगड़ा) सहम का फल - कलि सहम, शुभग्रह तथा पापग्रहों से युक्त और दृष्ट हो तथा कलि सहम के स्वामी का क्रूरग्रह से मुथशिल योग हो, इस योग से व्यक्ति के निधन (मरण) की संभावना होती है । कलिसहम, शुभ तथा क्रूरग्रहों से युक्त हो तो जय होती है । शुभ तथा क्रूरग्रहों से कलि सहम दृष्ट होने पर कलह तथा क्लेश होता है ।

१२. वंदक सहम का फल - वंदक सहम अपने स्वामी से और शुभग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो तो व्यक्ति उस वर्ष में स्वतंत्र रहता है । विपरीत होने पर परतंत्र (पराधीन) रहना पड़ता है ।

१३. संताप सहम का फल - संताप सहम अपने स्वामी से और शुभग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो तो व्यक्ति के संताप तथा मानसिक दुख का नाश होता है । विपरीत होने पर दुख प्राप्त होता है ।

१४. प्रीति सहम का फल - प्रीतिसहम अपने स्वामी से तथा शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट हो तो व्यक्ति को बहुत संतोष होता है । विपरीत होने पर निराशा होती है ।

१५. देह सहम का फल - देह सहम, क्रूरग्रहों से युक्त तथा दृष्ट होने पर व्यक्ति के हाथ-पैर आदि अंगों में पीड़ा होती है । यदि देह सहम, अपने स्वामी से तथा शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट होता है तो शरीर में पुष्टता होती है ।

१६. गुरुता (गौरव या बड़प्पन) सहम का फल - गुरुता सहम अपने स्वामी से तथा शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट हो तो अपने मण्डल (४०० योजन का मण्डल होता है । १० मील का एक योजन होता है ।) में महत्त्व या प्रभुत्व होता है । विपरीत होने पर विरुद्ध फल होता है ।

१७. उपाय सहम का फल - उपाय सहम अपने स्वामी से तथा शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट होने पर उपाय के द्वारा मनोरथ की सिद्धि होती है किन्तु विपरीतता में नहीं होती है ।

१८. भक्ति सहम का फल - भक्ति सहम लग्नकुण्डली में शुभस्थान में हो, उस पर शुभग्रहों की दृष्टि हो तथा वह अपने स्वामी से और लग्नेश से युक्त हो तो उस वर्ष तीर्थ स्थान, गुरु-द्विज-देव भक्ति, जप-हवन-पूजा-पाठ आदि सत्कार्य होते हैं ।

१९. क्लेश सहम का फल - क्लेश सहम बलवान् हो , अपने स्वामी से तथा शुभग्रह से युक्त और दृष्ट हो एवं जिस भाव के स्वामी ईशराफ करता हो उस भाव से संबंधित क्लेश की प्राप्ति होती है ।

२०. जाति सहम का फल - जाति सहम बलवान् हो, अपने स्वामी से तथा शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट हो तो जाति के द्वारा सौख्य प्राप्त होता है किन्तु विपरीतता होने पर दुख प्राप्त होता है ।

२१. उद्यम सहम का फल - उद्यम सहम बलवान् होने पर सर्वत्र सभी उद्यम सफल होते हैं । उद्यम सहम निर्बल होने पर देवता के समान व्यक्ति का उद्यम असफल होता है ।

२२. भव्य सहम का फल - लग्न कुण्डली में भव्य सहम शुभ स्थान में हो तथा बलवान् हो और उसके स्वामी का शुभग्रह से इत्थशाल हो तो व्यक्ति को भव्य (कल्याण) प्राप्त होता है किन्तु विपरीत होने पर अभव्य होता है ।

२३. बंधन सहम का फल - बंधन सहम अपने स्वामी से युक्त अथवा दृष्ट हो तो बंधन (जेल या कैद) नहीं होता है। यदि बंधन सहम पापग्रह से युक्त या दृष्ट होता है तो बंधन होता है और यदि बंधन सहम के स्वामी का किसी पापग्रह के साथ इत्थशाल होता है तो विशेष करके बंधन होता है ।

२४. बंधमोक्ष (जेल से छूटना) सहम का फल - बंधमोक्षसहम लग्नकुण्डली में शुभ स्थान में हो तथा अपने स्वामी से और शुभग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो एवं उसपर मित्र ग्रह की दृष्टि हो तो बंधन से मुक्ति (छुटकारा) मिलती है । यदि उक्त योग में शत्रुग्रह की दृष्टि होगी तो दान-आदि उपाय से तथा धन खर्च से मुक्ति मिलती है ।

२५. वर्ण सहम का फल - वर्ण सहम बलवान् हो, शुभग्रह से युक्त हो और उस पर चंद्रराशि के नवांश पति की दृष्टि हो तो शरीर का वर्ण तथा कान्ति रम्य होती है ।

२६. चिह्न सहम का फल - चिह्न सहम बलवान् हो, शुभग्रह से युक्त हो, उसपर उसके स्वामी की, लग्नेश की तथा शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो उस वर्ष में व्यक्ति के हाथ में त्रिशूल आदि शुभ चिह्न बनते हैं, सामुद्रिक शास्त्र के अनुसार जिसका फल, ऐश्वर्य तथा श्रीवृद्धि आदि है ।

द्वितीय भाव का विचार

द्वितीय (धन) भाव से विचारने योग्य बातें -

माणिक्यमुक्ताफलरत्नधातुवज्राम्बरस्वर्णहयादिसर्वम् ।
रौप्यादिधान्यं क्रयविक्रयादि साधारणं तत्कथितं द्वितीये ।।

माणिक्य (चुन्नी), मुक्ताफल (मोती), रत्न, वज्र (हीरा), चांदी, सुवर्ण, वस्त्र, घोड़ा आदि सवारी तथा धान्य का क्रय-विक्रय (खरीत-फरोख्त) आदि, इन सबका विचार धनभाव से या द्वितीय स्थान से होता है ।

सिद्धान्त - यदि धनभाव, अपने स्वामी से युक्त या दृष्ट होता है तथा शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट होता है तो माणिक्य-मुक्ता-रत्न-चांदी-सोना आदि की प्राप्ति से सुख होता है। घोड़े आदि की सवारी से सुख, क्रय-विक्रय से लाभ तथा धान्य आदि के व्यापार द्वारा लाभ होता है ।

यदि धनभाव क्रूरग्रहों से युक्त तथा दृष्ट होता है तो उपर्युक्त फलकी विपरीतता होती है। मिश्र (शुभ और क्रूर) ग्रहों से युक्त तथा दृष्ट, धनभाव होता है तो मिश्रित (शुभ और अशुभ मिला) फल होता है ।

धनभाव में स्थित ग्रहों का फल -

चन्द्रज्ञजीवस्फुजिता धनस्था धनागमं राज्यसुखं च दद्युः ।
पापा धनस्था धनहानिदाः स्युर्नृपाद्भयं कार्यविघातमार्किः ।।

द्वितीय स्थान में चंद्र-बुध-गुरु और शुक्र बैठते हैं तो राज्यपक्ष से सुख तथा धनलाभ कराते हैं। पापग्रह बैठने पर धनहानि होती है। शनि के बैठने पर राज्य पक्ष से भय तथा काम में बाधा पड़ती है ।

धनभाव संबंधी विशेष योगों के विचार -

१. जन्म कुण्डली का धनेश, वर्षकुण्डली में धन भाव में बैठा हो तथा गुरु का वर्ष लग्नेश के साथ इत्थशाल योग हो तो पूरे वर्ष भर धनलाभ होता है। यदि गुरु का किसी क्रूरग्रह के साथ ईशराफ योग होता है तो वर्ष में धन-धान्य की हानि होती है ।

२. जन्मकुण्डली में गुरु द्वितीयभाव में बैठा हो तथा वर्षकुण्डली में भी द्वितीय स्थान में बैठा हो, एवं वर्ष लग्नेश के साथ मुथशिल योग करता हो तो निश्चय ही उस वर्ष में अच्छा धनलाभ होता है ।

३. जन्म कुण्डली में धन स्थान का पति गुरु हो और वर्ष कुण्डली में वह धन स्थान में बैठे तो धन का लाभ होता है ।

४. वर्ष कुण्डली में धनेश, गुरु से युक्त होकर धन स्थान में बैठे तो वर्ष में धन

का लाभ होता है ।

५. जन्मकुण्डली में धनस्थान पर गुरु की दृष्टि हो तथा वर्ष काल में वह वर्षेश हो तो अच्छा धनलाभ होता है ।

६. वर्ष कुण्डली में धनस्थान में गुरु बैठे तो धन प्राप्ति होती है ।

७. वर्ष काल में गुरु बलवान् हो तथा वर्षेश हो तो वर्ष में निश्चय ही बड़ा धनलाभ होता है ।

८. वर्षकाल में बुध या शुक्र बलवान् हो तथा वर्षेश हो तो अच्छा धनलाभ होता है ।

९. वर्षकाल में बुध या गुरु अथवा शुक्र, इन तीनों में से कोई भी निर्बल हो तथा पापग्रह से युक्त हो तो धन प्राप्ति होती है ।

१०. लग्नेश और धनेश के मुथशिल होने पर सुखपूर्वक धन लाभ होता है।

११. लग्नेश और धनेश के ईशराफ योग में धनहीनता तथा व्यय होता है ।

१२. जन्मकुण्डली में बुध छठे स्थान में हो तथा वर्षकुण्डली में भी छठे स्थान में हो तो धनलाभ होता है ।

१३. जन्मकुण्डली में मंगल छठे स्थान में हो तथा वर्षकुण्डली में भी मंगल छठे स्थान में हो तो थोड़ा धनलाभ होता है और अपनी धातु से संबंधित रोग करता है ।

१४. लग्नकुण्डली में लग्न-धन-त्रिकोण स्थान में लग्नेश, धनेश तथा चंद्रमा बैठें तथा वे परस्पर में युक्त अथवा दृष्ट हैं तो व्यक्ति को धनलाभ कराते हैं ।

१५. लग्नकुण्डली में धनस्थान, त्रिकोणस्थान अथवा केन्द्र स्थान में बलवान् होकर बुध, गुरु और शुक्र बैठें, वे अपनी उच्च आदि राशियों में हों तथा पापग्रह से युक्त न हों, इस योग से व्यक्ति को शीघ्र ही बहुत लाभ होता है ।

१६. लग्नेश, धनेश और चंद्रमा के कंबूल योग होने पर बहुत धन लाभ होता है ।

१७. लग्नेश और धनेश का नक्त योग होने पर व्यक्ति को किसी अन्य मनुष्य से धनलाभ होता है ।

१८. लग्नेश और धनेश के यमया योग होने पर धनलाभ होता है, यदि ये पापग्रह से युक्त तथा दृष्ट होते हैं तो धनलाभ नहीं होता है ।

१९. धनस्थान में क्रूरग्रह बैठे हों तथा वे शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट हों तो दूर में और देर से थोड़े धन का लाभ होता है ।

२०. धन स्थान में पापग्रह हों और उनपर पापग्रहों की दृष्टि हो तो बहुत समय से उपार्जित धन की हानि होती है ।

२१. वर्षकाल में लग्नेश और धनेश का इत्थशाल हो, वे जिस भाव में शुभग्रह से दृष्ट होकर बैठते हैं, उसी भाव से संबंधित लाभ होता है । जैसे - लग्न में होने पर स्वयं के द्वारा लाभ, धन स्थान में होने पर धन द्वारा धनलाभ, भ्रातृस्थान में होने पर भ्राता द्वारा लाभ, पंचम भाव में होने पर पुत्र द्वारा लाभ, षष्ठस्थान में होने पर शत्रुद्वारा लाभ, सप्तम स्थान में होने पर स्त्री द्वारा लाभ, नवम स्थान में होने पर धर्मकार्य के द्वारा

लाभ तथा दशम भाव में होने पर राज्य द्वारा लाभ होता है ।

२२. जन्मकाल में शुक्र धनस्थान का स्वामी हो और वह वर्षकुण्डली में लग्न में बैठे तथा उदित और बलवान् हो तो उस योग से व्यक्ति, लोगों को ऋण (कर्ज) देता है ।

२३. जन्मलग्न का स्वामी, वर्ष कुण्डली में धन स्थान में बैठे तथा धनेश के साथ इत्थशाल करता हो तो, उस पूरे वर्ष भर व्यक्ति को धनलाभ रहता है ।

२४. धनसहम तथा उसका स्वामी, दोनों ही बलवान् हों तो पूरे वर्ष लाभ रहता है।

२५. वर्षकुण्डली में बलवान् लग्नेश, धनस्थान में बैठे तथा धनेश लग्नभाव में बैठे तो पूरे वर्षभर धनलाभ होता है ।

२६. जन्मकाल का धनेश, वर्ष में धनेश और लग्नेश से युक्त या दृष्ट हो, उनसे इत्थशाल करता हो तथा बलवान् हो, इस योग से व्यक्ति को वर्ष में बहुत अधिक धन का लाभ होता है ।

२७. लग्नेश और धनेश का इत्थशाल योग हो, इन दोनों में मंदगति ग्रह, जिस भाव में बैठा हो, उसी भाव से संबंधित लाभ होता है ।

२८. वर्ष में धनेश बलवान् होता है तो सुवर्ण, रत्न,वस्त्र तथा धन का लाभ होता है । मध्यबली धनेश हो तो लाभ मध्यम होता है । धनेश हीनबली होता है तो धनहानि होती है । यदि हीनबली धनेश नीचराशि का या अस्त का होता है तो धन की हानि अधिकता से होती है ।

२९. धनसहम तथा उसका स्वामी बलवान् हो, उनपर शुभग्रहों की मित्र दृष्टि हो तो व्यक्ति को सुखपूर्वक लाभ होता है । शुभग्रहों की यदि शत्रुदृष्टि होती है तो यत्न के द्वारा लाभ होता है ।

३०. लग्नेश और धनेश का मुथशिल योग हो तथा उनपर शुभग्रहों की मित्रदृष्टि हो तो सुखपूर्वक (आराम के साथ) धन लाभ होता है ।

३१. लग्नेश और धनेश का मुसरिफ योग होने पर धनहानि, दुर्नीति तथा भय होता है ।

३२. जन्म काल में गुरु जिस राशि में हो, उसी राशि की वर्षलग्न हो, वह अपने स्वामी से तथा शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट हो तो शरीर में आरोग्य तथा अपने अध्यक्ष से लाभ होता है ।

३३. वर्षकुण्डली में धनभाव में शुभग्रह का वर्ग हो, धनभाव शुभग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो, धनभावपर उसके स्वामी की दृष्टि हो अथवा उससे युक्त हो एवं धनेश शुभग्रह के वर्ग में हो, इस योग से व्यक्ति को धनभाव संबंधी सौख्य की प्राप्ति होती है।

धनभाव संबंधी सहमों के फलित

१. धनसहम का फल - लग्नकुण्डली में धनसहम शुभस्थान में हो, अपने स्वामी से तथा लग्नेश से दृष्ट हो, कर्मेश यानी दशमभाव के स्वामी से युक्त या दृष्ट हो,

किन्तु रंध्रेश यानी अष्टम भाव के स्वामी से युक्त या दृष्ट न हो, ऐसी स्थिति में धनसहम, जिस-जिस भाव के स्वामी से युक्त या दृष्ट होगा, उसी के प्रसंग से धन का लाभ होता है ।

धनसहम का पति, लग्नेश, विद्यासहम का पति तथा दशमेश, इनका आपस में इत्थशाल या नक्त अथवा यम योग होता है तो व्यक्ति विद्या के प्रसंग से राजमान्य होता है तथा धन प्राप्त करता है ।

विद्यासहम का स्वामी बलवान् हो, शुभग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो तो व्यक्ति विद्या के द्वारा प्रसिद्ध होता है ।

धनसहम अपने स्वामी से तथा शुभग्रहों से दृष्ट हो तो धनलाभ संबंधी सौख्य होता है किन्तु यदि धनसहम पापग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो तो धन की हानि होती है।

धनसहम पर शुभग्रहों की दृष्टि हो और धनसहम के स्वामी का क्रूरग्रह के साथ इत्थशाल योग हो तो पहिले धन की हानि होती है फिर बाद में धन संबंधी सौख्य होता है। यदि उक्त योग से विपरीत होता है तो विपरीत फल होता है ।

धन सहम पर ग्रह की शत्रुदृष्टि होने से शत्रु का भय तथा चोरी आदि के प्रसंग से धन हानि होती है । यदि धनसहम पर ग्रह की मित्र दृष्टि होती है तो मित्र के प्रसंग से मान, यश, सुख तथा लाभ होता है ।

२. दरिद्र सहम का फल - दरिद्र सहम वर्ष लग्न कुण्डली में त्रिकस्थान में हो, नीचराशि के ग्रह से तथा पापग्रह से युक्त और दृष्ट हो एवं दरिद्रसहम का पति निर्बल हो, इस योग से व्यक्ति का पहिले से चला आ रहा ऋण वर्ष में दूर हो जाता है।

वर्ष लग्नकुण्डली में दरिद्रसहम त्रिकस्थान को छोड़कर किसी अन्य स्थान में हो, अपने स्वामी से, लग्नेश से तथा शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट हो तो इस योग से वर्ष में धनवान् व्यक्ति को भी ऋण लेने का प्रसंग होता है, फिर निर्धन व्यक्ति के लिए तो कहना ही क्या है ?

३. अश्वसहम का फल - अश्वसहम कुण्डली में शुभस्थान में हो, शुभग्रह से युक्त हो, अपने स्वामी से, लग्नेश से तथा लाभेश से युक्त या दृष्ट हो तो अश्व (घोड़ा) आदि वाहन का अच्छा सुख होता है तथा जय, मान, कीर्ति और धन वृद्धि होती है ।

४. दृष्टि सहम का फल - दृष्टि सहम कुण्डली में शुभस्थान में हो, बलवान् हो, अपने स्वामी से और लग्नेश से युक्त तथा दृष्ट हो एवं सूर्य और चंद्रमा अंधी राशियों में न हो, इस योग से व्यक्ति को दृष्टि संबंधी तथा आयुः संबंधी सौख्य होता है।

दृष्टि सहम का स्वामी पापग्रह से युक्त और दृष्ट हो तथा सूर्य दिन में अंधी राशि का हो तो दिवान्धता (दिन में कम दिखायी देना) होती है एवं दक्षिण नेत्र में विकृति होती है । यदि दृष्टि सहम पापग्रह से युक्त तथा दृष्ट हो और चंद्रमा रात्रि में अंधी राशि का हो तो रात्र्यन्धता (रात में कम दिखायी पड़ना) होती है तथा वायें नेत्र में विकार होता है ।

दृष्टि सहम यदि मंगल और शनि से युक्त तथा दृष्ट होता है तो शीतला आदि रोग से नेत्रहानि होती है । दृष्टि सहम शनि तथा राहु से युक्त और दृष्ट होने पर भूत-प्रेत

की बाधा से नेत्रहानि होती है । दृष्टि सहम शुक्र से युक्त या दृष्ट होने पर गुरु कोप से नेत्रहानि होती है ।

तृतीय भाव का विचार

सहज भाव या तृतीय स्थान से विचारणीय विषय -

स्नुषानुजक्षेत्रसमृद्धिलाभभृत्यादिदासीभटकर्मकर्तुः ।
यात्रादिचिन्ता विनयं समग्रं पर्यायमेतत् कथितं मुनीन्द्रैः ।।

बेटे की बहू, छोटा भाई, खेत संबंधी समृद्धि तथा लाभ, नौकर, दासी, शूरता, पराक्रम, यात्रा आदि की चिन्ता तथा विनय, इन सब बातों का विचार तृतीय स्थान से होता है ।

सिद्धान्त - तृतीयस्थान अपने स्वामी से तथा शुभग्रह से युक्त और दृष्ट हो तो पुत्र की बधू को सुख, छोटेभाई को सुख, शूरता, खेतसंबंधी समृद्धि, नौकर-नौकरानी का सुख, पराक्रम की वृद्धि, यात्रा की चिन्ता तथा विनय की वृद्धि होती है ।

यदि तृतीय स्थान अपने स्वामी से युक्त तथा दृष्ट न हो, किन्तु क्रूरग्रहों से दृष्ट हो तो उपर्युक्त फलों में विपरीतता होती है । शुभ और क्रूर, दानों प्रकार के ग्रहों से तृतीय भाव युक्त तथा दृष्ट होता है तो मिश्रित फल होता है ।

सहजे स्वामियुग्दृष्टे शुभवर्गान्वितेक्षिते ।
तदीशे शुभवर्गाढ्ये विक्रमोत्थं शुभं वदेत् ।।

तृतीयभाव शुभवर्ग में हो, अपने स्वामी से युक्त या दृष्ट हो तथा शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट हो तो अपने पराक्रम के द्वारा सफलता प्राप्त होती है ।

तृतीय भाव में स्थित ग्रहों के फल -

दुश्चिक्यगाः खलखगा धर्मराज्यलाभप्रदा बलयुताः क्षितिलाभदाः स्युः ।
सौम्याः सुखार्थसुतमानयशोविलासलाभाय हर्षमतुलं किल चात्र चन्द्रः ।।

तृतीय स्थान में क्रूरग्रह बैठने से धर्म कार्य तथा राज्य संबंधी लाभ होता है । यदि क्रूरग्रह बलवान् होते हैं तो भूमिसंबंधी लाभ होता है । तृतीय भाव में सौम्य ग्रह होने पर सुख, मान, यश, आनन्द, धनलाभ तथा पुत्रसंबंधी सुख होता है । तृतीय स्थान में चंद्रमा के होने से हर्ष की अधिकता होती है ।

तृतीय भाव संबंधी योगों का विचार - १. वर्षकुण्डली में बलवान् सूर्य, तीसरे, नौवें या ग्यारहवें स्थान में बैठता है तो भ्राता से सुख होता है । इसी प्रकार शुभ ग्रह से युक्त तथा दृष्ट शुक्र, तीसरे या नौवें अथवा ग्यारहवें स्थान में हो तो भाई से सुख होता है ।

२. वर्ष कुण्डली में पराजित या अस्त का होकर शुक्र तीसरे स्थान में बैठे तो उस वर्ष भाई से कलह होता है ।

३. वर्ष लग्न से या वर्षेश से तीसरे स्थान में गुरु होने से भाई से सुख होता है ।

४ वर्ष काल में दशमेश बलवान् हो, तृतीयेश तृतीय भाव में हो तथा वर्ष लग्नेश के साथ इत्थशाल करता हो, इस योग से व्यक्ति को भ्राता से सुख होता है तथा

पराक्रमकी वृद्धि होती है ।

५. वर्षेश सूर्य या शुक्र हो, वह बलवान् हो तथा पापग्रह से युक्त या दृष्ट न हो तो भ्राताओं को परस्पर सौख्य होता है, किन्तु विपरीत योग होने पर विपरीत फल होता है ।

६. तृतीयेश या वर्षेश दग्ध हो तो भ्राता से कलह होता है ।

७. तृतीयेश से या वर्षेश से तीसरे स्थान में निर्बल गुरु के होने पर भाई से वैर ठनता है ।

८. पूर्वोक्त प्रकार के गुरु का तृतीयेश से ईसराफ हो तो जड़ता तथा क्लेश होता है एवं भ्राता से तथा स्वजन से कलह होता है ।

९. वर्ष कुण्डली में तृतीयेश तृतीय भाव में हो, वह वर्ष का अधिकारी भी हो तथा उसका लग्नेश से मुथशिल योग हो, इस योग से वर्ष में व्यक्ति को भाई से परस्पर सुख प्राप्त होता है ।

१०. तृतीय स्थान में बैठे तृतीयेश का क्रूरग्रह के साथ ईसराफ हो तो कलह होता है ।

११. मंगल या शनि की राशि, तृतीय स्थान में हो तथा इनकी राशि का तृतीयेश हो तो भाई को रोग होता है ।

१२. तृतीय स्थान में मंगल या शनि की राशि हो तथा इन्हीं की राशि में तृतीयेश हो तो भाई को कष्ट होता है ।

१३. बुध की राशि में तृतीयभाव में हो तो भाई को वधिर संबंधी कष्ट तथा जड़ता होती है ।

१४. मंगल या बुध अथवा शनि की राशि तृतीय स्थान में हो तथा शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट हों तो अपने तथा भाइयों में परस्पर अच्छा सुख रहता है ।

१५. जन्मलग्नेश और वर्ष लग्नेश, बुध और शुक्र, ये सब बलवान् होकर तृतीय स्थान में बैठें तो सौन्दर्य तथा बंधुगण को बहुत सौख्य होता है ।

१६. वर्षकाल में बलवान् गुरु के राशि में हो, जन्म में तथा वर्ष में शुक्र, कोई अधिकारी हो तो बंधुगण की उन्नति होती है ।

१७. वर्ष लग्नेश या वर्षेश, तृतीयेश से सप्तम भाव में बैठे तो भाइयों से वर्ष में विवाद होता है ।

१८. जन्मकुण्डली में तथा वर्ष कुण्डली में तृतीयेश, शुभग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो तो भ्रातृपक्ष से प्रसन्नता रहती है ।

१९. तृतीयेश और लग्नेश, दोनों तृतीय स्थान में बैठें इसी प्रकार द्रेष्काण कुण्डली या नवांश कुण्डली में बैठे तो भ्रातृपक्ष की वृद्धि होती है ।

तृतीय भाव संबंधी सहमों के फलित

१. भ्रातृसहम का फल - भ्रातृ सहम, शुभग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो एवं अपने स्वामी से युक्त या दृष्ट हो तो भाइयों में परस्पर सौख्य होता है, किन्तु विपरीत होने

पर भाइयों से कलह होता है ।

भ्रातृ सहम का स्वामी नष्टबली हो तो कनिष्ठ भ्राता की हानि होती है । भ्रातृ सहम का स्वामी उदित तथा बली हो तो भ्रातृ सुख होता है ।

भ्रातृसहम का स्वामी, लग्नेश से, मंगल से या तृतीयेश से मुथशिल करता हो तो व्यक्ति के भाइयों को धनलाभ होता है, भाई आज्ञापालक होते हैं तथा उनके पराक्रम की वृद्धि होती है ।

भ्रातृ सहम, शुभग्रह के वर्ग में हो, अपने स्वामी से तथा लग्नेश से दृष्ट हो एवं अपने स्वामी से तथा शुभग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो तो भ्राताओं से विविध सौख्य तथा धनलाभ होता है ।

२. सेवक सहम का फल - सेवक सहम बलवान् हो, अपने स्वामी से, लग्नेश से तथा षष्ठेश से युक्त और दृष्ट हो एवं शुभग्रहों के वर्ग में हो तो उत्तम सेवक की प्राप्ति होती है तथा अपनी प्रभुता होती है ।

सेवक सहम बलवान् हो उसका स्वामी षष्ठ स्थान में हो, तो सेवक का अतुल सुख होता है । यदि सेवक सहम तथा उसका स्वामी शुभग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो तो विशेष करके सेवक का सुख होता है ।

जिस-जिस भाव के स्वामी के साथ सेवक सहम के स्वामी का इत्थशाल होता है, उस भाव से संबंधित लाभ होता है तथा विशेष करके सेवक का सौख्य होता है ।

३. पंथा सहम का फल - पंथासहम बलवान् हो, उसका स्वामी लग्नेश से तथा तृतीयेश से मुथशिल करता हो तो पंथाजन्यसुख विशेषता से होता है ।

४. बल (सेना) सहम का फल - राजा के या राज्य के अधिकारी के वर्ष काल में बलसहम अपने स्वामी से तथा शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो उस वर्ष सेना संबंधी सौख्य होता है । विपरीत होने पर विपरीत फल होता है ।

५. भृत्यसहम का फल - भृत्यसहम अपने स्वामी से युक्त या दृष्ट हो तथा शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट हो तो भृत्य का सुख अच्छा होता है । विपरीत होने पर मालिक तथा नौकर में वैमनस्य (मन का न मिलना) होता है ।

नोट - वेतन (तनख्वाह) लेकर काम करने वाले को भृत्य कहते हैं ।

चतुर्थभाव का विचार

चतुर्थ भाव से विचारने योग्य विषय -

गृहं विधानं विवरप्रवेशो महौषधं क्षेमखलादि वापी ।
मित्रं धृतस्त्री परमप्रयोगो गमागमौ यानसुखादिकं च ।।
स्थानच्युतिर्लाभगृहप्रवेशौ बुद्धिर्जनित्री जनकस्य तद्वत् ।
देशाधिकार्याण्यपि लाभमस्य विचिन्त्यमेतत्तु चतुर्थभावे ।।

घर, विधान, विल में प्रवेश, उत्तम औषधि, खेत-खलिहान आदि, जलाशय, मित्र, रखी हुई स्त्री, जाना-आना, सवारी का सुख, स्थान का छूटना, स्थान का लाभ, घर

में प्रवेश, बुद्धि, माता-पिता, देश पर अधिकार संबंधी कार्य तथा लाभ, इन सब बातों का विचार चतुर्थ भाव से होता है ।

नोट - पूर्वोक्त रीति से चतुर्थ भाव का विचार करना चाहिए ।

चतुर्थभाव में स्थित ग्रहों के फल -

चन्द्रः सुखे खलयुतो व्यसनं निरुज्यं पुष्टिं शुभेन सहितः सुखमातनोति ।
सौम्याः सुखं विविधमत्र खलाः सुखार्थनाशं रुजं व्यसनमप्यतुलं भयं च ।।

वर्षकुण्डली में चतुर्थ स्थान में पापग्रह से युक्त चंद्रमा होता है तो विपत्ति आती है । शुभ ग्रह से युक्त चंद्रमा के होने पर आरोग्य, पुष्टि तथा सुख होता है । चतुर्थ स्थान में सौम्यग्रह होते हैं तो अनेक प्रकार का सुख होता है । चौथे स्थान में पापग्रह होने पर सुख तथा धन का हानि, रोग, विपत्ति तथा बहुत भय होता है ।

चतुर्थ भाव संबंधी योगों का विचार -

तुर्ये बलेन संयुक्ते तदधीशे तथाविधे ।
लग्नपेनेत्थशाली चेद् भावोत्थं सौख्यमादिशेत् ।।

चतुर्थ स्थान तथा उसका स्वामी बलवान् हो, चतुर्थेश का लग्नेश से इत्थशाल हो, ऐसी स्थिति में चौथै स्थान से संबंधी बातों का सौख्य प्राप्त होता है ।

१. कुण्डली में चतुर्थ स्थान में पापग्रह से युक्त सूर्य हो तथा पितृसहम भी पापग्रह से युक्त हो तो वर्ष में पिता को पीड़ा होती है ।

२. आपोक्लिम (३-६-९-१२) स्थानों में पापग्रहों का वर्ग हो, पितृसहम पापग्रह के वर्ग में हो, सूर्य पापग्रह के वर्ग में हो और लग्नेश के साथ ईसराफ करता है तो यह योग पिता की मृत्यु का है ।

३. सूर्यराशि का स्वामी चतुर्थेश से चौथे स्थान में हो, वर्षकुण्डली में चौथे भाव में पापग्रह हो तथा वे पाप ग्रहों के वर्ग में हो तथा उनपर पापग्रहों की दृष्टि हो तो उस वर्ष पिता को बड़ी पीड़ा होती है ।

नोट- इसी प्रकार चन्द्रमा से तथा मातृ सहम से शुभ-ग्रहों के योग से माता के संबंध में शुभ-अशुभ फल का विचार होता है ।

४. वर्ष कुण्डली में पापग्रहों से युक्त तथा दृष्ट होकर सूर्य और चंद्रमा बैठें तो उस वर्ष माता और पिता, इन दोनों को ही पीड़ा होती है ।

५. जन्म के सूर्य की राशि का शनि वर्ष में हो तो व्यक्ति का अपमान होता है तथा माता-पिता से विरोध होता है ।

६. जन्म के चंद्र की राशि का शनि वर्ष में हो तो माता को पीड़ा होती है ।

७. वर्ष कुण्डली में चतुर्थेश चौथै स्थानों में बैठे तो माता-पिता को सुख होता है ।

८. लग्नेश और चतुर्थेश बलवान् हो तथा इत्थशाल करते हों तो माता-पिता को सुख होता है ।

९. सौम्य ग्रह से युक्त तथा दृष्ट चतुर्थेश, लग्नेश से और चंद्रमा से मुथशिल योग करता है तो घर-जमीन आदि का लाभ होता है ।

१०. लग्न में मेष राशि का चंद्र हो और चतुर्थ स्थान में मंगल हो, दोनों ही शुभग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हों तो घर-भूमि आदि का लाभ होता है ।

११. लग्नेश और चतुर्थेश शुभग्रहों से युक्त होकर लग्न में या चौथे स्थान में बैठें तथा चंद्र से युक्त हों तो घर-भूमि आदि का लाभ होता है ।

१२. वर्ष कुण्डली में चंद्र और गुरु एकसाथ केन्द्र में बैठें अथवा गुरु और शुक्र, दोनों एकसाथ चतुर्थ स्थान में बैठें तो व्यक्ति को उद्योग करने से वर्ष में निधि (खान) संबंधी लाभ होता है ।

१३. सूर्य, चंद्र, गुरु और शुक्र, इनमें से कोई एक बलवान् ग्रह अपने नवांश का होकर चौथे स्थान में बैठे तो अपनी या दूसरे की निधि (गड़ाधन) का लाभ होता है ।

१४. लग्नेश और चतुर्थेश सौम्यग्रहों सें युक्त तथा दृष्ट हों तो वर्ष में मित्र से मिलन होता है ।

१५. लाभेश सौम्यग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो तो वर्ष में मित्र से मिलन होता है।

१६. लग्नभाव अपने स्वामी से दृष्ट हो, लग्नेश का मित्र लग्न में बैठे तथा चतुर्थ स्थान में चतुर्थेश बैठे तो देशसंपत्ति की प्राप्ति होता है ।

१७. वर्ष कुण्डली में चतुर्थभाव तृतीयेश से युक्त या दृष्ट हो तथा चतुर्थ भाव चंद्र, बुध, गुरु और शुक्र से युक्त तथा दृष्ट हो तो वर्ष में वाहन की तथा सुख की वृद्धि होती है ।

१८. चतुर्थ स्थान में शुभग्रह होने से लाभ और सुख होता है । यदि चतुर्थ स्थान में पापग्रह होता है तो दुख मिलता है ।

१९. कुण्डली में जहाँ चतुर्थेश बैठा हो उससे चौथे, सातवें और दशवें स्थान में शुभ ग्रह हो तो लाभ और सौख्य होता है और यदि उक्त स्थानों में पापग्रह होते हैं तो लाभ और सुख की हानि होती है ।

२०. चतुर्थ भाव शुभग्रह से युक्त तथा दृष्ट हो तो धृत भार्या (धरी हुई स्त्री) की प्राप्ति होती है । यदि उक्त योग में शुक्र की दृष्टि होती है तो विशेष फल होता है ।

२१. चतुर्थ स्थान पर शुभग्रह की दृष्टि न हो किन्तु क्रूरग्रह की दृष्टि हो तो वर्ष में धृत भार्या की मृत्यु या मृत्यु तुल्य कष्ट होता है ।

चतुर्थ भाव संबंधी सहमों के फलित

१. मित्र सहम का फल - मित्रसहम शुभराशि का हो, वह लग्नेश से, अपने स्वामी से एवं शुभग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो तो वर्ष में अत्यन्त मित्र सौख्य होता है और यदि मित्र सहम, पापग्रह से युक्त तथा दृष्ट होता है तो मित्र संबंधी विपत्ति होती है ।

मित्र सहम का स्वामी, लग्नेश से और लाभेश से इत्थशाल करता है तो मित्र को लाभ होता है । यदि मित्रसहम का स्वामी, द्वादशेश से मूसरिफ योग करता है तो मित्र की उसवर्ष में धनहानि होती है ।

२. पितृ सहम का फल - पितृसहम अपने स्वामी से युक्त या दृष्ट हो तथा

शुभग्रह से युक्त और दृष्ट हो तो पिता को धनलाभ, मान तथा सौख्य होता है।

पितृ सहम का स्वामी निर्बल हो कर अष्टम स्थान में बैठे और अष्टमेश के साथ मूसरिफ योग करता हो तो पिता की मृत्यु होती है। उक्त योग में यदि अष्टमेश चरराशि का होता है तो पिता की मृत्यु परदेश में होती है।

पितृसहम क्रूरग्रह से युक्त तथा दृष्ट हो और पितृ सहम के स्वामी का शुभग्रह से इत्थशाल हो तो पिता को पहिले बड़ी रोग पीड़ा होती है फिर बाद में सुख होता है।

पितृ सहम का स्वामी पूर्ण बली हो तो पिता को यश तथा राजपक्ष से मान प्राप्त होता है।

३. मातृ सहम का फल - मातृसहम बलवान् हो तो माता को सुख होता है तथा माता की प्रसन्नता होती है। मातृसहम के निर्बल होने पर माता को कष्ट होता है। मातृ सहम के स्वामी का अष्टमेश से मूसरिफ योग होने पर माता की मृत्यु होती है।

४. निधि सहम का फल - निधि सहम बलवान् हो, अपने स्वामी से युक्त या दृष्ट हो तथा शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट हो तो निधि का लाभ होता है।

गृहसहम का फल - कुण्डली में गृहसहम शुभस्थान में हो, अपने स्वामी से युक्त या दृष्ट हो, चतुर्थेश से दृष्ट हो तथा शुभग्रह से युक्त और दृष्ट हो तो व्यक्ति को गृहसंबंधी लाभ होता है।

६. सुख सहम का फल - सुखसहम बलवान् हो, अपने स्वामी से युक्त या दृष्ट हो तथा शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट हो तो व्यक्ति सुख तथा धर्म-कर्म से युक्त होता है।

कुण्डली में सुखसहम, त्रिकस्थान में हो और क्रूरग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो एवं सुख सहम के स्वामी का पापग्रह से इत्थशाल हो तो सुख का नाश होता है तथा मनुष्यों से सदा शत्रुता होती है।

७. क्षेत्र सहम का फल - क्षेत्र सहम का और उसका स्वामी बलवान् हो तथा केन्द्र या पणकर स्थान में बैठे हों, क्षेत्रसहम के स्वामी का लग्नेश और चतुर्थेश के साथ इत्थशाल हो तो खेत की प्राप्ति होती है।

८. आगम सहम का फल - आगम सहम बलवान् हो, अपने स्वामी से युक्त या दृष्ट हो तथा शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट हो तो व्यक्ति को आगामी (आगे आने वाली) बात की सूचना होती है और यह मंत्री तथा धर्मात्मा होता है।

९. दुख सहम का फल - दुखसहम बलवान् हो, अपने स्वामी से युक्त या दृष्ट हो तथा शुभग्रह से युक्त और दृष्ट हो तो दुख की प्राप्ति तथा धर्म की हानि होती है।

पंचम भाव का विचार

पंचम भाव से विचारणीय बातें -

नाना प्रयोगा विनयप्रबन्धविनेयविद्यानयबुद्धिमन्त्राः ।

सन्धानगर्भाङ्गभवादिकं च प्रज्ञासुताख्यं सुतसंज्ञभावे ।।
पुत्रे मन्त्रधनोपायगर्भविद्यात्मजेक्षणम् ।
मातृवित्तं सहायाश्च बुद्धिशिल्पे विचारयेत् ।।

अनेक प्रकार के प्रयोग, विनय, प्रबन्ध, विद्या, नीति, बुद्धि, संधि, मंत्र, गर्भ, पुत्र, कन्या, शिष्य, धनप्राप्ति का उपाय, विचार, सहायक, माता का धन तथा शिल्प (कारीगरी), इन सब बातों का विचार पंचम भाव से होता है ।

नोट - पूर्वोक्त रीति से पंचम भाव का विचार करना ।

पंचम भाव संबंधी विचार - १. कुण्डली में पंचम भाव दलील जिस राशि में हो उस राशि के स्वामी पर लग्नेश की दृष्टि हो तथा वह पंचम भाव के नवांश में हो, इस योग से व्यक्ति ऊहापोह यानी तर्क-वितर्क में समर्थ होता है ।

२. पंचमेश केन्द्र में हो और शुभग्रह से युक्त हो तथा कोई उच्च का ग्रह उसे देखता हो तो व्यक्ति की गणित में कुशलता होती है ।

३. पंचम भाव दलील और पंचम भाव का नवांशपति, दोनों शुभस्थान में हों और शुभग्रहों से दृष्ट हों, इस योग से व्यक्ति धारणा आदि में पटु (कुशल) होता है ।

४. पंचम भाव दलील और पंचमेश, लग्नेश से दृष्ट हों तथा लग्नेश से इत्थशाल करते हों तो व्यक्ति, राजमंत्री, धनी तथा विवेकशील होता है ।

५. पंचम भाव दलीलद गुरु अपने नवांश में हो, बुध और शुक्र से युक्त तथा दृष्ट हो तथा बुध और शुक्र के साथ मुथशिल करता हो तो इस योग से व्यक्ति त्रिकालज्ञ (तीनों कालों की बातों के जानने वाला) होता है ।

६. पंचम भाव नवांश पति, गुरु वर्गोत्तमी हो, बुध और शुक्र से युक्त तथा दृष्ट हो तथा बुध और शुक्र के साथ मुथशिल करता हो तो व्यक्ति अपनी बुद्धि के द्वारा शास्त्रवेत्ता हो जाता है ।

७. पंचम भाव दलील या पंचमेश क्रूरग्रह से युक्त हो तथा पंचमेश भी क्रूर नवांश में हो तो व्यक्ति की बुद्धि मंद होती है ।

८. कुण्डली में पंचम भाव में कोई शुभग्रह न हो किन्तु मंगल तथा राहु हो, पंचमेश भी पापग्रह से युक्त तथा दृष्ट हो, इस योगवाले व्यक्ति को प्रायः विस्मृति (भूल या याद न रहना) होती है ।

९. पंचम भाव दलील जिस भाव के द्रेष्काण का पति हो उसी के उद्योग से धन लाभ होता है । यद्यपि यह योग जन्म में भी लागू है किन्तु वर्ष में विशेष विचारणीय है ।

१०. पंचमेश शुभग्रह से दृष्ट हो तथा लग्न में चंद्रमा हो तो इस योग से वर्ष में संतान होने की संभावना होती है ।

११. कुण्डली में पंचम स्थान में मंगल, गुरु और शुक्र बैठें हों तथा अपने नवांश में हों और उनपर लग्नेश की तथा शुभग्रहों की दृष्टि हो तो इस योग से वर्ष में संतान होती है ।

१२. वर्षकुण्डली में पंचम भाव पर पुरुष ग्रहों की दृष्टि हो तथा बलवान्

पंचमेश पुरुषराशि में हो तो उस वर्ष गर्भ में पुत्र होता है ।

१३. वर्ष कुण्डली में पंचम भाव में स्त्रीराशि हो, स्त्रीग्रह से युक्त तथा दृष्ट हो और पंचमेश भी स्त्रीराशि में हो तो उस वर्ष गर्भ में कन्या होती है ।

१४. वर्ष लग्नेश तथा पंचमेश, दोनों पुरुषराशि में हों तो उस वर्ष गर्भ में पुत्र होता है ।

१५. वर्ष लग्नेश और पंचमेश, दोनों स्त्री राशि में हों तो उस वर्ष गर्भ में कन्या होती है ।

१६. वर्ष कुण्डली में पंचम भाव में द्विःस्वभाव राशि हो और उसपर बुध की दृष्टि हो, इसी प्रकार पंचमभाव का नवांश भी द्विःस्वभाव राशि का हो और बुध से दृष्ट हो तथा पुत्रसहम भी द्विःस्वभाव राशि का हो तो उस वर्ष गर्भ में यमल (दो बच्चे) संतान होती है ।

१७. वर्षेश गुरु पाँचवें या ग्यारहवें स्थान में हो तथा शुभग्रह से युक्त हो तो पुत्र से सुख होता है और यदि पापग्रह से युक्त तथा दृष्ट होता है तो पुत्र से सुख नहीं होता है।

१८. बलवान् मंगल शुभग्रह के वर्ग में हो तथा शुभग्रह से युक्त और दृष्ट हो तो संतान संबंधी सन्तोष होता है और यदि पापग्रह के वर्ग में तथा पापग्रह से युक्त और दृष्ट है तो संतान संबंधी असन्तोष होता है ।

१९. जन्म में गुरु जिस राशि में हो, वर्षकाल में उसी राशि में वर्षेश हो तथा शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट हो तो उसवर्ष पुत्र की प्राप्ति होती है ।

२०. कुण्डली में शुभ राशि के मंगल और बुध, पाँचवें या ग्यारहवें स्थान में हो तथा शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट हो तो व्यक्ति को पुत्र का सौख्य होता है ।

२१. जन्मकाल में पंचमेश शुक्र हो तथा वर्षकाल में भी पंचमेश शुक्र हो और उसका वर्षलग्नेश के साथ इत्थशाल हो तो वर्ष में पुत्र से सुख होता है ।

२२. जन्मकाल में पंचमेश वर्षकाल में पंचमभाव की हद्दा का स्वामी हो और उसका वर्षलग्नेश से इत्थशाल हो तो उस वर्ष में पुत्र से सुख मिलता है ।

२३. जन्मकाल में पंचम भाव की हद्दा का स्वामी, वर्ष काल में पंचमेश हो तथा वर्षलग्नेश से इत्थशाल करता हो तो उस वर्ष में पुत्र से सुख होता है ।

२४. कुण्डली में पंचम स्थान में शुभग्रहों की अधिकता होने से पुत्र, भृत्य (नौकर) आदि का सुख होता है ।

२५. कुण्डली में पंचम स्थान में पापग्रहों की अधिकता होने से असत् पुरुष से प्रेम तथा पुत्र-भृत्य आदि से दुख होता है ।

२६. यदि सन्तान संबंधी पूर्वोक्त शुभयोग हो किन्तु यदि पंचमेश और द्वादशेश का इत्थशाल हो तो उत्पन्न हुए पुत्र का नाश होता है ।

२७. इसी प्रकार कन्या सहम से पंचम भाव में तथा सप्तमांश कुण्डली के पंचम भाव से कन्या के संबंध में शुभ-अशुभ तथा लाभ-हानि का विचार करना चाहिए।

२८. सप्तमांश पति लग्न में या पंचम में बैठे तथा शुभग्रह से दृष्ट हो तो पुत्री का सौख्य होता है । यह आचार्य खिन्दीक का कथन है ।

२९. वर्ष लग्न में पंचमेश हो और पंचम में वर्ष लग्नेश हो तो निश्चय ही उस वर्ष में पुत्र का जन्म होता है ।

३०. वर्ष कुण्डली में धन या मीन राशि का चंद्र हो, वृष या तुला राशि का मंगल हो तथा स्वराशि का शुक्र हो तो उस वर्ष व्यक्ति की स्त्री गर्भ धारण करती है ।

३१. वर्ष कुण्डली में पंचमभाव पर उसके स्वामी की दृष्टि न हो तथा वहाँ पापग्रह बैठा हो तो उस वर्ष गर्भच्युति (गर्भ का गिरना) होती है ।

३२. वर्षकाल में पंचमभाव पर पंचमेश की दृष्टि हो तथा पंचमस्थान में शुभग्रह हो तो गर्भाधान होता है ।

३३. स्त्री की वर्ष कुण्डली में लग्नेश पंचम या सप्तम स्थान में हो तथा पंचमेश और सप्तमेश दोनों लग्न में हों तो उस वर्ष गर्भाधान होता है ।

३४. पुरुष या स्त्री की किस-किस अवस्था में गर्भ होगा, इस विषय में देवशाल मुनि का मत प्रस्तुत किया जाता है :-

जन्मलग्न को प्रथमवर्ष, द्वितीय भाव को द्वितीय वर्ष, इसीक्रम से बारहवें स्थान को बारहवाँ वर्ष मानना फिर बारह वर्ष की आवृत्ति करनी । फिर २४ वर्ष के बाद फिर ३६ वर्ष के बाद फिर ४८ वर्ष के बाद आवृत्ति करनी ।

इस आवृत्ति के क्रम से जन्मकुण्डली के जिस भाव में जो अवस्था आये, उसी को लग्नभाव मान कर विचार करना ।

जब लग्न से त्रिकाण में शनि तथा पंचम भाव में गुरु होता है तभी गर्भ की स्थिति होती है ।

३५. चंद्र और शुक्र पंचमस्थान या एकादश स्थान में हों अथवा परस्पर देखते हों तो उस वर्ष में संतान होती है तथा सन्तान संबंधी सौख्य होता है ।

३६. कुण्डली में पंचम भाव में पंचमेश पुरुषग्रह उच्चराशि में बैठे तथा उसे समस्त ग्रह देखते हों तो पुत्र का जन्म होता है और भविष्य में वह राजा होता है ।

३७. वर्ष कुण्डली में पंचमेश स्त्रीग्रह हो और वह उच्चराशि का होकर पंचम स्थान में बैठे तथा उसपर समस्त ग्रहों की दृष्टि हो तो उस वर्ष कन्या का जन्म होता है और वह कन्या भविष्य में रानी होती है ।

पंचम भाव में स्थित ग्रहों के फल -

पुत्रवित्तसुखसञ्चयं शुभाः पुत्रगा भृगुसुतोऽतिहर्षदः ।
पुत्रमित्रधनबुद्धिहारकास्तस्करामयकलिप्रदाः खलाः ।।

पंचम स्थान में शुभग्रह बैठने से पुत्र का सुख तथा धन का संचय होता है । क्रूरग्रह बैठने से पुत्र-मित्र-धन तथा बुद्धि संबंधी हानि होती है । चोर का भय, रोग तथा कलह होता है ।

पंचमभाव संबंधी सहमों के फलित -

१. आधान सहम का फल - वर्षकुण्डली में आधान सहम शुभस्थान में हो, अपने स्वामी से और सौम्य ग्रह से युक्त हो तथा वर्षलग्नेश से और पंचमेश से युक्त हो तथा दृष्ट हो एवं चंद्रमा भी शुभग्रह के स्थान में हो तथा शुभग्रह से युक्त हो, इस योग के होने से वर्ष में गर्भाधान (गर्भ का ठहरना) होता है ।

२. सूति सहम का फल - वर्ष काल में सूतिसहम, अपने स्वामी से और शुभग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो तो प्रसव (बच्चा जनना) सुख से होता है । यदि सूति सहम अपने स्वामी से युक्त तथा दृष्ट न हो किन्तु पापग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो तो प्रसव बहुत कष्ट से होता है । यदि सूति सहम के स्वामी का अष्टमेश से ईसराफ हो तो प्रसव के कारण पत्नी की मृत्यु होती है ।

३. पुत्र सहम का फल - पुत्र सहम अपने स्वामी से तथा शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट हो तो वर्ष में व्यक्ति को पुत्र का लाभ तथा सुख होता है । यदि पुत्र सहम पापग्रह से युक्त होता है और पुत्रसहम के स्वामी का किसी शुभग्रह से इत्थशाल होता है तो वर्ष में व्यक्ति को पहले पुत्रसंबंधी दुख होता है फिर बाद में पुत्रसंबंधी सुख होता है । पुत्रसहम का स्वामी निर्बल हो तथा पापग्रह से युक्त हो एवं पापग्रह के साथ ईसराफ करता हो तो उस वर्ष व्यक्ति के पुत्र की मृत्यु होती है ।

यदि जन्मकाल में पंचमेश और पुत्रसहम का स्वामी आपस में इत्थशाल करते हों और शुभग्रहों की उनपर मित्र दृष्टि हो तो व्यक्ति को पुत्र की प्राप्ति होती है ।

४. कन्या सहम का फल - जिस वर्ष कन्यासहम बलवान् होता है उस वर्ष कन्या का जन्म होता है या कन्या संबंधी सुख होता है अथवा कन्या का विवाह आदि होता है किन्तु यदि कन्यासहम निर्बल होता है तो व्यक्ति को कन्या संबंधी सौख्य नहीं होता है ।

नोट - सन्तान संबंधी प्रश्नकाल में भी उक्त सहमों का विचार करना अत्यावश्यक है ।

५. विद्यासहम का फल - विद्यासहम बलवान् हो, शुभग्रह के वर्ग में हो, शुभग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो, इसी प्रकार विद्या सहम का स्वामी भी हो तथा उस का लग्नेश से इत्थशाल हो तो विद्यासंबंधी सौख्य होता है ।

विद्यासहम का स्वामी सूर्य हो तो अपने धर्म से संबंधित शास्त्र में रति (प्रेम) होती है । बुध के स्वामी होने पर लिखने में, रवि-गुरु के स्वामी होने पर देवताओं के अनेक मंत्रों में रति, शुक्र के स्वामी होने पर संगीत में, सुगंधि के विषय में तथा काम शास्त्र में रति होती है । शनि के स्वामी होने पर नास्तिक शास्त्र तथा पापकर्म में रति होती है अथवा पत्थर आदि से संबंधति कार्य में रति होती है ।

ग्रह, स्वराशि में या उच्चराशि में हो तथा जैसा बली होगा उसी के अनुसार उत्तम, मध्यम तथा हीन आदि फल प्राप्त होता है ।

६. शास्त्र सहम का फल- शास्त्र सहम बलवान् होता है तो बिना शास्त्र

भी पढ़ा हुआ जैसा लगता है। शास्त्र सहम के निर्बल होने पर पढ़ा हुआ विषय भी बिना पढ़ा जैसा हो जाता है।

७. जाड्य सहम का फल - जाड्य सहम के बलवान् होने पर जाड्य नष्ट होता है। यदि जाड्य सहम निर्बल होता है तो वृहस्पति के समान व्यक्ति को भी जाड्य होता है।

नोट-

जाड्य का अर्थ - १. मान-अपमान को न समझना। २. विद्या के ग्रहण में असमर्थ होना। ३. लोक व्यवहार में अनभिज्ञ होना। ४. आत्म विश्वास का न होना।

८. सन्मति सहम का फल - सन्मति सहम अपने स्वामी से तथा शुभग्रहों से यक्त और दृष्ट हो तो सद्बुद्धि की वृद्धि होती है और समय पर स्फूर्ति होती है।

नोट - इसी प्रकार बुद्धि सहम तथा धैर्य सहम का भी विचार होता है। परीक्षा के प्रश्न में यदि विद्यासहम, शास्त्र सहम, जाड्य सहम और सन्मति सहम ठीक होते हैं तो परीक्षा देने वाला अच्छी श्रेणी (डिवीजन) में उत्तीर्ण होता है। उक्त सहमों के तारतम्य से ही उत्तीर्णता में डिवीजन का विचार किया जा सकता है।

९. कलासहम का फल - कलासहम बलवान् हो और उसका स्वामी शुभग्रह से इत्थशाल करता हो तो व्यक्ति, राजस्थान में तथा अपने स्थान पर ही विविध कलाओं का प्रकाश करता है।

१०. सत्य सहम का फल- सत्य सहम शुभग्रह से युक्त हो तथा अपने स्वामी से और लग्नेश से दृष्ट हो तो व्यक्ति, सत्यमार्ग में निरत कीर्तिमान् तथा गुणवान् होता है।

११. असत्य सहम का फल - असत्य सहम शुभग्रह से युक्त हो तो व्यक्ति सदैव असत्य बोलता है। असत्यसहम का स्वामी किसी पापग्रह के साथ ईसराफ करता है तो व्यक्ति असत्य और विद्वेष में परायण होता है।

षष्ठ भाव का विचार -

षष्ठभाव से विचारने योग्य बातें -

अस्वास्थ्यदौस्थित्यगजोष्ट्रदासक्रूरोग्रकर्मापरकृत्यशङ्का ।
युद्धादितन्मातुलमाहिषाद्यं रोगो विचिन्त्यो रिपुसंज्ञभावे ।।

अस्वस्थता, खोटीदशा, हाथी, ऊँट, भैंस, क्रूर कर्म, उग्रकर्म, शत्रुद्वारा किये जाने वाले मारण आदि के प्रयोग की शंका, युद्ध दास, मामा तथा रोग, इन सब बातों का विचार षष्ठस्थान से होता है।

नोट - पूर्वत् (पहिले भाव की तरह) विचार कर्तव्य है।

षष्ठ भाव में स्थित ग्रहों के फल -

षष्ठे पापा वित्तलाभं सुखाप्तिं भौमोऽत्यन्तं हर्षदं शत्रुनाशम् ।

सौम्या भीतिं वित्तनाशं कलिं च चन्द्रो रोगं पापयुक्तः करोति ।।

छठे स्थान में पापग्रह बैठते हैं तो धनलाभ तथा सुख होता है । मंगल हो तो अच्छी प्रसन्नता और शत्रुका नाश होता है । शुभग्रहों के बैठने से भय, धन की हानि तथा कलह होता है । पापग्रह से युक्त चंद्रमा के होने से शरीर में रोग होता है ।

षष्ठ भाव संबंधी योगों का विचार - १. वर्षेश शनि, वक्री हो तथा पापग्रह से युक्त और दृष्ट हो तथा षष्ठ स्थान में बैठे तो व्यक्ति को वर्ष में सन्निपात (सरसाम) नेत्ररोग, रुधिरस्राव, ज्वर तथा गुल्म आदि रोग होने की संभावना रहती है।

२. वर्ष में पूर्वोक्त शनि के समान गुरु का भी यही फल है अथवा गुरु के होने से वायुरोग तथा कौलवाय होता है ।

३. वर्षेश का गुरु से कंबूल योग होने पर रोग कमी के साथ होता है ।

४. पूर्वोक्त शनि के समान मंगल के होने पर रक्तसंबंधी रोग, पूर्वोक्त शनि के तुल्य सूर्य के होने पर पित्त संबंधी रोग, पूर्वोक्त शनि के समान चंद्र के होने पर कफ संबंधी रोग, पूर्वोक्त शनि के तुल्य बुध या शुक्र के होने पर वायु-पित्त संबंधी रोग होता है।

५. वर्षश होकर सूर्य, बारहवें स्थान में बैठे तथा पापग्रह से युक्त हो तो नेत्र संबंधी पीड़ा होती है ।

६. वक्री शनि के वर्षेश होने पर व्यक्ति को वर्ष में सन्निपात या रुधिर संबंधी पीड़ा होती है ।

७. जन्मलग्नेश पापग्रह हो तथा वर्षेश से दृष्ट हो तो व्यक्ति को वर्ष में नेत्र तथा नाकसंबंधी (छींक आदि) रोग होते हैं ।

८. वर्षेश से दृष्ट जन्मलग्नेश पापग्रह होकर यदि पापग्रह से युक्त होता है तो व्यक्ति की उस वर्ष मृत्यु होती है ।

९. जन्म कुण्डली में पापग्रह केन्द्र में हों वे ही वर्ष कुण्डली में लग्न में हों तथा रोग सहम पापग्रह से युक्त हो तो व्यक्ति को उस वर्ष रोग होता है ।

१०. जन्मलग्न में जो ग्रह बैठा हो वही वर्ष लग्न में भी बैठे तथा वर्ष के पंचाधिकारियों में से कोई अधिकारी भी हो, रविवार या मंगलवार के दिन वर्ष का आरंभ हो तो व्यक्ति को ज्वर की पीड़ा होती है किन्तु वर्षलग्न पर शुभग्रह की दृष्टि होती है तो सुख होता है ।

११. कृष्णपक्ष में वर्ष प्रवेश हो तथा वर्ष काल में चंद्र का मंगल से इत्थशाल हो तो व्यक्ति को रोग होता है ।

१२. जन्मकालमें बुध और शुक्र निर्बल हों और वे वर्ष काल में केतु से युक्त हों तो उस वर्ष व्यक्ति पूरे वर्ष भर रोगी रहता है ।

१३. वर्ष लग्न, मुथा और मुंथेश, ये तीनों पापग्रहों के मध्य में हों अर्थात् इनसे दूसरे और बारहवें स्थान पापग्रह हों तो मृत्यु होती है । यदि इनमें से कम पापग्रहों के मध्यमें होते हैं तो रोग होता है ।

१४. जन्मकुण्डली में छठे स्थान में मंगल हो तथा वर्ष कुण्डली में लग्न में बैठे

तो व्यक्ति को रोग होता है ।

१५. वर्षकुण्डली में षष्ठेश लग्न में बैठे तो शत्रु उत्पन्न होता है ।

१६. जन्म कालमें गुरु और शुक्र जिस राशि में हो, वर्षकाल में उसी राशि का मंगल हो तथा अस्त हो तो व्यक्ति को उस वर्ष में ठण्डे फोड़े तथा शीतला (चेचक) रोग का प्रकोप होता है ।

१७. जन्मकाल में गुरु और शुक्र जिस राशि में हों वर्षकाल में उसी राशि में चंद्रमा के सहित बुध हों तो व्यक्ति को कंठमाला आदि रोग होते हैं ।

१८. जन्मकाल के गुरु और शुक्र की राशि वर्ष कुण्डली में सप्तम स्थान में हो तथा उसमें राहु बैठा हो तो व्यक्ति को पूरे वर्ष रोग रहता है ।

१९. जन्मलग्नेश निर्बल हो, वह यदि वर्ष में छठे स्थान में बैठे तथा पापग्रह से युक्त और शत्रुग्रह से दृष्ट हो तथा अस्त हो तो व्यक्ति को लम्बे समय तक रहने वाले ज्वर आदि रोग वर्ष में होते हैं ।

२०. पूर्वोक्त जन्म लग्नेश के समान यदि पुण्यसहम का स्वामी होता है तो व्यक्ति को पूर्वोक्त रोग होते हैं ।

२१. जन्मकाल के शनि की राशि की वर्षलग्न हो तो शरीर में रूक्षता (खुश्की) तथा शीत-पित्त रोग होता है ।

२२. जन्म के शनि की राशि की वर्षलग्न पर शनि की दृष्टि होने पर विशेषता से जाड्य होता है ।

२३. पूर्वोक्त प्रकार की वर्ष लग्न मंगल से युक्त या दृष्ट होती है तो रक्त-पित्त रोग तथा अग्निभय होता है एवं और भी रोग होते हैं, किन्तु यदि वर्ष लग्न पर शुभ ग्रह की दृष्टि होती है तो रोग थोड़ा होता है ।

२४. वर्ष लग्नेश और वर्षेश का षष्ठेश से इत्थशाल होता है तो ग्रह की धातु के विकार से व्यक्ति को रोग होता है ।

२५. रोग सहम पापग्रह से युक्त हो, वर्ष कुण्डली में छठे स्थान सिंह राशि का शुक्र हो तो काम संबंधी रोग होने का भय होता है ।

२६. कुण्डली में अष्टम स्थान में पापग्रह से युक्त गुरु हो तथा लग्न में मंगल हो तो तंद्रा (गफलत) और मूर्छा (बेहोशी) होती है एवं अंगहानि होती है ।

२७. जन्म कुण्डली में चंद्रमा के सहित पापग्रह हों तथा वे ही वर्ष लग्न में हों तो व्यक्ति को रोग होता है ।

२८. चर और द्विःस्वभाव राशि में स्थित पापग्रहों से दृष्ट शुक्र हो तो व्यक्ति को रोग होता है ।

नोट - रोगकर्त्ता ग्रह जिस राशि में या जिस नवांश में हो, इनमें जो बली हो वह जिस स्थान में हो उसकी राशि के स्वरूप के अनुसार रोग होता है ।

२९. वर्ष लग्नेश से या वर्षेश से जन्म लग्नेश और जन्म का चतुर्थेश, मुथशिल योग करते हों तो व्यक्ति को उस वर्ष बड़ी बीमारी होती है ।

३०. जन्मकाल में और वर्ष काल में बलवान् शुक्र वर्ष में षष्ठ स्थान में हो और राहु के पुच्छ भाग में हो तो व्यक्ति को पूरे वर्ष रोग ही रहता है ।

३१. वर्षकाल में जन्मलग्नेश पापग्रह से दृष्ट हो, अस्त हो, पापग्रह से युक्त हो तथा निर्बल हो तो शरीर में रोग होता है ।

३२. लग्न में पापग्रह हो तथा रोग सहम बलवान् हो तो शरीर में पीड़ा होती है ।

३३. लग्न में चंद्रमा तथा पापग्रह हों तो शरीर के किसी भाग में पीड़ा होती है ।

३४. वर्षकाल में षष्ठेश षष्ठस्थान में बैठकर वर्ष लग्नेश से इत्थशाल करता है तो शत्रुभय होता है । इससे विपरीत होने पर शत्रुभय नहीं होता है ।

३५. वर्ष काल में षष्ठस्थान शुभग्रहों के वर्ग में हो तो प्रबल शत्रुपर भी विजय होती है ।

३६. वर्षकाल में षष्ठस्थान क्रूरग्रहों के वर्ग में अधिक हो तो उस वर्ष गोधन से सुख होता है ।

३७. जिस वर्ष षष्ठेश लग्न में और लग्नेश षष्ठ स्थान में बैठे तो वह निगड (कैद कराने वाला) वर्ष होता है । पापग्रह से युक्त और दृष्ट लग्नेश तथा षष्ठेश हो तो अवश्य ही निगडवर्ष होता है ।

षष्ठ भाव संबंधी सहमों के फलित

१. मातुल (मामा) सहम का फल - मातुल सहम बलवान् हो, उसका स्वामी शुभग्रह से युक्त और दृष्ट तथा शुभ स्थान में हो तो व्यक्ति को अपने मामा से सुख होता है, किन्तु विपरीत होने पर मामा के द्वारा दुख होता है ।

मातुल सहम का स्वामी शुभ स्थान में हो और वह लग्नेश के साथ मुथशिल या यमया योग करता हो तो व्यक्ति को मामा के द्वारा सुख होता है, किन्तु विपरित होने पर मामा के द्वारा दुख होता है ।

नोट - जिसके मामा न हों उसके लिए मातुलसहम का विचार करना व्यर्थ है।

२. बंद सहम का फल - बंदसहम और उसका स्वामी बलवान् हो, केन्द्र या पणफर स्थान में हो तथा बंद सहम के स्वामी का लग्नेश से इत्थशाल हो तो वर्ष में व्यक्ति को नौकर-नौकरानी का सुख होता है ।

३. रोग सहम का फल - रोग सहम का स्वामी पापग्रह हो तथा पापग्रह से युक्त और दृष्ट हो तो व्यक्ति को रोग होता है ।

रोग सहम के स्वामी का अष्टमेश के साथ इत्थशाल होता है तो व्यक्ति की मृत्यु होती है । यदि पूर्वोक्त योग में रोग सहम का स्वामी हीनबली हो तो अतिकष्ट से मृत्यु होती है ।

रोग सहम अपने स्वामी से तथा शुभग्रह से युक्त और रोगसहम का स्वामी दृष्ट हो तथा रोग सहम का स्वामी बलवान् हो एवं वर्षकुण्डली में त्रिकस्थान के अतिरिक्त

किसी अन्य स्थान में बैठे तो व्यक्ति को रोग नहीं होता है और यदि रोग सहम शुभग्रह तथा पापग्रहों से युक्त और दृष्ट हो तो व्यक्ति को रोग भय होता है ।

४. बंधन सहम का फल - बंधन सहम यदि अपने स्वामी से युक्त या दृष्ट होता है तो बंधन नहीं होता है । यदि बंधनसहम पापग्रह से युक्त और दृष्ट होता है तो बंधन होता है और बंधन सहम के स्वामी का पापग्रह से मुथशिल होता है तो विशेषकर के बंधन (जेल) होता है ।

५. शत्रुसहम का फल - शत्रुसहम और उसका स्वामी बलवान् हो और शुभग्रह से युक्त हो, शत्रुसहम के स्वामी का लग्नेश से ईशराफ योग हो तो व्यक्ति को शत्रुभय होता है ।

शत्रुसहम पापग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो एवं कुण्डली में त्रिकस्थान में हो तो शत्रुपर विजय प्राप्त होती है ।

६. परांगना सहम का फल - परांगना सहम, कुण्डली में शुभस्थान में स्थित हो तथा शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट हो एवं परांगना सहम का स्वामी शुभ ग्रह से इत्थशाल करता हो तो परांगना (दूसरे की स्त्री) संबंधी सौख्य होता है ।

नोट - यदि परांगना सहम के स्वामी का अष्टमेश से इत्थशाल योग होता हो तो यह मृत्यु योग है ।

७. घात सहम का फल - घातसहम, पापग्रह से युक्त तथा दृष्ट हो और घातसहम का स्वामी क्रूर ग्रह के साथ ईसराफ योग करता हो एवं द्रेष्काण कुण्डली तथा नवांश कुण्डली में लग्न में बैठे तो व्यक्ति के शरीर में घात (शस्त्र आदि से चोट) होता है।

यदि घातसहम के स्वामी का शुभग्रह के साथ इत्थशाल योग होता है तो व्यक्ति के शरीर में फोड़े-फुंसी तथा धाव होता है ।

८. गजसहम का फल - गजसहम बलवान् हो और अपने स्वामी से तथा शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट हो एवं लग्नेश से तथा दशमेश से दृष्ट हो तो व्यक्ति को हाथी की प्राप्ति होती है ।

नोट - आधुनिक काल में हाथी के स्थान में मोटर-कार आदि को समझना चाहिए।

९. अश्वसहम का फल - कुण्डली में अश्व सहम शुभस्थान में हो, शुभग्रह से युक्त हो और लग्नेश, दशमेश तथा लाभेश से युक्त और दृष्ट हो तो अश्व (घोड़े) की सवारी का सौख्य, मान, जय, कीर्ति तथा धनवृद्धि होती है ।

१०. उष्ट्र (ऊँट) सहम का विचार - उष्ट्र सहम बलवान् हो, शुभग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो, अपने स्वामी से युक्त या दृष्ट हो एवं शनि से युक्त या दृष्ट हो तो व्यक्ति को ऊँट संबंधी सौख्य होता है ।

११. अन्य कार्य सहम का फल - अन्य कार्य सहम शुभग्रह से युक्त तथा दृष्ट हो तो सेवा आदि के द्वारा सौख्य तथा परोपकार होता है । विपरीत होने पर फल भी विपरीत होता है ।

सप्तम भाव का विचार

सप्तमभाव से विचारणीय विषय -

वस्तुक्रयस्वास्थ्यवाणिज्यवादाः कामोदयो दासकलत्रचौर्यम् ।
निवृत्तिस्वस्रेयगमागमाद्यं कलत्रभावे तु विचार्यमेतत् ।।

किसी वस्तुका बेचना, स्वस्थता, व्यापार, वाद, काम संबंधी विकार, दास, स्त्री, भानजा, जाना-आना, वापिस लौटना, चोरी, इन बातों का विचार सप्तम भाव से होता है।

नोट - पूर्व भाव के समान ही इस भाव का भी विचार है ।

सप्तम भाव में स्थित ग्रहों के फलित -

सपापः शशी सप्तमे व्याधिभीतिं खलाः स्त्रीविनाशं कलिं भृत्यभीतिम् ।
शुभाः कुर्वते वित्तलाभं सुखाप्तिं यशो राजमानोदयो बन्धुसौख्यम् ।।

सप्तम स्थान में पापग्रह से युक्त चंद्रमा होने से रोग का भय होता है । सप्तम स्थान में पापग्रह होने से स्त्री को कष्ट, कलह तथा सेवक संबंधी भय होता है । सप्तम स्थान में शुभग्रह होने से धनलाभ, सुखप्राप्ति, यश, उन्नति, राजपक्ष से मान तथा बन्धुसौख्य होता है ।

सप्तम भाव संबंधी योगों का विचार -

द्यूने कलत्रवाणिज्यनष्टविस्मृतिश्चागमः ।
तत्संज्ञसहमाद्भावात् फलान्येषां विचारयेत् ।।

सप्तम भाव से स्त्री, व्यापार, नष्ट या खोयी गयी वस्तु तथा भूली हुई चीज या बात और आना, इन बातों का विचार करना तथा उक्त बातों के सहमों का विचार होता है । यह आचार्य यादव का मत है ।

१. वर्ष पति शुक्र बलवान् होकर सप्तम भाव में बैठता है तो स्त्रीपक्ष से सौख्य होता है ।

यदि पूर्वोक्त शुक्रपर गुरु की दृष्टि होती है तो स्त्री संबंधी अत्यन्त सौख्य होता है। यदि अधिकारी हुए मंगल की दृष्टि होता है तो दम्पति (पति-पत्नी) में प्रेम होता है। बुध की दृष्टि होने पर थोड़ी आयु की स्त्री से जारता (व्यभिचार) होती है । शनि की दृष्टि होने पर अधिक अवस्था की स्त्री से रति होती है । गुरु की दृष्टि होने से नवीन भार्या होती है तथा संतान का भी योग बनता है ।

२. जन्मलग्न का स्वामी बलवान् होकर वर्ष में सप्तम स्थान में बैठता है तो स्त्रीसंबंधी सौख्य होता है ।

३. जन्मकाल के शुक्र की राशि वर्ष कुण्डली में सप्तमभाव में हो और बलवान् शुक्र वर्षेश हो तो स्त्री का लाभ होता है ।

४. लग्नेश के और सप्तमेश के इत्थशाल योग होने से स्त्रीका लाभ होता है।

५. सप्तमेश या स्त्रीसहम का स्वामी नष्टबली होता है तो स्त्री को कष्ट होता है।

६. जिस वर्ष क्षीण या हीनबली चंद्रमा शुक्र के पास या वृष अथवा तुला राशि का होता है उस वर्ष व्यक्ति को स्वल्प मैथुन करने का प्रसंग होता है ।

७. जन्मकाल के शुक्र की राशि का बलवान् मंगल वर्ष में होने से स्त्रीसंबंधी सुख तथा हर्षोल्लास होता है ।

८. सूर्य, मंगल और मुंथा, ये तीनों सप्तम भाव में बैठे हों तथा स्त्री सहम, क्रूरग्रह से युक्त और दृष्ट हो तो स्त्री-पुत्रों को कष्ट होता है । यदि सप्तम भाव पर पापग्रह की दृष्टि हो तो विशेष कष्ट होता है ।

९. जन्मकाल में शुक्र सप्तमेश हो, वह बलवान् होकर दूसरे या सातवें स्थान में बैठे तथा उसका लग्नेश के साथ इत्थशाल हो तों स्त्री का लाभ तथा सुख होता है ।

१०. वर्षेश मंगल पर शुक्र की दृष्टि हो अथवा वर्षेश शुक्रपर मंगल की दृष्टि हो तथा स्त्री (दारा) सहम पर वर्षेश की दृष्टि हो तो स्त्री का लाभ होता है ।००

११. जन्म के शुक्र की राशि में वर्षेश हो ओर वह राशि सप्तम भाव में हो तो व्यक्ति का उस वर्ष में विवाह होता है ।

१२. वर्ष काल में लग्नेश सप्तम भाव में हो तो कन्या का जन्म होता है ।

१३. सप्तमेश, वर्ष लग्न में हो और उस पर चंद्र की दृष्टि हो तो व्यक्ति को पत्नी की प्राप्ति होती है ।

१४. वर्ष काल में शुक्र अपनी राशि में हो तथा चंद्र से युक्त या दृष्ट हो तो स्त्री की प्राप्ति होती है ।

१५. ग्यारहवें स्थान में बलवान् सूर्य या अन्य कोई क्रूरग्रह होता है तो कन्या का जन्म होता है ।

१६. बलवान् चंद्र और शुक्र अपनी नवांश राशि में हों और लग्न या त्रिकोण में बैठे हों तो पत्नी की प्राप्ति होती है ।

१७. सप्तमेश के लग्न में होने पर पत्नी पति के आदेश का पालन करती है ।

१८. लग्नेश सप्तम भाव में होता है तो पति पत्नी के कथन का पालन करता है ।

१९. वर्ष काल में लग्नेश लग्न में हो और सप्तमेश सप्तम भाव में हो अथवा वे दोंनों लग्न में या सप्तम में हों तो स्त्री संबंधी प्रेम तथा सुख प्राप्त होता है ।

२०. लग्नेश और सप्तमेश की परस्पर स्नेह दृष्टि होने पर पति-पत्नी में परस्पर सौख्य होता है । यदि परस्पर क्रूरदृष्टि होती है तो पति-पत्नी में कलह होता है और यदि दृष्टि नहीं होती है तो मध्यम (न प्रेम और न कलह) भाव होता है ।

२१. द्वितीय स्थान बलवान् हो तो पति को पत्नी के द्वारा धनलाभ होता है ।

२२. अष्टम स्थान बलवान् हो तो पत्नी को पति के द्वारा धनलाभ होता है ।

२३. गुरु वर्षेश होकर सप्तम स्थान में बैठे तो व्यवहार के द्वारा धनलाभ होता है।

२४. सप्तमेश निर्बल हो या नीचराशि का हो तो व्यक्ति का वेश्या से प्रेम

होता है ।

२५. सप्तमेश क्रूरग्रह से युक्त हो तो व्यक्ति को परस्त्री प्राप्त होती है ।

२६. वर्षकाल में सप्तम भाव में क्रूरग्रह हो और उसपर शुभग्रह की दृष्टि न हो, अथवा सप्तमेश अस्त का हो तो व्यक्ति की पत्नी की मृत्यु या मृत्युतुल्य कष्ट होता है।

२७. वर्षकाल में लग्नेश और सप्तमेश परस्पर शत्रु होते हैं तो वर्ष में युद्ध होता है ।

नोट - प्रश्नकाल में लग्न में क्रूरग्रह होता है तो युद्ध आदि में प्रश्न कर्त्ता की जय होती है । यदि सप्तम भाव में क्रूरग्रह होता है तो प्रश्नकर्त्ता के शत्रु की जय होती है । यदि लग्नेश और सप्तमेश की परस्पर मित्र दृष्टि हो तो आपस में संधि (सुलह) हो जाती है ।

२८. वर्ष में सप्तमेश क्रूरग्रह हो तथा लग्नेश को न देखता हो तो नष्ट (खोयी हुई) या विस्मृत (भूली हुई) वस्तु प्राप्त होती है ।

२९. चन्द्रमा जिस राशि में हो उस राशि का स्वामी यदि चंद्रमा को देखता है तो उस वर्ष में व्यक्ति को नष्ट वस्तु की प्राप्ति हो जाती है ।

३०. चतुर्थ भाव से सप्तम भाव तक के बीच में शुभग्रह हों तो व्यक्ति को यात्रा में सफलता होती है, किन्तु यदि उक्त स्थानों के बीच अशुभ ग्रह होंगे तो यात्रा में सफलता नहीं होगी ।

३१. सप्तम भाव अपने स्वामी से तथा शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट हो तो निवृत्ति (वापिस लौटना) होती है ।

३२. सप्तम भाव में चरराशि हो और वह पापग्रह से युक्त तथा दृष्ट न हो तो उस वर्ष परदेश गया व्यक्ति वापिस लौट आता है ।

३३. मुंथा से सातवें स्थान में वृष या कर्क राशि का चंद्रमा हो तो व्यक्ति को उस वर्ष विदेश जाना होता है और यदि चंद्रमा पर पापग्रह की दृष्टि होती है तो यात्रा में क्लेश होता है ।

३४. सप्तम भाव के नवांश का पति लग्न में हो और लग्न के नवांश का पति सप्तम भाव में हो तथा वे शुभ ग्रहों से इत्थशाल करते हों एवं शुभग्रहों से दृष्ट हों तो व्यक्ति को व्यापर से धन लाभ होता है ।

३५. लग्नेश और सप्तमेश एक ही स्थान में हों और एक ही द्रेष्काण में हों तो स्त्री संबंधी सौख्य होता है ।

३६. सप्तम भाव अधिक शुभग्रहों के वर्ग में हो तो व्यापार आदि से सुख होता है ।

३७. सप्तम भाव अधिक क्रूरग्रहों के वर्ग में होने से स्त्री संबंधी भय होता है।

सप्तम भाव संबंधी सहमों के फलित

१. उद्वाह (विवाह) सहम का फल - विवाह सहम बलवान् हो, कुण्डली में छठे या आठवें स्थान के स्वामी का लग्नेश के साथ इत्थशाल हो तो विवाह

संबंधी सौख्य वर्ष में होता है ।

आचार्य बलभद्र का सिद्धान्त है कि यदि विवाह सहम शुभग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो और उसके स्वामी का शुभग्रह के साथ मुथशिल होता है तो उस वर्ष व्यक्ति का विवाह होता है और यदि मिश्र (शुभ और क्रूर) ग्रहों से विवाह सहम युक्त और दृष्ट हो तो विवाह कष्ट से होता है । यदि पापग्रहों से तथा अष्टमेश से युक्त और दृष्ट होता है तो विवाह नहीं होता है ।

२. भार्या सहम का फल - स्त्रीसहम अपने स्वामी से तथा शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट होता है तो स्त्री से विलास तथा सौख्य होता है । उक्त योग न होने पर स्त्री से विलास तथा सौख्य नहीं होता है ।

३. काम सहम का फल - कामसहम शुभग्रह के वर्ग में हो, अपने स्वामी से, लग्नेश से तथा सप्तमेश से युक्त हो और शुक्र से दृष्ट हो तो सौख्य, कामोद्दीपन तथा सुदर स्त्री की प्राप्ति होती है ।

४. वाणिज्य सहम का फल - जिस कार्य में सत्य तथा असत्य दोनों का प्रयोग होता है उसे वाणिज्य कहते हैं । वाणिज्य सहम अपने स्वामी से तथा शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट होता है तो वाणिज्य संबंधी सौख्य होता है । उक्त योग से विपरीत होने पर वाणिज्य संबंधी कष्ट होता है ।

५. व्यापार सहम का फल - कुण्डली में व्यापार सहम शुभस्थान में हो, शुभग्रहों के वर्ग में हो, व्यापारसहम का स्वामी बलवान् हो और लग्नेश से इत्थशाल करता है तो व्यापार संबंधी अतुल सौख्य होता है ।

नक्त और यमया योग में दूसरे के द्वारा व्यापार संबंधी सौख्य होता है । मणऊ योग में, रद्द योग में अथवा गैर कंबूल में शीघ्र गति वाला ग्रह हीनबली होता है तो व्यापारिक कार्य में विघ्न पड़ता है ।

कंबूल योग में कार्य की अच्छी सिद्धि होती है ।

६. आगम सहम का फल - आगम सहम बलवान् हो, उसका स्वामी शुभग्रह से युक्त और दृष्ट हो तो धन और यश के सहित यात्रा से वापिस लौटना होगा।

शुभग्रह से दृष्ट सहम का स्वामी जिस भाव के पति से इत्थशाल करता हो अथवा जिस भाव के नवांश पति से इत्थशाल करता हो उसी भाव से संबंधित आगमन होता है ।

७. दास्य सहम का फल - दास्य सहम कुण्डली में शुभ स्थान में हो और शुभग्रह से दृष्ट हो, सहम का स्वामी लग्नेश से युक्त अथवा दृष्ट हो तो सेवक को सेवा के द्वारा धनलाभ होता है और स्वामी भी शीघ्र फल देता है ।

अष्टम भाव का विचार

अष्टम स्थान से विचारने योग्य बातें -

आयुर्विरोधो निधनं चराद्यं भेदोत्थवस्तेश्च निरूपणं च ।

वैषम्यदुर्गादिकशत्रुरोधो नद्यादिसन्तारणनष्टरोगाः ।।
छिद्रं रणं भ्रातृरिपुश्च दृष्टं विचारणीयं निधने समस्तम् ।।

आयुः, विरोध, मृत्यु, गमन आदि, भेद, वस्ति (सांथल), विषमता, किला आदि, शत्रु का रोकना, नदी आदि का तरना, रोग का नष्ट होना, छिद्र (कमी), युद्ध, भाई का शत्रु, भाग्य, इन सब बातों का विचार अष्टम भाव से होता है ।

नोट - पूर्वभाव की तरह इस भाव का भी विचार होता है ।

अष्टम भाव में स्थित ग्रहों का फलित -

चन्द्रोऽष्टमे निधनदः खलखेटयुक्तः पापाश्च तत्र मृतितुल्यफला विचिन्त्याः ।
सौम्याः स्वधातुवशतो रुजमर्थहानिं मानक्षयं मुथशिले शुभजे शुभं च ।।

अष्टम स्थान में पापग्रह से युक्त चंद्रमा हो तो मृत्यु योग होता है । अष्टम स्थान में पापग्रहों के बैठने से मृत्यु तुल्य कष्ट होता है । शुभग्रह अपनी धातु के अनुसार रोग, धनहानि, मानहानि देते हैं । अष्टम में स्थित शुभग्रह का शुभग्रह के साथ मुथशिल योग होता है तो शुभफल होता है ।

अष्टम भाव संबंधी योगों का विचार - १. वर्षेश मंगल क्रूरग्रह से हत हो तो लोहे से चोट लगती है ।

२. वर्षश मंगल निर्बल हो तथा अग्रिम राशि में हो तो अग्नि का भय होता है।

३. क्रूरग्रह से युक्त वर्षेश मंगल द्विपादराशि में हो तो मृत्युतुल्य कष्ट होता है।

४. वर्षेश मंगल निर्बल होकर दशम भाव में बैठे तो राजा, मंत्री, शत्रु और चोर से भय होता है ।

५. वर्षेश मंगल निर्बल होकर वर्ष कुण्डली में चतुर्थ स्थान में बैठे तो गुरु, माता, पिता, चाचा-ताऊ अथवा मामा से भय होता है ।

६. लग्नेश, मुंथेश, वर्षेश, अष्टमेश, इनके इत्थशाल होने पर उस वर्ष में व्यक्ति की मृत्यु होती है ।

नोट - मृत्युकारक ग्रह की दशा में मृत्यु होती है ।

७. वर्षकाल में सूर्य के साथ मंगल हो तो राजपक्ष से भय होता है ।

८. वर्षकाल में अधिकारी चंद्रमा मंगल के स्थान में हो तो गुप्तरोग तथा राजपक्ष से भय होता है ।

९. वर्षकाल में अधिकारी शनि दशम भाव में बैठे तो लोहे से चोट लगने के कारण पीड़ा होती है ।

१०. वर्ष काल में अधिकारी मंगल अष्टम भाव में हो तो अग्नि से भय, चोट लगना अथवा राजपक्ष से भय होता है ।

११. वर्षकाल में अधिकारी मंगल दशम भाव में हो तो चौपाये से पीड़ा, ऊँचे से गिरना, दुःख, रोग अथवा रुधिरस्राव होता है ।

१२. वर्षकाल में अशुभग्रह से दृष्ट वृहस्पति दूसरे या आठवें स्थान में हो तो

धन की हानि होती है ।

१३. सप्तमभाव में पापग्रह से दृष्ट शनि हो तो, दुर्वचन, अपवाद, कलह तथा भर्त्सना प्राप्त होती है ।

१४. वर्षकाल में क्रूरग्रह से युक्त तथा दृष्ट बुध का क्रूरग्रह के साथ इत्थशाल होने पर व्यक्ति की मृत्यु होती है ।

१५. पूर्वोक्त बुध मंगल की हद्दा में हो तो हानि होती है ।

१६. यदि बुधपर शुभग्रह की दृष्टि होती है तो शुभ होता है ।

१७. वर्षकाल में सूर्य द्वितीय स्थान में हो तथा मंगल द्वादश स्थान में हो तो विवाद से क्लेश होता है ।

१८. जन्मलग्नेश दग्ध हो तथा वर्षकुण्डली में अष्टम स्थान में हो तो रोग और कलह होता है ।

१९. वर्षकाल में मंगल मेष-सिंह या धन राशि में हो और वर्षेश अष्टम भाव में हो तो तलवार से भय होता है ।

२०. लग्नेश और अष्टमेश पापग्रह से युक्त और दृष्ट होकर अष्टम स्थान में बैठे तो व्यक्ति की मृत्यु होती है ।

२१. जन्म काल के मंगल की राशि की वर्षलग्न हो तथा वर्षेश बुध नष्ट बली हो तो वह वर्ष शुभकारी नहीं होता है ।

२२. सूर्य, मंगल और शनि आठवें स्थान या दशवें स्थान में बैठें तो वाहन (सवारी) से भय होता है ।

२३. सूर्य और शनि अष्टम भाव में बैठें तो सवारी से गिरना होता है ।

२४. मंगल तथा वर्षेश दोनों वर्ष कुण्डली में अष्टमस्थान में होने से मृत्यु होती है ।

२५. त्रिकस्थान में चंद्रमा के होने से मृत्यु होती है ।

नोट - उक्त योग में चंद्र निर्बली हो तथा क्रूरग्रह से उसका इत्थशाल हो तब उक्त योग का होना संभव है ।

२६. मृत्यु सहम का स्वामी बलवान् हो और जीवित सहम का स्वामी निर्बल हो तो मृत्यु होती है ।

२७. पुण्यसहम का स्वामी पुण्यसहम से अष्टम में हो, जन्मकाल का अष्टमेश पापग्रह से युक्त और दृष्ट होकर पुण्यसहम में हो तो मृत्यु योग है ।

२८. जन्मलग्नेश क्रूरग्रह से युक्त होकर वर्ष कुण्डली में अष्टम स्थान में हो तथा मुंथा और शनि भी अष्टम स्थान में हो तो व्यक्ति की आत्मघात (खुदकुशी) से मृत्यु होती है।

२९. जन्मकाल में सूर्य शुक्र से ईसराफ योग करता हो, वही सूर्य वर्ष में

अधिकारी होकर केन्द्र में बैठे तो वर्ष में ज्वर तथा राजरोग (तपेदिक) की संभावना होती है।

३०. वर्ष काल में बुध अधिकारी हो तथा मंगल से युक्त हो एवं क्रूरग्रह से दृष्ट हो तो रुधिरस्राव संबंधी कष्ट होता है।

३१. लग्नेश और अष्टमेश के इत्थशाल से उस वर्ष में व्यक्ति की मृत्यु होती है।

३२. वर्षेश गुरु धन स्थान में बैठे और उसपर पापग्रह की दृष्टि होती है तो उस वर्ष में धन की हानि होती है।

३३. वर्ष लग्नेश दग्ध हो या नष्ट हो तथा क्रूरग्रह से युक्त हो तो उस वर्ष व्यक्ति का स्त्री से झगड़ा होता है।

नोट - नष्ट, दग्ध और पीडित की परिभाषा -

क्रूरैः क्रूरदृशा दृष्टो युक्तो वार्कगृहान्तिगः।
स विनष्टो ग्रहो ज्ञेयो दग्धः पीडित उच्यते।।

जो ग्रह क्रूरग्रहों से शत्रुदृष्टि के द्वारा देखा जाता है उसे नष्ट या विनष्ट कहते हैं। पापग्रहों से युक्त ग्रह को दग्ध कहते हैं। सूर्य के साथ बैठे ग्रह को पीडित कहते हैं।

३४. अष्टम स्थान का नवांशपति और लग्न का नवांश पति दोनों लग्न में स्थित हों, शुभग्रहों से इत्थशाल करते हों तथा उनपर शुभग्रहों की दृष्टि हो तो जहाज या नौका (नाँव) धन के सहित आती है।

३५. लग्न का नवांशेश तथा अष्टम का नवांशेश पापग्रहों से दृष्ट हों तथा पापग्रहों से इत्थशाल करते हों तो जहाज या नौका धन के सहित नहीं आती है।

३६. लग्नेश की लग्नपर दृष्टि हो और अष्टमेश की अष्टमपर दृष्टि हो, लग्नेश और अष्टमेश, शुभग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो एवं उनका शुभग्रहों के साथ इत्थशाल हो तो जहाज या नौका धन के सहित आती है।

३७. लग्नेश लग्न को न देखता हो तथा अष्टमेश अष्टम स्थान को न देखता हो तो जहाज या नौका समुद्र में डूब जाती है।

३८. अष्टमेश लग्नेश को देखता हो तथा अष्टमेश नवमेश से इत्थशाल करता हो तो मरे हुए व्यक्ति के धन तथा घर की प्राप्ति होती है। यदि अष्टमेश शुभग्रहों से युक्त तथा दृष्ट होता है तो विशेषता से प्राप्ति होती है। इसी प्रकार उक्त योग में अष्टमेश का शुभग्रह के साथ यमया योग या नक्त योग अथवा कंबूल योग है तो भी विशेषता से वसीयत का लाभ होता है।

३९. अष्टमेश लग्नेश को देखता हो और अष्टमेश का चतुर्थेश के साथ इत्थशाल योग हो तो दुर्ग (किले) की प्राप्ति होती है। यदि उक्त योग में अष्टमेश का शुभग्रह के साथ कंबूल योग भी होता है तो धन के सहित दुर्ग की प्राप्ति होती है।

४० लग्नेश चतुर्थेश को देखता हो, चतुर्थेश और अष्टमेश का यमया योग

या नक्त योग हो तो दुर्ग की प्राप्ति होती है ।

अष्टम भाव संबंधी सहमों के फलित

१. मृत्युसहम का फल - मृत्युसहम क्रूरग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो और मृत्यु सहम का स्वामी निर्बल हो तो मृत्यु या विनाश होता है ।

मृत्यु सहम शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट हो तथा मृत्यु सहम का स्वामी बलवान् हो तो कष्ट प्राप्त होता है ।

मृत्यु सहम शुभग्रह के वर्ग में हो, शुभग्रह से युक्त तथा दृष्ट हो और शुभग्रह से इत्थशाल करता हो तो शत्रु से पीड़ा, विवाद, रोग तथा भय होता है । यदि विपरीत हो यानी मृत्युसहम क्रूरग्रह के वर्ग में हो, क्रूरग्रह से युक्त तथा दृष्ट हो और क्रूरग्रह से उसका इत्थशाल हो तो शुभफल होता है । यह आचार्य यादव का मत है -

मृत्यु सहम का स्वामी उदित हो, शुभग्रह से दृष्ट और बलवान् हो तथा जीवित सहम का स्वामी, सूर्य से तथा पापग्रह से युक्त हो और नष्ट हो तो मृत्यु होती है ।

२. जलपथ सहम का फल - जलपथ सहम अपने स्वामी से युक्त या दृष्ट हो तथा शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट हो तो जलयान द्वारा सुख प्राप्त होता है । यदि उक्त योग विपरीत होता है तो जलीययात्रा में सुख नहीं होता है ।

नवम भाव संबंधी विचार -

नवमभाव से विचारणीय विषय-

स्वाध्यायदीक्षासुरगेहयात्रा वक्त्रस्य चेष्टा मठधर्मकृत्यम् ।
गुरोस्तु कार्याद्यभिषेचनं च जलाशयश्यालकदेवरादीन् ।।
भ्रातुर्गृहिण्याश्च सुरस्य चिन्ता पुण्यं पुण्ये कथितं महद्भिः।।

स्वयं ग्रन्थों का पढना, गुरुमंत्र लेना, देवस्थान की यात्रा, मठ संबंधी कार्य, गुरुसेवा, अभिषेक, देवता संबंधी चिन्ता, जलाशय (तालाब-कुंआ आदि) पुण्य कार्य, साला, देवर, भाई की स्त्री, इन सबका विचार नवम भाव से होता है ।

आचार्य यादव का सिद्धान्त -

धर्मे रतिस्तथा पन्था भाग्योपायान् विशेषतः ।
भावात् सद्यादृलीलाच्च विचार्य कथयेत् सुधीः ।।

नवम भाव से, नवमभाव दलील से तथा नवम भाव संबंधी सहम से धर्मानुराग का, मार्ग का तथा विशेष करके भाग्य संबंधी उपायों का विचार बुद्धिमान् व्यक्ति को करना चाहिए ।

नोट - इस भाव का विचार पूर्वोक्त रीति से करना चाहिए ।

नवम भाव में स्थित ग्रहों का फलित -

तपसि सोदरभीः पुशपीडनं खलखगेति मुदो रविरत्र चेत् ।
शुभखगा धनधर्मविवृद्धिदा खलखगोऽपि शुभान्यपरे जगुः ।।

नवम स्थान में पापग्रह होने से भ्राता की ओर से भय तथा पशु को पीड़ा होती है। सूर्य के होने से प्रसन्नता होती है। नवमस्थान में शुभग्रह होने से धन और धर्म की वृद्धि होती है। कोई आचार्य कहते हैं कि नवम भाव में स्थित या ग्रह भी शुभ फल देता है।

नवम भाव संबंधी योगों का विचार -

१. वर्षेश मंगल बलवान् हो और क्रूरग्रह से युक्त न हो तथा तीसरे या नौवें स्थान बैठे तो व्यक्ति को मार्ग गुणकारी होता है तथा उसका चलायमान कार्य भी स्थिर हो जाता है।

२. वर्षेश सूर्य तीसरे या नौवें स्थान में बैठे तथा किसी शुभग्रह के साथ कंबूल योग करता हो तो मार्ग में सुख होता है।

यदि उक्त स्थानों में बैठा सूर्य अधिकारी नहीं होता है तो दूसरे से भेजे जाने पर यात्रा होती है।

३. वर्षेश शुक्र तीसरे या नौवें स्थान में बैठे तो मार्ग में सुख होता है। विपरीत स्थान में होने पर या अस्त होने पर मार्ग में कुगति (बुरी हालत) होती है।

४. वर्षेश बुध के तीसरे या नौवें स्थान में होने से देवस्थान की यात्रा होती है। यदि बुध पापग्रह से पीडित होता है तो बुरी यात्रा होती है।

नोट - बुध के समान ही गुरु का भी फल है।

५. लग्नेश और नवमेश के इत्थशाल योग में अचिन्तित यात्रा होती है।

६. लग्नेश अपना तेज नवमेश को देवे तो चिन्तित (सोची हुई) यात्रा होती है।

७. लग्नेश और वर्षेश का योग होने पर चिन्तित यात्रा होती है।

८. लग्नेश और मुंथेश का योग होने पर चिन्तित यात्रा होती है।

९. नवम भाव में धन या मीन राशि का मंगल हो तो यात्रा शुभ होती है तथा यात्रा में भृत्य और धन का लाभ होता है।

१०. लग्नेश मंगल से दृष्ट हो और मिथुन या कन्या राशि में बैठा हो तो अच्छी सवारी का सुख देता है।

११. स्वराशि का मंगल बलवान् हो और लग्नेश को देखता हो तो अच्छी सवारी को देता है।

१२. यदि शनि अधिकार रहित होकर नौवें स्थान में बैठे तो मार्ग अशुभ होता है।

१३. वर्ष में अधिकार से रहित गुरु नवम भाव में हो तो दूर की यात्रा होती है तथा राजपक्ष से धन, मान आदि की प्राप्ति होती है।

१४. वर्षेश मंगल नष्टबली हो तो अपने जन के कारण दूर की यात्रा होती है।

१५. नवमेश कंवूल योग में हो तो यात्रा होती है।

१६. मुंथा से सातवें स्थान में अधिकारी चंद्रमा हो तो यात्रा होती है।

१७. वर्षेश मार्गी तथा बलवान् हो तो वर्ष में यात्रा सुखदायक होती है।

१८. वर्षेश वक्री तथा दुर्बल हो तो यात्रा दुखदायक होती है ।

१९. वर्षेश और वर्षलग्नेश दोनों एक जगह बैठें तो चिन्तित यात्रा होती है ।

यात्रा की दिशा के संबंध में आचार्य रोमक का सिद्धान्त - चार प्रकार की राशियाँ हैं । १. अग्निराशि । २. पृथ्वी राशि । ३. वायु राशि । ४. जलराशि। अग्निराशि पूर्व दिशा की, पृथ्वी राशि दक्षिण दिशा की, वायु राशि पश्चिम दिशा की और जलराशि उत्तर दिशा की स्वामिनी होती है ।

यात्रा के योगकारक ग्रहों में जो अधिक बली हो उस की जैसी राशि हो उसके अनुसार दिशा की यात्रा होती है ।

२०. बुध या शुक्र बलवान् होकर वर्ष लग्न में या त्रिकोण में बैठे तो घर में रहने वाला विदेश को जाता है और विदेश में रहने वाला घर को लौट आता है ।

२१. बुध, चौथे या दशवें में घर में हो तो यात्रा नहीं होती है ।

२२. पापग्रह से युक्त या वक्री बुध चौथे या दशवें स्थान में हो तो यात्रा होती है।

२३. लग्नेश चंद्रमा नौवें स्थान में हो तो अचिन्तित यात्रा होती है ।

२४. लग्नेश चंद्रमा यदि ग्रहों के साथ केन्द्र में बैठता है तो गमन आवश्यक सिद्ध होने पर भी नहीं होता है ।

२५. लग्नेश नौवें स्थान में हो तो यात्रा अवश्य होती है ।

२६. कुण्डली में केन्द्र स्थानों में चरराशियों में शुभग्रह बैठें तो ग्राम आदि में गमन होता है ।

२७. कुण्डली में केन्द्र स्थानों में चरराशियों में पापग्रह बैठें तो ग्राम आदि में गमन देर से होता है ।

२८. लग्नभाव, सप्तम भाव और चंद्रमा, ये तीनों पापकर्तरी (दूसरे और बारहवें स्थान पापग्रह होने) में हो तो यात्रा में चोर-शत्रु तथा शस्त्र का भय होता है ।

२९. लग्नेश और नवमेश का इत्थशाल हो तथा उनपर शुभग्रह की दृष्टि हो तो धर्म की वृद्धि होती है ।

३०. लग्नेश और नवमेश दोनों चरराशि में हों तथा इनपर शीघ्रगति वाले ग्रह की दृष्टि होती है तो तीर्थयात्रा होती है तथा विद्वान से मित्रता होती है ।

३१. पुण्यसहम का स्वामी और लग्नेश ये दोनों चरराशि में एक साथ बैठें हों तो तीर्थ यात्रा होती है । यदि नवांशक भी राशि का हो तो विशेष करके तीर्थयात्रा होती है।

३२. चरराशि में अष्टमेश और लाभेश दोनों एक साथ बैठें तो रोग के कारण धर्म में रति होती है ।

नोट : नवम भाव के स्वामी का जिस भाव के नवांशपति के साथ योग होगा, उसी भाव से संबंधित विषय के कारण धर्म में रति (प्रेम) होगी ।

३३. लग्नेश और नवमेश के इत्थशाल से अचिन्तित यात्रा होती है ।

३४. लग्नेश और नवमेश के यमया या नक्त योग से चिन्तित यात्रा में सुख प्राप्त होता है ।

भाग्यकारक ग्रह का विचार -

पर्वान्तलग्नवर्गाणामधिपो यो बलान्वितः ।
साधिकारो लग्नदर्शी स ज्ञेयो भाग्यकारकः ।।

जन्मकाल, वर्षकाल या प्रश्न काल में पर्व (पूर्णिमा या अमावास्या) काल के अन्तिम काल की यानी समाप्ति के समय की लग्न का स्वामी तथा षड्वर्गों के स्वामी, इनमें जो ग्रह, सबसे अधिक बलवान् हो तथा अधिकारी हो एवं लग्न को देखता हो वही भाग्य कारक होता है ।

भाग्यकारकखेटस्तु यस्य स्वामी तु स ग्रहः ।
तत्सहायाद् धातुवशाद् भाग्यवृद्धिं विचिन्तयेत् ।।

३४. भाग्य कारक ग्रह जिस स्थान का स्वामी है या जिस ग्रह के साथ है, उस की सहायता से अथवा धातु आदि के द्वारा भाग्य की वृद्धि का विचार करना चाहिए।

३५. भाग्यसहम बलवान् हो और शुभग्रह से युक्त तथा दृष्ट हो तो उस वर्ष में निश्चय ही व्यक्ति की भाग्यवृद्धि होती है ।

३६. लग्नेश और नवमेश, दोनों नवम स्थानो में बैठें तथा एक ही द्रेष्काण में हों तो भाग्य वृद्धि होती है ।

३७. नवम भाव अधिक शुभग्रहों के वर्ग में हो तथा शुभग्रह से दृष्ट हो तो भाग्य की वृद्धि होती है ।

३८. नवम भाव अधिक पापग्रहों के वर्ग में हो तथा पापग्रह से दृष्ट हो तो भाग्यहीनता, खोटी बुद्धि और शारीरिक क्लेश होता है ।

नवम भाव संबंधी सहमों के फलित

१. पुण्यसहम का फल - पुण्य सहम बलवान् हो तो धर्म की वृद्धि तथा धनलाभ होता है ।

पुण्य सहम अपने स्वामी से तथा शुभग्रह से दृष्ट हो तो धर्म आदि से संबंधित सुख होता है ।

पुण्यसहम पापग्रह से युक्त हो और शुभग्रह से दृष्ट हो तो उसका पहिले अशुभ फल होता है फिर बाद में शुभफल होता है । यदि पुण्य सहम, शुभग्रह से हो और पापग्रह से दृष्ट हो तो उसका पहले शुभफल होता है फिर बाद में अशुभ फल होता है ।

जन्मकुण्डली में पुण्यसहम त्रिकस्थान में हो तथा वर्षकाल में पापग्रह से युक्त और दृष्ट हो तो धर्म, धन तथा सौख्य की हानि होती है । यदि पुण्य सहम का स्वामी दग्ध होता है तब भी यही फल है ।

२. श्रद्धासहम का फल -श्रद्धासहम बलवान् हो, अपने स्वामी से युक्त या दृष्ट हो तथा शुभग्रह से युक्त और दृष्ट हो तो व्यक्ति धर्म मार्ग में लगता है तथा श्रद्धा से दान आदि पुण्य कार्य करता है ।

३. सन्मति सहम का फल - सन्मति सहम अपने स्वामी से युक्त या दृष्ट हो तथा शुभग्रह से युक्त और दृष्ट हो तो व्यक्ति की बुद्धि शुभ रहती है ।

सन्मति सहम का स्वामी नवमेश के साथ इत्थशाल योग करता हो तो व्यक्ति धर्मपरायण और अच्छी बुद्धि का होता है ।

४. गुरु सहम का फल - कुण्डली में गुरुसहम त्रिकस्थान में न हो, गुरुसहम अपने स्वामी से युक्त या दृष्ट हो तथा शुभग्रह से युक्त और दृष्ट हो तो गुरुजी से शुभमंत्र की प्राप्ति होती है और वह मंत्र फलप्रद होता है अथवा गुरु जी से शुभशीर्वाद प्राप्त होता है ।

५. कीर्तिसहम का फल - कीर्तिसहम बलवान् हो, शुभग्रह के वर्ग में हो, लग्नेश से युक्त या दृष्ट हो तथा शुभग्रह से युक्त और दृष्ट हो तो व्यक्ति को कीर्ति (अच्छे गुणों के द्वारा प्रसिद्धि या दूसरों के द्वारा सौम्यता का कथन) प्राप्त होती है ।

६. परदेश सहम का फल- परदेश सहम, लग्नेश और नवमेश से युक्त या दृष्ट हो तथा शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट हो तो परदेश से सौख्य होता है तथा धन और कीर्ति की वृद्धि होती है ।

दशम भाव संबंधी विचार -

दशम स्थान से विचारणीय विषय -

आकाशवृत्तान्तजलप्रपातः स्थानं पितुः कार्यसुखादिमानम् ।
पुण्यं नृपत्वं च तथाधिकारो मुद्राच्युतिस्तद्दशमे विचिन्त्यम् ।।

आकाश का वृत्तान्त, जल का वरसना, स्थान, पिता का कार्य, सुख आदि, मान, पुण्य, राजा से संबंधित कार्य, अधिकार, सिक्का, स्थान से चलना, इन सब बातों का विचार दशम स्थान से होता है ।

व्योम्नि मुद्रापरं पुण्यं राज्यं वृद्धिश्च पैतृकम् ।
व्यापारसिद्धयश्चैव तत्तत् सद्भान्नवांशकात् ।।

मुद्रा (सिक्का), पुण्यकार्य, राज्य, वृद्धि, पिता से संबंधित विषय, व्यापर की सिद्धि, इन बातों का विचार दशम भाव से करना ।

प्रत्येक बात के सहम से तथा उसके नवांशक से विचार करना ।

नोट - पूर्वोक्त भाव विचार के समान ही दशम भाव का भी विचार है ।

दशमभाव में स्थित ग्रहों के फलित -

गगनगो रविजः पशुवित्तहा रविकुजौ व्यवसायपराक्रमैः ।
धनसुखानि परे च धनात्मजावनिपसङ्गसुखानि विचिन्वते ।।

दशम स्थान में शनि बैठे तो पशु और धन की हानि होती है । दशम स्थान में सूर्य तथा मंगल के बैठने से उद्योग तथा व्यापार के द्वारा धन और सुख प्राप्त होता है। अन्य ग्रहों के बैठने से धन-संतान तथा राजपक्ष से संबंधित सुख होता है ।

दशम भाव संबंधी योगों का विचार -

१. वर्ष काल में बलवान् वर्षेश दशवें स्थान में बैठे तो राज्य,धन, सुख, कीर्ति तथा अन्य स्थान की प्राप्ति होती है ।

२. बलवान् वर्षेश वर्ष कुण्डली में लग्न, चतुर्थ या सप्तम भाव में बैठे तो घर, सुख तथा लाभ होता है ।

३. बलवान् सूर्य दशम भाव में हो तो जो पद पहले से प्राप्त है उसमे उन्नति होती है ।

४. बलवान् सूर्य एकादश (ग्यारहवें) में हो तो राजा, मंत्री अथवा अन्य राजकर्मचारियों से मित्रता होती है ।

५. सिंह राशि की मुंथा लग्न में या दशम भाव में हो तो राजपक्ष से लाभ तथा सौख्य होता है ।

६. तुलाराशि में पापग्रह से युक्त सूर्य के बैठने पर राजपक्ष से बन्धन (जेल) या बन्ध की संभावना होती है ।

७. सिंह राशि का बलवान् सूर्य दशम भाव में हो तो राजपक्ष से आश्रय मिलता है तथा स्थान का लाभ होता है ।

८. मेष या वृश्चिक राशि में बलवान् चंद्रमा बैठे तो अन्य स्थान की तथा अधिकार की प्राप्ति होती है ।

९. लग्नेश, दशमेश और वर्षेश के इत्थशाल से राज्य की प्राप्ति होती है ।

१०. वर्षेश राज्यसहम में हो तथा सूर्य के साथ इत्थशाल करता हो तो यह बड़ा राजा होने का योग है ।

११. जन्मकाल में सूर्य दशमेश हो और वर्षकुण्डली में भी वह दशम स्थान में बैठे तथा लग्नेश के साथ मुथशिल योग करता हो तो, सूर्य के बल के अनुसार (पूर्ण आदि) राज्य की प्राप्ति होती है ।

१२. दशम स्थान में शनि स्वराशि का या उच्चराशि का होकर बैठे तो आरोग्य तथा धनलाभ होता है ।

१३. स्वराशि या उच्चराशि का सूर्य अथवा गुरु दशमस्थान में बैठे तो राजपक्ष से लाभ होता है ।

१४. दशम स्थान में स्वराशि या उच्चराशि का मंगल हो तो अपने भुजबल से यानी अपने उद्योग से लाभ होता है ।

१५. स्वराशि या उच्चराशि का बुध दशवें स्थान में हो तो काव्य-शिल्प-ज्यौतिष या चिकित्सा के द्वारा लाभ होता है ।

१६. जन्मकाल में तथा वर्षकाल में शनि पापक्रान्त (पाप-ग्रह से युक्त तथा दृष्ट) हो तथा वर्षेश सूर्य कर्कराशि में हो तो यह कर्मनाश योग है अर्थात् लाभ के लिए जो भी काम किया जायेगा उस में हानि ही होगी ।

१७. वर्षेश शनि वक्री या दग्ध हो तो कार्य में निष्फलता होती है ।

१८. दशम भाव तथा दशमेश शनि से युक्त या दृष्ट हो तो सभी कामों में गड़बड़ी होती है ।

१९. कर्मसहम शनि से युक्त या दृष्ट हो तो काम विगड जाता है ।

२०. दशमेश सूर्य के साथ या लग्नेश के साथ इत्थशाल योग करता है तो उस वर्ष में राजा का दर्शन अवश्य होता है ।

२१. दशमेश से अगली राशि में सूर्य और लग्नेश हों तथा लग्नेश दशमभाव में बैठे तो उस वर्ष राजा से मिलन होता है ।

२२. लग्नेश जिस राशि में है वह राशि जिस ग्रह की उच्च राशि है, वह ग्रह यदि अपनी उच्चराशि आदि में है और लग्नेश को देखता है तो व्यक्ति को अभीष्ट (मनचाहे) पद की प्राप्ति होती है ।

२३. लग्नेश के लग्न में होने पर भी अभीष्ट पद की प्राप्ति होती है ।

२४. दशम भाव अपने स्वामी से युक्त या दृष्ट हो तथा शुभग्रह से युक्त और दृष्ट हो तो पदप्राप्ति होती है । यदि उक्त योग में दशम भाव में स्थिर राशि हो तो थोड़े अधिकार के पद की प्राप्ति होती है और यदि वृश्चिक राशि होती है तो वहुत थोड़े अधिकार वाले पद की प्राप्ति होती है ।

२५. दशमेश उदित हो और स्थिर राशि में हो तो राजपद (सरकारी नौकरी) की प्राप्ति होती है ।

२६. दशमेश स्थिर राशि में हो तथा शुभग्रहों से युक्त आर दृष्ट हो तो पद की स्थिरता (मुस्तकिली) हो जाती है ।

२७. दशमेश क्रूरग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो तो पदच्युति (नौकरी आदि का छूटना) होती है ।

२८. दशमेश दशम भाव को देखे तो पद की स्थिरता होती है ।

२९. लग्नेश और दशमेश की परस्पर दृष्टि होने से पद की स्थिरता होती है।

३०. लग्नेश, दशमेश और चंद्रमा, इन तीनों के दशम भाव में बैठने पर पदप्राप्ति होती है ।

३१. लग्न में शुभग्रह, उच्चराशि का हो तथा उसपर शुभग्रह की दृष्टि हो तो पद की प्राप्ति होती है ।

३२. वर्षकुण्डली में सातवें या आठवें स्थान में शुक्र के बैठने से पद की प्राप्ति होना स्वाभाविक है ।

३३. शुक्र बुध से या गुरु से युक्त हो तो पद प्राप्ति होती है ।

३४. शुक्र चंद्र से युक्त हो तो अध्यक्ष के प्रेम पूर्वक पद प्राप्ति होती है ।

३५. शुक्र मंगल से युक्त हो तो रगड़े-झगड़े से पद प्राप्ति होती है ।

३६. शुक्र शनि से युक्त हो तो पदप्राप्ति नहीं होती है ।

३७. शुक्र सूर्य से युक्त हो तो नाममात्र की यानी लाभ रहित या अल्पलाभ की पदप्राप्ति होती है ।

३८. जन्मलग्न का दशमेश निर्बल हो तथा वर्षकाल में भी वह निर्बल हो और वर्षेश वर्ष कुण्डली में त्रिकस्थान में हो एवं अष्टमेश भी त्रिकस्थान में हो तो यह योग वर्ष में शुभकारक नहीं होता है ।

३९. दशम स्थान में शनि की राशि का मंगल हो और उसकी मुंथापर दृष्टि हो तो किसी पापकर्म के कारण राजपक्ष से भय तथा धनहानि होती है ।

४०. तीसरे या नौवें स्थान में शनि की राशि का मंगल हो तथा वह नष्ट या दग्ध हो तो व्यक्ति पापों का संचय करता है ।

४१. नवमेश और दशमेश दोनों दग्ध हों तो राज्य और धर्म की हानि होती है ।

४२. लग्नेश दशमस्थान में हो, शुभग्रह के वर्ग में हो तथा शुभग्रह से इत्थशाल करता हो तो (सचिव मंत्री) का पद प्राप्त होता है और उसकी मोहर लगती है।

४३. लग्नेश दशम स्थान में हो, शुभग्रहों के वर्ग में हो तथा शुभग्रह से युक्त और दृष्ट हो तो सचिव पद प्राप्त होता है और उसकी मोहर लगती है ।

४४. लग्न का नवमांशपति लग्न में बैठा हो, दशम स्थान शुभग्रह से युक्त और दृष्ट हो तथा दशम भाव का नवमांश पति लग्न में या दशम स्थान में बैठे तो कार्यों में सफलता होती है ।

४५. पंचाधिकारी बलवान् होकर केन्द्र में बैठें तथा आपस में इत्थशाल करते हों तो इस योग से व्यक्ति प्रताप शाली राजा बनता है ।

नोट- दशम भाव दलील से भी बहुधा कर्म की दीप्ति (प्रकाश) होती है । कुण्डली में जहाँ दशमेश बैठा हो, उसे प्रथम मास मानना, उससे आगे को द्वितीय मास मानना । इस प्रकार क्रम से आगे-आगे के भाव को अगला-अगला मास मानते हुए बारह मासों की कल्पना करनी । मास के अनुसार जो भाव, शुभग्रह की राशि का होगा तथा शुभग्रह से युक्त और दृष्ट होगा, उस मास में कार्य की सफलता होती है ।

दशम भाव संबंधी सहमों के फलित

१. उन्नति सहम का फल- उन्नति सहम शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट हो तथा लग्नेश और नवमेश, दोनों से युक्त या दृष्ट हो तो उच्च अधिकार की प्राप्ति, प्रिय का मिलन और सवारी सम्बन्धी सौख्य होता है ।

२. व्यापार सहम का फल - व्यापारसहम दशम भाव में हो, बलवान् हो और शुभग्रह से युक्त हो तथा व्यापारसहम का स्वामी लग्न में बैठे तो व्यापार के द्वारा धनलाभ होता है ।

व्यापारसहम के स्वामी का और लग्नेश का इत्थशाल होने पर व्यापार से अच्छा लाभ होता है । व्यापार सहम के स्वामी का लग्नेश के साथ नक्तयोग अथवा यमया योग होने पर दूसरे से लाभ होता है । व्यापार सहम के स्वामी का लग्नेश के साथ ईशराफ योग होने पर व्यापार में हानि होती है ।

नोट - व्यापार का योग होने पर ही यह जानना कि, किस वस्तु के व्यापार

से लाभ होगा ? इस सबंध में यह विचार करना कि, दशम भाव में जो ग्रह बलवान् होकर बैठा है, उसकी वस्तु के व्यापार से लाभ होगा। ग्रहों की वस्तुओं का संक्षिप्त विवरण-

१. सूर्य- सुवर्ण तथा दवाइयाँ आदि। २. चंद्र - खेती-बाड़ी, अन्न तथा जल से उत्पन्न होनेवाली वस्तुएँ। ३. मंगल - सज्जनता से भिन्न कार्य, साहस (युद्ध आदि) का कार्य, अग्नि से संबन्धित कार्य, लोहे से बने शस्त्र आदि। ४. बुध- लेखन कार्य, कविता, वाणी की कला (व्याख्यान आदि)। ५. गुरु- धर्म कार्य, देवता संबंधी कार्य। ६- शुक्र -रत्नों (जवाहरात) का कार्य, स्त्री से संबंधित कार्य आदि। ७. शनि- द्यूत (जुआ) आदि कुकार्य।

दशम भाव की राशि में और दशमेश में जो बलवान् हो, उसी की वस्तु के व्यापार द्वारा लाभ होता है।

राशियों की वस्तुओं का विवरण -

१. मेष - कंवल, पशमीना, सोना, जौ, गेहूँ, मसूर, राल।
२. वृष - वस्त्र, चांदी, चावल, सरसों, जौ, गेहूँ, भैस।
३. मिथुन - कपास, रुई, ज्वार, वाजरा, मक्का।
४. कर्क - केला, कोदों, तम्बाकू, जायफल, दारचीनी।
५. सिंह - शालि (धान), गुड़, खाँड़, षट् रस।
६. कन्या - चांदी, सफेद गेहूँ, मूंग, मटर, कुलथी, अलसी, लोविया।
७. तुला - लाल गेहूँ, सरसों, अरहर, उड़द, मटर।
८. वृश्चिक- लोहा, गुड, खाँड़, पान, भेड़, बकरी।
९. धन - मूल, रस, धान्य, लवण, चित्रवस्त्र, घोड़ा।
१०. मकर - सोना, काला लोहा, ईख, जमीकंद, मजीठ, चंदन।
११. कुंभ - चित्र-विचित्र वस्तु, रत्न, रस, पोस्त।
१२. मीन - हीरा, मोती, अतर, सीप, समुद्र से उत्पन्न रत्न।

वृत्ति के विषय में अन्य विचार - जन्मकाल में, वर्षकाल में अथवा प्रश्नकाल में लग्न, सूर्य और चंद्र, इनमें जो बलवान् हो उससे दशमस्थान का स्वामी जिस नवांशराशि में हो उसके स्वामीग्रह की धातु या वस्तु के द्वारा वृत्ति (लाभ के उपाय को वृत्ति कहतें है।) जाननी चाहिए। प्रत्येक ग्रह का रत्न, धातु और वस्तुएँ भिन्न-भिन्न हैं, उनके व्यापार से वृत्ति का निश्चय करके बतलाना चाहिए। ग्रह की दृष्टि का भी विचार आवश्यक है। १. सूर्य - रत्न- लाल, धातु- पीतल। वस्तु- घी, तेल, रस, गंध, लालरंग का अन्न। २. चंद्र- रत्न-मोती। धातु- चांदी, कांसा। वस्तु- सफेद रंग का अन्न, सफेद तिल। ३. मंगल-रत्न-मूंगा। धातु - तांवा। वस्तु - चना। ४. बुध - रत्न-पन्ना। धातु-जस्त और ताँवे से मिली धातु। वस्तु- मूंग, सब तरह की दालें। ५. गुरु - रत्न-पुखराज। धातु- सोना। वस्तु- सब तरह के अन्न रस, ईख, सरसों, गेहूँ, जौ, चावल, पीला अन्न। ६. शुक्र -रत्न-हीरा। धातु- चांदी। वस्तु- सफेद रंग की सब चीजें। ७. शनि- रत्न-नीलम। धातु- लोहा। वस्तु- तिल, तिलों का तेल, लवण, कोदों,

कंगनी, कालेरंग की सब चीजें । ८. राहु - रत्न-गोमेद, लाजवर्द । धातु- लोहा । ९. केतु- रत्न- गोमेद, लाजवर्द, लहसुनिया । धातु- लोहा । वस्तु राहु-केतु की वस्तु शनि के समान है ।

उदाहरण - किसी का वृत्तिकारक चंद्र है, तो उसके लिए चांदी, सफेद रंग की चीजें, कृषि, अन्न अथवा जल से संबंधित वस्तु, इनमें से किसी वस्तु का व्यापार करना उचित है । इत्यादि ।

३. राज्यसहम का फल - राज्यसहम कुण्डली में शुभ स्थान में हो, उस पर उसके स्वामी की और लग्नेश की दृष्टि हो तथा शुभग्रहों की दृष्टि हो तो वह वर्ष कोष (खजाने) के सहित राज्य के लिए शुभ होता है ।

यदि राज्य सहम पर षष्ठेश और अष्टमेश तथा पापग्रहों की दृष्टि होती है तो यह योग राज्य के लिए शुभ नहीं है ।

राज्यसहम का स्वामी बलवान् हो, उसका लग्नेश से और दशमेश से इत्थशाल हो तथा राज्य सहम पर शुभग्रहों की मित्र दृष्टि हो तो राज्य का पूर्ण सुख प्राप्त होता है।

राज्यसहम पर पापग्रहों की दृष्टि होने से राज्यसंबंधी दुख होता है ।

पूर्वोक्त राज्य योग होने पर भी यदि राज्यसहम के स्वामी का षष्ठेश, अष्टमेश और द्वादशेश के साथ मूसरिफ योग अथवा खल्लासर योग या रद्द योग होता है तो राज्य प्राप्त होकर नष्ट हो जाता है ।

राज्यसहम शुभ तथा अशुभ दोनों प्रकार के ग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो और राज्य सहम के स्वामी का क्रूरग्रहों के साथ इत्थशाल हो तो धन और मान की हानि के साथ राज्य की हानि होती है ।

राज्यसहम के स्वामी का यदि शुभग्रहों के साथ इत्थशाल होता है तो सुख, कीर्ति, वाहन तथा शस्त्र का लाभ होता है ।

राज्यसहम, राज्यसहम का स्वामी और दशमेश, ये बलवान् हों तथा शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट हों तथा स्वामियों का परस्पर मुथशिल योग हो तो हाथी-घोड़े, भूमि तथा द्रव्य का लाभ होता है ।

यदि इसी योग में पापग्रहों की युति या दृष्टि होती है तो बड़ा अशुभ फल होता है ।

राज्य कारक ग्रह, दग्ध या वक्री होते हैं तो कामों में विगाड़ होता है ।

यदि राज्य कारक ग्रह, पापग्रहों से युक्त और दृष्ट हों अथवा शनि से युक्त या दृष्ट हों तो राज्य भ्रंश होता है तथा खजाने की हानि होती है ।

राज्य सहम के स्वामी का तथा दशमेश का क्रूरग्रह के साथ मूसरिफ योग होता है तो राज्य तथा कोष की हानि होती है ।

४. पानीयपात सहम का फल - पानीयपात सहम क्रूरग्रह से युक्त हो तो वर्ष में व्यक्ति को जल से भय होता है ।

पानीयपात सहम का स्वामी अस्त हो तो पीड़ा होती है।

५. वृष्टि सहम का विचार -

संस्कारे समरारम्भे यात्रायां पुरवेश्मनि ।
प्रश्ने प्रावृट्भप्रवेशे विचार्य कथयेद् बुधः ।।

विवाह आदि संस्कार में, युद्ध के आरंभ में, यात्रा में, नगर प्रवेश में, गृह प्रवेश में, प्रश्न में तथा वर्षाकाल के नक्षत्र पर सूर्य के आने में वृष्टि सहम का विचार करना चाहिए ।

सायनमेष संक्रान्ति (यह प्रायः २१ या २२ मार्च को होती है) के समय वृष्टिसहम, संक्रान्ति के प्रवेश काल की लग्न का स्वामी तथा शुभग्रह, जलराशि में हों और इनकी वृष्टि हो तो वर्षा काल में अत्युत्तम वर्षा होती है ।

सायन मेष संक्रान्ति काल में तथा आर्द्रा नक्षत्र में सूर्य के प्रवेश काल में यदि उक्तयोग के साथ चंद्रमा भी जलराशि में होता है तो बड़ी भारी वृष्टि होती है ।

सूर्य और मंगल अग्निनाडी में हों और वृष्टि सहम को देखते हों तो वर्षा की रोक होकर गर्मी बढ़ती है ।

शनि और राहु वायु नाडी में हों तथा वृष्टि सहम को देखते हों तो हवा अधिक चलती है ।

नोट - वर्षा के सबंध में अधिक जानना हो तो लेखक का 'वृष्टि-विज्ञान' पढिये ।

एकादश (लाभ) भाव संबंधी विचार

एकादश भाव से विचारने योग्य विषय -

कार्यस्य सिद्धिः क्रयवृद्धिलब्धिर्गजाश्ववस्त्रासनयानशय्या ।
विद्यार्थलाभोऽप्यथ नष्टलाभः कन्यासुवर्णस्य च लाभकार्यम् ।।
तनूरुहादेः श्वशुरादिकं च समस्तलाभः खलु लाभभावे ।।

कार्य की सिद्धि, खरीदी हुई चीज की वृद्धि, हाथी की प्राप्ति, घोड़े की प्राप्ति, वस्त्र की प्राप्ति, आसन की प्राप्ति, शय्या की प्राप्ति, विद्या की प्राप्ति, धन की प्राप्ति, नष्ट हुई वस्तु की प्राप्ति, कन्या की प्राप्ति, सुवर्ण का लाभ, लाभ संबंधी कार्य, रोम-नख-केश आदि, स्वशुर आदि, सब प्रकार का लाभ, इन सब बातों का विचार ग्यारहवें भाव से होता है ।

आये सर्वार्थधान्यानि कन्यामित्रचतुष्पदाः ।
राज्ञो वित्तं परीवारो लाभोपायांश्च चिन्तयेत् ।।

सब प्रकार के धन-धान्य, कन्या, मित्र, चौपाया पशु, राजा का धन, परिवार, लाभ के उपाय, इन सबका विचार ग्यारहवें स्थान से होता है ।

नोट - पूर्व भाव के समान ही इस भाव का भी विचार है ।

एकादश (ग्यारहवें) स्थान में स्थित ग्रहों का फलित -

लाभे धनोपचयसौख्ययशोभिवृद्धि सन्मित्रसङ्गवपुपुष्टिकरास्तु सर्वे ।

क्रूरा बलेन रहिताः सुतवित्तबुद्धिनाशं शुभास्तु तनुतां स्वफलस्य कुर्युः ।।

एकादश स्थान में बैठे सभी ग्रह धनलाभ, सुख-यश की वृद्धि, मित्रसे मिलन तथा आरोग्य करते हैं । यदि शुभग्रह, निर्बल होकर बैठते हैं तो पूर्वोक्त फलों में कमी करते हैं । यदि क्रूरग्रह बलहीन होकर एकादश स्थान में बैठते हैं तो धन-संतान तथा वुद्धि की हानि करते हैं ।

एकादश भाव संबंधी योगों का विचार-

१. वर्षेश बुध वर्षकुण्डली में द्वितीय स्थान में हो और शुभग्रह से युक्त तथा दृष्ट हो तो व्यापार से लाभ होता है ।

२. वर्षेश बुध मुंथा के सहित लग्न में हो तथा शुभग्रह से युक्त और दृष्ट हो तो पढ़ने-लिखने से संबंधित कार्यद्वारा लाभ होता है ।

३. वर्षेश बुध क्रूरग्रह से युक्त हो तथा त्रिकस्थान में बैठे तो उस वर्ष में व्यक्ति नीच कर्म करता है ।

४. वर्षेश बुध अस्त हो तथा क्रूरग्रह से दृष्ट हो तो लेखन कला आदि से लाभ नहीं होता है ।

५. वर्षेश गुरु वर्षलग्न में हो तथा पापग्रह से पीड़ित हो तो धनहानि तथा राजपक्ष से भय होता है ।

६. गुरु वर्षेश होकर अथवा अधिकारी होकर सप्तम भाव में बैठे तो व्यवहार के द्वारा धनलाभ होता है ।

७. लग्नेश और लाभेश का परस्पर मुथशिल (इत्थशाल) योग होने पर लाभ होता है तथा स्वजनों में गौरव होता है ।

८. एकादश स्थान में प्रत्येक बलवान् ग्रह के बैठने से लाभ होता है, किन्तु निर्बल ग्रह के बैठने से लाभ नहीं होता है ।

९. मुंथा के सहित बलवान् बुध वर्षलग्न में बैठे और धनसहम शुभग्रह से युक्त हो तो व्यक्ति को निखात (जमीन में गड़ा) धन प्राप्त होता है । यदि पूर्वोक्त बुध पर पापग्रहों की दृष्टि होती है तो निखात धन प्राप्त नहीं होता है ।

१०. वर्षेश एकादश स्थान में हो और शुभग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो तो पढ़ने-लिखने की कला से तथा व्यवहार से लाभ होता है ।

११. वर्षकाल में बलवती मुंथा दशम स्थान में बैठे तो पढ़ने-लिखने की कला से लाभ होता है ।

१२. मुंथा और मुंथेश दोनों एक साथ त्रिकस्थान में बैठें तो व्यक्ति को लाभ होने के समय बड़ी अड़चने पड़ती हैं ।

१३. ग्यारहवें स्थान में उच्चराशि का लाभेश बैठे और वह शुभग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो एवं सूर्य से दूर हो तो हाथी-घोड़े-पृथ्वी की प्राप्ति तथा स्त्री संबंधी सौख्य होता है ।

१४. लग्नेश और लाभेश का इत्थशाल योग हो और मित्र दृष्टि हो तो राजपक्ष

से मान प्राप्त होता है ।

१५. लग्नेश और लाभेश का यमया अथवा नक्त योग हो, परस्पर मित्र दृष्टि हो तथा उनपर शुभग्रहों की दृष्टि हो तो अन्य लोगों से गौरव प्राप्त होता है ।

१६. (क) लग्नेश और लाभेश लाभस्थान में हों । (ख) लग्नेश और लाभेश, लग्न में हों । (ग) लग्न में लाभेश हो । (घ) लग्नेश लाभ में हो । ये लाभ के चार योग हैं, इनमें से कोई सा योग होने पर भी लाभ होता है । यदि किसी योग में चंद्र का योग होता है तो अवश्य ही पूर्ण लाभ होता है ।

१७. लाभ स्थान पर लग्नेश और लाभेश की दृष्टि हो तो लाभ होता है ।

नोट - किसी भी योग में यदि चंद्र की दृष्टि न होगी तो वह लाभयोग व्यर्थ ही ठहरेगा ।

१८. लाभ स्थान पर सभी ग्रहों की दृष्टि हो तो वीस विश्वे लाभ होता है ।

नोट -जिस भाव पर समस्त ग्रहों की दृष्टि होती है उस भाव से सम्बन्धित पूर्ण लाभ होता है ।

१९. लग्नेश, लाभेश और चंद्रमा, ये आपस में युक्त हों अथवा दृष्टि रखते हों एवं लग्न स्थान, धनस्थान अथवा त्रिकोण में हों तो शीघ्र ही लाभ होता है ।

२०. तिर्यक्योनि की लग्न हो और लाभेश की तिर्यक् योनि की राशि में हो और उसपर शुभग्रह की दृष्टि हो तो व्यक्ति को पशु का लाभ होता है ।

२१. (क) लग्न-पंचम-सप्तम तथा अष्टम स्थान में शुभग्रह हों ।

(ख) लग्नेश और चंद्रमा षष्ठ स्थान में हों ।

उक्त योगों में से कोई योग होने पर व्यक्ति को भेड़-नाँव तथा ऋण के द्वारा लाभ होता है ।

लाभ भाव संबंधी सहमों के फलित

१. लाभसहम का फल - लाभ सहम बलवान् हो, अपने स्वामी से युक्त या दृष्ट हो तथा शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट हो, इस योग में लाभ सहम, जिस सहम के स्वामी से युक्त या दृष्ट होगा उसी के द्वारा लाभ होगा ।

२. रत्न सहम का फल -रत्न सहम बलवान् हो, शुभस्थान में हो, अपने स्वामी से लग्नेश से और शुभग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो तो रत्न का लाभ होता है ।

३. कार्य सिद्धि सहम का फल - कार्य सिद्धि सहम, शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट हो तथा शुभग्रह के मुथशिल में हो तो युद्ध में जीत होती है । यदि कार्य सिद्धिसहम शुभ तथा पाप दोनों प्रकार के ग्रहों से युक्त और दृष्ट होता है तो क्लेश उठाकर जीत होती है ।

४. बंधु सहम का फल - बंधु सहम तथा उसका स्वामी शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट होता है तो चचा-ताऊ और भाइयों से सौख्य होता है । विरीत योग होने पर उन सबसे कलह होता है ।

द्वादश (व्यय) भाव का विचार

द्वादश भाव से विचारणीय विषय -

त्यागादि भोगादि विवाहदानकृष्यादिकर्मव्ययसंज्ञकं च ।
पितृव्यमातृष्वसृमातुलीनां युद्धं क्षतिर्युद्धपराजयश्च ।।
सम्प्रेक्षणं च श्वशुरादिवित्तं कुलं तथैतत् कथितं व्यये च ।।

किसी वस्तु का त्याग तथा भोग आदि, विवाह, दान, खेती आदि का काम, व्यय (खर्च), चाचा, मौसी, मामी, युद्ध हानि, युद्ध में हार, किसी बात की देख-भाल, श्वशुर आदि का धन, कुल, इन बातों का विचार बारहवें स्थान से होता है ।

व्यये वैरिनिरोधार्तिव्ययसेनागमादिकम् ।
तत्तत् सद्माच्च भावाच्च ग्रहयोगाद् विचारयेत् ।।

शत्रु की रोक, कष्ट, व्यय, सेना का आगमन आदि इन सब का व्यय भाव से तथा उनके सहमों से एवं ग्रहों के योग से विचार होता है ।

नोट - पूर्वभावों के समान ही इस भाव का भी विचार होता है ।

व्यय (द्वादश) भाव में स्थित ग्रहों के फल -

पापा व्यये नेत्ररुजं विवादं हानिं धनानां नृपतस्करादेः ।
सौम्या व्ययं सद् व्यवहारमार्गे कुर्युः शनिर्हर्षविवृद्धिमत्र ।।

व्ययस्थान में पापग्रह होने से नेत्ररोग, झगड़ा, राजपक्ष से तथा चोर आदि से धन की हानि होती है । व्यय स्थान में शुभग्रह होने से शुभमार्ग में व्यय होता है । व्ययस्थान में शनि होने से प्रसन्नता होती है ।

व्ययभाव संबंधी योगों का विचार - १. व्यय भाव का नवांशेश लग्न में हो और लग्न का नवांशेश व्यय भाव में हो तथा इनपर षष्ठेश की दृष्टि हो तो शत्रु का विरोध (रोक) होता है ।

२. षष्ठ भाव का नवांशेश लग्नस्थान में हो और लग्नभाव का नवांशेश षष्ठ स्थान में हो तथा ये व्ययेश से युक्त या दृष्ट हो तो वैरी का निरोध होता है ।

३. लग्न का नवांश पति व्ययस्थान में हो, अष्टमेश से उसका इत्थशाल हो तथा उस पर व्ययेश की और शुभग्रह की दृष्टि हो तो शत्रु से उत्पन्न अर्ति (पीड़ा) होती है ।

४. षष्ठभाव का नवांशेश पंचमस्थान में हो, लग्नेश से इत्थशाल करता हो, उस पर पंचमेश की तथा शुभग्रह की दृष्टि हो तो शत्रु से उत्पन्न अर्ति होती है ।

५. होरेश नीच राशि में हो तो व्यक्ति घोड़े की सवारी से गिरता है । यदि नीचराशि के होरेश को पापग्रह देखता हो तो भुजभंग (बाहु का टूटना) होता है । यदि नीचराशि का होरेश क्रूरग्रह से युक्त होता है तथा क्रूरग्रह की शत्रुदृष्टि होती है तो मृत्यु होती है ।

६. लग्नेश चंद्रमा चरराशि में हो और व्ययेश से इत्थशाल करता हो तो शत्रु की सेना आती है । यदि उक्त योग नहीं होता है तो शत्रु की सेना नहीं आती है ।

७. व्ययेश पापग्रह से युक्त तथा दृष्ट होकर जिस भाव के स्वामी से इत्थशाल करता है उस भाव से संबंधित विषय में व्यक्ति का व्यय होता है। यदि व्ययेश शुभग्रह से युक्त या दृष्ट होता है तो भाव से संबंधित शुभ व्यय होता है।

८. व्ययस्थान में शुभग्रह होने से विवाह आदि में शुभ व्यय होता है।

९. व्ययस्थान में क्रूरग्रह होने से अशुभ व्यय होता है। व्यय स्थान में पापग्रह होने से प्रायः राजद्वार में या चोर-डाकू आदि के कारण व्यय होता है।

१०. व्यय स्थान में सूर्य होने से राजदण्ड में व्यय होता है। चन्द्रमा के होने से पाखण्डियों में, मंगल के होने से क्रीडा-विनोद आदि में, बुध के होने से क्रय-विक्रय (खरीद-फरोख्त) में, गुरु के होने से धर्म से संबंधित कार्य में, शुक्र के होने से व्यापार आदि में तथा शनि के होने से क्रूर या अशुभ कार्य में व्यय होता है।

नोट - व्यय स्थान में बैठा ग्रह हीन बली न हो तो उक्त फल होता है।

११. व्ययस्थान में चंद्र और शनि हों तथा षष्ठ स्थान में गुरु हो तो चोरी के कारण तथा दुष्ट जनके कारण धन की हानि होती है।

१२. लग्नेश और वर्षेश त्रिकस्थान में नरराशि के हों तथा नष्टबली हों तो भृत्य (नौकर) की हानि होती है। यदि नरराशि के अतिरिक्त राशि में हों तो चौपाये पशु की हानि होती है।

१३. वर्षेश शुक्र षष्ठ स्थान में नरराशि का हो तो भृत्य की हानि होती है। यदि चतुष्पद राशि में उक्त शुक्र होगा तो घोड़े आदि पशु की हानि होती है।

नोट - उक्त योग में शुक्र क्रूरग्रह से दृष्ट तथा निर्बल हो।

१४. दशम स्थान में चंद्र और मंगल हों तो पशुहानि होती है।

१५. व्ययस्थानमें चंद्र और मंगल हों तो व्याकुलता होती है।

१६. वर्षेश सूर्य पापग्रह तथा शुभग्रह से युक्त होकर त्रिकस्थान में बैठे तो उस वर्ष नौकरों के साथ कलह होता है।

१७. वर्षेश शनि बलवान् हो और छठे या बारहवें स्थान में बैठे तो व्यक्ति उस वर्ष तहखाना बनवाता है अथवा जलाशय (तालाब-कुँआ-नल आदि) करवाता है या वृक्ष लगाता है।

१८. वर्षेश गुरु या शनि हो, वह व्ययस्थान में बैठे तथा शुभग्रह की उसपर दृष्टि हो तो व्यक्ति को अपने रहने को मकान बनाने के लिए भूमि की प्राप्ति होती है।

जन्मकाल के अनुसार ग्रह के शुभाशुभ फल का विचार -

यत्र भावे शुभफलो दुष्टो जन्मनि वा ग्रहः।
वर्षे तद् भावगस्तादृक् तत्फलं यच्छति ध्रुवम्।।

जन्मकुण्डली में जिस भाव में जैसा भी शुभ या अशुभ फल देने वाला ग्रह बैठा हो, उसी प्रकार वर्ष कुण्डली में उसी भाव में वैसा ही ग्रह हो तो उसभाव का फल निश्चय देता है।

ये जन्मकाले बलिनोऽब्दकाले चेद् दुर्बलास्तैरशुभं समान्ते।
विपर्यये पूर्वमनिष्टयुक्तं तुल्यं फलं स्यादुभयत्र साम्ये।।

जो ग्रह जन्मकाल में बलवान् हैं, किन्तु वे वर्ष काल में दुर्बल हों तो उनका अशुभ फल वर्ष के उत्तरार्ध में होता है और वर्ष के पूर्वार्ध में शुभफल होता है। जो ग्रह जन्मकाल में दुर्बल हों तथा वर्षकाल में बलवान् हों तो उनका वर्ष के पूर्वार्ध में अशुभ फल होता है और वर्ष के उत्तरार्ध में शुभफल होता है। जो ग्रह जन्मकाल में तथा वर्षकाल में बलवान् होते हैं उनका वर्षभर शुभफल होता है। जो ग्रह जन्मकाल में तथा वर्षकाल में दुर्बल होते हैं तो वर्ष भर उनका अशुभ फल होता है।

व्यय भाव संबंधी सहमों के फलित

१. पितृव्य सहम का फल - पितृव्यसहम अपने स्वामी से युक्त या दृष्ट हो तथा शुभग्रह से युक्त और दृष्ट हो तो पितृव्य (ताऊ-चचा) संबंधी सुख होता है।

२. आखेट(शिकार) सहम का फल - आखेट सहम अपने स्वामी से युक्त या दृष्ट हो तथा शुभग्रह से युक्त और दृष्ट हो तो आखेट का सौख्य होता है। विपरीत योग होने पर सुख नहीं होता है अर्थात् शिकार में दुःख मिलता है।

३. व्यसनसहम का फल - व्यसन सहम क्रूरग्रह से युक्त और दृष्ट हो तो व्यक्ति को जुआ खेलने का तथा वेश्या गमन का व्यसन (लत) होता है।

४. कृषि (खेती) सहम का फल - कृषिसहम अपने स्वामी से युक्त या दृष्ट हो तथा शुभग्रह से युक्त और दृष्ट हो तो कृषि से धनलाभ होता है। विपरीत होने पर कृषि से लाभ नहीं होता है।

५. चतुष्पद सहम का फल - चतुष्पदसहम अपने स्वामी से और लग्नेश से युक्त या दृष्ट हो तथा शुभग्रह से युक्त और दृष्ट हो तो गाय आदि पशु का सुख होता है। विपरीत योग होने पर पशुसुख की हानि होती है।

६. ऋणसहम का फल - ऋणसहम अपने स्वामी से युक्त या दृष्ट न हो तथा क्रूरग्रहों से युक्त और दृष्ट हो तो व्यक्ति पर उस वर्ष ऋण (कर्ज) नहीं होता। विपरीत योग होने पर ऋण हो जाता है।

नोट - सहम के संबंध में विचारणीय विषय- जाति कुल-अवस्था आदि को ध्यान में रखकर उचित सहमों के स्पष्ट तथा फल लगाने उचित हैं। उदाहरणार्थ जैसे - एक बालक दो वर्ष की अवस्था का है, उसके वर्ष काल में विवाह और सन्तान सहम स्पष्ट हो सकता है, किन्तु उसकी अवस्था विवाह या संतान के योग्य नहीं है अतः उक्त सहम न लगाने। जिसके कुल में वाणिज्य-व्यापार आदि न होता हो उसके वाणिज्य सहम लगाना व्यर्थ है।

इसी प्रकार जिन स्त्रियों के पति परदेश में हैं, जो स्त्रियाँ बहन्ध्या (बाँझ) हैं अथवा जो स्त्रियाँ नपुंसक हैं, उनके वर्ष पत्र में प्रसव (बच्चा जनना) सहम लगाना बिलकुल व्यर्थ है। इसी प्रकार अपनी बुद्धि के द्वारा अन्य सहमों के विषय में भी जानना अपेक्षित है।

आचार्य यादव का सिद्धान्त है कि - सहम का फलभाव में और भाव का फल

सहम में मिलाकर विज्ञ को अपनी बुद्धि से निश्चय कर के कहना संगत है ।

भाव का फल सहम के काल में होता है । भाव संबंधी विषयों के फल अपने-अपने सहमों के स्वामियों की दशाओं में होते हैं ।

नोट - उक्त भावसंबंधी प्राय: सभी विचार जन्म तथा प्रश्न में भी लागू हैं ।

दशा संबंधी विचार - आचार्य सूर्य सूरि का सिद्धान्त है कि फल किस समय होगा ? यह ज्ञान दशा के बिना नहीं होता है अत: दशा का विचार करना अनिवार्य है।

नोट - वर्ष पत्र में हीनांश-पात्यांश दशा लगानी, उसकी अर्न्तदशा लगाना । दशाओं का फल लिखना । तदनंतर अन्तर्दशा लगानी । अन्तर्दशाओं का फल लिखना। ग्रहों की दशाओं का तथा अन्तर्दशाओं के फलित आचार्य-वामन द्वारा वर्णित हैं ।

ताजिक मुक्तावली ग्रन्थ में मुद्दादशा तथा उसकी अर्न्तदशा के फलों का उल्लेख है । ये ही फल वर्ष से संबंधित अन्यान्य दशाओं में भी लागू हैं ।

दशाओं के फल के विचार में आचार्य तेज सिंह का मन्तव्य - वर्षेश की दशा का तथा अर्न्तदशा का फल जन्मकालिक ग्रह के अनुसार जानना । वर्ष कालिक ग्रह के जन्मकालिक ग्रह के तथा दशा कालिक ग्रह के बल का विचार करना । उक्त तीनों प्रकार के ग्रहों के बल के विचार के साथ ही दशा के फल का विचार करना उचित है ।

फल का स्पष्टीकरण - जो ग्रह जन्मकाल में और वर्ष काल में तथा दशाकाल में बलवान् है उस ग्रह की पूरी ही दशा उत्तम बीतती है । ग्रह की युति तथा दृष्टि के अनुसार धातु तथा स्थान आदि के अनुरूप फल का परिणाम होता है । यह फल का परिणाम चन्द्र के बल पर आधारित है ।

जो ग्रह जन्मकाल में बलवान् है किन्तु वह ग्रह वर्ष काल में हीनबली है । अत: वह ऐसा ग्रह अपनी दशा के समय में मध्यमबली होता है । उसकी दशा के पूर्वार्ध (दशा के समय का पहिला आधा भाग) में थोड़ा फल होता है और उत्तरार्ध (दशा के समय का दूसरा आधा भाग) में फल बिल्कुल नहीं होता है ।

जो ग्रह जन्मकाल में हीनबली है और वर्ष काल में बलवान् है तो वह ग्रह भी मध्यबली है । उसकी दशा के उत्तरार्ध में दशा का फल थोड़ा होता है किन्तु पूर्वार्ध में बिल्कुल फल नहीं होता है ।

जो ग्रह जन्मकाल में और वर्षकाल में बलवान् है किन्तु दशा काल में हीन बली है, अथवा जो ग्रह दशा काल में बली है और जन्मकाल में तथा वर्षकाल में हीनबली है, किंवा जो ग्रह जन्मकाल में, वर्षकाल में तथा दशाकाल में मध्यमबली है । उक्त तीनों प्रकार के ग्रह, मध्यम बली होते हैं, अत: वे योगजन्य (योग से होने वाले) फल को पूर्णरूप से न देकर कमी के साथ फल देते हैं ।

जो ग्रह जन्मकाल में बली है और वर्षकाल में मध्यबली है तथा दशाकाल में निर्बल है तो वह ग्रह अपनी दशा के पूर्वार्ध में पूरा फल और दशा के उत्तरार्ध में थोड़ा

फल देता है ।

जो ग्रह जन्मकाल में निर्बल है, वर्षकाल में बली है आर दशाकाल में मध्यबली है तो वह ग्रह अपनी दशा के पूर्वार्ध में थोड़ा फल और दशा के उत्तरार्ध में पूरा फल देता है।

जो ग्रह जन्मकाल में, वर्षकाल में तथा दशाकाल में निर्बल होता है वह ग्रह बड़ा दु:खदायी होता है ।

ग्रह का जितना बल होता है उसी के अनुरूप उसका उतना फल होता है । वर्ष के बल के अनुसार अपनी दशा के दिनों में ग्रह, फल देता है ।

ज्यौतिष के प्राचीन-आचार्यों ने सभी ग्रहों के बल का आधार सूर्य के बल को तथा चंद्र के बल को माना है । अत: प्रत्येक ग्रह चंद्र के तथा सूर्य के शुभ-अशुभ फलपर आधारित होकर अपनी-अपनी दशा में शुभ-अशुभ फल देता है ।

अत: उपर्युक्त पद्धति को ध्यान में रखकर फल का विचार करना सर्वथा समुचित है ।

नोट - जन्मकालिक ग्रह के बल का निश्चय महर्षि लोमशोक्त सप्तवर्गज.बल के योग पर करना । वर्षकालिक ग्रह के बल का निश्चय वृहत्पंचवर्गीबल के तथा द्वादशवर्गीबल के योग पर करना चाहिए ।

सूर्य आदि ग्रहों के बल के अनुसार उनकी दशाओं के फलित प्रस्तुत किये जाते हैं।

सूर्य की दशा का फलित

१. पूर्णबली सूर्य की दशा का फल - राजपक्ष से मान, प्रधानता, तेज की वृद्धि तथा वाहन संबंधी सुख होता है ।

२. मध्यबली सूर्य की दशा का फल - नगर तथा ग्राम से धन का लाभ, व्यापार से लाभ तथा सुख होता है ।

३. नष्टबली सूर्य की दशा का फल - रोग, घात (चोट, चपेट), भय, शोक, नौकर को क्लेश, विग्रह तथा अनेक अनर्थ होते हैं ।

४. निन्द्यबली सूर्य की दशा का फल - तेज की हीनता, घात, धन का अभाव तथा बंधुओं से झगड़ा होता है ।

सूर्य की दशा के सबंध में आचार्य यादव का मन्तव्य - वर्षकुण्डली में सूर्य उपचयस्थान (३-६-१०-११) में हो तो निन्दित होने पर भी आधा शुभफल देता है । हीनबली होने पर उक्त सूर्य मध्यम फल देता है । मध्यबली होने पर उक्त सूर्य शुभ और अशुभ दोनों प्रकार के फल देता है ।

चंद्र की दशा का फलित

१. पूर्णबली चंद्र की दशा का फल - राजपक्ष से पद की प्राप्ति, राज्य

से लाभ, स्त्री से लाभ, संपत्ति का सुख, स्थान की प्राप्ति तथा मानसिक प्रसन्नता होती है।

२. मध्यबली चंद्र की दशा का फल - व्यापार में सफलता, अपने घर का अच्छा सुख, जाति में प्रधानता तथा ऐश्वर्य (प्रभुता) की प्राप्ति होती है।

३. हीनबली चंद्र की दशा का फल - शरीर में शिथिलता, बड़ी ग्लानि, धन की हानि, सुहृदों की ओर से द्वेष, मित्रों से वैर तथा मानसिक अप्रसन्नता होती है।

४. नष्टबली चंद्र की दशा का फल - तेज की हानि, महाक्लेश, शीतज्वर (जाड़ा-बुखार) की पीड़ा होती है।

यदि चंद्रमा पापग्रह से युक्त होता है तो दुर्दशा होती है।

चंद्र की दशा में आचार्य यादव का मन्तव्य - त्रिकस्थान के अतिरिक्त किसी अन्य स्थान में बैठा चंद्र आधा शुभफल देता है। हीनबली चंद्र, मध्यम फल देता है। शुभग्रह के नवांशका अथवा शुभग्रह से युक्त चंद्र, शुभफल देता है।

मंगल की दशा का फलित

१. पूर्णबली मंगल की दशा का फल- युद्ध में विजय, धनलाभ, कानून विभाग, पुलिस विभाग अथवा सेना विभाग में किसी अच्छे पद की प्राप्ति होती है।

२. मध्यबली मंगल की दशा का फल - तेजस्विता, युद्ध में जय, राजशासन में अधिकार की प्राप्ति या राजपक्ष से मान होता है।

३. हीनबली मंगल की दशा का फल - विवाद, विग्रह, युद्ध, संकट तथा महाभय होता है।

४. नष्टबली मंगल की दशा का फल - विवाद, विग्रह, युद्ध, संकट तथा महाभय होता है।

आचार्य यादव का मन्तव्य - यदि नष्टबली मंगल, तीसरे छठे या ग्यारहवें स्थान होता है तो आधा शुभफल देता है। उक्त मंगल हीनबली हो तो मध्यमें शुभफल देता है। मध्यबली मंगल, उक्तस्थान में बैठने पर शुभफल देता है। उक्त स्थान में बैठा पूर्णबली मंगल अत्यन्त शुभफल देता है।

बुध की दशा का फलित

१. पूर्णबली बुध की दशा का फलित - सेवा के द्वारा सुख, संपत्ति, धनलाभ, कीर्ति (बड़ाई), अपनी बुद्धि के द्वारा राजपक्ष से लाभ होता है।

२. मध्यबली बुध की दशा का फल - धर्म संबंधी कार्य, अच्छे काम से लाभ, उन्नति, पढने-लिखने के कार्य से लाभ होता है।

३. हीनबली बुध की दशा का फल - मानहानि, बड़ाकष्ट, धनहानि,

भय, घर में कलह तथा अकीर्ति होती है ।

४. नष्टबली बुध की दशा का फल - देश-देशान्तर में घूमना, शरीर में घात, बंधु हानि, कुल में हानि, अपनी बुद्धि के दोष से बंधन का भय होता है ।

आचार्य यादव का मत - त्रिकस्थान के अतिरिक्त किसी अन्यस्थान में बैठा बुध भी आधा अशुभ फल देता है । उक्त स्थान में बैठा हीनबली बुध मध्यबली जैसा फल देता है । उक्त स्थान में बैठा मध्यबली बुध शुभ फल देता है । उक्त स्थान में बैठा पूर्णबली बुध अत्यन्त शुभफल देता है ।

गुरु की दशा का फलित

१. पूर्णबली गुरु की दशा का फल - मण्डल (दशमील का एक योजन होता है और चार सौ योजन का एक मंडल होता है) में प्रभुत्व की प्राप्ति, तेज की वृद्धि, राजपक्ष से अधिकार की प्राप्ति, आरोग्य, ऐश्वर्य तथा धन लाभ होता है ।

२. मध्यबली गुरु की दशा का फल - विज्ञान (सायंस) तथा अन्यशास्त्र की प्राप्ति, आचार्यत्व की प्राप्ति, राजपक्ष से अधिकार की प्राप्ति तथा सौख्य एवं सब प्रकार का सुख होता है ।

३. हीनबली गुरु की दशा का फल - शरीर में रोग, मन में क्लेश, धनका प्रभाव, धर्म की हानि, शत्रु से पराजय तथा भय होता है ।

४. नष्टबली गुरु की दशा का फल - धनहानि, स्थान हानि, आधि (मानसी पीड़ा) व्याधि (शारीरिक कष्ट) तथा दन्त संबंधी रोग होता है ।

गुरु की दशा के संबंध में आचार्य नारायण का मन्तव्य - यदि वर्षकुण्डली में गुरु, त्रिकस्थान के अतिरिक्त किसी अन्यस्थान में बैठता हो तो नष्टबली होने पर आधा शुभफल देता है । उक्त स्थान में बैठा गुरु हीनबली होने पर भी मध्यबली का फल देता है । उक्त स्थान में बैठा गुरु मध्यबली होने पर भी शुभफल देता है । उक्त स्थान में बैठा पूर्णबली गुरु अत्यन्त शुभ फल देता है ।

शुक्र की दशा का फलित

१. पूर्णबली शुक्र की दशा का फल - स्त्री-पुत्र तथा मित्र संबंधी सौख्य, भोगों का भोग तथा राजसंबंधी ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है ।

२. मध्यबली शुक्र की दशा का फल - शास्त्रों के ज्ञान की प्राप्ति, शासन (हुकूमत) संबंधी पद की प्राप्ति तथा अपने पक्ष से अच्छा लाभ होता है ।

३. हीनबली शुक्र की दशा का फल - निष्फल यात्रा, सेवा तथा स्त्री संबंधी क्लेश होता है ।

४. नष्टबली शुक्र की दशा का फल - पुत्रसंबंधी क्लेश, स्थान का छुटना, मार्ग में मृत्युतुल्य कष्ट तथा धन हानि होती है ।

आचार्य नारायण का मत - वर्षकुण्डली में त्रिकस्थान के अतिरिक्त किसी

अन्य स्थान में स्थित शुक्र नष्टबली होने पर भी आधा फल शुभ देता है । उक्त स्थान में बैठा हीनबली शुक्र मध्यबली होने के समान फल देता है । उक्त थान में स्थित मध्यबली शुक्र पूर्णबली के समान फल देता है । उक्त स्थान में स्थित पूर्णबली अत्यंत शुभफल देता है ।

शनि की दशा का फलित

१. पूर्णबली शनि की दशा का फल - वन-जंगली-प्रदेश का प्रभुत्व तथा भिन्नदेश में अधिकार की प्राप्ति होती है ।

२. मध्यबली शनि की दशा का फल - ऊँट-गधे आदि के द्वारा लाभ, धन की प्राप्ति, दुर्ग (किला) मार्ग आदि के रक्षा संबंधी कार्य की प्राप्ति होती है ।

३. हीनबली शनि की दशा का फल - शारीरिक कष्ट, लड़ाई-झगड़ा, वायु के विकार से मृत्युतुल्य कष्ट होता है ।

४. नष्टबली शनि की दशा का फल - नीच पुरुष की सेवा, घर से उद्विग्नता तथा चोर आदि के द्वारा धन की हानि होती है ।

आचार्य यादव का मत - वर्ष कुण्डली में तीसरे, छठे और ग्यारहवें स्थान में स्थित नष्टबली शनि भी आधा शुभ फल देता है । उक्त स्थान में स्थित मध्यबली शनि शुभ फल ही देता है । उक्त स्थान में स्थित पूर्णबली शनि तो अत्यन्त शुभफल देता है।

नोट - यहाँ ग्रहों की दशा के फलित आचार्य वामन के सिद्धान्तानुसार है । आचाय वामन के मत में ग्रह के बल का विशेष महत्त्व है । आचार्य यादव तथा आचार्य नारायण ग्रह के बल के साथ-साथ स्थान की स्थिति को भी महत्त्व देते हैं । अतः दोनों प्रकार के विचारों पर आधारित फल का निर्णय करना संगत है ।

अन्तर्दशाओं के फलित - प्रत्येक ग्रह की दशा के भोग्य काल के अंदर ही सभी ग्रहों की यथोचित समय की दशाएँ व्यतीत होती हैं, ये ही अन्तर्दशाएँ हैं । दशा की अपेक्षा अन्तर्दशा सूक्ष्म होती है । अन्तर्दशाओं के फल भी पृथक-पृथक हैं । यहाँ क्रम से सूर्य आदि ग्रहों की अन्तर्दशाओं के फलित प्रस्तुत किये जाते हैं ।

सूर्य की अन्तर्दशाओं के फलित

१. सूर्य की दशा में सूर्य की अन्तर्दशा का फल - शरीर संबंधी सौख्य, जय तथा प्रताप की वृद्धि होती है ।

२. सूर्य की दशा में चंद्र की अन्तर्दशा का फल- स्त्रीसंबंधी सौख्य तथा धन का लाभ होता है ।

३.सूर्य की दशामें मंगल की अन्तर्दशा का फल - प्रवाल (मूंगा) आदि का तथा धन का लाभ, जय तथा राजपक्ष से मित्रता होती है ।

४. सूर्य की दशा में बुध की अर्न्तदशा का फल - क्लेश, हानि,

दाद, खाज आदि चर्म रोग होते हैं ।

५. सूर्य की दशा में गुरु की अन्तर्दशा का फल - आरोग्यता, जय तथा राजपक्ष से मान होता है ।

६. सूर्य की दशा में शुक्र की अन्तर्दशा का फल - शूल, दस्त, गले का रुंधना, ज्वर तथा भोग की हानि होती है ।

७. सूर्य की दशा में शनि की अन्तर्दशा का फल - राजपक्ष से पीड़ा, पराजय, संताप तथा दीनता होती है ।

नोट - अब आगे से ग्रहों के सांकेतिक नाम (ग्रह के नाम का एक पहिला अक्षर) लिखे जावेंगें जिनमें पहिला दशाका और दूसरा अन्तर्दशा का ग्रह है और उसके आगे फल है ।

चंद्र की अन्तर्दशा का फलित

१. चं. सू. - आरोग्य, पराक्रम तथा राजपक्ष से लाभ होता है ।

२. चं. मं. - पित्त तथा रक्त संबंधी कष्ट, अग्नि का भय, बालों का झड़ना तथा धन हानि होती हैं ।

३. चं. बु. - धनका लाभ तथा अनेक प्रकार के सुख होते हैं ।

४. चं. वृ. - धन का लाभ, सवारी संबंधी सुख, वस्त्र, आभूषण आदि का सौख्य होता है ।

५. चं. शु. - स्त्री संबंधी सौख्य, वस्त्राभरण सौख्य तथा लाभ होता है ।

६. चं. श. - रोग, स्वजनों से अवज्ञा, वियोग, निवास स्थान संबंधी भय होता है ।

मंगल की अन्तर्दशा का फलित

१. मं. सू. - धन लाभ, शत्रुपर जय, राजपक्ष आदि से मान होता है ।

२. मं. चं.- कान्ति, मान, विजय, आभूषण की प्राप्ति, चांदी धातु संबंधी लाभ, स्त्रीसंबंधी सौख्य होता है ।

३. मं. बु.- बुद्धि में भ्रम, भय, शरीर में रोग तथा कष्ट होता है ।

४. मं. वृ.- पुण्यकार्य, वस्त्र-सुवर्ण संबंधी सौख्य, पुत्रसौख्य, धनलाभ तथा मान होता है ।

५. मं. शु.- स्त्री आदि से संबंधित दुख तथा साधुजनों में अरुचि होती है।

६. मं. श.- विदेशगमन तथा कष्ट की प्राप्ति होती है ।

बुध की अन्तर्दशा का फलित

१. बु. सू.- राजपक्ष आदि से भय तथा पित्त आदि का रोग होता है ।

२. बु. चं.- स्त्री संबंधी सौख्य, स्वशरीर में कृशता, धन का व्यय तथा

दुर्नीति होती है ।

३. बु. मं.- शस्त्र तथा अग्नि का भय, रुधिर संबंधी कष्ट, धन का व्यय तथा भय होता है ।

४. बु. वृ.- भगवद् भक्ति, सन्तों का समागम तथा किसी प्रकार का भय होता है ।

५. बु. शु. - वस्त्राभूषण-स्त्री आदि से संबंधित सौख्य तथा लाभ होता है।

६. बु. शु.- निम्न श्रेणी के व्यक्ति से क्लेश, अन्यदेश में वास तथा सन्तान संबंधी कष्ट होता है ।

गुरु की अन्तर्दशा का फलित

१. गु. सू.- राजपक्ष का प्रेम, जय तथा राजपक्ष से लाभ होता है ।

२. गु. चं. - देव ब्राह्मण भक्ति, जय, स्त्री-पुत्र तथा मित्र संबंधी सौख्य होता है।

३. गु. मं. - आरोग्य, धनलाभ, जय, सेना में अधिकारी पद की प्राप्ति की संभावना होती है ।

४. गु. बु.- आलस्य, शरीर में शिथिलता, बुद्धि की मंदता तथा धन की हानि होती है ।

५. गु. शु.- स्त्री-पुत्र-मित्र आदि से संबंधित दुख तथा सज्जनों से विवाद होता है ।

६. गु. श. - निम्न श्रेणी के लोगों से संगति, विवाद तथा व्यसन के द्वारा धनहानि होती है ।

शुक्र की अन्तर्दशा का फलित

१. शु. सू. - पित्तादि से संबंधित पीड़ा, राजपक्ष से मान तथा सौख्य होता है।

२. शु. चं.- स्त्री से वियोग तथा शरीर में कृशता होती है ।

३. शु. मं.- शोक, रोग, भय, पराजय, क्रोध तथा हानि होती है ।

४. शु. बु.- मान, सद्बुद्धि, धनसंचय तथा स्त्रीसंबंधी सौख्य होता है ।

५. शु. वृ.- पुत्र से तथा सज्जनों से विरोध, धन की हानि होती है ।

६. शु. श. - भूमि आदि से संबंधित लाभ तथा राजपक्ष से मान होता है ।

शनि की अन्तर्दशा का फलित

१. श. सू.- रोग, धनसंबंधी क्लेश तथा विदेशगमन होता है ।

२. श. चं. - स्त्री को कष्ट, धन की हानि तथा शत्रु से पराभव होता है ।

३. श. मं.- रुधिर संबंधी रोग, धन की हानि, दुर्नीति तथा विदेशगमन

होता है।

४. श. बु. - बुद्धि की वृद्धि, धनलाभ, सुख तथा जमा किये गये धन से सौख्य होता है।

५. श. वृ. - सज्जनों से मान की इच्छा, नीच जनों की संगति, मलिनता तथा धर्म की अरुचि होती है।

६. श. शु.- स्त्री संबंधी सौख्य, लाभ, विजय तथा राजपक्ष से मान होता है।

लग्न की दशा का फलित

विवरण - हीनांश-पात्यांश दशा में लग्न की दशा भी होती है। लग्न की दशा को अंगदशा भी कहते हैं। दशा के दो भेद हैं। १. चरदशा। २. स्थिरदशा। उक्त दशा चर दशा है, शेष मुद्दा कुछ आदि दशाएँ स्थिर दशा हैं। हायनोत्तम ग्रन्थ में राशि तथा द्रेष्काण के आधार पर लग्न की दशा का फल वर्णित है। आचार्य हिल्लाज ने बलके अनुसार लग्नदशा के फल का वर्णन किया है। यहाँ दोनों प्रकार के फल प्रस्तुत किये जाते हैं।

१. चरराशि के प्रथम द्रेष्काण की लग्न की दशा का फल शुभ है और द्वितीय द्रेष्काण की लग्नदशा का फल मध्यम है तथा तृतीय द्रेष्काण की लग्नदशा का फल अशुभ होता है।

२. स्थिर राशि के प्रथम द्रेष्काण की लग्न की दशा का फल अशुभ होता है। द्वितीय द्रेष्काण की लग्न दशा का फल शुभ है। तृतीय द्रेष्काण की लग्नदशा का फल मध्यम है।

३. द्वि:स्वभाव राशि के प्रथम द्रेष्काण की लग्न की दशा का फल अशुभ है। द्वितीय द्रेष्काण की लग्नदशा का फल मध्यम है। तृतीय द्रेष्काण की लग्नदशा का फल शुभ है।

नोट - लग्नदशा के पूर्वोक्त तीनों भेदों में लग्नेश ग्रह के फल का मिलान कर लेना चाहिए।

१. पूर्णबली लग्न की दशा का फल - सोना-मोती आदि द्रव्य का लाभ, आरोग्य तथा अपने स्वामी से अथवा राजपक्ष से मान होता है।

२. मध्यबली लग्न की दशा का फल - कष्ट से धन लाभ, निम्न श्रेणी के व्यक्ति से मैत्री तथा सेवा, मानसिक क्लेश होता है।

३. नष्टबली लग्न की दशा का फल - परदेशगमन क्लेश, बुद्धिहीनता, कलह, व्यथा तथा हानि होती है।

४. क्रूरलग्न की दशा में थोड़ा सुख, धन का खर्च, शरीरकष्ट तथा मामा के पक्ष को कष्ट होता है। यदि क्रूरलग्न अपने स्वामी से, स्वामी के मित्रग्रह से तथा शुभग्रहों से दृष्ट होती है तो उक्त अशुभफल मध्यम हो जाता है।

लग्न की अन्तर्दशा का फल

आचार्य वामन का मन्तव्य है - 'लग्नान्तर्दशिका फलं स्वपतिजं वाच्यं स्वबुद्ध्या सदा, अर्थात् लग्न का स्वामी जो ग्रह है, उसके अनुसार बुद्धिपूर्वक अन्तर्दशा का फल कहना उचित है। भाव यह है कि लग्नेश ग्रह की अन्तर्दशा से दृष्ट होती है तो उक्त अशुभफल मध्यम हो जाता है।

१. सूर्य की दशा का फल- राजपक्ष से भय, शरीर में पित्त संबंधी पीड़ा, बंधुओं की विपत्ति तथा धन का खर्च होता है।

२. चंद्र की दशा का फल - स्त्री-पुत्र संबंधी सौख्य, भूमि संबंधी लाभ, वस्त्र-भूषण सौख्य, कन्या का जन्म, निद्रा (नींद) का सुख तथा रति (विषय-भोग) सुख होता है।

३. मंगल की दशा का फल - शत्रु से क्लेश, बंधुओं से विवाद, रक्त-पित्त संबंधी पीड़ा, परस्त्रीसंपर्क की संभावना होती है।

४. बुध की दशा का फल - बंधुओं से समागम, मित्र से मिलन, धर्म संबंधी कार्य, लोगों से प्रेम तथा शरीर में त्रिदोषज (सान्निपातिक या सरसामी) पीड़ा होती है।

५. गुरु की दशा का फल - मान-धन की प्राप्ति, देव-ब्राह्मण का पूजन, कान की बीमारी, वैर तथा स्वजनों से विरोध होता है।

६. शुक्र की दशा का फल - स्त्रीसंबंधी सौख्य, वस्त्राभूषण संबंधी सौख्य, कुलीनता, कीर्ति तथा धन लाभ होता है।

७. शनि की दशा का फल - शरीर कष्ट, स्त्री-सन्तान से विवाद, तंद्रा (असावधानता), श्रम, बुद्धि हीनता तथा परदेश गमन होता है।

८. राहु की दशा का फल - स्वशरीर में पीड़ा, बंधु को कष्ट, परदेश गमन, धन की हानि तथा शत्रु से विरोध होता है।

९. केतु की दशा का फल - बाद (झगड़ा), धन की हानि, सन्तान की हानि, दुख, शत्रु से भय राजपक्ष से भय तथा बहुधा अनर्थ होते हैं।

ग्रहों की अन्तर्दशाओं के फलित - सूर्य आदि ग्रहों की अन्तर्दशाओं के फल प्रस्तुत किये जाते हैं। ग्रहों के सांकेतिक नाम दिये जायेंगें। पहिला सांकेतिक ग्रह नाम दशा का है और दूसरा नाम अन्तर्दशा का है।

सूर्य की दशामें ग्रहों की अन्तर्दशा का फल

१. सू. चं.- आरोग्य, धन-संपत्ति तथा शत्रु परास्त होता है।

२. सू. मं.- उत्तम विजय, सुवर्ण-रत्न का लाभ तथा राजपक्ष से सौख्य होता है।

३. सू. बु.- शत्रुपक्ष से भय, खाज-खुजली आदि चर्म रोग होते हैं।

४. सू. वृ.- पाप-ताप-व्यसन और रोग से छुटकारा, अनेक प्रकार के विलास तथा धर्म में रुचि होती है।

५. सू. शुं.- माता-पिता से संबंधित भय, धन का व्यय, पित्त ज्वर आदि रोगों की पीड़ा तथा मृत्यु की संभावना होती है।

६. सू. श.- शत्रु की वृद्धि, धन का व्यय, राजपक्ष से भय तथा दीनता होती है।

७. सू. रा.- परदेशगमन तथा धनव्यय होता है।

८. सू. के.- शत्रुभय, राजपक्ष से भय, अनर्थ होता है।

चंद्र की दशा में अन्तर्दशा का फल

१. चं. सू. - आरोग्य, विजय तथा संपत्ति लाभ होता है।

२. च. मं. - रक्त-पित्त आदि रोग, चौर आदि से धन हानि होती है।

३. चं. बु. - धनलाभ, सवारीसंबंधी सौख्य तथा सुख होता है।

४. चं. वृ. - सवारी संबंधी सौख्य, वस्त्र-अलंकार आदि की प्राप्ति, धनलाभ तथा सुख प्राप्त होता है।

५. चं. शु.- आभूषण का सौख्य, अच्छी संगति, सुख तथा स्त्रीसंबंधी सौख्य होता है।

६. चं. श.- रोग, शोक, व्यसन तथा बंधुओं से पराभव होता है।

७. चं. रा. - भय, शोक, धनहानि तथा बंधु संबंधी उद्वेग होता है।

८. चं. के. - स्त्री संबंधी लाभ तथा हानि, दोनों ही होती हैं।

मंगल की दशा में अन्तर्दशा का फल

१. मं. सू. - प्रचण्डता, साहस तथा पराक्रम होता है।

२. मं. चं. - सुख, सुहृदों की वृद्धि, मणि-मोती का लाभ होता है।

३. मं. बु. - पित्त संबंधी पीडा, शत्रु से अधिक भय तथा धनहानि होती है।

४. मं. वृ. - राजपक्ष से प्रेम तथा सुहृदों से प्रेम की वृद्धि होती है।

५. मं. शु. - भय, रोग,व्यसन तथा धनहानि होती है।

६. मं. श. - प्रतिदिन दुख मिलता तथा असह्य विपत्ति का सामना होता है।

७. मं. रा.- काम में विगाड़, धनहानि, बंधु तथा चोर आदि से भय एवं उद्वेग होता है।

८. म. के. - शरीर पीड़ा तथा धन हानि होती है।

बुध की दशा में अन्तर्दशा का फल

१. बु. सू. - वस्त्र-आभूषण का सौख्य तथा सवारी संबंधी सुख होता है।

२. बु. चं. - खाज-खुजली आदि चर्मरोग तथा राजरोग का भय होता है।

३. बु. मं. - क्लेश, भय, बंधुओं से वैर तथा शिर में पीड़ा होती है।

४. बु. वृ. - रोग आदि की पीड़ा होती है।

५. बु. शु. - सुगन्धित द्रव्यों का भोग तथा राजपक्ष से मान होता है।

६. बु. शु. - पापकर्म में तथा सुख में आसक्ति, काम की प्रबलता तथा प्रचण्डता होती है।

७. बु. रा.- बंधु संबंधी हानि, धन हानि, मानसिक क्लेश तथा मृत्यु भय होता है।

८. बु. के.- सुहृद-बंधु -पुत्र तथा मित्र से कलह होता है।

गुरु की दशा में अन्तर्दशा का फल

१. गु. सू.- कुशल क्षेत्र तथा सुख होता है।

२. गु. चं. - शत्रु परास्त तथा अनेक प्रकार का लाभ होता है।

३. गु. मं.- प्रचण्डता, प्रताप, शूरता तथा सुख होता है।

४. गु. बु.- आरोग्य, सौख्य, माता-पिता की भक्ति तथा सुहृदों से मिलन होता है।

५. गु. शु.- मानसिक चिन्ता तथा शत्रु की एवं उच्चजाति की अधीनता में रहने की संभावना होती है।

६. गु. श.- धन तथा सुख की हानि और परस्त्री में आसक्ति होती है।

७. गु. रा.- बंधु से द्वेष, झूठी निन्दा, अपने अध्यक्ष के द्वारा आश्रय हीनता होती है।

८. गु. के.- स्त्री के साथ विवाद की संभावना होती है।

शुक्र की दशा में अन्तर्दशा का फलित

१. शु. सू.- बंधन का भय तथा पेट की बीमारी होती है।

२. शु. चं.- कामला (कोलवाय या परकान) रोग तथा शिर-दाँत और नाखूनों में विकार होता है।

३. शु. मं.- भूमि संबंधी हानि, पित्त संबंधी पीड़ा, रुधिर का गिरना तथा उपद्रव होता है।

४. शु. बु.- अभीष्ट की पूर्ति, भूमि संबंधी लाभ, धनलाभ तथा सौख्य होता है।

५. शु. वृ.- सुख लाभ, शील तथा धर्म की वृद्धि, संपत्ति लाभ होता है।

६. शु. श.- वृद्धावस्था की स्त्री से रति की संभावना, शत्रु संबंधी तथा

सौम्य पुरुष संबंधी अधिकारिता होती है ।

७. शु. रा. - भय, शोक, दुख तथा मृत्यु की संभावना होती है ।

८. शु. के. - अग्नि से भय, तीव्रज्वर, दाह (जलन), कन्या का जन्म तथा स्त्रीसंबंधी हानि होती है ।

शनि की दशा में अन्तर्दशा का फलित

१. श० सू० - स्त्री-पुत्र-मित्र तथा धनसंबंधी हानि होती है ।

२. श० चं० - स्त्री को तथा अपने को मृत्यु तुल्य कष्ट, बंधुवियोग की संभावना तथा कलह होता है ।

३. श० मं० - दुख, रोग, देश का छोड़ना तथा ईर्ष्या होती है ।

४. श० बु० - सुख, सौभाग्य, सत्कार, जय तथा धनलाभ होता है ।

५. श० वृ० - अच्छा सुख, पुर या ग्राम अथवा जनसमाज में प्रधानता होती है।

६. श० शु० - यश, मित्र से मिलन, स्त्री संबंधी सौख्य तथा धनलाभ होता है।

७. श० रा० - भय, बंधुओं से उद्वेग, ज्यादा दुख तथा धनहानि होती है।

८. श० के० - अग्नि से भय, दाह (जलन) तीव्र ज्वर, स्त्री संबंधी सौख्य तथा कन्या का जन्म होता है ।

राहु की दशा में अन्तर्दशा का फलित

१. रा० सू० - स्त्री के लिए विपत्ति तथा बांधव संबंधी हानि, थोड़ी प्रतिष्ठा, परदेशगमन तथा धन हानि, दुर्वचनों के कारण क्लेश, रोग भय तथा संतान संबंधी हानि होती है ।

२. रा० चं० - भय, शोक, बंधु से उद्वेग, अग्नि भय तथा धन हानि होती है।

३. रा० मं० - इच्छा का विघात, धन हानि, बंधु से उद्वेग, चोर आदि का भय होता है ।

४. रा० बु० - बंधु संबन्धी हानि, मानसिक संताप, स्थान का छोड़ना, धन की हानि तथा अनेक प्रकार का दुख होता है ।

५. रा० वृ० - बंधु से द्वेष, झूठा अपवाद तथा आश्रय हीनता होती है ।

६. रा० शु० - महादुख, महाहानि, बंधु से द्वेष, धनहानि तथा शरीरकष्ट होता है ।

७. रा० श० - मृत्यु भय, शोक, तथा दुख की प्राप्ति होती है ।

नोट - शनि के समान ही केतु का भी फल है ।

केतु की दशा में अन्तर्दशा का फलित

१. के० सू० - अग्निभय, दाह, घोरज्वर, कन्या का जन्म, स्त्रीसंबंधी हानि तथा राजपक्ष से विवाद होता है ।

२. के० चं० - दो प्रकार का फल होता है । सुख और दुख, धन का लाभ और धन की हानि भी तथा स्त्रीसंबन्धी लाभ और स्त्री संबंधी हानि भी होती है ।

३. के० मं० - अग्नि-चोर तथा शत्रुसंबंधी भय, संतान से विवाद, धनहानि तथा शरीर में पीड़ा होती है ।

४. के० बु० - चोर या शत्रु से युद्ध, स्थान का छोड़ना, तीव्रज्वर की पीड़ा तथा शरीर में कष्ट होता है ।

५. के० वृ० - राजमान्य व्यक्तियों से तथा श्रेष्ठ ब्राह्मणों से सत्संग तथा पुत्रजन्म संबंधी सौख्य होता है ।

६. के. शु. - उत्तम पुरुषों से कलह, वायु-पित्त संबंधी पीड़ा, परिवार के लोगों से विवाद होता है ।

७. के० श० -परदेश गमन तथा दुख होता है ।

८. के० रा० - सुहृद्-बंधु तथा संतान से कलह, भूमि के संबंधी में झगड़ा तथा प्रियजनों से विवाद होता है ।

नोट - प्रत्येक ग्रह अपनी दशा की अन्तर्दशा में अपना फल देता है तथा उस ग्रह की दशामें जिस ग्रह की अन्तर्दशा होगी वह ग्रह अपना फल देगा । उदाहरणार्थ जैसे, सूर्य की दशा है, उसमें सूर्य के अन्तर में सूर्य अपना फल देगा, सूर्य की दशा में जब चंद्र की अन्तर्दशा आयेगी तब उसमें चंद्रमा अपना फल देगा । इस प्रकार सर्वत्र जानना।

वर्षेश की दशा के संबंध में विचार - आचार्य तेजसिंह का सिद्धान्त है कि, वर्ष में सभी दशाएँ वर्षेश की हैं । वर्षेश के बल तथा अबल के अनुसार ही शुभ तथा अशुभ फल निश्चित करना ।

वर्षेश के अतिरिक्त अन्य ग्रह अपनी-अपनी अन्तर्दशा में अपना-अपना फल देता है ।

ज्यौतिष के कतिपय आचार्यों का सिद्धान्त है-

वर्षस्वामिदशान्तरे निजफलं ताभ्योऽपि सूक्ष्मदशा ।

वर्षेश अपनी दशा के अन्तर में अपना फल देता है, अन्तर्दशा से भी सूक्ष्म (बारीक) प्रत्यन्तर्दशा है ।

वर्षेश जिस ग्रह के साथ इत्थशाल करता है, उसी का फल पूर्ण होता है ।

वर्षेश के फल के समान ही अन्य ग्रहों की दशाओं के फल हैं । आचार्य तेजसिंह का सिद्धान्त है -

वर्षेश्वरत्वविषये द्युसदां यदुक्तं पूर्वैः फलं निजदशासु तदेव चिन्त्यम् ।
श्रेष्ठं च मध्यमहिनं च बलानुसारात् सम्यक् ततो ग्रहबलं प्रथमं विचिन्त्यम् ।।

पूर्वाचार्यों ने वर्षेश के विषय में ग्रहों का जो फल वर्णन किया है उनका वह फल अपनी दशाओं में ही होता है। अत: सबसे प्रथम ग्रह के बल का विचार भली-भाँति करना चाहिए।

नोट - पूर्वोक्त पद्यमें 'हीनम्' के स्थान में छन्दो भंग के भयसे आचार्य तेजसिंह ने 'हिनम्' पाठ पढ़ा है। यह उनकी साहित्यिकी विद्वता का द्योतक है। साहित्य शास्त्र में उल्लेख है -'अपि माषं मषं कुर्याच्छन्दभङ्ग त्यजेद् वच:' अर्थात् छन्दो भंग होता है तो माष के स्थान में मष पढ़ देना चाहिए। इसी ज्ञापक से आचार्य तेजसिंह भी हीनं के स्थान में हिनं पढ़ा है।

दशा के फल के संबंध में महत्त्वपूर्ण समीक्षा - सूर्य की दशा के फल में पूर्व वर्णित है कि 'नृपतित्वं प्रधानत्वं तेजोहस्त्यश्ववाहनम्? अर्थात् नृपतित्व, प्रधानत्व तथा हाथी-घोड़े का वाहन होता है। यह फल पूर्ण बलवान् सूर्य की दशा का है। सूर्य की दशा न आये, ऐसा कोई नियम संभावित नहीं है अर्थात् कभी न कभी आ ही जाती हैं किन्तु तब भी उसे हाथी या घोड़े आदि वाहन की प्राप्ति होती देखने में नहीं आती। इसका क्या कारण है? अत: इस विषय की मीमांसा करने पर यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि जिस व्यक्ति के जन्मकाल में जातक पद्धति के अनुसार सूर्य पूर्णबली है और जन्मकुण्डली में शुभस्थान में स्थित है तो ऐसे उस सूर्य की दशा में हाथी-घोड़ा आदि वाहन की प्राप्ति अवश्यंभावी है। इसके विपरीत जिस व्यक्ति के जन्मकाल में सूर्य हीनबली है और वर्षकाल में सूर्य पूर्ण बली है तो उस व्यक्ति को प्रत्यक्ष में साक्षात् हाथी-घोड़े आदि का लाभ न होकर स्वप्न में हाथी-घोड़े आदि का लाभ होगा। यह तो दिग्दर्शन मात्र है। इसी प्रकार प्रत्यके ग्रह के विषय में पूर्वोक्त विचार लागू है। फलप्राप्ति के संबंध में आचार्य प्रवर वाराहमिहिर का मन्तव्य है-

परिणमति फलोक्तिः स्वप्नचिन्ता स्ववीर्यैः।

जिस ग्रह का जो फल कथन किया गया है, उसका परिणाम तीन प्रकार से होता है, १. स्वप्न में देखने से। २. चिन्ता करने से। ३. उद्योग करने से।

मान लीजिये कि किसी व्यक्ति के वर्ष में वाहन प्राप्ति का सामान्य योग है तो वह व्यक्ति, मोटर-कार लेने की चिन्ता करता है अथवा हल्का-पतला सा उद्योग करता है किन्तु उसे वाहन की प्राप्ति नहीं हुई। वह कभी स्वप्न देखता है कि उसने कार खरीद ली और वह उसमें बैठकर हवाखोरी करने के लिये गया। कुछ देर बाद उसकी आँख खुल गयी। यह उसे वर्ष में जो वाहन प्राप्ति का सामान्य योग था उसके फलस्वरूप स्वप्न में वाहन प्राप्ति जन्मफल मिला। इसी प्रकार ग्रहों के अन्यान्य फलों के संबंध में विवेचनीय है।

वर्ष से संबंधित प्राय: सभी प्रकार के फल ऊहापोह के साथ प्रस्तुत किये गये। अब आगे परिशिष्ट में मास संबंधी तथा दिन संबंधी सभी प्रकार के फलित प्रस्तुत किये जायेगें।

परिशिष्ट

मास संबंधी फलित

विवरण - जन्मकुण्डली जीवनपर्यन्त लागू होती है । वर्ष कुण्डली एक वर्ष पर्यन्त लागू होती है । एक वर्ष में बारह मास होते हैं । अत: बारह मास कुण्डलियाँ बनती हैं । मास कुण्डली एक मासतक फल देती है । एक वर्ष में तीन सौ साठ दिन होते हैं । अत: प्रत्येक दिन के हिसाब से तीन सौ साठ दिन कुण्डलियाँ बनती हैं । दिन कुण्डली का फल एक दिन के लिए लागू होता है ।

श्रीब्रह्मजी के मतानुसार ही आचार्य रोमक ने अपना सिद्धान्त स्थिर किया है, उसका उल्लेख 'बालुबुद्धि प्रकाशिनी' नामक ग्रंथ में है ।

जन्मकुण्डली में लग्नस्थान प्रथम वर्ष है, द्वितीय स्थान द्वितीय वर्ष है, इसी क्रम से बारहवें स्थान तक बारह वर्ष होते हैं । फिर दूसरी आवृत्ति में लग्नस्थान तेरहवाँ वर्ष है। इसी क्रम से बारहवाँ स्थान, चौबीसवाँ वर्ष है । तीसरी आवृत्ति में लग्नस्थान पच्चीसवाँ वर्ष है । इसी प्रकार जितनी आयु हो, वह आयु का वर्ष जन्मकुण्डली के जिस स्थान में आये, उसी स्थान से उक्त वर्ष के शुभ-अशुभ फल का विचार करना । उस वर्ष के स्थान को प्रथम मास मानना, उससे आगे के भाव को दूसरा मास मानना, इसी क्रम बारहवें स्थान को बारहवाँ मास मानना । इस क्रम से एक वर्ष का तथा उस वर्ष के बारह महीनों का विचार करना ।

नोट- इस संबंध में विशेष विचार जानना हो तो लेखक का 'श्री सुदर्शनचक्र विज्ञान' देखिये ।

वर्ष कुण्डली में लग्नस्थान प्रथम मास, द्वितीय भाव द्वितीय मास है, इस क्रम से बारह भाव तक बारह मास हैं । प्रत्येक मास के भाव से मास कुण्डली बनाकर उससे उस मास का फल जानना । एक मास में तीस दिन होते हैं प्रथम मास के भाव को मास का प्रथम दिन मानना । इसी प्रकार अगले-अगले भाव को अगला-अगला दिन मान कर तीस दिन कुण्डलियाँ बनानी । तदनन्तर उनके द्वारा प्रत्येक दिन का शुभ-अशुभ फल जानना।

रोमकाचार्यमत है कि यदि पूर्वोक्त क्रमसे मास-दिन संबंधी फल घटित न होता हो तो यह क्रम प्रयोग में लाना-

कुण्डली में जिस स्थान में गुरु स्थित हो, उसे प्रथम वर्ष मानना । जिस भाव में सूर्य बैठा हो उसे प्रथम मास मानना । जिस भाव में चंद्र स्थित हो उसे प्रथम दिन मानना। इस क्रम से आगे-आगे मास तथा दिनों की भावों पर गणना करते हुए अभीष्ट मास तथा दिन की कुण्डली बनाकर उसी से शुभाशुभ फल का विचार करना ।

ताजिक सुधानिधि का सिद्धान्त - वर्ष में जिस-जिस समय मास का प्रवेश हो उस समय को इष्टकाल मानकर उसके आधारपर ग्रह स्पष्ट, भाव स्पष्ट तथा वृहत् पंचवर्गी बल आदि का साधन करना । तदनन्तर वर्षेश के समान ही मासेश का निश्चय करना ।

मासेश के निर्णय का क्रम - १. जन्मलग्नेश । २. वर्ष लग्नेश । ३. मास लग्नेश । ४. मासकाल का मुन्थेश । ५. त्रिराशिपति । ६. (क) दिन में मास प्रवेश में सूर्य की राशि का पति । (ख) रात्रि में मास प्रवेश में चन्द्रमा की राशि का पति ।

इन छः अधिकारियों में जो ग्रह सबसे अधिक बलवान् हो तथा मास लग्न को देखता हो वही मासेश होता है ।

मतभेद - १. वर्षतंत्र का सिद्धान्त है कि मास प्रवेश काल की लग्न का स्वामी मासेश होता है । २. ताजिकभूषण का सिद्धान्त है कि मास प्रवेश काल की लग्न का नवांशपति तथा लग्नेश की राशि का नवांश पति, इन दोनों में जो भी बलवान् होता है वही मासेश या मासपति होता है ।

समीक्षा - वर्षतंत्र के सिद्धान्त की अपेक्षा ताजिकसुधानिधि का सिद्धान्त बलिष्ठ प्रतीत होता है और उसकी अपेक्षा ताजिकभूषण का सिद्धान्त बलिष्ठ प्रतीत होता है ।

कसौटी - तीनों क्रमों के मासेशों में जिसका फलित अधिकांश में घटित हो वही निभ्रान्त मासेश है ।

मासेश के फलित

आचार्य नारायण भट्ट के मन्तव्य के अनुसार मासेश के फल प्रस्तुत किये जाते हैं । मासेश का फल भी बल पर ही आधारित है ।

मासेश सूर्य का फलित -

१. (क) पूर्णबली मासेश सूर्य का फल - निजकुलोचित स्थिति प्रतिष्ठा तथा धन लाभ, कीर्ति, भूमिसंबंधी लाभ, मित्र से मिलन, सवारी का सुख, चातुर्य तथा सुख होता है ।

(ख) मध्यबली मासेश सूर्य का फल - सामान्य यश, अप्रिय बात का होना तथा स्थान का छोड़ना होता है ।

(ग) नष्टबली मासेश सूर्य का फल - निम्न श्रेणी के व्यक्तियों से अपमान तथा स्थान का छोड़ना होता है ।

मासेश चंद्र का फलित

२. (क) पूर्णबली मासेश चंद्र का फल -सुंदर भोजन, स्त्री संबंधी सौख्य, वस्त्र संबंधी सौख्य, शरीर सौख्य, अनेक प्रकार का लाभ, यश तथा राजपक्ष से मान होता है ।

(ख) मध्यबली मासेश चंद्र का फल - पूर्वोक्त फलों का कमी के साथ होना तथा शरीर में कृशता होती है ।

(ग) नष्टबली या दग्ध मासेश चंद्र का फल - दुख, भय, माता-पिता तथा स्त्री से संबधित कष्ट और धन का व्यय होता है ।

मासेश मंगल का फलित

३. (क) पूर्णबली मासेश मंगल का फल - चोर तथा शत्रु से भय, स्त्री-पुत्र से विवाद, पृथ्वी से संबंधित कलह, राजपक्ष से तथा सेनापति से विवाद, युद्ध में जीत, धन लाभ तथा प्रियवस्तु की प्राप्ति होती है ।

(ख) मध्यबली मासेश मंगल का फल - शुभफल सामान्य रूप से होता है ।

(ग) नष्टबली मासेश मंगल का फल - कमर, जंघा से आदि में दाद, रुधिर विकार, राजपक्ष से भय, चोरभय तथा दुख होता है ।

मासेश बुध का फलित

४. (क) पूर्णबली मासेश बुधका फल - अच्छी बुद्धि, विद्या-कला में निपुणता, विद्वान् से शास्त्रार्थ में जय, नीति, राजपक्ष से मान तथा प्रधानता होती है ।

(ख) मध्यबली मासेश बुध का फल - पूर्वोक्त फल सामान्यता से होता है; विद्या आदि की निपुणता में सामान्य रुचि होती है ।

(ग) नष्टवली मासेश बुध का फल - मानहानि, दुख, स्त्री-पुत्र संबंधी हानि होती है ।

मासेश गुरु का फलित

५. (क) पूर्णबली मासेश गुरु का फल - स्त्री-पुत्र-मित्र संबंधी सौख्य, धर्मकार्य, जनसमाज में मान, प्रधानता, बुद्धि के द्वारा सफलता, धन का अच्छा लाभ होता है ।

(ख) मध्यबली मासेश गुरु का फल - पूर्वोक्त फल सामान्य भाव से होते हैं ।

(ग) नष्टबली मासेश गुरु का फल - शिर और कानों में पीड़ा, भ्रम, व्याकुलता, अपवाद, सज्जनों से द्वेष तथा धन की हानि होती है ।

मासेश शुक्र का फलित

६.(क) पूर्णबली मासेश शुक्र का फल - स्त्री-पुत्र-मित्र संबंधी सौख्य, वस्त्र सुख, वाहन सुख, मिष्ठान्न भोजन, सुनीति, राजपक्ष से सौख्य होता है ।

(ख) मध्यबली मासेश शुक्र का फल - पूर्वोक्त फल सामान्यतया होते हैं।

(ग) नष्टबली मासेश शुक्र का फल - पत्नी को मृत्यु तुल्य कष्ट, पुत्र को कष्ट, स्वशरीर में कष्ट, बुद्धि में भ्रम तथा धनहानि होती है ।

मासेश शनि का फलित

७. (क) पूर्णबली मासेश शनि का फल - गाय-भैंस-हाथी-घोड़ा-भूमि-तिल-तथा अन्न आदि के द्वारा लाभ, वृक्ष लगाना आदि, यवन जाति के अधिकारी के द्वारा उन्नति तथा सौख्य होता है ।

(ख) मध्यबली मासेश शनि का फल - पूर्वोक्त फल सामान्यतया से होते हैं ।

(ग) नष्टबली मासेश शनि का फल - विवाद, कलह, पीड़ा, बंधन का भय, स्थान का छोड़ना तथा धनहानि होती है ।

भावगत मासेश के फलित

१. प्रथम भाव (लग्न) में स्थित मासेश का फल - बुद्धि का प्रकाश, देव-ब्राह्मण का सत्कार, शरीर सौख्य, संपन्नता तथा लाभ होता है ।

२. द्वितीय स्थान में स्थित मासेश का फल - कुटुम्ब सौख्य, धन का संचय, अनेक प्रकार की वस्तुओं का सौख्य, ज्ञान की वृद्धि, प्रतिष्ठा तथा राज्य के अधिकारियों से मिलन-मैत्री होती है ।

३. तृतीय भाव में स्थित मासेश का फल - उद्योग के द्वारा प्राप्त धन आदि का सौख्य, बंधु सौख्य, प्रसिद्धि, मानवृद्धि, भाग्यवृद्धि तथा कार्य में सफलता होती है ।

४. चतुर्थ स्थान में स्थित मासेश का फल - खेत-जमीन का सौख्य, माता तथा बंधुओं का सुख, चौपाये पशु का सुख, राजपक्ष से प्रसन्नता तथा कार्य की सिद्धि होती है ।

५. पंचम भाव में स्थित मासेश का फल - संतान संबंधी सौख्य, बुद्धि के द्वारा सौख्य प्राप्ति, अनेक प्रकार से धनलाभ तथा अनेक सुख होते हैं ।

६. षष्ठस्थान में स्थित मासेश का फल - शत्रु की उत्पत्ति, प्रवाद, मानहानि, मानसिक क्लेश, स्वजनों से विरोध तथा धनव्यय होता है ।

७. सप्तम भाव में स्थित मासेश का फल - अंगों में वायु की पीड़ा, परदेशगमन, मानसिक प्रसन्नता, देव-द्विज भक्ति, मान्य जनों का आदर तथा सन्मान होता है ।

८. अष्टम स्थान में स्थित मासेश का फल - अनेक प्रकार के रोग-दुख, खाज-खुजली-दाद के विकार, शरीर में कृशता, राजपक्ष से भय तथा मानहानि होती है।

९. नवम भाव में स्थित मासेश का फल - धर्म में रुचि, द्विज-देव भक्ति, तीर्थ यात्रा, बंधुओं का सुख तथा पराक्रम की वृद्धि होती है ।

१०. दशम स्थान में स्थित मासेश का फल - राजपक्ष से मान तथा गौरव, अनेक प्रकार के सौख्य, आरोग्य तथा सुख की वृद्धि होती है ।

११. एकादश भाव में स्थित मासेश का फल - अनेक प्रकार से धनलाभ, अच्छा भोजन, राजपक्ष से मान-सौख्य, उद्योग तथा सन्तान संबंधी सौख्य होता है।

१२. द्वादश भाव में स्थित मासेश का फल - व्यवहार में सत्यता, धर्म

में व्यय, शरीर में कृशता, थोड़ा सुख तथा शत्रु की उत्पत्ति से मानसिक क्लेश होता है।

नोट - मासेश स्वराशि, मूलत्रिकोण राशि या उच्चराशि में हो, मित्र ग्रह तथा शुभग्रह से युक्त और दृष्ट हो तो अशुभ स्थान में स्थित होने के फल को न देकर सुख तथा धन देता है ।

मासकुण्डली में भावगत मुन्था के फलित

१. लग्न में स्थित मुंथा का फल - शरीर सुख, पुष्टि, आरोग्यता, मन में हर्ष, राजपक्ष से सौख्य, प्रताप की वृद्धि तथा शत्रु परास्त होता है ।

२. द्वितीय भाव में स्थित मुंथा का फल - मिष्ठान्न भोजन, उद्योग के द्वारा कार्य की सिद्धि, धन आदि की वृद्धि, अपने वर्ग से संतोष तथा इष्टवर्ग से मान और सफलता होती है ।

३. तृतीय स्थान में मुंथा का फल - उद्योग और कार्य की वृद्धि, आरंभ किये गये कार्य में सफलता, बंधु सौख्य, सबके उपकार की भावना, मित्रों की अधिकता तथा राजपक्ष से प्रसन्नता होती है ।

४. चतुर्थ भाव में स्थित मुंथा का फल - रोग की वृद्धि, शरीर में पीड़ा, शरीर में दुर्बलता, शत्रुओं का भय, दुख की वृद्धि तथा गुप्त चिन्ता होती है ।

५. पंचम स्थान में स्थित मुंथा का फल - अच्छी बुद्धि की वृद्धि, द्विज-देवभक्ति, प्रताप-महत्त्व तथा यश की वृद्धि, संतान संबंधी सौख्य, जनसमाज से हर्ष, धनलाभ होता है ।

६. षष्ठस्थान में स्थित मुंथा का फल - शत्रु की उत्पत्ति, चौर भय, शरीर में कृशता, उद्योग हीनता, राजपक्ष से भय, कार्य की हानि, धनहानि, खोटी बुद्धि, मुसीवत का सामना तथा प्रियजनों से विरोध होता है ।

७. सप्तम स्थान में स्थित मुंथा का फल - चिन्ता, मानसिक क्लेश, रोग की अधिकता, स्त्री आदि को पीड़ा, इष्ट मित्र को कष्ट, वस्तु तथा धन की हानि, खोटी बुद्धि तथा मान हानि होती है ।

८. अष्टमस्थान में स्थित मुंथा का फल - दुष्ट रोग की पीड़ा, बल-कान्ति की हानि, शत्रु से भय, विपत्ति, बुद्धि में भ्रम, धर्म में अरुचि, बंधन का भय तथा धनहानि और क्लेश होता है ।

९. नवम स्थान में स्थित मुंथा का फल - भाग्य का उदय, धर्म में रुचि, धन आदि से वृद्धि, राजपक्ष से संगति और मान, सुख, यश, अपने वर्ग से संतोष, कार्य की सफलता होती है ।

१०. दशम स्थान में स्थित मुंथा का फल - राजपक्ष से प्रसन्नता, स्वजनों से सौख्य, स्वजनों का उपकार, मान-प्रतिष्ठा, धर्म में रुचि, यश, सौख्य तथा धन लाभ होता है ।

११. एकादश स्थान में स्थित मुंथा का फल - अच्छी बुद्धि की वृद्धि, इच्छा की पूर्ति, संतान सौख्य, स्वजन सौख्य, धर्म में रुचि, मान, मानसिक प्रसन्नता तथा धनलाभ होता है ।

१२. द्वादश भाव में स्थित मुंथा का फल - अनेक रोगों की पीड़ा, शरीर में कृशता, उद्योग हीनता, स्वजनों से तथा अन्यजनों से विवाद, धर्म में अरुचि, धन हानि, शत्रु से भय, राजपक्ष से भय तथा स्वजनों को पीड़ा होती है ।

मास कुण्डली में भावगत ग्रहों के फलित

मास कुण्डली में स्थित सूर्य के भावगत फलित

१. प्रथम स्थान (लग्न) में स्थित सूर्य का फल - चिन्ता की अधिकता, उद्वेग, शिर-नेत्र तथा मुख में पीड़ा, शरीर में रोग की अधिकता तथा स्त्री को कष्ट होता है ।

२. द्वितीय स्थान में स्थित सूर्य का फल - राजा-अग्नि-चोर तथा शत्रु से भय, विवाद, कुटुम्ब से कलह तथा धन व्यय होता है ।

३. तृतीय स्थान में स्थित सूर्य का फल - राजपक्ष से मान, आरोग्य, धनलाभ, शत्रुपरास्त तथा कार्यों में सफलता होती है ।

४. चतुर्थ भाव में सूर्य का फल - इष्ट-स्वजनों से द्वेष, राजपक्ष से भय, व्यापार संबंधी भय, मनुष्यों से तथा चौपाये से भय होता है ।

५. पंचम भाव में स्थित सूर्य का फल - पुत्र को पीड़ा, स्त्री को कष्ट, शरीर में घात, बुद्धि की मंदता, धनहानि, प्रियजन को कष्ट होता है ।

६. षष्ठ स्थान में स्थित सूर्य का फल - अन्नलाभ, धैर्य, राजपक्ष से मान, शत्रु परास्त तथा स्त्री-पुत्र आदि का सौख्य होता है ।

७. सप्तम स्थान में स्थित सूर्य का फल - शिर, छाती, साँथल से संबंधित रोग, स्त्री को कष्ट, भ्रमण, थोड़ा लाभ तथा मन में उद्वेग होता है ।

८. अष्टम स्थान में स्थित सूर्य का फल - शरीर में पीड़ा की अधिकता, नेत्ररोग, पित्त संबंधी रोग, राजपक्ष से भय, सूर्य से भय, विष से भय तथा धन हानि होती है ।

९. नवम स्थान में स्थित सूर्य का फल - स्त्री-पुत्र से विवाद, धर्म कार्य में बुद्धि, व्याकुलता तथा मन में उद्वेग होता है ।

१०. दशम स्थान में स्थित सूर्य का फल - राजपक्ष से सौख्य, अधिकार की प्राप्ति, उद्योग में सफलता, प्रसिद्धि, वंश की वृद्धि, सौख्य तथा लाभ होता है ।

११. एकादश स्थान में स्थित सूर्य का फल - चौपाये पशु संबंधी सौख्य, अपने इष्टवर्ग से सौख्य, राजपक्ष से प्रसन्नता तथा आरोग्यता होती है ।

१२. द्वादश स्थान में स्थित सूर्य का फल - शरीर में पित्त संबंधी पीड़ा नेत्ररोग, बंधुवर्ग की ओर से द्वेष तथा धन हानि होती है ।

मासकुण्डली में भावगत चंद्र के फल

नोट - कृष्णपक्ष की सप्तमी से शुक्ल पक्ष की सप्तमी तक चंद्रमा अपूर्ण या क्षीण कहलाता है । शुक्लपक्ष की अष्टमी से कृष्णपक्ष की सप्तमी तक चंद्रमा पूर्ण या अक्षीण कहलाता है । क्षीण या क्रूर ग्रह से दृष्ट चंद्र क्रूरग्रह है । पूर्ण या शुभ ग्रह से दृष्ट चंद्रमा सौम्यग्रह कहलाता है ।

१. लग्न में स्थित चंद्र का फल - कफ संबंधी विकार, खांसी-श्वास आदि की पीड़ा तथा नेत्र और मुख संबंधी पीड़ा होती है ।

२. द्वितीय भाव में स्थित चंद्रका फल - इष्ट मित्र संबंधी सौख्य, शरीर संबंधी सौख्य तथा श्वेत वस्तु के व्यापार से लाभ होता है ।

३. तृतीय स्थान में चंद्र का फल - सौख्य, लाभ, भय, चिन्ता, धर्म में रुचि, सुहृदों से सौख्य, उद्योग के द्वारा धन लाभ होता है ।

४. चतुर्थ भाव में स्थित चंद्र का फल - गाय-भैंस आदि चौपाये पशु से संबंधित सौख्य, सुहृद-बंधु-स्त्री आदि का सौख्य तथा धनलाभ होता है ।

५. पंचम स्थान में स्थित चंद्र का फल - स्त्री संबंधी सौख्य, मान, विजय, राजपक्ष से मान, धन का लाभ, अच्छी बुद्धि तथा सन्तान का सौख्य होता है ।

६. षष्ठ स्थान में स्थित चंद्र का फल - वायु-कफ संबंधी पीड़ा, बंधुओं से द्वेष, राजपक्ष से तथा चोर के द्वारा पीड़ा होती है ।

७. सप्तम स्थान में स्थित चंद्र का फल - राजपक्ष से मान, दूसरे स्थान से लाभ, व्यापार से लाभ, जलमार्ग से लाभ तथा स्त्रीसंबंधी सौख्य होता है ।

८. अष्टम स्थान के चंद्र का फल - थोड़ा संतोष, धनहानि, उपद्रव, कफ संबंधी पीड़ा तथा नेत्ररोग होता है ।

९. नवम स्थान में चंद्र का फल - बुद्धि की वृद्धि, धर्मकार्य, मन को संतोष तथा धन का लाभ होता है ।

१०. दशम स्थान के चंद्र का फल - रोग का नाश, वस्त्रलाभ, द्रव्य लाभ, कीर्ति तथा प्रतिष्ठा प्राप्त होती है ।

११. एकादशभाव के चंद्र का फल - वस्त्र लाभ, पुत्र लाभ, गृह संबंधी सौख्य, श्वेतवस्तु के व्यापार से लाभ तथा द्रव्यलाभ होता है ।

१२. द्वादश स्थान में स्थित चंद्र का फल - नेत्ररोग, भूख की कमी, घर में कलह, मित्र को हानि, शत्रु की वृद्धि तथा धन हानि होती है ।

मासकुण्डली में भावगत मंगल के फलित

१. लग्न के मंगल का फल - शिर-मुख आदि में रोग, रक्त-पित्त का

प्रकोप, धनहानि तथा कलह होता है ।

२. द्वितीय भाव के मंगल का फल - राजा-अग्नि-चोर आदि से भय, स्त्री को कष्ट, नेत्र रोग तथा धन हानि होती है ।

३. तृतीय स्थान के मंगल का फल - आरोग्य, शत्रुपरास्त, राजपक्ष से मान, घर में उत्सव तथा धनलाभ होता है ।

४. चतुर्थ स्थान के मंगल का फल - देशाटन, कष्ट, पशु हानि, सुहृद को कष्ट, व्यापार में हानि तथा घर में कलह होता है ।

५. पंचम भाव के मंगल का फल - स्त्री को कष्ट, पुत्रको कष्ट, विवाद, मानसिक क्लेश, थोड़ा लाभ तथा धनहानि होती है ।

६. षष्ठ स्थान में मंगल का फल - इष्ट-स्वजन से सौख्य, धन का लाभ, शत्रुपरास्त तथा राजपक्ष से प्रसन्नता होती है ।

७. सप्तम स्थान के मंगल का फल - स्व शरीर को कष्ट, स्त्री को कष्ट, राजपक्ष से भय, स्थान का छूटना, मित्र को हानि तथा धन हानि होती है ।

८. अष्टम स्थान के मंगल का फल - रक्त-पित्त संबंधी प्रकोप, महापीड़ा, इष्टवर्ग को विपत्ति तथा धन का व्यय होता है ।

९. नवम स्थान में मंगल का फल - मन में उद्वेग, अशुभ कर्म में प्रवृत्ति, व्यापार में थोड़ी वृद्धि, धनहानि तथा कलह होता है ।

१०. दशम भाव के भौम का फल - व्यापार से धनलाभ, राजपक्ष की प्रसन्नता, आरोग्य तथा तेज की वृद्धि होती है ।

११. एकादश स्थान के भौम का फल - स्त्री-पुत्र तथा सुहृत् संबंधी सौख्य, प्रताप, धनलाभ, शत्रु परास्त तथा राजपक्ष से सौख्य होता है।

१२. द्वादश भाव के भौम का फल - स्वशरीर कष्ट, नेत्ररोग, स्त्री पुत्र को कष्ट, धनहानि तथा राजपक्ष से भय होता है ।

मासकुण्डली में भावस्थ बुध के फलित

१. लग्न के बुध का फल - शरीर का सौख्य, बुद्धि की वृद्धि, राजपक्ष से मान, धनलाभ, तेज और धैर्य की वृद्धि तथा स्त्री संबंधी सौख्य होता है ।

२. द्वितीय स्थान के बुध का फल - आरोग्य, द्रव्य लाभ तथा इष्ट-स्वजन संबंधी सौख्य होता है ।

३. तृतीय स्थान के बुध का फल - लाभ भी और हानि भी, सुख और दुख भी, मित्र और शत्रु की संगति, अच्छी बुद्धि तथा स्त्री संबंधी सौख्य होता है ।

४. चतुर्थ स्थान के बुध का फल - स्त्री-बन्धु तथा मित्र संबंधी सौख्य, पशु संबंधी सौख्य, धर्मकार्य, लाभ तथा मान प्राप्त होता है ।

५. पंचम स्थान के बुध का फल - स्त्री-पुत्र-सुहृत् संबंधी सौख्य, राजपक्ष

से मान तथा बुद्धि के द्वारा धन लाभ होता है ।

६. षष्ठ स्थान के बुध का फल - स्वशरीर में पीड़ा, स्वजनों से विवाद तथा शत्रुपक्ष की वृद्धि होती है ।

७. सप्तम स्थान के बुध का फल - बुद्धि की वृद्धि, स्त्री संबंधी सौख्य, लाभ सहित यात्रा तथा व्यापार से धनलाभ होता है ।

८. अष्टम स्थान के बुध का फल - सौख्य, प्रमोद, लाभ, राजपक्ष से मान तथा शत्रुपरास्त होता है ।

९. नवम स्थान के बुध का फल - द्वेष, दीनता, स्त्री को कष्ट, धर्म में बुद्धि तथा धनलाभ होता है ।

१०. दशम स्थान के बुध का फल - बल-कान्ति की वृद्धि, सुहृदों से सुख, राज्य-यात्रा तथा व्यापार से लाभ होता है ।

११. एकादश भाव में बुध का फल - आरोग्य, अपने अध्यक्ष की कृपा, द्रव्य लाभ होता है ।

१२. द्वादश भाव में बुध का फल - शरीर में कष्ट, थोड़ा लाभ, खर्च अधिक, राजपक्ष से भय तथा अपने वर्ग में कलह होता है ।

मास कुण्डली में भावगत गुरु के फलित

१. लग्न के गुरु का फल - अच्छी बुद्धि, शरीर में आरोग्य, स्त्री-पुत्र संबंधी सौख्य, लाभ, सेवा से सुख तथा राजमान होता है ।

२. द्वितीय स्थान के गुरु का फल - आरोग्य, बंधुवर्ग से प्रमोद, धनलाभ तथा अच्छे भोगों की प्राप्ति होती है ।

३. तृतीय स्थान के गुरु का फल - थोड़ा सुख, सुहृद् बंधु-समागम, व्यापारी वर्ग से तथा स्त्रीपक्ष से सौख्य और सेवा द्वारा भी सौख्य होता है ।

४. चतुर्थ भाव के गुरु का फल - स्त्री-पुत्र-सुहृत् संबंधी सौख्य, धनलाभ, राजमान तथा व्यापार से लाभ होता है और बुद्धि की वृद्धि होती है ।

५. पंचम स्थान के गुरु का फल - अच्छी बुद्धि, संतान का सौख्य, मंत्र और विद्या के द्वारा सौख्य तथा व्यापार से लाभ होता है ।

६. षष्ठ स्थान के गुरु का फल - शत्रुवृद्धि, उद्वेग, शक्ति में कमी, धनहानि तथा इष्ट-स्वजनों से द्वेष होता है ।

७. सप्तम भाव में गुरु का फल - वाणिज्य तथा व्यवहार के द्वारा लाभ, यात्रा द्वारा लाभ, स्त्रीसंबंधी सौख्य, धनलाभ, राजपक्ष से सम्मान तथा धर्म में रुचि होती है ।

८. अष्टम स्थान में गुरु का फल - शरीर कष्ट, धनका खर्च, स्त्री को पीड़ा, परदेश गमन, वियोग की संभावना, मित्रवर्ग से कलह होता है ।

९. नवम भाव के गुरु का फल - धर्म कार्य, राजपक्ष से सौख्य, धनलाभ तथा अनेक प्रकार के भोग्य प्राप्त होते हैं ।

१०. दशम भाव के गुरु का फल - सत्कीर्ति, राजपक्ष से मान, वाणिज्य-व्यवहार के द्वारा लाभ तथा सुहृदों का सौख्य होता है ।

११. एकादश स्थान में गुरु का फल - आयु की स्थिति, आरोग्य, ऐश्वर्य, स्त्री-संतान तथा सुहृत् संबंधी सौख्य तथा चौपाये पशु संबंधी सौख्य होता है ।

१२. द्वादश स्थान में गुरु का फल - स्वजनों से झगड़ा, दुख, क्षयरोग की संभावना, धनका खर्च, परदेश गमन तथा राजपक्ष से भय होता है ।

मास कुण्डली में भावगत शुक्र के फलित

१. लग्न के शुक्र का फल- सौख्य, लाभ, प्रमोद, कुलवृद्धि तथा राजपक्ष से मान प्राप्त होता है ।

२. द्वितीय स्थान के शुक्र का फल - धनलाभ, सुहृद् की वृद्धि, स्वी संबंधी सौख्य, बुद्धि की वृद्धि, राजमान तथा शत्रु परास्त होता है ।

३. तृतीय स्थान के शुक्र का फल - थोड़ा सुख, धन का व्यय, उपद्रव तथा स्वजनों से विवाद होता है ।

४. चतुर्थ स्थान के शुक्र का फल - राजमान, ऐश्वर्य, आरोग्य, धन का लाभ, मित्र तथा स्वजनों से सौख्य होता है ।

५. पंचम स्थान के शुक्र का फल - स्त्री-पुत्र आदि का सौख्य, अच्छी बुद्धि, धन का लाभ, व्यापार से तथा अनेक प्रकार से लाभ होता है ।

६. षष्ठ स्थान के शुक्र का फल - वायु-कफ संबंधी पीड़ा, क्षय रोग की संभावना, बड़ाभय तथा कष्ट होता है ।

७. सप्तम स्थान के शुक्र का फल - स्त्री-पुत्र आदि का सौख्य, व्यापार से लाभ, यात्रा से लाभ तथा प्रमोद होता है ।

८. अष्टम स्थान के शुक्र का फल - स्त्री, पुत्र आदि को कष्ट, स्वशरीर में कष्ट, थोड़ा लाभ, धर्म में अरुचि तथा प्रवास होता है ।

९. नवम स्थान के शुक्र का फल - शरीर में आरोग्य, अच्छी बुद्धि, धन का लाभ तथा पुत्र-स्त्री आदि को कष्ट होता है ।

१०. दशम स्थान के शुक्र का फल - राजपक्ष से मान, शत्रु परास्त, धनलाभ, सुहृदों से सौख्य तथा कार्यों में सफलता होती है ।

११. एकादश भाव के शुक्र का फल - सौख्य, प्रिय का मिलन, जलमार्ग के द्वारा लाभ तथा श्वेत वस्तु के व्यापार से लाभ होता है ।

१२. द्वादशभाव के शुक्र का फल - अच्छे मार्ग में खर्च, मित्र स्वजनों के द्वारा द्वेष, प्रवास तथा अनासक्ति (उदासीनता) होती है ।

मास कुण्डली में भावगत शनि के फलित

१. लग्न में शनि का फल - वायु-कफ संबंधी रोग, शिर-मुख और पेट में पीड़ा तथा इष्ट-स्वजनों से द्वेष होता है ।

२. द्वितीय भाव में शनि का फल - नेत्र तथा मुख में पीड़ा, राजपक्ष से भय, संतान को कष्ट, बुद्धि की कमी तथा धन हानि होती है ।

३. तृतीय स्थान में शनि का फल - सब दुखों की निवृत्ति, राजपक्ष से मान तथा धनलाभ होता है ।

४. चतुर्थ स्थान में शनि का फल - माता के पक्ष को कष्ट, मित्र के पक्ष को कष्ट, राजपक्ष में धन का व्यय तथा व्यापार में हानि होती है ।

५. पंचम स्थान में शनि का फल - स्त्री-पुत्र तथा सुहृदों को कष्ट, बुद्धि में मंदता, धर्म में अरुचि, धन हानि तथा पेट में वायुविकार होता है ।

६. षष्ठभाव में शनि का फल - शरीर सौख्य, द्रव्य की वृद्धि, स्त्री-पुत्र संबंधी सौख्य तथा राजपक्ष की प्रसन्नता होती है ।

७. सप्तम भाव में शनि का फल - यात्रा में भय, सुहृदों को कष्ट, धनहानि, प्रवास तथा शत्रु से भय होता है ।

८. अष्टम स्थान में शनि का फल - रोग, पीड़ा, स्त्री-पुत्र आदि को कष्ट, महाव्याधि, धनहानि तथा विपत्ति प्राप्त होती है ।

९. नवम स्थान में शनि का फल - स्त्री-पुत्र तथा सुहृद् संबंधी कष्ट, भय, खोटी बुद्धि, पापकर्म में प्रवृत्ति तथा धन हानि होती है ।

१०. दशम स्थान में शनि का फल - दुख-दीनता, प्रवास, व्यापार में हानि तथा राजपक्ष से भय होता है ।

११. एकादश भाव के शनि का फल - ऐश्वर्य, आरोग्य, धनलाभ, स्त्रीसंबंधी सौख्य, उद्योग के द्वारा थोड़ा लाभ होता है ।

१२. द्वादश स्थान के शनि का फल - नेत्र-हृदय तथा पैर में पीड़ा, खर्च, हानि, राजपक्ष से भय तथा बंधु वर्ग आदि में कलह होता है ।

मास कुण्डली में भावगत राहु के फलित

१. लग्न में राहु का फल - शरीर में वायु संबंधी पीड़ा, कलह, धनका खर्च तथा पुत्र-मित्र आदि को कष्ट होता है ।

२. द्वितीय स्थान में राहु का फल - शरीर कष्ट, मानसिक चिन्ता, बस्ति (सांथल) आदि में पीड़ा, नेत्र तथा मुख में पीड़ा तथा खर्च होता है ।

३. तृतीय स्थान के राहु का फल - आरोग्य, ऐश्वर्य, राजमान, शत्रुपरास्त, सुहृदों का सौख्य तथा लाभ होता है ।

४. चतुर्थ स्थान के राहु का फल - चिन्ता, दुख, प्रवास, स्वजनों से विवाद तथा चौपाये पशु की हानि होती है ।

५. पंचम भाव के राहु का फल - पुत्र-संबंधी सौख्य, धन की हानि, शत्रु से विरोध, खोटी बुद्धि तथा पेट में वायु विकार होता है ।

६. षष्ठ स्थान में राहु का फल - आरोग्यता, स्त्री-पुत्र संबंधी सौख्य, राजपक्ष से प्रसन्नता, धनलाभ तथा शत्रु परास्त होता है ।

७. सप्तम भाव में राहु का फल - शरीर में कष्ट तथा वायु का विकार, कमर में तथा साँथल में पीड़ा, स्त्री को कष्ट तथा प्रवास होता है ।

८. अष्टम स्थान में राहु का फल - शरीर कष्ट, बंधुओं से विवाद, स्त्री को कष्ट, धन का खर्च तथा प्रवास होता है ।

९. नवम स्थान में राहु का फल - धर्मकार्य में रुकावट, दीनता, द्वेष, शरीर कष्ट तथा राजपक्ष से पीड़ा होती है ।

१०.दशम स्थान के राहु का फल - शरीर कष्ट, भय, इष्ट-स्वजनों से द्वेष, भूमि संबंधी हानि तथा धन का खर्च होता है ।

११. एकादश भाव के राहु का फल - शरीर में आरोग्य, स्त्रीसंबंधी सौख्य, धन का लाभ तथा निम्न जाति के लोगों से लाभ होता है ।

१२. द्वादश स्थान के राहु का फल - स्वशरीर को कष्ट, स्त्री को कष्ट, राजपक्ष से कष्ट तथा शत्रु परास्त होता है ।

नोट - राहु के समान ही केतु का फल होता है , अत: केतु के फल को भी राहु के फल के समान जानना, इस कारण केतु का फल नहीं लिखा जा रहा है ।

फल के संबंध में विशेष विचार -

स्वोच्चस्ववेश्मास्तगनीचशत्रुहद्दादिवर्गस्थितखेचराणाम् ।
बलाबलं चादि विचार्य सम्यक् प्रोक्तानुसारेण वदेत् फलं तु ।।

आचार्य मणित्थ का मन्तव्य है - ग्रहों की स्वराशि, उच्चराशि, अस्त, नीचराशि, शत्रुराशि, हद्दा आदि, वर्गों में स्थिति के अनुसार बलाबल का विचार करके पूर्वोक्त भाव जनित फलित कहना उचित है ।

भावों में ग्रहों के नवांशकों के फलित

भावों में सूर्य की नवांश राशि के फलित - सूर्य, उच्चराशि, मूल-त्रिकोण राशि या मित्रराशि में हो, इस प्रकार के सूर्य का लग्नस्थान में नवांश हो तो राजसंबंध से धन लाभ होता है । यदि पूर्वोक्त राशियों के अतिरिक्त किसी अन्य राशि का हो तथा उसका लग्नराशि में नवांश हो तो शरीर में निरन्तर कष्ट रहता है ।

कुण्डली के द्वितीय स्थान में सूर्य (सिंह राशि) का नवांश होने से धन की हानि होती है । तृतीय भाव में सूर्य का नवांश होने से दुर्वचनों का कहना-सुनना होता है । चतुर्थ भाव में सूर्य का नवांश हो तो भोजन का दुख होता है । पंचम स्थान में सूर्य का

नवांश होने से पुत्र को पीड़ा होती है । षष्ठ स्थान में सूर्य का नवांश होने से शत्रु परास्त होता है । सप्तम भाव में सूर्य का नवांश हो तो संतोषताकी कमी रहती है । अष्टम स्थान में सूर्य का नवांश हो तो आधि (मानसिकव्यथा) तथा व्याधि (शारीरिक रोग) होती है । नवम भाव में सूर्य का नवांश हो तो धर्म संबंधी हानि होती है । दशम भाव में सूर्य का नवांश हो तो पद की प्राप्ति होती है । एकादश स्थान में सूर्य का नवांश हो तो लाभ होता है । द्वादश स्थान में सूर्य का नवांश होने से व्यय तथा राजदण्ड का भय होता है ।

भावों में चन्द्र के (कर्कराशि) नवांश के फलित

चन्द्रमा उच्च या स्वराशि का हो, ऐसे चंद्र का लग्न भाव में नवांश हो तो शरीर पुष्ट होता है । यदि अन्य राशि के चंद्र का लग्न में नवांश हो तो अशुभ फल है । द्वितीय स्थान में चंद्र का नवांश हो तथा उस पर शुभग्रह की दृष्टि हो तो धनलाभ होता है । तृतीय भाव में चंद्र का नवांश होने से बन्धु संबंधी सौख्य होता है । चतुर्थ स्थान में चंद्र का नवांश होने से उत्तम भोजन की प्राप्ति होती है । पंचम स्थान में चंद्र का नवांश होने से सब प्रकार का सौख्य होता है । षष्ठ भाव में चंद्र का नवांश होने से रोग तथा संताप होता है । सप्तम भाव में चंद्र का नवांश होने से किसी के वापिस लौटने की बात सुनने में आती है । अष्टम भाव में चंद्र का नवांश होन से लंघन (फाके कशी) होता है। नवम भाव में चंद्र का नवांश होने से शत्रु परास्त होता है । दशम स्थान में चंद्र का नवांश होने से बड़े भारी पद की प्राप्ति होती है । एकादश भाव में चंद्र का नवांश होने से वस्त्रलाभ होता है । द्वादश स्थान में चंद्र का नवांश होने से अच्छे कार्य में खर्च होता है।

भावों में मंगल की नवांश राशि के फलित

लग्न में मंगल की नवांश राशि (मेंष या वृश्चिक) हो तो हानि होती है । द्वितीय भाव में हो तो धन हानि, तृतीय भाव में हो तो पराक्रम, चतुर्थ स्थान में हो तो भूख से मृत्यु की संभावना, पंचम स्थान में हो तो बुद्धि की हानि, षष्ठ भाव में हो तो स्वतन्त्रता,सप्तम स्थान में हो तो स्त्री के द्वारा उत्तम वाद (वार्तालाप), अष्टम भाव में हो तो ग्रह जनित पीड़ा, नवम भाव में हो तो धर्म संबंधी हानि, दशम भाव में हो तो मित्र से विरोध, एकादश भाव में हो तो हानि और द्वादश भाव में हो तो व्यय होता है ।

भावों में बुध की नवांश राशि के फलित

नोट - यद्यपि बुध की नवांश राशि मिथुन और कन्या है किन्तु यहाँ फलित में केवल मिथुन राशि का ही ग्रहण है । कारण कि आचार्यों ने भावों पर राहु की नवांश राशि का भी फल माना है । राहु की स्वगृह राशि कन्या है । अतः यहाँ यह व्यवस्था करनी पड़ेगी कि बुध की नवांश राशि तो मिथुन है और राहु की नवांश राशि कन्या है।

लग्नभाव में बुध की नवांश राशि (मिथुन) हो तो स्वभाव में कुटिलता, द्वितीय स्थान में हो तो वाणी के द्वारा धनलाभ, तृतीय स्थान में मिथ्या (झूठी) वाणी का बोलना, चतुर्थ भाव में हो तो विज्ञान तथा शिल्प के द्वारा सौख्य, पंचम स्थान में हो तो कुटिलता, षष्ठ स्थान में हो तो मिथ्यावेश का धारण, सप्तम भाव में हो तो कुटिल युद्ध, अष्टम भाव में हो तो अजीर्ण (बदहज्मी) आदि रोग, नवम सथान में हो तो मिथ्याधर्म में रुचि,

दशम भाव में हो तो नौकरी से थोड़ा लाभ, एकादश भाव में हो तो वाद्य (वाजा) आदि से लाभ तथा पूर्व से चले आने वाले कार्य में लाभ और द्वादश भाव में हो तो खर्चा होती है ।

भावों में गुरु की नवांश राशि के फलित - लग्नभाव में गुरु की नवांश राशि (धन या मीन) हो तो मंत्र की दीक्षा मिलनी या नेक सलाह मिलनी, द्वितीय स्थान में हो तो धनलाभ, तृतीयस्थान में हो तो पराक्रम, चतुर्थ स्थान में हो तो धनलाभ-सुख तथा राजपक्ष से लाभ, पंचम भाव में हो तो विद्या द्वारा सौख्य-पुत्र आदि का सौख्य तथा पुराण आदि की कथा का श्रवण, षष्ठभाव में हो तो शत्रु की उत्पत्ति, सप्तम स्थान में हो तो स्त्री संबंधी सौख्य और यदि चंद्र-बुध-शुक्र सप्तम भाव में बैठें हों तो स्त्री संबंधी अत्यधिक सौख्य, अष्टम भाव में हो तो रोग की उत्पत्ति, नवम भाव में हो तो धर्म संबंधी लाभ तथा चौपाये पशु का लाभ, दशम स्थान में हो तो राजपक्ष से लाभ, एकादश स्थान में हो तो लाभ और द्वादश स्थान में हो तो व्यय होता है ।

भावों में शुक्र की नवांश राशि फलित - लग्न में शुक्र की नवांश राशि (वृष या तुला) हो तो लोगों की प्रीति, द्वितीय स्थान में हो तो धनलाभ, तृतीयभाव में हो तो भ्राता से पोषण और भगिनी से संपत्ति लाभ, चतुर्थ स्थान में हो तो सब प्रकार का सुख तथा सबका प्रेम, पंचम भाव में हो तो बुद्धि के द्वारा सौख्य, षष्ठस्थान में हो तो कुटुम्ब में कलह, सप्तम स्थान में हो तो स्त्री से रति सुख, अष्टमभाव में हो तो कफ संबंधी रोग, नवम भाव में हो तो अकस्मात् धन-धान्य आदि का लाभ तथा धर्म लाभ, दशम भाव में हो तो राजपक्ष से लाभ, एकादशस्थान में हो तो स्त्रीद्वारा लाभ तथा द्वादश स्थान में हो तो स्त्री के संबंध में व्यय होता है ।

भावों में शनि की नवांश राशि के फलित- लग्न स्थान में शनि की नवांश राशि (मकर या कुंभ) हो तो शरीर के लिए विपत्ति, यदि उच्च आदि राशि के शनि का लग्न में नवांश हो तो शरीर सुख, द्वितीय स्थान में हो तो धन हानि, तृतीय भाव में हो तो विपत्ति का सामना, चतुर्थ भाव में हो तो स्त्रीभोग संबंधी सुख की हानि, पंचम भाव में हो तो पुत्र आदि को पीड़ा, षष्ठ भाव में हो तो शत्रु परास्त, सप्तम भाव में हो तो असन्तोष, अष्टम भाव में हो तो वायुसंबंधी रोग, नवम स्थान में हो तो धर्म आदि का लाभ, दशम स्थान में हो तो राजपक्ष से मानहानि, एकादश स्थान में हो तो लाभ तथा द्वादश स्थान में हो तो व्यय होता है । यदि शनि भी द्वादश स्थान में बैठा हो तो बड़ा भारी व्यय होता है ।

भावों में राहु की नवांश राशि के फलित - लग्नभाव में राहु की नवाशं राशि (कन्या) हो तो शरीर पीड़ा, द्वितीय स्थान में हो तो धन हानि, तृतीय स्थान में हो तो बंधु संबंधी हानि, चतुर्थ स्थान में हो तो कुटुम्ब संबंधी हानि तथा भोजन में गड़बड़ी, पंचम स्थान में हो तो संतान को पीड़ा, षष्ठ स्थान में हो तो शत्रु परास्त, सप्तम भाव में हो तो पत्नी को कष्ट, अष्टम भाव में हो तो मृत्यु का नाश, सुख तथा लाभ, नवम स्थान में हो तो धर्म की प्राप्ति, दशम स्थान में हो तो पद की प्राप्ति, एकादश स्थान में हो तो

लाभ में अड़चन और द्वादश स्थान में हो तो बुरे काम में खर्च होता है ।

नोट - यदि राहु, स्वराशि या उच्चराशि आदि में होता है तो उसका फल अशुभ न होकर शुभ होता है ।

आचार्यों ने केतु के नवांश का फल नहीं कहा है, अत: यहाँ नहीं दिया गया । पूर्वोक्त नवांश का विचार, जन्मकुण्डली-वर्षकुण्डली-मासकुण्डली-दिनकुण्डली तथा प्रश्नकुण्डली, इन सब में लागू हो सकता है ।

नवांश के फल के सबंध में विशेष विचार - नृपतिवर आचार्य चण्डेश्वर का मन्तव्य है कि नवांश में नौ भाग होते हैं और कुण्डली में बारह भाव या स्थान होते हैं । प्रत्येक भाव में नौ नवांश की कल्पना करनी । इस प्रकार १२×९ =१०८ भाग होते हैं। नवांश का फल कब होगा ? इस सबंध में नवांश दशा लगानी । नवांश दशा सात ग्रहों की होती है । जिस का क्रम यह है ।

ग्रह	मास	दिन	घ
सूर्य	०	३	२०
बुध	०	३	२०
शुक्र	०	३	२०
मंगल	०	५	०
गुरु	१	१०	०
शनि	३	१०	०
राहु	२	०	०

प्रत्येक ग्रह का भाव पर नंवाश राशि का जो फल है वह अपनी दशा में देता है । चंद्रमा प्रत्यके ग्रह की दशा के अंदर ही अपना फल देता है ।

अन्यमत - आचार्य नारायण भट्ट का सिद्वान्त है कि सूर्य जिस नवांश भाग में हो उस राशि का स्वामी यदि सूर्य के मित्रग्रहों से युक्त तथा दृष्ट होता है तो बहुत ही शुभ फल होता है । ग्रह की स्वराशि, उच्चराशि तथा मित्रराशि का विचार करना । पूर्वोक्त सूर्य के विचार के समान ही प्रत्येक ग्रह का विचार करना । विपरीत होने पर अशुभ फल होता है। ग्रह के नवांश फल के शुभाशुभ विचार की उक्त पद्धति है ।

वर्ष कुण्डली से संबंधित मास कुण्डली का विचार - यदि वर्ष कुण्डली में द्रव्यलाभ, पुत्रजन्म, यात्रा, लाभ, विवाह तथा अरिष्ट आदि योगों में से कोई योग प्रबलता से बनता है और फिर वही योग जिस मास की मास कुण्डली में प्रबलता से बना है तो उसी मास में उस योग का फल होगा ।

मास कुण्डली संबंधी योगों का विचार - १. मास लग्न कुण्डली में लग्नभाव के नवांश के पति को लग्नेश के नवांश का पति मित्र दृष्टि से देखता हो अथवा लग्न का नवांश पति लग्नेश के नवांश पति से युक्त हो तथा चंद्र को वे दोनों नवांशेश

मित्र दृष्टि से देखते हों तो उस मास में शरीर में आरोग्यता तथा अनेक प्रकार का सुख होता है। यह शुभफल तभी तक रहता है जबतक कि पूर्वोक्त ग्रह राशि नहीं बदलते हैं।

२. लग्नभाव का नवांशपति तथा लग्नेश का नवांश पति परस्पर शत्रुदृष्टि से देखते हों तो तथा उन दोनों को चंद्रमा भी शत्रुदृष्टि से देखता हो तो उस मास में शारीरिक तथा मानसिक दुख होता है।

३. लग्नभाव के नवांश पति तथा लग्नेश के नवांश पति में यदि कोई एक अस्त हो या नीचराशि में हो तो उस मास में पहिले कष्ट फिर बाद में सौख्य होता है।

४. यदि जन्मकाल में तथा वर्ष काल में अरिष्ट योग हो, लग्न का नवांशपति तथा लग्नेश का नवांश पति ये दोनों ही नीचराशि में हों, अस्त हों तो उसमास में मृत्यु होती है और यदि अरिष्ट योग नहीं होता है तो मृत्यु नहीं होती किन्तु मृत्युतुल्य कष्ट होता है।

५. लग्नेश के नवांश पति पर जिस भाव के नवांश के पति की मित्रदृष्टि होगी या युति होगी तथा चंद्र की भी युति या मित्र दृष्टि होगी तो उस भाव से संबंधित सभी पदार्थों का उस मास में सौख्य होगा और यदि भाव का नवांश पति उदित या उच्च राशि का होगा तो भावोक्त फल संबंधी सुख विशेषता से होगा।

६. लग्नेश के नवांश पति पर जिस भाव के नवांश पति की शत्रुदृष्टि होगी तथा चंद्र की शत्रुदृष्टि होगी तो उस मास में उस भावोक्त फल संबंधी हानि होगी। यदि पूर्वोक्त भाव का नवांश पति अस्त या नीच राशि का होगा तो उक्त भाव जनित फल अत्यन्त अशुभ होगा।

७. लग्न का नवांशपति, लग्नेश का नवांश पति, चंद्रमा तथा भाव का नवांशपति, इन चारों की जब तक युति या मित्र दृष्टि रहेगी तब तक उस भाव से संबंधित फल रहेगा। यदि उक्त ग्रहों में से दो या एक ग्रह भी राशि बदलेगा तो फल में विपरीतता होने लगेगी।

उक्त ग्रहों में मित्र-शत्रु के योग के अनुसार अथवा ग्रह की मित्र-शत्रु दृष्टि के अनुसार अथवा युति या दृष्टि न हो तो, यह सब विचार कर शुभ-मध्यम तथा अशुभ फल का निर्णय करना उचित है।

८. भाव का नवांश पति भाव के स्वामी के नवांश पति से युक्त या मित्रदृष्टि से दृष्ट हो तथा वे दोनों चंद्र को मित्रदिृष्टि से देखते हों तो उस भावोक्त फल से सम्बंधित सुख होता है।

विपरीत होने पर अर्थात् उक्त ग्रह नीच राशि के या शत्रु राशि के अथवा अस्त हों तो उस भावोक्त फल से संबंधित दुख होता है।

नोट - यह विचार प्रत्येक भाव के विचार के संबंध में लागू है।

९. लग्नेश का नवांश पति, मासेश का नवांश पति तथा वर्षेश का नवांशपति, ये तीनों चंद्र से युत अथवा मित्र दृष्टि से दृष्ट हों, ऐसी स्थिति में जिस भाव के

स्वामी से युक्त या मित्र दृष्टि के द्वारा दृष्ट होते हों तो उसी भावसे संबंधित शुभ फल देते हैं। विपरीत योगमें अशुम फल देते हैं।

१०. त्रिक स्थान के नवांशपति निर्बल होने पर शुभ फल देते हैं।

११. त्रिकस्थान के अतिरिक्त अन्यस्थानों के नवांशपति बलवान् होने पर शुभ फल देते हैं।

१२. त्रिकस्थान के नवांशपति बलवान् होने पर अशुभ फल देते हैं।

१३. त्रिकस्थान के अतिरिक्त अन्य स्थानों के नवांशपति निर्बल होने पर अशुभ फल देते हैं।

१४. लग्नेश, मासेश, वर्षेश, मुंथेश, ये चारों छठे या आठवें स्थान में स्थित हों, पापग्रहों से युक्त हों तथा पापग्रहों से शत्रु दृष्टि के द्वारा दृष्ट हों तो उस मास में रोग आदि, द्वेष, भय तथा दुख होता है।

१५. लग्नेश, मासेश, वर्षेश, ये तीनों मास कुण्डली में बलवान् होकर केन्द्र या त्रिकोण में स्थित हों तो आरोग्य, शत्रुक्षय, राजपक्ष से लाभ, मान, यश तथा उन्नति उस मास में होती है।

१६. मास कुण्डली में लग्नेश, लग्न का नवांशपति, ये दोनों तथा वर्षेश बलवान् होकर केन्द्र या त्रिकोण में बैठें तो आरोग्य और विलास होता है।

१७. मास लग्न का नवांशपति षष्ठ या अष्टम भाव में बैठे तथा क्रूर ग्रहों से युक्त और दृष्ट हो तो उस मासमें अच्छी तरह कष्ट, भय और विवाद होता है।

१८. मास लग्नेश तथा लग्न का नवांश प्रति, ये दोनों परस्पर देखते हों तथा इन दोनों पर चंद्र की दृष्टि हो तो शुभ फल होता है।

नोट- मास कुण्डली में लग्न आदि भावों के जो फल हैं वे ही मासेश से भी लग्न आदि भावों की कल्पना करके जानने।

मासेश जिसके नवांश में हो तथा जिस भाव में हो, उसी प्रकार का गुण या दोष प्रकट करता है। जन्म आदि काल के चन्द्र के प्रवेश से फल जानना उचित है।

जिस भाव का नवांशपति जितने समय तक नवांश में रहता है उतने ही समय तक उस भाव से संबंधित फल होता है।

जो ग्रह स्वराशिका या उच्च राशि का होकर त्रिकोण में बैठे, उसपर मित्रग्रह की दृष्टि हो या मित्र राशि में हो तथा लग्नेश का और लग्न के नवांश के पति का मित्र हो तो शुभ फल देता है। इसके विपरीत होने पर अशुभ फल देता है।

लग्नेश और लग्न का नवांशपति, दोनों आपस में मित्र हों और शुभ ग्रहों से दृष्ट होकर जिस भावमें स्थित हों उसका क्रम से फल प्रस्तुत किया जाता है।

लग्नभाव में होने से शरीर सुख, द्वितीय भाव में होने से धनलाभ, तृतीय भावमें होने से भ्रातृ संबंधी सौख्य, चतुर्थ भावमें होने से घरेलू सुख, पंचम स्थानमें होने से पुत्र की प्राप्ति, षष्ठ स्थान में होने से शत्रु की वृद्धि, सप्तम स्थान में होने से पत्नी संबंधी सौख्य, अष्टम स्थानमें होने से मृत्यु की संभावना, नवम स्थानमें होने से धर्म की प्राप्ति, दशम स्थान में होने से कार्य की सफलता, एकादश स्थानमें होने से सब प्रकार का लाभ, द्वादश स्थान में होने से निरन्तर हानि होती है।

यदि लग्नेश और लग्न का नवांशपति परस्पर में शत्रु हों तथा शत्रुग्रहों से युक्त और दृष्ट हों तो पूर्वोक्त भाव संबंधी फल अशुभ होते हैं।

मास दशा संबंधी विचार -

जिस प्रकार वर्ष की दशा है उसी प्रकार मास की भी दशा है तथा उसका फल है। ग्रह की दशा के फल के संबंध में आचार्य मणित्थ का मत है -

खेचारिणां भावफलानि यानि तानीह कल्प्यानि दशासु तेषाम्।।

अर्थात् भाव में स्थित ग्रह का जो फल है वह फल उस ग्रह की दशा में होता है।

आचार्य यादव के मत में प्रत्येक ग्रह की दशा का फल पृथक् है। यहाँ पर प्रत्येक ग्रह का फल मुद्दादशा के क्रम से प्रस्तुत किया जाता है -

१. सूर्य की दशा का फल - कुण्डली में सूर्य शुभ स्थान में हो तथा शुभ ग्रहों के वर्ग में हो एवं बलवान् हो तो राजपक्ष से धनलाभ होता है। यदि सूर्य अशुभ स्थान में हो तथा पापग्रहों के वर्ग में हो एवं निर्बल हो तो उसकी दशा में राजपक्ष से भय होता है।

२. चंद्र की दशा का फल - कुण्डली में चंद्र शुभस्थान में हो और शुभ ग्रहों के वर्ग में हो तथा बलवान् हो तो उसकी दशा में स्त्री संबंधी सौख्य, मुक्ता-मणि-हार आदि की प्राप्ति तथा राजपक्ष से धन लाभ होता है। चंद्र के विपरीत होने पर पूर्वोक्त फल की हानि, कफ संबंधी रोग तथा शरीर में कृशता होती है।

३. मंगल की दशा का फल- बलवान् मंगल की दशा में सेनापतिपद की प्राप्ति, जय तथा सब प्रकार का लाभ होता है। बलहीन मंगल की दशा में रुधिर का प्रकोप, शीत-पित्त विकार तथा अपने लोगों से वैर होता है।

४. राहु की दशा का फल- कुण्डली में राहु शुभ स्थान में हो तो उसकी दशा में थोड़ा ऐश्वर्य तथा स्त्री संबंधी सुख होता है। अशुभ स्थान के राहु की दशा में स्त्री को मृत्यु तुल्य कष्ट तथा बंधुओं से झगड़ा होता है।

५. गुरु की दशा का फल- बलवान् गुरु की दशा में मान, धन लाभ, गुण की प्राप्ति तथा उन्नति होती है। निर्बल गुरु की दशा में धर्म में अरुचि, शरीर में कष्ट तथा धन हानि होती है।

६. शनि की दशा का फल - बलवान् शनि की दशा में घर तथा बगीचे से संबंधित सुख, उड़द, अंडज पक्षी, गधा-ऊँट आदि से संबंधित लाभ होता है। निर्बल शनि की दशा में स्त्री-पुत्र को कष्ट, बुद्धि भ्रम तथा वायु संबंधी पीड़ा होती है।

७. बुध की दशा का फल - बलवान् बुध की दशा में कीर्ति की वृद्धि, राजा आदि के सेवाकार्य में सफलता प्राप्त होती है। निर्बल बुध की दशा में मानहानि, बंधन का भय, लोकापवाद तथा रोग होता है।

८. केतुकी दशा का फल - कुण्डली में केतु शुभस्थान में हो तो उसकी दशा में सौख्य, धन लाभ तथा स्त्री-पुत्र संबंधी सौख्य होता है। अशुभ स्थान में स्थित केतु की दशा में विवाद, क्लेश, पुत्र को कष्ट तथा धन हानि होती है।

९. शुक्र की दशा का फल - बलवान् शुक्र की दशा में स्त्री-संतान संबंधी सौख्य, सुगंधित पुष्प-हार तथा घर का सुख और लाभ भी अच्छा होता है।

नोट- ग्रह किस स्थानमें स्थित है, उसका किससे योग है तथा उसका कैसा बल है, यह सब विचार का फल का निश्चय करना।

ग्रहों की अन्तर्दशा के फलित -

१. शुभ ग्रह की दशा में शुभ ग्रह की अन्तर्दशा का फल - कार्य में सफलता, प्रयोजन की सिद्धि, मानसिक प्रसन्नता,मित्र से मिलन तथा पुत्र आदि का सौख्य होता है।

२. क्रूरग्रह की दशा में क्रूरग्रह की अन्तर्दशा का फल - उद्वेग, चिन्ता, भय, क्रोध, विवाद, झूठा कलंक, संकट, अपने तथा पराये लोगों से बहुत विरोध होता है।

३. शुभग्रह की दशा में पापग्रह की अन्तर्दशा का फल - शारीरिक तथा मानसिक क्लेश, मोह, दूसरे के द्वारा ताडन (मार-पीट) तथा बंधन का भय, विपत्ति होती है।

४. क्रूरग्रह की दशा में शुभ ग्रह की अन्तर्दशा का फल- आलस्य, तंद्रा, खोटी बुद्धि तथा विपत्ति आदि अशुभ फल होते हैं।

दशा तथा अन्तर्दशा के संबंध में विशेष विचार -

१. जन्मकाल में अथवा वर्षकाल में जो ग्रह, स्वराशि, उच्च-राशि, मित्रराशि या हद्दा आदि में हो तथा शुभ ग्रहों से युक्त और दृष्ट हो तो उस की दशा-अन्तर्दशा शुभ होती है।

२. जन्मकाल में या वर्ष काल में जो ग्रह नीच राशिका, शत्रुराशि का, अस्त या पतित होगा, उस ग्रह की दशा अशुभ तथा संतापदायिनी होती है।

३. दशा काल में १/२/४/८/९/१२/ स्थान में चंद्र जन्म लग्न से या जन्मराशि से अथवा वर्ष लग्न आदि से हो तो अशुभ फल देता है ।

नोट - मास कुण्डली से भोजन-आखेट तथा स्वप्न आदि-का भी विचार होता है। इस विषय को आगे देखिये ।

दिन लग्न कुण्डली का विचार- एक मास में तीस दिन होते हैं, अत: प्रत्येक माससे संबंधित तीस-तीस कुण्डलियाँ होती हैं । इस प्रकार वर्ष में तीन सौ साठ दिन लग्न कुण्डलियाँ होती हैं । जिस समय दिन प्रवेश हो उस समय की लग्न स्पष्ट, ग्रहस्पष्ट तथा भावस्पष्ट आदि करने । दिनलग्न कुण्डली बनाकर मुंथा स्थापित करनी । दिनेश का निर्णय करना ।

दिनेश का विचार - १. मुंथेश । २. त्रिराशिपति । ३. (क) दिनमें दिन का प्रवेश हो तो सूर्य की राशि का पति । (ख) रात्रि में दिन का प्रवेश हो तो चंद्र की राशि का स्वामी । ४. वर्ष लग्न का स्वामी । ५. वर्षेश । ६. मासलग्न का पति । ७. दिनलग्न का पति। इन सातों में वृहत्पंचवर्गी द्वारा तथा द्वादशवर्गी द्वारा जो भी ग्रह बलवान् हो तथा दिन लग्न पर दृष्टि रखता हो वही दिनेश है ।

दिन कुण्डली में लग्न के नवांशसे तथा चंद्र के नवांश से फलित का विचार करना। अब क्रमश: फलित प्रस्तुत किया जाता है ।

दिन कुण्डली में मुंथा का फल - प्रथम, द्वितीय, तृतीय या पंचम स्थानमें मुंथा का होना शुभ होता है । नवम, दशम या एकादश स्थान में मुंथा का बैठना अत्यंत शुभ होता है । शेष स्थानों में मुंथा के होने से अतिकष्ट होता है । अपने स्वामी से युक्त या दृष्ट तथा शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट मुंथा शुभफल देती है ।

मुंथेश का फल - दिन कुण्डली में शुभ स्थान में बैठा मुंथेश शुभ फल देता है । अशुभ स्थान में बैठे मुंथेश का फल अशुभ होता है ।

भावगत ग्रहों के फलित - आचार्य यादव के आधार पर भावगत ग्रहों के फल प्रस्तुत किये जाते हैं । यहाँ फलित भावों के अनुसार प्रस्तुत किये जा रहे हैं ।

१. प्रथम भाव (लग्न) में ग्रहों के फल - लग्नभाव में सूर्य के होने से शरीर के सब अंगों में रोग, मंगल के हाने से अग्निभय, चोरभय तथा शत्रुभय होता है । बुध, गुरु या शुक्र के होने से कान्ति, अच्छी प्रतिष्ठा तथा राज पक्ष से सौख्य होता है । पूर्ण चंद्र का फल शुक्र के समान और क्षीण चन्द्र का फल मंगल के समान है ।

२. द्वितीय भाव में स्थित ग्रहों के फल - द्वितीय स्थानमें सूर्य, क्षीण चंद्रमा, मंगल या शनि के होन से असंतोष, धनहानि, विवाद, उद्योग में अड़चन तथा कफ संबंधी पीड़ा होती है । राहु के होने से शस्त्र भय होता है । पूर्णचंद्रमा, बुध, गुरु या शुक्र हो तो धन-धान्य का सौख्य, चौपाये पशु का सुख, कीर्ति तथा राजपक्ष से लाभ होता है । उक्त

ग्रह स्वराशि या उच्च राशि के होते हैं तो विशेष फल होता है ।

३. तृतीय भावमें स्थित ग्रहों के फल - तृतीय स्थान में सूर्य हो तो लाभ, चंद्र हो तो मिष्टान्न का खान-पान, मंगल हो तो उद्योग में सफलता, बुध हो तो भय, हानि तथा कलह, गुरु हो तो धर्म में रुचि, बंधु सौख्य तथा पराक्रम, शुक्र हो तो प्रमोद आदि, शनि हो तो मान-जय, राहु हो तो यात्रा तथा शत्रु परास्त होता है ।

४. चतुर्थ स्थान में स्थित ग्रहों के फल - चतुर्थ भाव में सूर्य हो तो रोग, शोक और हानि होती है । चंद्र हो तो भूषण प्राप्ति, सौख्य तथा धनलाभ, मंगल हो तो पेट में तथा कुक्षि (कोख) में रोग, बुध हो तो यश और सुख, गुरु हो तो अच्छा लाभ तथा अच्छा सौख्य, शुक्र हो तो सब प्रकार का सुख, शनि हो तो चोर तथा राजा आदि से दुःख,राहु हो तो दुख ही होता है ।

५. पंचमभाव में स्थित ग्रहों के फल - पंचम स्थान में सूर्य हो तो मित्र तथा संतान संबंधी दुख और धनकी हानि, चंद्र हो तो अच्छी बुद्धि तथा धनलाभ, मंगल हो तो बन्धुसुख तथा बुद्धि द्वारा सुख, बुध हो तो सुन्दर भोजन तथा संतान संबंधी सौख्य, गुरु या शुक्र हो तो सब प्रकार का उत्तम सुख, शनि हो तो विवाद, परदेशगमन तथा दुख, राहु हो तो बुद्धि की मंदता होती है ।

६. षष्ठस्थान में स्थित ग्रहों के फल- षष्ठ भाव में सूर्य हो तो शत्रु परास्त तथा धनलाभ, चंद्र हो तो कलह, भय तथा वायुविकार,मंगल हो तो शत्रु परास्त तथा प्रसन्नता, बुध हो तो दुर्नीति, दुख, शत्रु पक्ष से निन्दा, गुरु या शुक्र हो तो शत्रु की उत्पत्ति, बंधुओं से विवाद तथा दुख, शनि या राहु हो तो सब प्रकार का सुख, लाभ तथा शत्रु परास्त होता है।

७. सप्तम भाव में स्थित ग्रहों का फल - सप्तमभाव में सूर्य हो तो स्वशरीर में वायु संबंधी रोग, स्त्री को कष्ट तथा धन हानि, चंद्र हो तो सब प्रकार का सुख, गुरु या शुक्र हो तो स्त्री संबंधी सौख्य, भूषण आदि का सौख्य तथा सत्संग, शनि या राहु हो तो वायुविकार, अग्नि भय तथा विष भय होता है ।

८. अष्टम स्थान में स्थित ग्रहों का फल - अष्टम स्थान में बुध के विना स्थित अन्य सभी शुभ ग्रह सब प्रकार से हानि करते हैं । पापग्रहों के होने से स्वशरीर में पित्त संबंधी रोग, स्त्री को कष्ट, अपने को उदरसंबंधी रोग, सौख्य की हानि, चोर आदि से कलह, अपने जनों से वैराग्य, दुष्टों से विवाद तथा स्थान को छोड़ना होता है । बुध के होने से राजपक्ष से मान तथा धन का लाभ होता है ।

९. नवम भाव में स्थित ग्रहों के फल- नवम स्थान में सूर्य हो तो यात्रा से भय, चंद्र हो तो सुवर्ण आदि का लाभ, मंगल हो तो राजपक्ष से भय तथा पुण्यकार्य से सुख, बुध, गुरु या शुक्र हो तो सब प्रकार का सौख्य और सद्बुद्धि तथा धर्म संबंधी कार्य,शनि

हो तो बंधु संबंधी पीड़ा तथा धनलाभ, राहु हो तो पीड़ा होती है ।

१०. दशम भाव में स्थित ग्रहों का फल - दशमभाव में सूर्य हो तो राजपक्ष से सौख्य, चंद्र हो तो क्रय-विक्रय में लाभ, मंगल हो तो राजपक्षसे लाभ तथा यश, मंगल के समान ही बुध का फल, गुरु हो तो पुण्यकार्य, मान, धनलाभ, शुक्र का फल मंगल के समान, शनि हो तो राजपक्ष से सौख्य, राहु हो तो अनेक प्रकार का सौख्य होता है ।

११. एकादश स्थानमें स्थित ग्रहों का फल - एकादश भाव में सूर्य या चंद्र हो तो अच्छा लाभ, मंगल हो तो भूमि संबंधी तथा वाहन संबंधी सुख, बुध हो तो वस्त्र सौख्य तथा मान, गुरु हो तो राजपक्ष से मान तथा धन लाभ, शुक्र हो तो सब प्रकार का लाभ, शनि या राहु हो तो यवन से या निम्न जाति के व्यक्ति के द्वारा लाभ होता है ।

१२. द्वादश भाव में स्थित ग्रहों का फल - द्वादश स्थान में सूर्य हो तो आर्थिक कष्ट, चंद्र हो तो अरुचि, रोग, आर्थिक कष्ट तथा व्यय, मंगल हो तो स्त्री से कलह तथा शत्रु से क्लेश, बुध हो तो वैर तथा पशु संबंधी हानि, गुरु हो तो उद्योग में शिथिलता तथा परदेश गमन, शुक्र हो तो शत्रु विवाद के द्वारा सुख, शनि हो तो धन तथा यश की हानि, राहु हो तो हानि तथा पीड़ा होती है ।

चंद्र का विशेष फलित

सम्यक् प्रकाश ग्रन्थ में चंद्र के संबंध में विशेष विचार है, उसीके आधरपर यहाँ चंद्र का फलित प्रस्तुत किया जाता है । कुण्डली में चंद्रमा जिस भाव के नवांश में होता है उसी के अनुसार उसका फल है ।

लग्नभाव के नवांशमें चंद्रमा हो और शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो शरीर पुष्ट होता है । द्वितीय भाव के नवांश में चंद्रमा हो तो धन-धान्य लाभ तथा सुन्दर रसीला भोजन, तृतीय भावके नवांश में हो तो बंधु संबंधी सौख्य, चतुर्थ भाव के नवांश में हो तो उत्तम भोजन, पंचम भाव के नवांश में हो तो संतान संबंधी सौख्य, षष्ठस्थान के नवांश में हो तो रोग तथा शत्रु से क्लेश, सप्तम भाव में हो तो अपनी स्त्री से सौख्य, यदि चंद्र, और शुक्र से युक्त हो तो स्वयंवर के द्वारा प्राप्त स्त्री से सौख्य तथा उसके साथ वार्तालाप से संतोष न होना, अष्टमभाव के नवांश में हो तो अकस्मात् रोग तथा मृत्यु की संभावना, यदि चंद्र दो क्रूरग्रहों के बीच में हो तो वध की संभावना, यदि शुभग्रहों से युक्त चंद्र हो तो थोड़ा सुख, नवम स्थान के नवांश में चंद्र हो तो तीर्थस्नान, तप तथा कल्याण, दशम भाव के नवांश में हो तो कार्य की सफलता, गुरु और शुक्र से युक्त चंद्र हो तो बड़े भारी पद की प्राप्ति, एकादश स्थान के नवांश में चंद्र हो तो नवीन लाभ, यदि चंद्र शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट हो तो बड़ा भारी लाभ होता है । द्वादश भाव के नवांश में चंद्र हो तो खजाने की अथवा पृथ्वी में गड़े हुए धनकी प्राप्ति होती है । यदि चंद्र शुभ ग्रह से युक्त होता है तो शुभ कार्य में व्यय होता है ।

चंद्र के संबंध में अन्य विचार

यदि चंद्र, स्वराशि, उच्च राशि या मित्र राशि का हो, किन्तु नीचराशि, शत्रुराशि या अष्टम स्थान में स्थित न हो और हर्षपद में हो तथा बलवान् हो एवं उसकी राशि का पति उसे देखता हो तथा दिन लग्न के प्रवेश काल में जय-अवस्था में हो तो वह समस्त दिन शुभ होता है। यदि पूर्वोक्त चन्द्र से विपरीत चंद्र हो तो उस दिन अशुभ फल होता है।

दिनलग्न कुण्डली में लग्न के नवांश का फल - लग्न की नवांश राशि, शुभग्रहों से युक्त या दृष्ट हो तथा उसे चंद्र भी मित्रदृष्टि से देखता हो तो शरीर में आरोग्य सौख्य तथा राजपक्ष से मान होता है। यदि उक्त योग से विपरीत होता है तो दुख होता है।

नोट- दिन कुण्डली का विचार मास कुण्डली के समान ही है।

प्रत्येक भाव के नवांशक के फलित

१. यदि लग्नकी नवांश राशि बलवान् शुभग्रहों से युक्त या दृष्ट होती है तो बहुत सुख होता है। यदि उसपर चंद्र की दृष्टि होती है तो विजय तथा धन लाभ होता है।

२. द्वितीय भाव की नवांश राशि शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट हो तो धन का लाभ होता है।

३. तृतीय भाव की नवांश राशि शुभग्रह से दृष्ट हो और चंद्र से दृष्ट हो तो बंधुसंबंधी सौख्य होता है।

४. चतुर्थ भाव का नवांश शुभग्रहों से युक्त या दृष्ट हो तो पारिवारिक सौख्य होता है।

५. पंचम भाव का नवांश चंद्र-बुध-गुरु और शुक्र से युक्त तथा दृष्ट हो तो सन्तान संबंधी सौख्य होता है।

६. षष्ठ भाव का नवांश शुभग्रह से युक्त हो तो शत्रुभय तथा रोग भय होता है।

७. सप्तमभाव का नवांश शुभ ग्रह से युक्त हो तो अपनी पत्नी से रमणसंबंधी सौख्य होता है। यदि सप्तमभाव का नवांश शुभग्रहों के बीच में हो तो शुभ है तथा स्त्री संबंधी सौख्य होता है। यदि सप्तम भाव का नवांश बुध-गुरु और शुक्र से युक्त होता है तो स्त्री जाति से सौख्य होता है।

८. अष्टमभाव तथा अष्टम भाव का नवांश यदि शुभग्रहों से युक्त होता है तो युद्ध संबंधी अनिष्ट होता है। मिश्रित (शुभ तथा पाप) ग्रहों से युक्त होने पर मिश्रित फल होता है। यदि पापग्रहों से युक्त होता है तो शुभ फल होता है।

९. नवमभाव के नवांश में नवमेश हो और शुभग्रह से युक्त हो तो पुण्यकार्य में अत्यन्त रुचि होती है।

१०. दशम भाव का नवांश शुभग्रहों से युक्त हो तो राज्य संबंधी लाभ होता है।

११. एकादश भावका नवांश शुभ ग्रहों से युक्त तथा दृष्ट हो तो अच्छा लाभ होता है।

१२. द्वादशभाव का नवांश शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट हो तो शुभ कार्य में व्यय होता है। यदि पापग्रहों से युक्त और दृष्ट होता है तो हानि होती है।

भाव के नवांश संबंधी फलित का निष्कर्ष- जिस भाव की नवांश राशि शुभग्रहों से युक्त और दृष्ट हो तथा चंद्र की उस पर मित्रदृष्टि हो तो उस भाव से संबधित फल का सौख्य होता है। इससे विपरीत स्थिति में भाव संबंधी दुख होता है। प्रत्येक भाव के संबंध में यही विचार लागू है। इस प्रकार प्रत्येक दिन को शुभ या मध्यम अथवा अशुभ जाना जा सकता है।

दिनकुण्डली संबंधी योगों का विचार

१. दिनकुण्डली में वर्षेश, मासेश और दिनेश त्रिकस्थान में बैठे हों तथा पापग्रहों से युक्त हों एवं पापग्रहों से इत्थशाल करते हों तो मान और यश की हानि तथा रोग की प्राप्ति होती है।

२. दिनकुण्डली में वर्षेश, मासेश तथा दिनेश केन्द्र या त्रिकोणमें स्थित हों, शुभ ग्रहों से युक्त और दृष्ट हों तथा शुभग्रहों से इत्थशाल करते हों तो सब प्रकार का सौख्य देते हैं।

३. लग्नेश लग्नसे या चंद्र से सप्तम स्थान में हो तो बहुत सुख होता है।

४. चंद्र, गुरु और शुक्र चतुर्थ स्थान या दशम स्थान में स्थित हो तो जय और कार्य की सफलता होती है।

५. चंद्र या गुरु, लग्नेश होकर षष्ठ या अष्टमस्थान में स्थित हो, बलहीन हो तथा क्रूरग्रहों से युक्त हो तो रोग संबंधी भय होता है।

६. क्षीण चंद्र पापग्रह से युक्त तथा दृष्ट होकर लग्न में या अष्टम भाव में स्थित हो तो मृत्यु भय, रोग बंधन, शत्रुभय अथवा शस्त्रभय होता है।

७. चंद्र और मंगल छठे या आठवें स्थानमें हों तो शत्रु के द्वारा अथवा शस्त्र से भय होता है।

८. चतुर्थ स्थानमें पापग्रह बैठें तो घोड़े-हाथी या सवारी से गिरना होता है।

९. लग्नमें पापग्रह हों तो शरीर को अत्यधिक पीड़ा होती है।

१०. सप्तम स्थान में शुभग्रह बैठें तो जुए में जीत, लाभ तथा सुख होता है।

११. नवम स्थान में शुभग्रह हों तो भाग्यवृद्धि, धर्म में रुचि, लाभ, यश तथा राजमान होता है।

१२. अष्टम स्थान में सूर्य या मंगल बैठे तो कामों में अड़चन तथा शत्रुभय होता है।

१३. पापग्रह से युक्त चंद्र अष्टम में बैठे तो प्रबल अरिष्ट होता है।

१४. सूर्य, चंद्र, गुरु और शुक्र तीसरे-छठे-सातवें-ग्यारहवें अथवा केन्द्र या त्रिकोण में बैठें तो व्यक्ति अनेक स्त्रियों के साथ रमण करता है ।

१५. सप्तमभाव में निर्बल शनि स्थित हो तो वेश्या से रति होती है।

१६. सप्तमभाव में निर्बल मंगल बुधसे युक्त हो अथवा शुक्र हो तो अपनी पत्नी से रतिज सुख होता है ।

१७. सप्तमभाव में स्थित गुरु रति संबंधी सुख देता है ।

१८. सप्तमभाव में गुरु तथा शुक्र हो तो अनेक प्रकार के भोग तथा अनेक स्त्रियों से रतिसुख होता है ।

नोट- पूर्वोक्त फल यथासम्भव बुद्धि से विचार कर कहने उचित हैं ।

१९. दिनलग्न कुण्डली में लग्न में चंद्रमा हो, दूसरे और बारहवें स्थान में पापग्रह हों तो बंधुओं से तथा शत्रु से कलह होता है ।

२०. लग्नमें चंद्र तथा क्रूरग्रह हों और उन पर क्रूरग्रह की दृष्टि हो तो उस दिन शस्त्र द्वारा मृत्यु भय होता है ।

२१. लग्नमें शुभग्रह से युक्त चंद्र हो तथा उनपर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो उस दिन शुभ फल होता है ।

नोटः- पूर्ण चंद्रमा तथा शुभग्रह एकनवांश में हों तो अत्यत शुभफल है । क्षीण चंद्र का होना शुभ नहीं है ।

२२. दिनलग्न से अष्टम स्थानमें मेष, वृष या मकर राशि हो और वहाँ इन्हीं में से किसी का नवांशक हो तथा वहाँ सूर्य, मंगल और शनि हों तो उस दिन तलवार आदि के द्वारा वध होता है ।

२३. दिनलग्न से अष्टम स्थान में स्वराशि का चंद्र हो और वहाँ मंगल या शनि अथवा राहु या अन्य कोई पापग्रह हो तो उस दिन शस्त्रसे मृत्यु का भय होता है ।

नोट- पहले वर्ष कुण्डली में शस्त्र से वध होने के योग को विचारना, फिर किस मास कुण्डली में है, यह विचार करना है, फिर उस मास के किस दिन की किस दिन कुण्डली में है, यह विचार करना । तदनन्तर ही उक्त फल का कथन करना उचित है ।

वर्ष के अनुरूप मास का और मास के अनुरूप दिन के फल का शुभ-अशुभ निर्णय करना सर्वथा अपेक्षित है ।

२४. दूसरे और बारहवें स्थान में पापग्रह होने से हानि होती है ।

२५. बारहवें स्थानमें शुभ ग्रह होने से शुभ कार्य में व्यय होता है ।

२६. लग्नपर पापग्रहों की कर्तरी होने से रोग होता है और शुभग्रहों की कर्तरी (कर्तरी

का अर्थ कैंची है । कैंची के दो फलक होते हैं । जिस भाव से दूसरे और बारहवें ग्रह होंगे, वह कर्तरी योग है ।) होने से शुभ फल होता है ।

नोट

कर्तरी के विषय में महिर्षि वसिष्ठ का सिद्धान्त

लग्नस्य पृष्ठाग्रगयोरसाध्वोः सा कर्तरी स्यादृजुवक्रगत्यौ ।
तौ शीघ्रचारौ यदि वक्रचारौ न कर्तरी सेति पितामहोक्तिः ।।

लग्नसे दूसरे स्थानमें क्रूरग्रह मार्गी हो और बारहवें स्थानमें क्रूरग्रह वक्री हो तो यह कर्तरी दोष है । यदि भाव से दूसरे और बारहवें स्थान में बैठें दोनों ही ग्रह मार्गी या वक्री होंगे तो कर्तरी दोष नहीं होता है । ऐसा पितामह ब्रह्माजीका सिद्धान्त है ।

कर्तरी दोष के विषयमें गर्गमुनि का सिद्धान्त -

लग्नाद् द्वितिष्फगौ क्रूरौ त्रयमेतत् समांशकम् ।
तदा कर्तरीजो दोषो नान्यथा भावजं फलम् ।।

लग्नभाव से दूसरे और बारहवें भाव में क्रूरग्रह हों, यदि लग्नभाव के तथा उन दोनों ग्रहों के अंशों में अर्थात् तीनों के अंशोंमें समानता होती है तो कर्तरी दोष नहीं होता है । ऐसी स्थितिमें भावजन्य फल होता है ।

योग तथा दृष्टि के संबंध में आचार्य यादव का सिद्धान्त

सम्पूर्णदृष्ट्या च दिने फलं साद्योगस्तथैकांशसमागमोऽत्र ।
क्षीणः शशी नैव शुभप्रदश्च ग्रहैश्च भावांशगतैः फलोक्तिः ।।

दिनके फलित के विचार में दृष्टि के फलमें पूर्ण दृष्टि का ही फल होता है । योग में ग्रहों की अंशों में समानता होने पर योगजनित फल होता है । चंद्र के फलित के विचार में पूर्ण चंद्र का ही शुभ फल होता है, किन्तु क्षीण चंद्र का फल अशुभ होता है, भावमें स्थित ग्रह के फलित के विचारों में भाव के और ग्रह के अंश में समानता होने पर ग्रह का भावजनित फल होता है ।

सर्वत्र फलित के संबंध में पूर्वोक्त विचार अत्युपयोगी हैं । अतः उनको लक्ष्यमें रखकर ही फलित कहना उचित है ।

दिनके फलित के संबंध में अन्यान्य विचार- दिनके फलित के संबंध में तीन विचार और हैं ।

१. चंद्रकी अवस्थाका विचार ।

२. दिनेश का विचार ।

३. काल होरेश का विचार ।

आचार्य नीलकण्ठ का सिद्धान्त - दिनके प्रवेशसमय में चंद्र की जैसी

अवस्था होती है, उसी के अनुरूप फल होता है ।

चंद्र की अवस्थाओं के फलित - चंद्रकी बारह अवस्थाएँ होती हैं । उनके क्रमशः फलित हैं -

१. चंद्रकी प्रवास-अवस्था में दिनप्रवेश हो तो उस दिन प्रवास (यात्रा) होता है।

२. नष्ट अवस्था में धनहानि ।

३. मृति अवस्था में मृत्युभय ।

४. जय अवस्था में जय ।

५. हास्य अवस्थामें स्त्री से विलास ।

६. रति अवस्था में विषय संबंधी सुख ।

७. क्रीड़ा अवस्था में सुख ।

८. प्रसुप्त अवस्था में निद्रा और कलह ।

९. भुक्त अवस्था में शरीर कष्ट ।

१०. ज्वर अवस्था में भय ।

११. कंपित अवस्था में हानि और संताप ।

१२. सुस्थिता अवस्था में सुख होता है ।

नोट - चंद्र की अवस्था के फल के संबंध में आचार्य वामन का सिद्धान्त है - **'कष्टावस्था शुभांशस्थे चन्द्रे ज्ञेया शुभप्रदा'** । अर्थात् यदि चंद्र की अवस्था अशुभ है किन्तु चंद्र शुभराशि के नवांश में है तो अशुभ अवस्था का भी शुभ फल होता है ।

चंद्र की अवस्था के संबंध में ताजक सिंधु का सिद्धान्त- 'दुष्टोपगो यामिनी नायकोऽङ्गाद् व्यस्तं फलं वा जनिभाद् विलोक्यम्' । अर्थात् दिन प्रवेश काल में चंद्र, जन्मलग्न से या जन्मराशि से छठे-आठवें या बारहवें होगा तो उसकी शुभ अवस्था का फल शुभ न होकर अशुभ होगा ।

विवेचना- चंद्र की अवस्था के संबंध में उक्त दोनों विचार ध्यानमें रखने आवश्यक हैं ।

दिनेश का फलित - जिस दिन का दिनेश पूर्णबली होता है तो वह पूरा दिन शुभ बीतता है। दिनेश के मध्यमबली होनेपर दिन सामान्यतया बीतता है । दिनेश के नष्टबली होने पर दिन कष्ट से व्यतीत होता है ।

कालहोरेश के फलित का विचार- आचार्य यवनेश्वर का सिद्धान्त है कि प्रत्येक दिन के फल का विचार कालहोरेश के आधार पर करन का चाहिए । जन्मलग्न, जन्मराशि, वर्षलग्न, मासलग्न, दिनलग्न तथा प्रश्नलग्न, इन सबसे कालहोरश का विचार होता

है । केरलशास्त्र में वर्णित आरूढ लग्न से भी कालहोरेश का विचार करना चाहिए ।

कालहोरेश का विवरण - सूर्योदय के आस-पास वार लगता है । यह वारप्रवृत्ति है । प्रत्येक दिन उस दिन के वार से वारप्रवृत्ति आरंभ होती है । सूर्योदय के आस-पास से २॥ घड़ी या १ घण्टे की कालहोरा या वारहोरा होती है फिर बादमें प्रत्येक छठे-छठे वार की क्रम-क्रम से वारहोरा होती है । जिस ग्रह की वार होरा होती है, वह उसका वार होरेश या कालहोरेश कहलाता है ।

दिनलग्न के प्रवेश समय जिसग्रह की काल होरा होगी वही ग्रह काल होरश होगा। लग्नकुण्डली से कालहोरेश के फल का विचार होता है ।

१. काल होरेश सूर्य के फलित - लग्नकुण्डली में काल होरेश सूर्य त्रिकस्थान में होता है तो शरीरकष्ट, मानसिक-क्लेश, पदच्युति तथा राजकोप होता है ।

१. लग्नभाव में काल होरेश सूर्य हो तो मानसिक क्लेश, मानसिक रोग तथा कार्य हानि हाती है । २. द्वितीय भाव में होरेश सूर्य हो तो धनहानि, भोजन में विघ्न तथा मानसिक क्लेश होता है । ३. तृतीय भाव में कालहोरेश सूर्य हो तो लाभ, वस्त्र प्राप्ति, धान्य तथा फलों की प्राप्ति एवं धैर्य होता है । ४. चतुर्थ भाव में काल होरश सूर्य हो तो सुख की हानि, कलह, रोग, कष्ट तथा धन हानि होती है । ५. पंचम भावमें कालहोरेश सूर्य हो तो स्त्री-संतान को कष्ट तथा बुद्धि में भ्रम होता है । ६. छठे स्थान में कालहोरेश सूर्य हो तो पीड़ा, रोग, लाभ में अनेक अड़चनें, क्लेश तथा बंधुओं को कष्ट होता है । ७. सप्तम भाव में काल होरेश सूर्य हो तो मूत्रकृछ्र (पेशाब लगकर आना), स्त्री, पुत्र को कष्ट तथा राजभय होता है। ८. अष्टम स्थानमें कालहोरेश सूर्य हो तो पीड़ा, कष्ट, भोजनमें विघ्न तथा मानसिक क्लेश होता है । ९. नवमभाव में कालहोरेश सूर्य हो तो पुण्य कार्य, देवभक्ति, पूजा-पाठ आदि धर्म कार्य होता है । १०. दशम स्थान में कालहोरेश सूर्य हो तो उद्योग में विघ्न, कार्य की हानि तथा राजपक्ष से सुख होता है । ११. एकादश स्थानमें कालहोरेश सूर्य हो तो अच्छे वस्त्रों के धारण की इच्छा तथा चुंबन आदि की इच्छा होती है । १२. बारहवें स्थानमें कालहोरेश सूर्य हो तो अग्निभय तथा देन-लेन में हानि होती है ।

अन्यफल- कालहोरेश सूर्य स्वराशि का हो तो भोजन का सुख, समराशि का हो तो सामान्यफल, नीच राशि का हो तो अपने स्वामी का क्रोध तथा दुर्वचन, क्रूर कर्म का करना आदि, शत्रुराशि का हो तो शत्रु को प्रसन्नता, मित्र राशि का हो तो मित्र से मिलन, मूढ़ हो तो बुद्धि की हानि, धन आदि की हानि तथा बंधुकष्ट, जलराशि का हो तो स्नान-पान आदि, स्थल राशि में हो तो शरीर कष्ट, कीट राशि में हो तो खुजली, चरराशि में हो तो कीड़े-मकोड़े का काटना होता है ।

कालहोरेश सूर्यपर शुभग्रह की दृष्टि हो तो शुभ फल और पापग्रह की दृष्टि हो तो अशुभ फल होता है । कालहोरेश सूर्य शुभ हो तो औषधि-शस्त्र-माणिक्य आदि से संबंधित लाभ, मंगल कार्य आदि शुभ फल होते हैं । विपरीत होने पर विपरीत फल होते हैं ।

नोट - सूर्य की दशा का जो फल है वही काल होरेश सूर्य की होरा का फल है। इसी प्रकार सूर्य की होरा का जो फल है वही फल सूर्य के गोचर भ्रमण का है। इसीप्रकार अन्य ग्रहों का जानना।

कालहोरेश चंद्र के फलित - दिनकुण्डली, आरूढ कुण्डली तथा प्रश्न कुण्डली आदि में कालहोरेश चंद्र त्रिकस्थानमें हो तो भोजनमें विघ्न, मानसिक क्लेश, पराजय तथा धन हानि होती है।

कालहोरेश चंद्र, लग्न भाव में हो तो अन्न-वस्त्र आभूषण आदि का सौख्य, खीर-पशुओं का भोजन तथा अच्छी गोष्ठी में काल-यापन होता है। द्वितीय भाव में हो तो धनहानि, दूसरे के यहाँ भोजन संबंधी सौख्य, विद्या से संबंधित वाद, अच्छे पुरुषों की गोष्ठी, राजपक्षसे मान तथा सुख होता है। तृतीय स्थान में हो तो शौर्य, धैर्य, उत्साह, भोज़न-वस्त्र-गंध आदि सौख्य, जय, अच्छी बुद्धि, महत्व तथा राजपक्ष से मैत्री होती है। चतुर्थ भाव में हो तो शरीर में तेल आदि का मर्दन कार्य का करना तथा परदेश से किसी अच्छी सूचना का मिलना होता है। पंचम स्थान में हो तो पशु तथा धान्य का सौख्य आदि तथा वाणी की चतुरता आदि होती है। षष्ठभाव में हो तो क्रोध,शत्रुभय, राजपक्ष से वार्तालाप के द्वारा प्रसन्नता होती है। सप्तम भाव में हो तो स्नान-भोजन तथा स्त्री से सुख होता है। अष्टम स्थान में हो तो दूसरे के द्वारा विघ्न, कार्य में हानि तथा मानसिक क्लेश होता है। नवम स्थान में हो तो स्नान-भोजन, पुत्रसुख आदि तथा आराम मिलता है। दशम स्थान में हो तो कार्य करने की प्रवृत्ति, कार्य में सफलता तथा कुछ कलह भी होता है। एकादश भाव में हो तो मनमें धैर्य, सब तरह का सुख तथा मानसिक विचार होते हैं। द्वादश स्थान में हो तो भ्रमण, मानसिक क्लेश तथा बंधु को रोग होता है।

नोट - कालहोरेश चंद्र की स्वराशि तथा उच्चराशि आदि का भी फलितमें विचार रखना है।

चंद्र से संबंधित वस्तुएँ - वस्त्र आभूषण, पुष्प, तेल-घी, शंख, अस्थि आदि। कालहोरेश चंद्र के अनुसार उक्त वस्तुसंबंधी सौख्य तथा असौख्य होता है।

चंद्रकी चर, स्थिर तथा द्विस्वभाव राशि आदि सब विचार करने। उक्त विचारों के द्वारा आदिभाग, मध्यभाग तथा अन्तिम भाग में फल होने की कल्पना करनी।

कालहोरेश मंगल के फलित -

कालहोरेश मंगल लग्नकुण्डली में त्रिकस्थान या सप्तम स्थान में हो तो भ्रम, बुद्धि में मलिनता, ताप, कलह, शरीरकष्ट तथा धन हानि होती है।

कुण्डली में काल होरेश मंगल लग्नमें हो तो पित्त विकार, कलह, प्रमाद तथा पदसंबंधी चिन्ता होती है। कुण्डली में कालहोरेश मंगल द्वितीय स्थानमें हो तो वाणी तथा मनमें क्लेश, संताप, वैर तथा भोजन की गड़बड़ी होती है। तृतीय भाव में हो तो शरीर में तेल का मर्दन आदि, काम में रुकावट, शिथिलता तथा वैर होता है। चतुर्थ स्थानमें हो तो बंधु

को रोग, घर आदि के संबंध में चिन्ता तथा माता को ज्वर आदि की पीड़ा होती है। पंचम भाव में हो तो पुत्र से विरोध, ताप, बुद्धि में भ्रम तथा कुछ हानि होती है षष्ठस्थान में हो तो शत्रुभय, विशेष कलह, परेदश से दुखद वृत्तान्त का मिलना तथा पीड़ा होती है। सप्तम भाव में हो तो स्वशरीर में कष्ट, स्त्री-पुत्र को कष्ट, विद्वानों से विद्यासंबंधी गोष्ठी, भूमि संबंधी मुकदमें की चिन्ता तथा सौख्य की हानि होती है। अष्टम भाव में हो तो धन हानि, भोजन की गड़बड़ी, मेहनत, क्रोध तथा चोर से भय होता है। नवम स्थान में हो तो धर्म की हानि, पद की हानि, श्रम तथा राज कोप होता है। दशम स्थान में हो तो कार्य में रुकावट, कलह में रुचि धनका संकट, राजपक्षसे भय, धैर्य, घर-जमीन संबंधी कार्य में रुचि तथा प्रियजन का संग या मिलन होता है। एकादश स्थानमें हो तो सौख्य, धनलाभ, रत्नलाभ तथा शरीर संबंधी क्रिया होती है। द्वादश स्थान में हो तो बन्धुसे विरोध, काम में अड़चन तथा घर संबंधी काम होता है।

कालहोरेश मंगल, उच्च राशि में हो तो राजपक्षसे मान, सौख्य तथा उद्योग में सफलता होती है। स्वराशि में हो तो मित्र मिलन, धनलाभ, धैर्य, उद्योग, विनोद तथा शुभफल होता है। मित्रराशि में हो तो मित्र से मिलन, वस्त्र-आभूषण और सुगन्धित द्रव्य का उपयोग तथा शुभफल होता है। समराशि में हो तो सबके प्रति प्रेम व्यवहार तथा राजपक्ष से मान की संभावना होती है। नीचराशि में हो तो नीच श्रेणी के व्यक्ति से अपमान, शत्रु के वाक्य का सुनना तथा द्वेष होता है। काल होरेश मंगल मूढ हो तो बुद्धि में भ्रम, धनहानि, बंधु से क्लेश, शत्रुभय, चोरभय, क्लेश, दूरगमन, कष्टकर वचन, लड़ाई-झगड़ा, रक्त का निकलना आदि होता है।

कालहोरेश बुध का फलित - कालहोरेश बुध त्रिकस्थानमें हो तो कामों में अड़चन, बुद्धि में भ्रम, ज्ञान की हानि, स्त्री-संतान को कष्ट तथा धनहानि होती है। जलराशि में हो तो स्नान, गंधलेपन, वस्त्र-आभूषण आदि का सौख्य, गाने-वजाने का आनंद तथा स्त्रीसंबंधी सौख्य होता है। उच्चराशि में हो तो मनमें धैर्य, देवभक्ति, सुगंधितद्रव्य तथा आभूषण का उपयोग होता है। स्वराशि में हो तो परिहास (हँसी-मजाक), राजपक्षसे प्रसन्नता, तथा बंधु सौख्य होता है। मित्रराशि में हो तो स्त्री-संतान सुख तथा राजपक्षसे प्रसन्नता होती है। समराशि में हो तो सामान्य बुद्धि, धर्म में रुचि,कथा का श्रवण और कीर्तन होता है। शत्रुराशि में हो तो अपवाद (अपनी बुराई), दूसरे की निन्दा करना तथा पीड़ा होती है। नीचराशि में हो तो मानसिक क्लेश, वृत्ति में अड़चन तथा राजपक्ष से विघ्न होता है।

कालहोरेश बुध, लग्न भाव में हो तो धैर्य, क्रीड़ा का सुख, ज्ञान तथा सौख्य होता है। द्वितीय स्थान में हो तो धन-लाभ, विजय, सुन्दर भोजन तथा रसायन औषधि का सेवन होता है। तृतीय भाव में हो तो भ्रातृ प्रेम, धैर्य तथा विविध-पदार्थों का भोजन होता है। चतुर्थ स्थान में हो तो बंधुसुख, सवारीका सुख, फलों का तथा सुगंधित द्रव्य का और वस्त्र का उपयोग होता है। पंचम भाव में हो तो पुत्र की चिन्ता, लाभ तथा राजपक्ष से प्रसन्नता होती है। षष्ठ स्थान में हो तो मूत्रेन्द्रिय संबंधी कष्ट, हानि, मानसिक क्लेश तथा बंधु को रोग होता है। सप्तम स्थान में हो तो स्त्री सुख तथा थोड़ी अवस्था की स्त्री से क्रीड़ा तथा प्रेमालाप होता

है । अष्टम भाव में हो तो अन्नादि की कमी, धन की हानि तथा राजपक्ष की अप्रसन्नता होती है । नवमभाव में हो तो हवन-पूजन-दान आदि धर्म कार्य तथा सौख्य होता है। दशम भाव में हो तो कार्य करने में प्रवृत्ति, यश तथा मान-सत्कार होता है । एकादश स्थानमें हो तो जय, सुख, कीर्ति, राजपक्षसे मान तथा अच्छी वार्ता का श्रवण होता है । द्वादश स्थान में हो तो जाति से तथा शत्रु से क्लेश, पीड़ा, कुक्षिसंबंधी कष्ट तथा बंधु को पीड़ा होती है।

नोट- बुध की होरा तथा दशा में विचार पूर्वक उक्त फल जानने ।

कालहोरेश गुरु के फलित - कालहोरेश गुरु कुण्डली में त्रिकस्थान में हो तो पुत्र को रोग, स्वशरीर में कष्ट, बुद्धि में भ्रम, चिन्ता, मानसिक क्लेश, शिथिलता तथा पदच्युति (ओहदे से हटना) की सम्भावना होती है ।

कुण्डली में १/२/३/४/५/७/९/१०/११/ स्थान में से किसी स्थान में कालहोरेश गुरु हो तो जय तथा विद्वानों से समागम होता है ।

कालहोरेश गुरु उच्चराशि में हो तो राजपक्ष से लाभ, जय, सुन्दर वचनों का श्रवण, स्त्री संबंधी लाभ तथा प्राप्ति होती है । स्वराशि का हो तो प्रीति, राजपक्ष से सौख्य तथा विद्वानों का समागम होता है । मित्रराशि में हो तो मित्र द्वारा लाभ, सौख्य, प्रीति, सुहृद का आगमन होता है । समराशि में हो तो समानता की बुद्धि तथा तत्त्वज्ञान का चिन्तन होता है । शत्रुराशि में हो तो विरुद्ध वाक्यों का कथन तथा श्रवण, भ्रम तथा दूसरे के दूषण का कहना होता है। नीच राशि में हो तो नीच कार्य करने की प्रवृत्ति, ब्राह्मण द्वेष तथा धन हानि होती है । कालहोरेश गुरु मुढ हो तो राजपक्ष की अप्रसन्नता,संक्रामक रोग (छूत की बीमारी) की पीड़ा, क्लेश तथा दिलकी बीमारी होती है । इसीप्रकार चरराशि तथा स्थिर राशि का फल भी पूर्वोक्त राशियों के अन्तर्गत है ।

नोट- उक्त फल गुरु की दशा में भी लागू है ।

कालहोरेश शुक्र के फलित - कालहोरेश शुक्र कुण्डली में त्रिकस्थानमें हो तो स्त्री से विरोध, स्त्री-संतान को कष्ट, वाहन संबंधी कष्ट तथा स्वशरीर में कष्ट होता है ।

कुण्डली में १/२/३/४/५/७/९/१०/११/ स्थानों में से किसी भी स्थान में काल होरेश शुक्र हो तो स्त्री के साथ क्रीड़ा, सबकार्यों की सिद्धि, वस्त्र-आभूषण-गंध-माल्य आदि का भोग, आदर-सत्कार तथा जय होती है ।

कालहोरेश शुक्र उच्चराशिमें हो तो प्रचंड वेश्या से या स्त्री से रतिक्रिया का प्रसंग होता है। स्वराशि में हो तो वस्त्र-आभूषण की प्राप्ति,करद्वारा लाभ तथा पुत्री का लाभ होता है । मित्रराशि में हो तो स्त्री से प्रेम, स्त्री के द्वारा भोजन, पुष्प तथा वस्त्र आदि का भोग होता है । समराशि में हो तो सामान्य बुद्धि, विवाद, कलह तथा लाभ की सूचना होती है । शत्रुराशि में हो तो शत्रु की उत्पत्ति, बंधु तथा इष्ट को हानि, अरुचि तथा कुमार्ग में जाने की प्रवृत्ति होती है । अधिशत्रुराशि में हो तो अतिकष्ट, स्त्री से तथा बंधु आदि से कलह होता है । नीच राशि में हो तो निम्नश्रेणी के व्यक्ति के द्वारा अधिक हानि, शत्रुभय तथा क्रोध की अधिकता

होती है। चर-स्थिर जलराशि आदि का भी फल पूर्वोक्त रीति से जानना। शुभग्रह तथा पापग्रह की दृष्टि का भी विचार रखना।

कालहोरेश शुक्र कुण्डली में लग्न भाव में हो तो स्त्री संबंधी सौख्य, वस्त्र-आभूषण आदि की प्राप्ति तथा गंध-माला आदि का भोग होता है। द्वितीय स्थान में हो तो सुन्दर भोजन, धैर्य, वाणी की चतुरता तथा लाभ होता है। तृतीय भाव में हो तो अच्छे पदार्थों का भोजन, वस्त्र-भूषण का सौख्य तथा धैर्य प्राप्त होता है। चतुर्थभाव में हो तो सवारी की प्राप्ति, ऊँचे स्थान पर चढ़ना तथा सौम्यता होती है। पंचम स्थान में हो तो बुद्धि की विषमता, पुत्र-स्त्री आदि में मनकी आसक्ति होती है। षष्ठ स्थान में हो तो काम में अड़चन, धन-धान्य तथा वस्त्र की हानि, नेत्र तथा कोख में पीड़ा, मूत्रकृछ्र (पेशाब लगकर आना), प्रमेह तथा भ्रम होता है। सप्तम स्थानमें हो तो स्त्री से विरोध, कष्ट, पसवाड़ों में सेक आदि से लाभ होता है। अष्टमभाव में हो तो भोजन में अड़चन या समय बीत जाने पर भोजन प्राप्त होता है। नवमभाव में हो तो स्नान, अच्छा खान-पान तथा तीर्थयात्रा का प्रसंग होता है। दशम स्थान में हो तो कविता संबंधी आनंद, आरोग्य तथा सब प्रकार का सौख्य होता है। एकादश स्थान में हो तो सौख्य, लाभ, सुन्दर भोजन, वस्त्र-भूषण का सौख्य तथा मान-सत्कार होता है। द्वादश स्थान में हो तो सवारी आदि के द्वारा भ्रमण, लाभ, कहींसे चिट्ठी-पत्री का आना तथा कुछ खर्च भी होता है।

नोट- शुक्र के फलित में चर आदि राशि, नवांश,ग्रह की दृष्टि, युति तथा शुक्र ग्रह की धातु आदि का विचार करना। शुक्र की होरा का पूर्वोक्त फल शुक्र की दशा में भी जाना जाता है।

कालहोरेश शनि के फलित - कालहोरेश शनि कुण्डली में त्रिकस्थान में हो तो नौकर को कष्ट,धनका खर्च, अपने शरीर में रोग, पेरशानी,कलह तथा बुद्धि में भ्रम होता है। यदि त्रिकस्थान के अतिरिक्त किसी अन्यस्थानमें हो तो मनमें धैर्य सुख तथा नौकर -चाकर से प्रेम होता है।

उच्चराशि में हों तो सब प्रकार का सौख्य होता है। स्वराशि में हो तो राजपक्ष से मान, लाभ तथा प्रेम होता है। मित्रराशि में हो तो मित्र द्वारा लाभ, खेत-जमीन आदि से लाभ तथा मित्रसे प्रीति बढ़ती है। यदि मित्रग्रह के वर्ग में होता है तो पशु का लाभ होता है। समराशि में हो तो सामान्य चिन्ता, धनकी चिन्ता, भ्रम तथा क्लेश होता है। शत्रुराशि में हो तो शत्रु से विवाद, कलह, दोष का लगना तथा राजपक्ष से भय होता है। अधिशत्रु राशि में हो तो भय, क्लेश, निन्दा शरीरकष्ट, पीलिया आदि रोग, भ्रम, निम्न श्रेणी के व्यक्ति के द्वारा अपमान का प्रसंग होता है।

कालहोरेश शनि कुण्डली में लग्न भाव में हो तो शरीर में पीड़ा आदि, धन का संकट, बंधु को कष्ट, कलह होता है। द्वितीय भाव में हो तो अन्याय का सुना जाना, पद से स्खलित होने की संभावना तथा क्लेश और आलस्य होता है। तृतीय भाव में हो तो थोड़ा और वासी भोजन अथवा उपवास (फाका), सौम्यता, लाभ, नेत्रों के द्वारा वस्तुओं का देखना

है। चतुर्थ स्थान में हो तो सुख की हानि, घरमें कष्ट, बंधुकष्ट तथा धन का खर्च होता है। पंचम भाव में हो तो बुद्धि में मलिनता, पुत्र-स्त्री तथा राजसंबंधी भय, अचानक कलह तथा क्लेश, राजपक्ष से मोहर लगी चिट्ठी मिलती है। षष्ठ स्थान में हो तो पीड़ा, मूत्रकृच्छ्र आदि का भय तथा शत्रु पर विजय प्राप्त होती है। सप्तम स्थान में हो तो स्त्री को रोग, क्लेश, दूत का आगमन, चिट्ठी का आना, स्त्री से क्रीड़ा में कलह, नौकर पर क्रोध तथा भ्रमण होता है। अष्टम भाव में हो तो भोजन आदि में गड़बड़ी, क्लेश, एकान्तवास की रुचि तथा बुद्धि में भ्रम होता है। नवम भाव में हो तो प्रवृत्ति का भंग, सौम्यवृत्ति का भंग तथा अद्‌भुत बुरे स्वप्न दिखलायी देते हैं। दशम भाव में हो तो धन और सुख की प्राप्ति, शरीर संबंधी कार्य तथा कृषि संबंधी कार्य होता है। एकादश स्थानमें हो तो कुंआ-वावड़ी आदि का कार्य, दुर्ग (किले) की रक्षा तथा अन्य कार्य-कलाप होते हैं। द्वादशस्थान में हो तो आलस्य, पद से स्खलन होने की संभावना, बंधन का भय, चिन्ता, वैर, मानसिक दुख, घोड़े आदि पशु से पीड़ा पहुँचने का प्रसंग होता है।

नोट - शनि की होरा का पूर्वोक्त फल विचार पूर्वक जानना। पूर्वोक्त फल शनि की दशा में तथा विशेष कर के शनिवार में होता है। प्रत्येक ग्रह की होरा का फल उस ग्रह के वार (दिन) में विशेष करके होता है। शनि के योग से अरिष्ट, मरण, धनकी हानि तथा सुख-दुख की न्यूनाधिकता होती है। ये सब विचार शनि की दशा या शनि की होरा अथवा शनि के वार में जानने। शनि की राशि के स्वामी के अनुसार अथवा शनि राशि के नवांश के अनुसार भी विचार होता है।

जन्म कुण्डली, वर्षकुण्डली, प्रश्नकुण्डली, आरूढ कुण्डली आदि सभी में कालहोरेश के फलित का विचार होता है।

अन्य फलित का विचार- दिन कुण्डली ६० घड़ी या२४ घण्टों की होती है, अत: इसमें एक दिन और एक रात्रि का समावेश होता है। दिन में किये जाने वाले कार्य-कलाप को दिनचर्या कहते हैं। इसीप्रकार रात्रि में किये जाने वाले कार्य-कलाप को रात्रिचर्या कहते हैं। दिनचर्या में दो कार्य प्रधान हैं। १. भोजन। २. मनोरंजन। व्यक्ति को किस दिन, किस प्रकार का भोजन प्राप्त होगा, इस विषय में ताजक शास्त्र के आचार्यों ने अच्छा विचार किया है। व्यक्ति को निकट भविष्य में इस प्रकार का भोजन करना है- यह बतला दिया जाने पर उसे उसी प्रकार का भोजन प्राप्त होता है तो ज्योतिष से उसे प्रभावित होना अनिवार्य है।

व्यक्ति के लिए भोजन के अतिरिक्त मनोरंजन भी स्वाभाविक है। पुराने जमाने में लोग आखेट या मृगया यानी शिकार खेलने को विशिष्ट मनोरंजन मानते थे। अब भी शिकार खेलने की प्रथा है। प्राचीनकाल के शिकारी लोग ज्यौतिषियों से शिकार के संबंध में प्राय: प्रश्न किया करते थे, अतएव इस विषय में भी ताजक शास्त्र के आचार्यों ने विचार लिखे हैं।

रात्रिचर्या में प्रधान कार्य शयन (सोना) है। प्रत्येक व्यक्ति को नींद आने पर प्राय:

स्वप्न दिखलायी दिया करते हैं। प्राचीनकाल के लोगों का स्वप्न किस प्रकार का दिखलायी देगा ? यह भी एक जिज्ञासा का विषय था। अत: इस संबंध में भी प्रश्नोत्तरों का होना स्वाभाविक है। आचार्यों के मस्तिष्क में यह विषय भी आया। अत: उन्होंने इस विषय पर भी विचार व्यक्त किये।

अब यहाँ पर भी उक्त तीनों विषयों (१. भोजन। २. शिकार। ३. स्वप्न) पर क्रमश: विचार प्रस्तुत किये जायेंगे।

भोजन संबंधी विचार - आचार्य वामन का सिद्धान्त है कि दिन लग्नकुण्डली बनाकर उसमें ग्रहों की स्थिति के अनुसार भोजन आदि का विचार करना चाहिए। भोजन के विचार में चार बातें जाननी आवश्यक हैं। १. भोजन देने वाला। २. भोजन। ३. भूख। ४. भोजन करने वाला।

भोज्यदाता तनुस्वामी भोज्यं हिबुकवेश्मपः।
द्यूनपश्च बुभुक्षोक्ता भोक्ता कर्माधिपो मतः।।

दिनकुण्डली या प्रश्न कुण्डली में लग्नस्थान का स्वामी भोजन-देने वाला है। चतुर्थ स्थान का स्वामी भोजन है। सप्तम स्थान का स्वामी भोजन की इच्छा यानी भूख है। दशम स्थान का स्वामी भोक्ता (भोजन करने वाला) माना जाता है। इन्हीं चारों से भोजन संबंधी विचार होता है। अब भोजन संबंधी योग प्रस्तुत किये जाते हैं -

१. कुण्डली में लग्न स्थान में या एकादश स्थान में शुभग्रह बैठें या शुभग्रहों की उक्त स्थानों पर दृष्टि हो तो अच्छा भोजन प्राप्त होता है।

२. कुण्डली में लग्न गुरु या शुक्र हो तो बुरी जगह पर भी अच्छा भोजन प्राप्त होता है।

३. कुण्डली में लग्नस्थान सूर्य से दृष्ट या युक्त हो तथा राहु या शनि सूर्य से युक्त या दृष्ट हो तो कहीं पर भी भोजन प्राप्त नहीं होता प्रत्युत (वरन्) शस्त्र से चोट लगती है।

४. लग्न स्थान सूर्य से युक्त या दृष्ट न हो तो सांयकाल के समय कदशन (बुरा भोजन) प्राप्त होता है या लंघन (फाका) होता है।

५. दशम स्थान में चंद्र हो तो गर्म भोजन मिलता है।

६. दशम में मंगल हो तो ठंडा भोजन मिलता है।

७. चतुर्थ स्थानमें सूर्य हो तो तिक्त (कड़ुवा) रस का भोजन मिलता है।

८. चतुर्थ स्थान में चंद्र हो तो नमकीन भोजन होता है।

९. चतुर्थ स्थान में मंगल हो तो कटु (तीखा) भोजन होता है।

१०. चतुर्थ स्थान में बुध हो तो मिश्रित (कई प्रकार का) भोजन होता है।

११. चतुर्थ स्थान में गुरु हो तो मधुर (मीठा) भोजन होता है।

१२. चतुर्थ स्थान में शुक्र हो तो खट्टे रस का भोजन होता है ।

१३. चतुर्थ स्थान में शनि हो तो बहुत भोजन होता है ।

१४. कुण्डली में जो ग्रह बलवान् होता है उसी के अनुसार रस का भोजन होता है।

१५. लग्न भाव में उच्चराशि का सूर्य आदि ग्रह हो तो राजा आदि के घर भोजन होता है ।

नोट. सूर्य और चंद्रमा राजा हैं । मंगल मण्डलेश्वर है । बुध राजकुमार है । गुरु मंत्री है । शुक्र नेता है । शनि सेवक है । लग्नस्थान में जो भी ग्रह उच्च का होगा उसी के अनुसार राजा आदि के यहाँ भोजन होता है ।

१६. शुक्र के बलवान् होने पर घी से चिकना भोजन होता है ।

१७. शनि के बलवान् होने पर तेल का भोजन मिलता है ।

१८. उच्चराशि के ग्रह से भली-भाँति पका हुआ सुन्दर भोजन मिलता है ।

१९. चतुर्थ स्थान में नीचराशि का ग्रह हो तो कदशन (बुरा भोजन) या बिना पकी वस्तु का भोजन होता है ।

२०. मूलत्रिकोण राशि में ग्रह के होने से अपने पिता के यहाँ भोजन होता है ।

२१. मित्रराशि में ग्रह हो तो मित्र के यहाँ भोजन होता है ।

२२. समराशि में ग्रह हो तो सम (न मित्र और न शत्रु) व्यक्ति के यहाँ भोजन होता है ।

२३. द्वितीय स्थान में ग्रह हो तो पैसों से खरीद कर भोजन होता है ।

२४. तृतीय स्थान में ग्रह हो तो बंधु के यहाँ भोजन होता है ।

२५. चतुर्थ स्थान में ग्रह हो तो पिता के घर भोजन होता है ।

२६. पंचम भाव में ग्रह हो तो पुत्र के द्वारा भोजन होता है ।

२७. षष्ठ स्थान में ग्रह हो तो शत्रु के यहाँ भोजन होता है ।

२८. सप्तम स्थान में ग्रह हो तो स्त्री के यहाँ भोजन होता है ।

२९. अष्टम स्थान में ग्रह हो तो कपट के द्वारा भोजन होता है ।

३०. नवम स्थान में ग्रह हो तो धर्म पूर्वक भोजन होता है ।

३१. दशम स्थान में ग्रह हो तो राजकर्मचारी के यहाँ भोजन होता है ।

३२. एकादश स्थान में ग्रह हो तो मित्र के यहाँ कुछ अनादर से भोजन होता है।

३३. द्वादश स्थान में ग्रह हो तो पैसों से खरीदा हुआ भोजन होता है ।

नोट - चतुर्थ स्थान के नवांश से भोज्य पदार्थों के समुदाय जानने अर्थात् नवांश राशि से तथा नवांशेश से उस की वस्तुएँ तथा रस जानने ।

३४. चंद्रमा, अपने राशि को देखता हो तो सुखपूर्वक भोजन होता है ।

३५. अपने राशि पर चंद्रमा की दृष्टि नहीं होती है तो भोजन कष्ट से और दुर्वचन से मिलता है ।

३६. दिन के प्रवेश काल में या प्रश्न काल में कुण्डली में कालहोरेश लग्नस्थान में या चतुर्थ स्थान में हो तो भोजन शीघ्र होता है ।

३७. राहु द्वितीय या चतुर्थ स्थान में हो तो मिष्टान्न खाने को नहीं मिलता है ।

३८. चंद्र की दृष्टि लग्न पर या चतुर्थ स्थान पर होने से अच्छा भोजन होता है ।

३९. सप्तम स्थान पर शुभग्रह की दृष्टि होने से अपने स्थान पर ही सुख पूर्वक भोजन होता है ।

४०. सप्तम स्थान को उसका शत्रु ग्रह देखें तो शत्रु के घर भोजन होता है ।

नोट - पूर्वोक्त फलित के अनुरूप अपनी बुद्धि के द्वारा अन्यान्य कल्पनाएँ भी की जा सकती हैं ।

४१. लग्नमें सब ग्रह हों तो अपने घरपर ही भोजन होता है ।

४२. चरराशि की लग्न हो तो कई बार भोजन होता है ।

४३. स्थिर राशि की लग्नमें एकबार भोजन होता है ।

४४. द्विःस्वभाव राशि की लग्न में दो बार भोजन होता है ।

४५. लग्न में बलवान् गुरु और शुक्र हों तो ब्राह्मण के घर भोजन होता है ।

४६. लग्नमें बलवान् सूर्य और मंगल हों तो क्षत्रिय के घर भोजन होता है ।

४७. लग्नमें बलवान् चंद्र हो तो वैश्य के घर भोजन होता है ।

४८. लग्नमें बलवान् बुध हो तो शूद्र के घर भोजन होता है ।

४९. लग्नमें बलवान् शनि हो तो नीच के घर कुत्सित भोजन होता है ।

५०. चतुर्थेश चौथे स्थान में हो तो रसयुक्त सुन्दर भोजन होता है ।

५१. चतुर्थेश शुभग्रह की राशि में हो तो रसयुक्त भोजन होता है ।

५२. चतुर्थेश पापग्रह की राशि में होने से नीरस भोजन होता है ।

नोट- कुण्डली में जो ग्रह बलवान् होता है उसी के अन्न का भोजन होता है । ग्रहों के अन्न - १. सूर्य के तिल । २. चंद्र के चावल । ३. मंगल के मसूर और चने । ४. बुध के मूंग और उड़द । ५. गुरु के गेहूँ । ६. शूक्र के जौ, वाजरा, जुवार । ७. शनि के कुण्डली, उड़द आदि । ८. राहु-केतु के छिल्के आदि ।

ग्रहों के शाक - १. सूर्य का मूल शाक। २. चंद्र का फूल से संबंधित शाक। ३. मंगल का पत्तों का शाक। ४. बुध-गुरु और शुक्र के अनेक प्रकार के व्यंजन। ५. शनि के कई प्रकार के शाक। ६. राहु-केतु के मांस के सहित शाक।

जो ग्रह बलवान् होता है उसी के शाक का भोजन होता है। यदि उक्त बलवान् ग्रह पर शुभ ग्रह की दृष्टि होती है तो प्रसन्नता पूर्वक भोजन होता है और पापग्रह की दृष्टि होने से अप्रसन्नता के साथ भोजन होता है। यही फल ग्रह की युति का है।

चंद्रकी अवस्था के अनुसार भोजन का विचार-

आचार्य यादव का सिद्धान्त है कि दिन प्रवेश तथा प्रश्न के समय चंद्र की जो अवस्था हो उसके अनुसार भोजन होता है।

चंद्र की बाहर अवस्थाएँ हैं। प्रत्येक अवस्था के भोजन का विवरण प्रस्तुत किया जाता है।

१. प्रवास-अवस्थामें चंद्र के होने से पुरोडाश (पिट्ठी से बनी वस्तु), अधिक नमकीन वस्तु, अन्यरसों से रहित, अल्प भोजन विलम्ब से प्राप्त होता है तथा मनमें दुख होता है। २. नष्ट-अवस्था में चंद्र के होने से शाक-पत्र से रहित, शुष्क और कुत्सित भोजन प्राप्त होता है। ३. मृत-अवस्था में चंद्र के होने से उपवास होता है। अजीर्ण का विकार तथा रोग और दुख होता है। ४. जय-अवस्था में चंद्र के होने से प्रेम पूर्वक स्वादिष्ट पदार्थों का भोजन होता है। ५. हास्य-अवस्था में चंद्र के होने से नियंत्रण (न्योता) होता है अथवा बंधुके घर भोजन होता है। खीर-दही-मिष्टान्न तथा उड़द की दाल की पिट्ठी से युक्त पदार्थों का भोजन होता है। ६. रति-अवस्थामें चंद्र के होने से पुत्र-मित्र के साथ पत्नी के बनाये हुए मीठे पदार्थ का भोजन होता है। ७. क्रीड़ा-अवस्था में चंद्र के होने से पाँच प्रकार के पदार्थों का भोजन होता है। प्रेमपूर्वक दाल तथा लेह्य (चाटने योग्य पदार्थ) का भोजन और अमृत के समान जल का पान होता है। ८. सुप्त-अवस्थामें चंद्र के होने से ठंडा तथा कई चीजों का मिलुआ भोजन होता है। ९. युक्त-अवस्था में चंद्र के होने से पत्नी के द्वारा बनाये गये खीर आदि मधुर पदार्थ,उत्तम अन्न, दही, पके फल आदि का सुख पूर्वक संतोषप्रद भोजन होता है। १०. ज्वर-अवस्था में चंद्र के होने से गर्म तथा ज्यादा देर में पकने वाले अन्न का तथा खारी और तिक्त (कड़ुवा) रस का भोजन अरुचि के साथ होता है। ११. कंपित-अवस्था में चंद्र के होने से अपने आप भोजन बनाना पड़ता है तथा देरसे भोजन करना पड़ता है। १२. स्थिर अवस्थामें चंद्र के होने से अपने घर में प्रेम पूर्वक भोजन होता है।

नोट- मास के तथा दिन के फलित में ग्रह की दृष्टि का साधन तथा उसके विंशोपका (विश्वे) ध्यान में रखने आवश्यक हैं।

तात्कालिक चंद्र के द्वारा भोजन का विचार- ताजिक सुधानिधि ग्रन्थ में उल्लेख है कि दिनचर्या का फल विद्वानों के लिए भी दुर्बोध है। तात्कालिक ग्रहों का साधन करके उनके नवांशों के द्वारा शुभ-अशुभ फलित जानना।

उक्त रीति से क्षण-क्षण में फलित संबंधी कौतूहल प्राप्त हो सकता है। मासचर्या में सूर्य, बुध और शुक्र ये तीन जिस ग्रह के नवांश में आते हैं उससे संबंधित विशेष फल करते हैं। दिनचर्या में प्राय: सभी ग्रह अपने-अपने नवांश में फल देते हैं। यहाँ तात्कालिक चंद्र के विचार से फलित प्रस्तुत किया जाता है।

दिन प्रवेश काल में या प्रश्न काल में तात्कालिक चंद्र से चौथे स्थान उच्च राशि या स्वराशि का सूर्य होता है तो सुन्दर भोजन होता है। यदि पापराशि के नवांश का या शत्रुराशि का सूर्य होता है तो असमय में कटु भोजन होता है।

तात्कालिक चंद्र से चौथे स्थान में चंद्र हो तो नमकीन और मीठा भोजन होता है। यदि चंद्रमा पापग्रह से युक्त या पापग्रह के नवांश में हो तो वमन (कय) होता है।

दिन कुण्डली या प्रश्न कुण्डली में तात्कालिक चंद्र से कुण्डली का द्वितीय स्थान के नवांश में हो तो और शुभग्रह से दृष्ट हो तो उस दिन सुंदर भोजन तथा धन लाभ होता है। तृतीय भाव के नवांश में चंद्र हो तो कुछ भी भोजन नहीं मिलता है। चतुर्थभाव के नवांश में चंद्र हो तो साथ में भोजन न होकर अकेले में भोजन होता है। पंचम भाव के नवांश में हो तो अनेक प्रकार का सुख होता है। षष्ठ स्थान के नवांश में हो तो रोग और संताप होता है। सप्तम स्थान के नवांश में हो तो स्त्री संबंधी सुख होता है। तात्कालिक चंद्र से सप्तम भाव में बुध, गुरु और शुक्र हों तो उत्तम स्त्रियों द्वारा बड़ा सुख होता है। तात्कालिक चंद्र पर द्वितीय स्थान के स्वामी की दृष्टि हो तो सुख होता है। अष्टम स्थान के नवांश में चंद्र हो तो तलवार आदि शस्त्र के द्वारा बध की संभावना होती है। नवम स्थान के नवांश में चंद्र हो तो तीर्थ स्नान, दक्षिणा देना आदि पुण्य कार्य होता है तथा अकस्मात् ऐश्वर्य प्राप्त होता है। दशम स्थान के नवांश में चंद्र हो तो भय होता है यदि गुरु या शुक्र के नवांश में हो और गुरु से युक्त हो तो राजपक्ष से सुख होता है। एकादश स्थान के नवांश में हो तो मोती आदि रत्नों का लाभ होता है। यदि चंद्र सभी ग्रहों से अथवा सूर्य से युक्त होता है तो संपत्ति की हानि होती है। द्वादश स्थान के नवांश में चंद्र हो और शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो विवाह आदि शुभकार्य में व्यय होता है। तात्कालिक चंद्र से द्वादश स्थान के नवांश में क्षीण चंद्र सूर्य से युक्त हो तो राज दण्ड होता है। लग्नभाव के नवांश में चंद्र हो, वह लग्नेश से युक्त न हो तथा क्रुर ग्रह से युक्त और दृष्ट हो तो उस दिन शस्त्र से घात होता है।

तात्कालिक चंद्र से चतुर्थ स्थान में क्रुरग्रह हो तो उस दिन कष्ट से भोजन प्राप्त होता है। यदि चंद्रमा पुष्ट होता है तो अच्छा भोजन, सुख तथा लाभ होता है।

यदि दिन कुण्डली में चद्रमा शुभ स्थान में हो तथा शुभग्रहों से दृष्ट हो तो सारा ही दिन सुख से बीतता है। इसके विपरीत होने से सारा दिन दुख से बीतता है।

नोट - दिनप्रवेश काल में यदि चंद्र का वास स्वर्ग या पृथ्वी पर होता है तो वह दिन शुभ होता है। पाताल में वास होने पर दिन शुभ नहीं होता है।

चंद्र के वास जानने का क्रम - अमावस्या के बाद की प्रतिपदा (परैवा) से

क्रम से तिथियों की संख्या १ से ली जाती है पूर्णिमा की संख्या १५ है। इसके बाद की प्रतिपदा की संख्या १६ है। क्रम से एक-एक संख्या बढ़ती जाती है। फिर अमावस्या की संख्या ३० हो जाती है। इस प्रकार से तिथि की संख्या लेनी। सूर्य के उदय काल में जो तिथि हो वही तिथि मानी जाती है।

तिथि की संख्या की ५ से गुणा करके वार की संख्या और नक्षत्र की संख्या को मिलाना। जो योग हो उसमें ३ से भाग देना। १ शेष बचने पर चंद्रमा का वास पृथ्वी पर, आकाश या स्वर्ग में वास होता है।

फलित - पृथ्वी और आकाश में चंद्र का वास होने से शुभफल होता है तथा पाताल में वास होने से अशुभ फल है।

गाँव, नगर, घर, जलाशय तथा पशु से संबंधित कार्यों में तथा दिन चर्या में चंद्र के वास का विचार होता है।

आखेट (शिकार) संबंधी विचार

विवरण - आखेट तीन प्रकार के पुशओं का होता है। १. स्थल के पशु का। २. जल के प्राणी का। ३. पर्वत के प्राणी का।

दिन कुण्डली में या प्रश्नकुण्डली में मंगल और बुध बलवान् होते हैं तो शिकार होता है। यदि मंगल और बुध बलवान् नहीं होते हैं तो शिकार नहीं होता है।

जलग्रह बलवान् होते हैं तो जल के प्राणी का शिकार होता है। पर्वत ग्रह बलवान् होते हैं तो पर्वत के प्राणी का शिकार होता है।

लग्नेश और सप्तमेश निर्बल होकर केन्द्र में बैठें तो मृगया (शिकार) में क्लेश होता है। यदि वे दोनों बलवान् होते हैं तो मृगया अच्छी होती है।

चंद्र से लग्न तक जितने स्थान क्रूरग्रहों से युक्त होते हैं उतनी संख्या के समान प्राणियों का शिकार होता है। जिस स्थान का क्रूर ग्रह अपनी नवांश राशि का हो उसकी संख्या को दुगुनी या तिगुनी करनी।

विपत् तारा में शिकार से दुख मिलता है। वधतारा में शिकार से शरीर पर चोट की आशंका है। प्रत्यरितारा में स्खलन (गिरना-फिसलना) तथा जन्मतारा में पतन होता है।

तारा जानने का क्रम - नौ ताराएँ हैं। १. जन्म। २. संवत्। ३. विपत्। ४. क्षेम। ५. प्रत्यरि। ६. साधक। ७. वध। ८. मैत्र। ९. अतिमैत्र। इनमें १ तारा सामान्य हैं। ३,५,७, ताराएँ अशुभ होते हैं।

जन्मनक्षत्र से वर्तमान नक्षत्र तक गिनना। जो संख्या हो उसमें ९ से भाग देना, जो शेष बचे, उसी के अनुसार तारा जानना।

कल्पित उदाहरण - जन्मनाम दामोदर है, अत: जन्म का नक्षत्र पूर्वा भाद्रपद हुआ। वर्तमान नक्षत्र पुष्य है। जन्मनक्षत्र से वर्तमान नक्षत्र तक गिना तो ११ संख्या हुई। इसमें ९ से भाग दिया तो २ शेष बचे। दूसरा तारा संपत् है। अत: फलित हुआ कि पूर्वाभाद्र पद नक्षत्र के व्यक्ति को पुष्यनक्षत्र में संपत् तारा है।

मंगल और बुध अस्त हों या पापग्रह के नवांश में हो तो शिकार नहीं होता है।

लग्न में शुभग्रह हों तो मृगया होती है। सप्तमेश क्रूरग्रह हो तो शिकार होता है। लग्न में शुभग्रह हो तथा सप्तमस्थान को जितने शुभग्रह देखते हैं उतनी ही संख्या के अनुसार प्राणियों का शिकार होता है। यदि दृष्टि रखने वाली ग्रह वक्र या उच्चराशि के होते हैं तो संख्या तिगुनी हो जाती है।

शुभग्रहों के बलवान् होने पर शिकार में शुभ होता है। अशुभग्रहों के बलवान् होने पर शिकार में अशुभ होता है। पापग्रहों से विद्ध शुभग्रह होते हैं तो दोष उत्पन्न होता है।

चंद्र से लग्न तक बीच में जितने शुभग्रह होते हैं उतनी संख्या के प्राणी शिकार से भाग जाते हैं। यदि शुभग्रह वक्र या उच्च राशि के होते हैं तो उनकी संख्या तिगुनी हो जाती है।

तात्कालिक चंद्र के विचार से भी आखेट का विचार होता है।

नक्षत्र की योनियों से शिकार का पशु जाना जाता है। राशि से शिकार के पशु की जाति जानी जाती है।

तिथि को ५ से गुणा करना फिर उसमें नक्षत्र और वार की संख्या मिलानी, जो योग हो उसमें तीन से भाग देना। १ शेष बचने पर जल के प्राणी का शिकार होता है। २ शेष बचने पर स्थल के प्राणी का और ०शेष बचने पर पर्वत के प्राणी का शिकार होता है। आखेट के दिन की तिथि, वार और नक्षत्र, इन सबकी संख्या का योग करना फिर एक कम करके ९ से भाग देना। जो शेष बचे उतनी संख्या के प्राणियों का शिकार होता है।

शेष को आधा करने पर यदि १ शेष बचता है तो शिकार का १ प्राणी भाग जाता है। यदि वह राशि वक्रग्रह से विद्ध होती है तो तिगुने पशु भाग जाते हैं।

लग्नेश और सप्तमेश की परस्पर स्नेह दृष्टि हो तथा इत्थशाल हो तो शिकार में सफलता प्राप्त होती है। दोनों में शत्रुदृष्टि होती है तो थोड़ा शिकार होता है, मंगल के बलवान् होने पर बड़ा भारी शिकार होता है। दशम भाव में मंगल की राशि हो, वहाँ शुक्र बैठे और उस पर गुरु की दृष्टि हो तो बड़ा भारी शिकार होता है। दशम भाव में बुध की या गुरु की राशि हो और वहाँ लग्नेश बैठे तो बड़ा भारी शिकार होता है। सप्तमेश चतुर्थ या दशम स्थान में हो तो थोड़ा भी शिकार अच्छा नहीं होता है। सप्तमेश बलवान् होकर सप्तम भाव में स्थित हो तो अच्छा शिकार होता है। सप्तमेश लग्न, चतुर्थ या दशम भाव में हो तो थोड़ा शिकार होता है।

जलराशि में स्थित मंगल, चंद्र से तथा सप्तमेश से इत्थशाल करता हो और शुक्र से दृष्ट हो तो मछलियों का बहुत शिकार होता है ।

दिन के प्रवेश काल में या प्रश्नकाल में सूर्य जिस नक्षत्र पर हो उस से वर्तमान नक्षत्र तक गिनना । जो संख्या आये उसमें क्रम से ३/३ संख्या पाश, घात और वध की है । पाश में पशु बन्ध जाता है । घात में शिकार नहीं मिलता है और वध में शिकार होता है ।

शिकार के दिन यदि चंद्रमा सूर्य से युक्त होता है तो लंगड़े पशु का शिकार होता है । मंगल से युक्त होने पर विना सींग के मृग आदि का शिकार, शनि से या राहु से युक्त हो तो विंधे हुए अंग के पशु का शिकार, शनि और राहु से युक्त होने पर भैंसे का शिकार, सूर्य और मंगल से युक्त हो तो शूकर का शिकार, और बुध तथा शुक्र से युक्त हो तो पक्षियों का शिकार होता है ।

चंद्रमा शुभग्रहों से युक्त हो तो सींगवाले प्राणियों का और यदि पापग्रहों से युक्त हो तो बिनासींग के प्राणियों का शिकार होता है ।

दिन कुण्डली या प्रश्नकुण्डली में लग्न से षष्ठस्थान तक पापग्रह हो तो पशु के शरीर के पूर्व भाग में घात होता है । सप्तम भाव में पापग्रह हो तो पशु की पीठ में घात होता है। शेष स्थानों में पापग्रह होने से पशु के शरीर के पिछले भाग में घात होता है ।

पशु का शरीर चार भागों में विभक्त है । १. ऊपरी अंग । २. करवट । ३. पीठ । ४. नीचे का अंग । पशु के नाम के नक्षत्र का जो चरण पापग्रह से युक्त होगा, उसी अंगमें क्रम से घात होता है ।

स्वप्न का विचार - सो जाने पर दीखने वाली घटना को स्वप्न कहते हैं । इसका विचार भी दिनकुण्डली तथा प्रश्न कुण्डली से होता है ।

लग्न में या लग्न के नवांश में सूर्य के होने से लालवस्त्र पर अग्नि आदि का दुष्टस्वप्न दिखलायी देता है । लग्न में या लग्न के नवांश में चंद्र हो तो श्वेत वस्त्र, श्वेत रत्न तथा स्त्री का स्वप्न होता है । लग्न में या लग्न क नवांश में मंगल हो तो स्वप्न में लालरंग की वस्तु, सोना, मूंगा तथा अग्नि दीखती है । लग्न में या लग्न के नवांश में बुध हो तो स्वप्न में अर्थ तथा धर्मसंबंधी वार्ता, आकाश में जाना तथा लिखत-पढ़त का होना आदि दिखता है। लग्न में या लग्न के नवांश में गुरु हो तो स्वप्न में क्रीड़ा, देवता का दर्शन तथा बंधुजनों से मिलन दिखायी देता है । लग्न में लग्न के नवांश में शुक्र हो तो स्वप्न में जल में तैरना, घोड़ा, हीरा, देवता का दर्शन तथा सुंदर स्त्री दीखती है । लग्न में या लग्न के नवांश में शनि हो तो राजा का आगमन तथा नीचों से संगति आदि के स्वप्न दीखते हैं ।

मिलित ग्रह होने पर स्वप्न भी मिलित होते हैं । लग्नेश से युक्त होने पर कारणजन्य स्वप्न होता है । लग्नेश लग्न के अतिरिक्त किसी अन्य स्थान में हो तथा नीचराशि का या शत्रुराशि का अथवा अस्त हो तो स्वप्न का परिणाम दुखद होता है। उक्त योग से विपरीत होने पर सुखद होता है ।

लग्नभाव में शुभग्रहों से दृष्ट सूर्य हो तथा सप्तम या नवम भाव में सिंह राशि हो तो स्वप्न-स्वप्न (स्वप्न में स्वप्न दीखना) होता है ।

सूर्य और चद्रं पर शुक्र की दृष्टि हो अथवा शुक्र से सातवें स्थान में सूर्य और चंद्र हो तो स्वप्न में राजा का दर्शन होता है ।

दिन-दशा का फलित

१. सूर्य की दशा का फल - शिर में पीड़ा, धन की हानि, कलह. कुभोजन, शत्रुसे भय, पूर्व में असफल यात्रा होती है ।

२. चंद्र की दशा का फल - प्रिय भोजन, सुख, वस्त्र लाभ तथा राजपक्ष से मान होता है ।

३. मंगल की दशा का फल - गेहूं-जौ-मूँग आदि अन्न का भोजन, दुख तथा शत्रु से भय होता है ।

४. बुध की दशा का फल - सुंदर भोजन, मित्र से मिलन, क्रीड़ा, विद्या संबंधी सौख्य, राज से लाभ तथा अन्य सुख होता है ।

५. गुरु की दशा का फल - स्त्री-मित्र तथा राजपक्ष से लाभ, वस्त्र प्राप्ति, द्रव्यलाभ, सुन्दर भोजन तथा पश्चिम दिशा में गमन होता है ।

६.शुक्र की दशा का फल - धन का लाभ, स्त्री के द्वारा नवीन अन्न से बने सुन्दर पदार्थों का भोजन, स्त्री-मित्र तथा राजपक्ष से सौख्य होता है ।

७. शनि की दशा का फल - सभी बातें साधारण, क्रोध की अधिकता, राजपक्ष से पीड़ा तथा देह को कष्ट होता है ।

८. राहु-केतु की दशा का फल - कुधान्य की प्राप्ति तथा असफल यात्रा होती है ।

अन्य प्रकार से दशा का फलित

१. दिनदशा निकालने का क्रम - अपने जन्मनक्षत्र से दिनके नक्षत्र तक गिनना, जो संख्या आये उसे ४ से गुणा करना फिर उस दिन की तिथि और वार की संख्या मिलानी । तदनन्तर ९ से भाग देना । १ शेष बचे तो सूर्य की दशा, ६ शेष से चंद्र की दशा, ९ शेष से मंगल की दशा, २ शेष से बुध की दशा, ४ शेष से गुरु की दशा, ८ शेष से शुक्र की दशा, ७ शेष से शनि की दशा, ३ शेष से राहु की दशा और ५ शेष बचने से केतु की दशा होती है ।

दशा का फल - शुभग्रह की दशा में सुख और पापग्रह की दशामें दुख होता है ।

२. दशा निकालने का अन्य क्रम - अपने नक्षत्र की संख्या को ४ से गुणा करके तिथि की संख्या और वारकी संख्या मिलानी, जो योग बने उसमें ७ से भाग देना। शेष बचने पर क्रम से सूर्य से शनि तक की दिन दशा होती है।

दशा के फलित - सूर्य की दशा में व्यापार तथा यात्रा होती है। चंद्र की दशा में स्नान-भोजन आदि होता है। मंगल की दशा में कलह तथा मानसिक क्लेश होता है। बुध की दशा में विद्या द्वारा लाभ, सुख तथा लाभ होता है। गुरु की दशा में धनलाभ, सुख तथा मित्रता होती है। शुक्र की दशा में स्त्री संबंधी सुख होता है। शनि की दशा में उद्वेग आदि तथा यात्रा में रुकावट पड़ती है।

नोट - जिस दिन का शुभाशुभ फल जानना हो, उस दिन उक्त दोनों क्रमों से दिन की दशा निकालकर फल जानना। यदि एक क्रम से फल शुभ है और दूसरे क्रम से फल अशुभ हो तो फल मध्यम जानना।

भविष्य-पत्र के निर्माण में विचार की दिशा - जिस वर्ष का पंचांग न बना हो उस वर्ष के पत्र बनाने को भविष्य-पत्र बनाना कहते हैं।

पंचांग न होने पर भी प्रस्तुत ग्रंथ में दिये गये क्रमों से वर्ष के मास-तिथि-वार आदि तो निकल आते हैं किन्तु ग्रह नहीं ज्ञात हो सकते हैं। इस हेतु अहर्गण बनाकर उसके द्वारा पंचांग (१. तिथि। २. नक्षत्र। ३. योग। ४. करण। ५. वार) का साधन तथा ग्रहों का साधन करके किसी भी संवत् या शक का जन्मपत्र तथा वर्ष पत्र बनाया जा सकता है।

लेखक के रचित 'श्रीसुदर्शन-सिद्धान्त' अर्थात् पंचांग रचना विज्ञान नामक ग्रंथ में सारिणियों के द्वारा ग्रह साधन की सरल प्रक्रिया प्रस्तुत की गयी है। उक्त प्रक्रिया से अनन्त वर्षों के पहिले के तथा आगे के पंचांगों का सरलता से निर्माण किया जा सकता है।

उक्त ग्रंथ में पचांग का साधन प्राचीन मत से है। ग्रह साधन ग्रह लाघव के सिद्धांत से है तथा अयनांश साधन आदि नवीन दृश्य-गणित पर आधिारित है।

ग्रह साधन के लिए प्रथम ग्रह लाघवीय-अहर्गण का साधन किया जाता है तदनंतर सारिणियों के द्वारा मध्यम ग्रहों का साधन होता है।

मध्यम ग्रहों की तालिका - १. मध्यम रवि। २. मध्यम चंद्र। ३. चंद्रोच्च। ४. चंद्रपात (राहु)। ५. मध्यम भौम। ६. मध्यम बुध (बुध केन्द्र)। ७. मध्यम गुरु। ८. शुक्र केन्द्र। ९. मध्यम शनि।

मंगल से शनि तक ग्रहों को 'पंचतारा' कहते हैं। इन पाँच ग्रहों के साधन को पंचतारा साधन कहते हैं। प्रत्येक ग्रह की सारिणी में ६० (०से ५९ तक) कोष्ठांक दिये गये हैं। प्रत्येक कोष्ठांक के नीचे कोष्ठ में अंशादि षड्लव (१. अंश २. कला। ३. विकला। ४. प्रतिकला। ५. प्रतिविकला। ६. अनुकला) अंको में दिये गये हैं। उनसे मध्यम ग्रहों

का साधन होता है। विस्तार भय से यह प्रकरण यहाँ प्रस्तुत नहीं किया जा रहा है। इसके लिये 'सुदर्शन सिद्धान्त' अवलोकनीय है।

शुभमस्तुतराम्।

अन्तमङ्गलम् .....

सव्यं पादं प्रसार्याश्रितदुःखहरं दक्षिणं कुञ्चयित्वा
जानुन्याधाय सव्येतरमितरभुजं नागभोगे निधाय।
पश्चाद् बाहुद्वयेन प्रतिभटशमने धारयत्शङ्खचक्रे
देवीभूषादिजुष्टो वितरतु जगतां शर्म वैकुण्ठनाथः॥

इतिश्रीमद्विश्वसभाजनभाजनविविधागमाकूपारपारदृक् केदारनाथ शर्म्मतनुजनुषा सुदर्शनाचार्यशास्त्रिकृतिषु वर्षफलितविज्ञानं समाप्तिमगात् तच्च सर्वजनहिताय सर्वजनसुखाय भूयात्।

शुभमस्तु। मङ्गलमस्तु। श्रीरस्तु।

ताजक विज्ञान

लेखक : श्रीसुदर्शनाचार्य शास्त्री

प्रायः सभी शास्त्रों में ज्यौतिष शास्त्र की मान्यता है। ज्यौतिष शास्त्र के तीन सुदृढ़ स्कंध हैं—१. सिद्धान्त। २. संहिता। ३. होरा।

होरा का प्रमुख विषय जातक है। व्यक्ति के जन्मसंबंधी फलित के विवरण को जातक कहते हैं।

जातक-विद्या का आविर्भाव अरब देश में हुआ है। किसी समय यूनान के 'ताजक' स्थान में यह विद्या उन्नति की चरम सीमा पर थी, अतः उसी स्थान के नाम पर इस विद्या का नाम ताजक हुआ है। कुछ विद्वानों का विचार है कि, फारसी में ताजी का अर्थ घोड़ा है। जिस प्रकार घोड़ा द्रुतगति से दौड़ता है, उसी प्रकार यह विद्या भी ज्यौतिष के क्षेत्र में चमत्कार दिखाती हुई तीव्रगति से दौड़ लगाती है। इस कारण इस विद्या का नाम ताजिक है। हमारा विचार तो यह है कि जातक का वर्ण विपर्यय (अक्षरों की उलट-पुलट) होकर ताजक शब्द निष्पन्न हुआ है। यवन-शासन काल में ज्यौतिष-विद्या प्रत्युन्नत थी। उस समय यूनानी लोगों की भी इस चमत्कारी विद्या को सीखने की प्रबल उत्कंठा हुई।

ताजिक में ग्रह का बल आँकने के लिए षड्बल बृहत् पंचवर्गी तथा द्वादशवर्गी की पद्धति है। इनकी रचना की आधारशिलाएँ षड्वर्ग तथा द्वादशवर्ग हैं। उक्त वर्ग जातक की तो विशेष निधि हैं। जातक में लगभग ३० प्रकार की दशाएँ हैं, ताजक में भी विभिन्न प्रकार की दशाएँ हैं। ताजक में सहम हैं। सहम [illegible] या हिस्सा है। भाव के विचार में तो सहम अत्युपयोगी है। सहम का सहारा लिये [illegible] विचार में पूर्णता नहीं आ सकती।

ताजक सर्वांश [illegible] अतः उसकी प्रामाणिकता में कोई संदेह करने का लेशमात्र भी अवसर नहीं [illegible] है कि ताजक की प्रक्रिया और विचार पद्धति में नवीनता और विलक्षणता [illegible] के सहित ग्रहों के स्पष्ट लिखने का निर्देश है तथा संधि सहित द्वादश भावों [illegible] लिखने का भी विधान है।

यवन-साम्राज्य में [illegible]वाद की प्रधानता थी। उस समय के प्रमुख विषय तीन थे—भोजन, शयन और मनोरंजन अर्थात् आखेट या मृगया (शिकार खेलना)। इन्हीं विषयों के संबंध में प्रायः प्रश्न होते रहते थे, अतः ताजक ग्रंथों के उक्त प्रश्नों के उत्तर में विचार भी दिये गये हैं।

प्रस्तुत ग्रंथ तीन प्रकाशों में विभक्त है। प्रकाश की सत्ता तीनों ही लोकों में है। ग्रंथ को इस दृष्टिकोण से लिखा गया है कि विषय का अनभिज्ञ व्यक्ति भी ग्रंथ को पढ़कर सरलता से ज्यौतिष का विद्वान् बन जाय, अतः विषय को प्रारंभ से ही लिखा गया है।

सर्वजनहिताय सर्वजनसुखाय ग्रंथ की रचना का उद्देश्य है।

अपरं च प्राप्तिस्थानम्

कृष्णदास अकादमी, पो० बा० १०१८, वाराणसी-१

Rs. 150.00

ISBN : 81-7080-030-7